

श्रीः

षष्ठादश

पुराणोपक्रमणिका ।

जिस में सर्व पुराणों की संख्या तथा अध्यायानुसार
विषयों का विवरण है ।

इति ।

पांचखण्ड म २५००० सप्तस्र श्लोक । १/५ गेन ।

भूमिखण्ड ३ स्वर्गखण्ड ४ पातालखण्ड ५ पुराण विष्णु
प्रथमस्रष्टिखण्ड ।—पुंसस्य भीष्म पठतसुनंत सम अभियपान ॥
धर्म आख्यान श्री इतिहास कथन इत्ये गार परिच्यत सुकदेव ॥
ब्रह्मयज्ञ विधि ३ वेदपाठादि लक्षण ४ दान विन्देद आनन्द भाष्य ॥
कथन ६ शैल जाया विवरण ७ तारकाख्यान ८ गोमती दुग्ध जार ॥
द्वैत्य वध १० अर्ही की पूजा एवं दान विवरण है ।

द्वितीयभूमिखण्ड ।—सूतशौनकासंवाद । १ पिट ।

अष्टादशपुराणीपत्रमणिका



प्रथम ब्रह्मपुराण ।

यह पुराण पूर्व एवं उत्तर २ भाग में विभक्त है । अथर्व ऋग्वेद संख्या १०००० दश सहस्र । सूत शौनक संवाद में नाना प्रसङ्ग एवं विविध प्रतिहास वर्णित हैं ।

पूर्वभाग ।—१ देवता एवं असुर गणों की उत्पत्ति वर्णन २ दक्षादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन ३ सूर्यवर्ष वर्णन एवं तन्मध्य में श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन ४ सोमवर्ष वर्णन तत् प्रसङ्ग से श्रीहृण्य चरित्र कथन ५ हीपकथन ६ वर्षकथन ७ पातालकथन ८ स्वर्गकथन ९ नरककथन १० सूर्यस्तुति ११ पार्वती जन्म एवं विवाह कथन १२ दक्षभाष्यान १३ एकाग्र चित्रकथन ॥

उत्तरभाग ।—१ पुरुषोत्तमवर्णन २ तीर्थ यात्राविस्तार कथन ३ यमलोक कथन ४ पित्र्यांशुविधि ५ वर्णाश्रमाचार धर्मनिरूपण ७ विष्णुधर्म कथन ८ युगाख्यान ९ प्रलयकथन १० योगकथन ११ सांख्यकथन १२ ब्रह्मवाटकथन १३ पुराणांगकथन ।

फलश्रुति ।—यह पुराण लिखा कर वैशम्पयनास में स्वर्ण युक्त जलसेतु सहित पौराणिक ब्राह्मण को अर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण भोजन कराने से चंद्र सूर्य स्थिति काल पर्यन्त ब्रह्मलोक में स्थिति होती है एवं संयत होकर यह पुराण श्रवण वा पाठ करने से सकल धर्मफल लभ्य होता है ।

द्वितीयपद्मपुराण

पांचखण्ड म ५५००० सहस्र श्लोक । पुराण तिन अष्टा १. अष्टिखण्ड २ भूमिखण्ड ३ स्वर्गखण्ड ४ पातालखण्ड ५ पुराण विष्णु

प्रथमअष्टिखण्ड ।—पुरुषोत्तम भोजन पठतसुनंत सम अभिययान ॥ धर्म भाष्यान श्रीः इतिहास कथन इस ७ पार परिषत्त सुकदेव ॥ ब्रह्मयज्ञ विधि ३ वेदपाठादि लक्षण ४ दान विवेक ध्यानन्द भाषण ॥ कथन ६ शैल जाया विवरण ७ तारकाख्यान ८ गोमती दुग्ध जार ॥ दैत्य वध १० अर्धों की पूजा एवं दान विवरण है ।

द्वितीयभूमिखण्ड ।—सूतशौनकसंवाद । १ पित्र

शर्माकथा ३ सुन्नतचरित्र ४ द्वयासुरवध ५ पृथक्पथ पाख्यान ६ धर्मकथा ७
 पृष्ठशुश्रूषकथन ८ नहुषकथा ९ ययातिचरित्र १० गुरुतीर्थ निरूपण ११
 राजा के सहित जैमिनि के संवाद में बहूत सी आश्चर्यकथा १२ अगोक्तसुन्दरी
 की कथा १३ हृण्डदैत्यवध १४ कामदाख्यान १५ विहङ्गवध १६ च्यवनकुञ्जल
 का संवाद १७ सिद्धाख्यान १८ अन्य की फल श्रुति ।

द्वितीयखण्ड ।—ऋषि लोगों से श्रौति का कथा प्रसङ्ग १ ब्रह्माण्डोत्पत्ति
 कथन २ भूमि लोक संस्थान ३ तीर्थ आख्यान ४ नर्मदा की उत्पत्ति ५ नक्ष-
 दाख तीर्थ उपाख्यान ६ कुरुक्षेत्रादि तीर्थकथन ७ कान्दिन्दी की पुण्यकथा ८
 काशीमाहात्म्य ९ गयामाहात्म्य १० प्रयागमाहात्म्य ११ वर्णाश्रम धर्म एवं
 योग निरूपण १२ व्यास जैमिनिसंवाद की पुण्य कथा १३ समुद्रमन्थन १४
 ज्ञतकथन १५ अष्टमाहात्म्य ।

चतुर्थपातालखण्ड ।—श्रीराम का अश्वमेध एवं राज्यभिक्षा कथन २
 अगस्त्यादि का आगमन ३ पौलस्तिका का उपाख्यान ४ अश्वमेध कारणादेश ५
 अश्वमेधीय घोटकगमन ६ नानाराज कथन ७ जगन्नाथ देव का वृत्तान्त ८ ह-
 न्दावन का माहात्म्य ९ कोलावतारी की नित्यकीर्तनकथन १० वैशाख ज्ञान
 दान एवं अर्चनमाहात्म्य ११ धरावराहसंवाद १२ यसएवं ब्राह्मण की कथा
 १३ राजा का आचरण १४ श्रीकृष्ण का स्तोत्र १५ शिवशंभुमिलन १६ द-
 धीचि का आख्यान १७ भस्मधारण माहात्म्य १८ शिवमहात्म्य १९ इंद्रपुत्र का
 आख्यान २० पुराणवित्जन की प्रशंसा २१ गौतम का आख्यान २२ गोता २२
 भारद्वाज की आश्रम से श्रीरामचन्द्र का कल्याणकारीय इतिहासकथन ।

पञ्चमउत्तरखण्ड ।—शिव प्रसङ्ग १ पर्वत का आख्यान २ कालभर
 की कथा ३ श्री शैलादि पर्वत की कथा ४ अश्वमेध का उपाख्यान ५ गङ्गा प्रयाग
 काशी एवं गया की कथा ६ दानमाहात्म्य ७ साहाहादशीर्न-
 तकथन ८ ज्ञत-
 ना १० मन्त्रि विष्णुधर्मकथन १० विष्णुसहस्र-
 नाम ११ अश्वहोप की तीर्थ सङ्गण का
 १२ ऋषिहोत्पत्तिकथन १३ देवशर्मा का
 १४ मन्त्रि का माहात्म्य १५ श्रीभागवत सा-
 रङ्गिणी १६ नाना तीर्थकथा १७ मन्तरत्न की
 कथन १८ सख्यादि धवतार कथन १९ श्री
 का २० शृगु की विष्णुविभव परीक्षा ।

फनञ्चति ।—यद्द पुराणं लिखितं स्तर्णयुक्तं पुराणवित् ब्राह्मण को दान
करने से अथवा अथवा करने से वैष्णव धाम को प्राप्ति होती है एवं इस को
अनुश्रमणिका अथवा करने से समुदाय पुराण अथवा का फन नाम होता है ।

द्वितीय विष्णुपुराण । *

आदि एवं अन्त २ भाग में २३००० सहस्र श्लोक उत्सर्ग आदि भाग ६ अंश

० विष्णुपुराण २३ हजार श्लोक है परन्तु भूलकार सुखमागर के वारहवें
स्कोध में ३०००० तीसहजार लिखदिया ! यद्यी नहीं बरं चन्द कवि ने भी
रायमा में २३ हजार चारसौ लिखदिया परन्तु रायमा के कई एक पुस्तकों में
३३४०० और रामरत्न गीता में अस्सी हज़ार लिखदिया परन्तु तुकसी स-
दार्थ में तीर्थम हज़ार लिखा सिरो राय से जिन जिन पुस्तकों में अंतर है उन
नव को यहाँ लिखदेता हूँ पाठक गण स्वयं विचार करें ।

सुखमागर में मकलनात्मक ने लिखा है । ब्रह्मपुराण दशहजार वो पद्मपुराण
पचपनहजार वो विष्णुपुराण तीसहजार वो शिवपुराण चौबीसहजार वो श्री
सद्भागवत पुराण अठारहहजार वो नारदपुराण पच्चीसहजार वो मार्कण्डेयपु-
राण नौहजार वो अग्निपुराण पन्द्रह हज़ार चारसौ वो भविष्यपुराण चौदह
हजार पांच सौ वो ब्रह्मवैवर्त पुराण अठारह हज़ार वो लिङ्गपुराण ध्यारह
हजार वो वाराहपुराण चौबीसहजार वो स्कन्दपुराण इक्कीसौ हज़ार एकसौ
वो वामनपुराण दशहजार वो कर्मपुराण सत्रह हज़ार वो मत्स्यपुराण चौदह
हजार वो गरुडपुराण पच्चीसहजार वो ब्रह्माण्डपुराण बारह हज़ार श्लोक है ।

पृथ्वी राज रासो में लिखा है ।

पहरी—ब्रह्मन्वदेव सम वासुदेव । अष्टादश पुराण तिन कहै समै ॥
तिन कहैं नाम परिमान ब्रह्मि । जिन सुनत सुब भव हो तत्रह्मि ॥
ब्रह्मह पुराण दस सहस्र कृष्टि । जिहि पढत सुनत तन तथ कृष्टि ॥
पंचास पंचह हज्जार गंभि । पद्मह पुराण तिन कहैं ब्रह्मि ॥
तेहस सहस्र सैं चारि जानि । विष्णु पुराण विष्णु समानि ॥
चौबीस सहस्र कहैं शिवपुराण । तिहिपढतसुनत सम अभियपान ॥
अठार सहस्र भागवत में । करि पार परिप्यत सुकदेव ॥
नारद पुराण कृष्टि पाव जाख । तहां सुति मोट आनन्द भाख ॥
मारकंड नाम तेहस हज्जार । पौराण पवित्र सो दुख जार ॥

में विभक्त । मैत्रेय पराशर सम्बाह वराह कल्पीपाख्यान प्रथमभाग प्रथम अंश

पंद्रह हजार संख्या संपूर । अग्नि पुरान पठि पाप दूर ॥
 चवद्वै हजार में पांच पङ्क्ति । भवपित पुरान सो पाप जङ्घि ॥
 ब्रह्मवैव्रत सहस्र अठार । केवल भिनान कथि भक्ति सार ॥
 रुद्रह हजार लिंगह पुरान । आनन्द अर्थ आगम गुरान ॥
 चौबीस सहस्र वाराह भक्ति । पौरख पुरान तिन अमित सक्ति ॥
 हजार इक्कासी कहि विवेक । स्कन्द पुरान भव भक्ति एक ॥
 इग्यारह सहस्र वावन सु अक्ष । पौरान सुनत सुधि अग्य पक्ष ॥
 सवह हजार कूर्म पुरान । भाषा विनोद प्राक्तम गुरान ॥
 विद्या हजार मित मछ देव । विधि संख उद्धरे सेव सेव ॥
 गुनईस सहस्र गरुडह पुरान । श्रोतान वक्त भक्ति उरान ॥
 ब्रह्मांड पुरान वादह सहस्र । करि व्यास भक्ति प्रभु कांस नंस ॥
 पंद्रह हजार अरु च्यरि लाख । सम ब्रह्म व्यास कहि चंद भाख ॥
 तुलसी शब्दार्थ में लिखा है । अष्टादश पुराण—

दीक्षा—ब्रह्म ब्रह्माण्ड वावन सरस , ब्रह्मवैवर्त सुजान ।
 मार्कण्ड अरु भविष्य ये , राजस कहै पुरान ॥ १ ॥
 नारद विष्णु वराह अरु , गरुड पद्म सुखसार ॥
 भगवत रूपी भगवत , ये सात्त्विक निर्धार ॥ २ ॥
 भीम कूर्म अरु लिंग सिव , स्कन्धरु अग्निविचार ।
 तामस सिव के अंग ए , सुनतहि मिटे खमार ॥ ३ ॥
 वावन ब्रह्म दस दस सहस्र , द्वादस है ब्रह्माण्ड ।
 ब्रह्मवैवर्त दस सहस्र पुनि , पचपन पक्ष अखण्ड ॥ ४ ॥
 पन्द्रह सहस्र सुचारित , मार्कण्ड सु पुरान ।
 साढ़े चौदह भविष्य है , तीस विष्णु बखान ॥ ५ ॥
 पंचविंस नारद कहत , सूकर चौबिस जान ।
 उनइस गरुड बखानिय , अठारह भगवत मान ॥ ६ ॥
 मछ सु चौदह सहस्र है , कूर्म सत्रह होइ ।
 लिंग इकादस कहत है , चौबिस रुद्र जु सोइ ॥ ७ ॥
 षावक पन्द्रह सहस्र पुनि , चारि सैकरा आन ।

१ सृष्टि का आदि कारण एवं सृष्टिवर्णन २ देवादि की उत्पत्ति ३ समुद्रमंथन

स्वान्वं इक्ष्वासी सहस्र अश्रु , इक्ष्वासत वारत वखान ॥ ८ ॥
 तीन लाख अङ्गान्वे , सहस्र वेद सत भाद ।
 सब पुरान ऽज्ञोक्त की , कहीं व्यास मर्याद ॥ ८ ॥
 उपपुराण नाम—सनतकुमारहिजानपुनि , नारसिंह अस्कन्ध ।

दुर्वासा आश्चर्यगनि , नारद कपिल प्रबन्ध ॥ १० ॥
 मानव अश्रु ब्रह्मण्ड कश्चि , भार्गव गरुड बखान ।
 माहेश्वर पुनि कालिका , सावक सूर्य पुरान ॥ ११ ॥
 विश्वपुराण परासरी पुनि , संचय सर्वार्थ ।
 देवि भागवत मिलि भये , अष्टादश सब सार्थ ॥ १२ ॥
 श्रीभागवत के १२ वें स्कंध के १३ वें अध्याय में लिखा है ।

ब्राह्मणदशसहस्राणिपादुर्मंपंचोनपाष्टिच श्रीवैष्णवंत्रयोर्विशच्चतुर्विंशतिशैवकम् ॥ ४ ॥
 दशाष्टौश्रीभागवतं नारदंपंचविंशति मारकण्डेयनववाहनंतुदशपंचचतुःशतम् ॥ ५ ॥
 चतुर्दशभविष्यस्यात्तथापंचशतानिच दशाष्टौत्रलवैवर्तिलिंगमेकादशैवतु ॥ ६ ॥
 चतुर्विंशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कादिंशतंतथाचैकवामनंदशकीर्तितम् ॥ ७ ॥
 कौर्मसप्तदशाख्यातंमास्त्यंतचुचतुर्दश एकोनविंशसौपर्णह्लांडंद्वादशैवतु ॥ ८ ॥
 एवंपुराणसंदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः तत्राष्टादशसाहस्रंश्रीभागवतमिष्टाते ॥ ९ ॥

पुराणों के नामों में भी कई एक लोगों ने छयक छयक लिखा है। यथा शब्द कोष में लिखा है।—पुराण । (; पुरा पुराना (पुर आगे जाना)—अर्थात् जिसमें पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हों) पु० वे प्रत्येक जिन में से बहूतों की व्यास जी ने बनाये अथवा इकट्ठे किये । पुराण सब पद्य में लिखे हुए हैं और उन को हिंदू पवित्र मानते हैं । हर एक पुराण में विशेष करके इन पांच बातों का वर्णन है जैसे । सर्वप्रथम प्रति सर्गके अंशोमबधन्तराण च बंधानु चरितं चैव पुराणं पंच लक्षणम् ।

अर्थात् १ संसार की उत्पत्ति ; २ प्रलय और प्रलय के पीछे फिर संसार की उत्पत्ति ; ३ देवता और शूर बीरी की बंधावली ; ४ मनुष्यों का राज ; और ५ उन के बंध के लोगों का व्यवहार और चक्रन ; पुराण अठारह हैं १ ब्रह्म पुराण, २ पद्मपुराण, ३ ब्रह्माण्डपुराण, ४ अग्निपुराण, ५ विश्वपुराण ६

४ इंद्रादि वर्णन ५ ध्रुवचरित्र ६ पृथुचरित्र ७ प्रचेता आख्यान ८ प्रह्लाद
उपाख्यान ९ प्रह्लाद राज्य का पृथक आख्यान ।

गरुडपुराण, ७ ब्रह्मवैवर्तपुराण, ८ शिवपुराण, ९ लिङ्गपुराण, १० नारद-पु-
राण, ११ स्कन्दपुराण, १२ मार्कण्डेयपुराण, १३ भविष्यत पुराण, १४ मत्स्यपु-
राण, १५ वाराहपुराण, १६ कूर्मपुराण, १७ वामन पुराण, १८ मङ्गागवत
पुराण । इन सब पुराणों में चार नाश श्लोक गिने गये हैं और अठारह उप-
पुराण भी हैं शु० पुराणा ; पहली का; सबसे पहला ।

स्कृत कोष में लिखा है ।—पुराण पुं० पण्य अर्थात् व्यवहार दाँव मुख्य
धन द्यूतव्यवहार अर्थात् लुप का खिल विष्णु चिरंजीवी दीर्घायुः प्राणःजीव
इश्वर वां० चि० प्रज्ञ प्राज्ञीन पुराणा इव जीर्ण न० पंचमण्य अर्थात् व्यास
के बनाये हुए अठारह पुराण तथा च प्रमाणम् ॥ श्लोक महयं मह्यं चैव ब्रह्मव-
चतुष्टयम् ॥ अनापलिंगकस्त्वानिःपुराणानि पृथक् पृथक् ॥ १ ॥

मार्कण्डेय पुराण १ मत्स्यपुराण २ भविष्योत्तरपुराण ३ भागवतपुराण ४ ब्र-
ह्मांडपुराण ५ ब्रह्मवैवर्तपुराण ६ ब्रह्मोत्तर पुराण ७ वाराहपुराण ८ वामन-
पुराण ९ वायुपुराण १० विष्णुपुराण ११ अग्निपुराण नारद पुराण १२ पद्मपु-
राण १३ लिंगपुराण १४ गरुडपुराण १५ कूर्मपुराण १६ स्कन्दपुराण ।

शिवपुराण के उल्लास में शिवसिंह ने यों लिखा है ।

पुराण १८ हैं और उप पुराण भी अठारह है जिनके नाम यह हैं पद्म १
स्कंद २ गरुड ३ मत्स्य ४ वायु ५ ब्रह्माण्ड ६ लिंग ७ अग्नि ८ कूर्म ९ वामन
१० नारदीय ११ विष्णु १२ भविष्योत्तर १३ मार्कण्डेय १४ वाराह १५ भारत
१६ ब्रह्मवैवर्तक १७ भागवत १८ । उपपुराण । काकी १ शास्व २ सनत्कु-
मार ३ वरुण ४ मारोच ५ नन्दी ६ शिव ७ दुर्वास ८ मुनि ९ नारदीय १०
कपिल ११ सौरि १२ माण्डवरो १३ शुक्र १४ भागव १५ नृसिंह १६ धर्म १७
पाराशर १८ ॥

अथ श्लोक अष्टादशपुराणि ॥

पद्मस्कन्दविहंगमस्यंपवनं ब्रह्माण्डलिंगानयः ।

कूर्मोवामननारदीयसहितं विष्णुभविष्योत्तरं ॥

मार्कण्डेयवाराहभारतयुतः श्रीब्रह्मवैवर्तकः ।

श्रीमङ्गागवतंदिशंतुपरमं श्रेयः पुराणा निवै ॥ १ ॥

प्रथमभाग द्वितीयखंड ।—१ प्रियव्रतं उपाख्यान २ होप और वर्ष निरूपण ३ पत्नान्नाथन ४ नरककथन ५ सप्तखर्ग निरूपण ६ मूर्ध्यादिचंद्रार. ७ भरतचरित्र ८ सुक्तामार्ग निरूपण ९ निदाघादि ऋतुसंवाद ।

प्रथमभाग तृतीयखंड ।—१ मन्वन्तर कथा २ वेदव्यास प्रवतार ३ नरकाचचार और कर्म ४ सगर एवं औघ संवाद में सर्व धर्म निरूपण ५ वर्णाश्रम निरूपण ६ आइकल्प ७ मदाचारकथन ८ मायामोह की कथा ।

प्रथमभाग चतुर्थखंड ।—१ सूर्यवंशकथा २ सीमवंशकथा ।

प्रथमभाग पञ्चमखंड ।—१ नाना राजा कीर्तियों की कथा २ श्रीकृष्णाधतार प्रश्न ३ गोकुल कथा ४ श्रीकृष्ण वास्य लीला पूतनादिबध ५ कौमार अचासुरादिबध ६ कैशोरकंसबधादि मथुरालीला ७ वीरन हारवतीलीला दैत्य बध एवं विवाह ८ भूमारचरण ९ अष्टावक्र उपाख्यान ।

प्रथमभाग षष्ठखंड ।—१ कनिजात चरित्र २ चतुर्विध लय कथा ३ ब्रह्मज्ञान कथा ४ वैशिष्ट्य कर्तृक खाण्डिक्य निरूपण ।

द्वितीयभाग—मृतशौनका सञ्वाद—१ विष्णु धर्म कथन २ नाना धर्म कथन ३ पुण्य व्रत नियम एवं यम कथन ४ धर्मशास्त्र ५ धर्मशास्त्र ६ वेदान्तशास्त्र ७ ल्योतिःशास्त्र ८ वंश आख्यान ९ स्तवकथन १० मनु सकल की कथा ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर अषाढमास में छत घेनु के साथ पौरानिक ब्राह्मण को दान करने से सूर्यकी रथ पर आरोहण करके विष्णुधाम में गमन एवं भक्तियुक्त पाठ किम्बा श्रवण करने से विष्णुलोक में वास प्री दिव्य भोग प्राप्ति होती है इस की अनुकम्पिका पाठ वा श्रवण करने से समुदाय पुराण श्रवण फल होता है ।

चतुर्थ बायुपुराण ।

पूर्व और उत्तर दो खण्ड २४००० सहस्र श्लोक वायु ने श्वेत कल्प प्रसङ्ग से सकल धर्म कहा है ।

यथा अष्टादश उपपुराणि ॥

कान्नीचांबसनल्लुमारवरुणं मारीचनंदीशिवं ।
दुर्वाचांमंजुनारदीयकपिलं शौरचंमाहेश्वरी ॥
शुक्रं भागैव कान्तिं संहमपर धर्मं च पराशरं ।
हार्वन्तु पपुराणं कानिसुततेसमीक्षितेऽष्टादश ॥ २

पूर्वभाग—१ स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन २ सकल मन्वन्तर की राजगण का वंश कथन ३ गयासुरवध ४ मास गणों की महिमा एवं साधमास की विशेष महिमा ५ दान धर्म एवं राज धर्म विस्तार कथन ६ भूचर पतालचर दिक्चर एवं आकाश चर विवरण ७ व्रत विवरण ।

उत्तरभाग—१ नर्मदा तीर्थ कथन २ शिवसंहिता कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर गुड़ धेनु के साथ रट्टस्थ म्राङ्गण की श्रावण मास में दान करने से चतुर्दश इंद्र परिमित काल बृद्धलोक में वासनियम एवं हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से बृद्ध तुल्यता प्राप्ति पुराण की अनुक्रमणिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल लाभ होता है ।

पञ्चम श्रीभागवत ।

हादशस्कन्ध १८०० सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पीय कथा ।

प्रथमस्कन्ध ।—१ सूत और ऋषियों का मिलन २ व्यासदेव का पुण्य चरित्र ३ पाण्डव का चरित्र ४ परीक्षित का उपाख्यान ।

द्वितीयस्कन्ध ।—१ परीक्षित शुकसंवाद से सृष्टिद्वयनिरूपण २ ब्रह्मानन्द संवाद से शवतार कथन ३ पुराण लक्षण ४ सृष्टि प्रकरण कथन ।

तृतीयस्कन्ध ।—१ विदुरचरित्र एवं मैत्रेय मिलन २ ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३ कपिल सांख्य कथन ।

चतुर्थस्कन्ध ।—१ सतीचरित्र २ ध्रुवचरित्र ३ पृथुचरित्र ४ प्राचीन बर्हि उपाख्यान ।

पञ्चमस्कन्ध ।—१ प्रियव्रतचरित्र एवं उनका वंशकथन २ ब्रह्माण्डान्तर्गत लोक सकल का उत्पत्ति ३ नरकस्थिति कथन ।

षष्ठस्कन्ध ।—१ अजामिल चरित्र २ दक्षसृष्टि निरूपण ३ इन्द्रासुर उपाख्यान ४ सप्त जन्म कथन ।

सप्तमस्कन्ध ।—१ ब्रह्मादचरित्र २ वर्णाश्रम निरूपण ३ वासना कर्म इत्यादि कीर्तन ।

अष्टमस्कन्ध ।—१ गजन्द्र मोक्षण २ मन्वन्तर निरूपण ३ समुद्रमथन ४ बलि वैभव एवं बन्धन ५ सव्यावतार चरित्र ।

नवमस्कन्ध ।—१ सूर्यवंश कथन २ रामायण ३ सोमवंश निरूपण ।

दशमस्कन्ध ।—१ श्रीकृष्ण बालचरित्र २ कौमार चरित्र ३ व्रजस्थिति ४ केशीर लीला ५ मथुरावास ६ यौवन ७ द्वारकास्थिति ८ भूभारहरण ।

एकादशस्कन्ध—१ वसुदेव नारद संवाद २ यदु दत्तात्रेय सस्वाद ३ श्री कृष्ण उद्वव सस्वाद ४ यादव मुक्तिकथन ।

द्वादशस्कन्ध—१ भविष्य एवं कान्तिकाथा २ परोक्षित मोक्ष ३ विदशाखा कथन ४ मार्कण्डेय तपस्या ५ सौरी विभूति कथन ६ पुराण संख्या कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण हेम सिंहासनस्थ करके भाद्री पूर्णिमा की प्रीति-पूर्वक ब्राह्मण को वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता है और श्रवण करने से श्रयवा श्रवण कराने से भक्ति और सुक्ति लाभ होता है और इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने किम्बा कराने से सम्पूर्ण भागवत श्रवण फल लाभ होता है ।

षष्ठ नारदपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में २५००० सङ्ख्य श्लोक पूर्व भाग चार पाद में विभक्त ।

पूर्वभाग का प्रथमपाद ।

सूत शीनक सस्वाद—१ षष्टि संक्षेपवर्णन एवं नाना धर्म कथा ॥ पूर्वभाग द्वितीयपाद । १ मोक्ष धर्म कथन मोक्षोपाय निरूपण २ वेदाङ्गकथन ३ सनन्दन कर्त्तृ नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन ४ महातन्त्र से पशुपाश विमोचन ५ मन्त्रशोधन ६ दीक्षा ७ मन्त्रीद्वार पूजाप्रयोग कवच विष्णुसङ्ग स्नातन एवं स्तोत्र ८ गणेश सूर्य विष्णु शिव एवं शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन ।

पूर्वभाग तृतीयपाद—१ नारद और सनत्कुमार सस्वाद २ पुराण लक्षण प्रमाण एवं दान काल कथन ३ चैत्रादि मास की प्रतिपदादि तिथिग्रन्त विस्तार कथन ।

पूर्वभाग चतुर्थपाद—१ सनातन कर्त्तृक नारद प्रति हृदयाख्यान कथन ।

उत्तरभाग—१ एकादशी व्रत विषयक प्रश्न २ वशिष्ठ एवं मांघाता का सस्वाद ३ रुक्माङ्गद की कथा ४ मोहिनी की उत्पत्ति एवं सस्वाद ५ मोहिनी प्रतिवसु का श्राप एवं उद्धार ६ गङ्गा की पुण्यकथा ७ गया यात्रा ८ काशी साहात्म्य ९ पुरुषोत्तमवर्णन १० ज्ञेययात्रा एवं अन्यान्य बहुकथा ११ प्रयाग-साहात्म्य १२ कुचक्षेत्रमाहात्म्य १३ हरिद्वारमाहात्म्य १४ कामोदा आख्यान १५ वन्दरी तीर्थ साहात्म्य १६ कामाख्या साहात्म्य १७ प्रभासमाहात्म्य १८ पुराण आख्यान १९ गीतसाख्यान २० वेदपाद सूत्र २१ गोकर्णक्षेत्र साहात्म्य २२ लक्ष्मण आख्यान २३ सेतुसाहात्म्य २४ नर्मदासाहात्म्य २५ अथ-

न्वीमाहात्म्य २६ मथुरामाहात्म्य २७ ब्रह्मावनमाहात्म्य २८ ब्रह्मा के निकट वसु का गमन २९ मोहिनीचरित्र कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण करने किम्बा श्रवण कराने से ब्रह्मधाम प्राप्ति होती है और अतुल्यमणिका श्रवण करने से, किम्बा श्रवण कराने से स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा को सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है ।

सप्तमं मार्कण्डेयपुराण ।

८००० सहस्र श्लोक ।

१ मार्कण्डेय कर्तृक जैमिनि का पचिर्था के निकट प्रेरण २ धर्म पक्ष युक्त का जन्म निरूपण ३ इन की पूर्वजन्म कथा ४ सूर्य क्रिया कथन ५ बलदेव तीर्थ यात्रा ६ द्रौपदेय कथा ७ हरिश्चन्द्र पुण्यकथा ८ आर्द्धीवक नामक युद्ध कथा ९ पिता पुत्र कथा १० दत्तात्रेयकथा ११ वैश्य चरित्र एवं माहात्म्य १२ मद्राक्षसा कथा १३ अक्षकचरित्र १४ पत्नी संकीर्तन १५ नव प्रकार पुण्यकथा १६ कतिपय अन्तकाल निर्देश १७ पचिष्टष्टि निरूपण १८ संद्रा-दिष्टष्टि १९ हीप एवं वर्ष कथा २० मनु कथा और अष्टम सन्वन्तर में देवी-माहात्म्य कथा २१ प्रणवोत्पत्ति कथा वेद एवं तेज जन्म २२ मार्कण्डेय जन्म और माहात्म्य २३ वैवस्वत चरित्र सहित वल्लमीर चरित्र २४ श्वित्र पुण्य-कथा २५ अवधत चरित्र २६ किमिच्छन्नत २७ अविनाश चरित्र २८ इच्छाकु चरित्र २९ तुलसाचरित्र ३० रामचन्द्रकथा ३१ कुश वंश आख्यान ३२ सोम-वंश की कथा ३३ नहुष की अद्भुतकथा ३४ ययाति चरित्र ३५ यदुवंशकीर्तन ३६ श्लोकण बालचरित्र ३७ मथुरा में श्लोकण चरित्र ३८ हारका चरित्र ३९ संकल अवतार कथा ४० सांख्ययोग उद्देश ४१ प्रपञ्च एवं असत्य कीर्तन ४२ मार्कण्डेय चरित्र ४३ पुराण श्रवण फल ।

फलश्रुति—यह पुराण किम्बा कर सुवर्ण संयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपट्ट मिलता है एवं भक्तिपूर्वक श्रवण करने से किम्बा श्रवण कराने से मार्कण्डेय तुल्य गति प्राप्ति और वाञ्छित फल लाभ होता है ।

अष्टमं अग्निपुराण ।

१५००० सहस्र श्लोक ईशानकव्य कथा-वशिष्ट नक्षत्रपाख्यान ।

१ पुराणभङ्ग २ सर्वभवतार कथा ३ श्चष्टिप्रकारण कथन ४ विष्णुपजादि

विधि ५ अग्निपूजा मंत्र और सुद्रादि लक्षण ६ दीक्षाविधान ७ अभिवेक
 कथन ८ मण्डल करण लक्षण ९ कुशमार्जन १० पविचारोपण विधि ११ देवा-
 लयकरण विधि १२ शाक्तग्राम पूजा एवं लक्षण कथन १३ प्रतिष्ठाप्रकरण
 १४ न्यासादि विधि १५ विनायक दीक्षाविधि १६ अन्यान्यकथन १७ देवप-
 तिष्ठाविधि १८ ब्रह्माण्ड निरूपण १९ गङ्गादि तीर्थ साहाय्य २० होपवर्णन
 २१ उर्ध्व एवं अधोकोक रचना २२ ज्योतिषवक्त्र निरूपण २३ ज्योतिष शास्त्र
 वर्णन २४ युद्धजयकरण शास्त्र २५ पट् कर्म कथा २६ मन्त्रयन्त्र औपध प्रकरण
 २७ कुञ्जिकादिकथन २८ क प्रकार के व्यास की विधि २९ कोटि होम विधान
 एवं विस्तार निरूपण ३० ब्रह्मचर्य धर्म ३१ आटकल्पविधि ३२ षडयज्ञ ३३
 वेदीक्ष एवं सृष्ट्युक्तकर्म ३४ प्रायश्चित्त कथन ३५ प्रतिध्वजतादि कथन ३६ बारव्रत
 ३७ नचव्रत ३८ मासव्रत ३९ दीपदान विधि ४० नूतन व्यूहासन प्रकरण
 ४१ नैरेक निरूपण ४२ व्रत एवं दान निरूपण ४३ नाड़ी चक्रवर्णन ४४ संख्या-
 विधि ४५ गायत्री अर्थ ४६ शिवलिङ्गस्तोत्र ४७ राजाभिवेक यन्त्र ४८ राज-
 धर्म एवं राजकार्य ४९ राजा का अध्ययन ५० शकुन्वादि शुभाशुभ दृष्टि नि-
 रूपण ५१ मण्डलादि निर्देश ५२ रणदीक्षा विधि ५३ श्रीरामोक्तोक्ति ५४
 रत्नलक्षण ५५ धनु विद्या ५६ व्यवहार निरूपण ५७ देवासुर विवर्द्धन प्राख्या-
 न ५८ आयुर्वेद निरूपण ५९ गजादि की रोग चिकित्सा एवं आरोग्य कथन
 ६० गो भस्मादि स्त्री चिकित्सा ६१ नाना पूजा प्रकरण ६२ विविधगान्धि ६३
 कन्दशास्त्र ६४ साहित्यशास्त्र ६५ एकार्थवादि शास्त्र समाख्यान ६६ प्रसिद्ध
 शिष्टाशुभासन ६७ घनागार एवं सृष्ट्यादिवर्ग ६८ प्रलय लक्षण ६९ शरीरक
 निरूपण ७० नरकवर्णन ७१ योगशास्त्र ७२ ब्रह्मज्ञान ७३ पुराण अथवा
 साहाय्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख करु अग्रहायण मास में सुवर्ष कमल-सं-
 हित अथवा तिथि धेनु सहित पुराण विज्ञानाङ्गण को दान करने से स्वर्ग लाभ
 होता है एवं यह पुराण श्रद्धा करके श्रवण करने किम्बा श्रवण कराने से
 सकल पाप नश्य होता है । और भक्ति युक्त होकर इस पुराण की अनुकम-
 यिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल संभ्य होता है ।

नवमं भविष्यपुराण ।

पञ्चपर्व १४००० सहस्र श्लोक । अक्षीरकल्प उत्तान्त । नाना आश्चर्य कथा ।
 प्रथमपर्व ब्राह्मणपर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एवं पञ्चमपर्व एकल हैं ।

प्रथमपर्व सूत शौनका सखाद—१ पुराण प्रश्न २ नाना आख्यान युक्त-
सूर्य चरित्र वर्णन ३ सृष्ट्यादि लक्षण ४ पुस्तक लेखक एवं लिखने का लक्षण
५ सकल प्रकार संख्यान लक्षण ६ प्रतिपदादि त्रिंशत् एवं समकल्प कथन ७
विष्णु विषय अष्टम्यादि शेषकल्प कथा ८ शैव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न
कल्प कथन ९ सौर विषय शेषकथा १० नाना आख्यान युक्त प्रति सृष्टि नाम
वर्णन ११ पुराण उपसंहार एवं पञ्चपर्व कथन इष्ट पर्व में धर्म विषय में ब्रह्मा
की महिमा का आधिक्य कथन है ।

द्वितीयपर्व—भोग विषय में शिवमाहात्म्य कथन ।

तृतीयपर्व—सौक्ष्मविषय में विष्णु का साहात्म्य कथन ।

चतुर्थपर्व—चतुर्वर्ग विषय में सूर्यमाहात्म्य कथन ।

पञ्चमपर्व—सर्व कथा युक्त पतिसर्ग वर्णन इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म
का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर षोषी षोणिसाहस्रिकी गुड़ धेनुस्वर्ण वस्त्र
साख्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किस्वा पाठ
करने से सकल घोर पाप से विसुक्ति एवं ब्रह्मपद प्राप्ति होती है और पुराण
की अनुकमणिका पाठ किस्वा श्रवण करने से भक्ति सुक्ति मिलती है ।

दशम ब्रह्मवैवर्तपुराण ।

चारखण्ड १८००० सङ्ख्ये श्लोक प्रथम ब्रह्मखण्ड द्वितीय प्रकृति खण्ड
तृतीय गणेशखण्ड चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खण्ड ।

सूत ऋषिसखाद प्रथम ब्रह्मखण्ड—१ सृष्टिपकरण २ नारद और ब्रह्मा
विवाद एवं शापान्त ३ नारद का शिवलीक गमन एवं गान शिखा ४ शिवा-
देश से सरोचि के सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धार्थम में गमन ।

द्वितीय प्रकृतिखण्ड—१ सावर्णि नारद सखाद २ श्रीकृष्ण माहात्म्य
युक्त नानाख्यान २ प्रकृति की अंश और कलाओं का साहात्म्य वर्णन ४ उन-
का गङ्गादि विस्तार और साहात्म्य वर्णन ।

तृतीय गणेश खण्ड—१ गणेश जन्म प्रश्न २ पुण्यव्रत कथन ३ मार्कती
कार्तिका एवं गणेश जन्म ४ कार्तवीर्य चरित्र ५ परशुराम विवरण ६ जमदग्नि
एवं गणेश का आश्चर्य विवाद ।

चतुर्थ श्रीकृष्णजन्म खण्ड—१ श्रीकृष्णजन्म प्रश्न एवं जन्म कथा २ गोकुल-
गमन ३ पूतनादि बध ४ वाल्य कौसार विविध लीला वर्णन ५ भरत्वाक से

गोपसहित राम क्रीड़ा ६ श्रीराधिका सहित मिर्जन क्रीड़ा विस्तार वर्णन
७ अक्षर सहित हरि मथुरा गमन ८ कंस वध ९ द्विजसंस्कार १० सांदीपनी
गुरु निकट विद्योपार्जन ११ कालववनवध १२ द्वारकागमन १३ नरकादि
वध वर्णन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर माघ मास में धेनु सहित ब्राह्मण को
दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है एवं अज्ञान बन्धन से मुक्ति होती है
श्रीर पाठ किस्वा श्रवण करने से संसार बंधन नष्ट होता है तथा इस पुराण
को अनुकामणिका पाठ करने श्रीकृष्ण के प्रसाद से वांछित फल लाभ होता है ।

एकादश लिङ्गपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग ११००० सहस्र श्लोक । शिवमाहात्म्य प्रकाशय
अग्नि कल्प कथा ।

पूर्वभाग—१ पुराणान्त में सृष्टि विषयक संक्षेप प्रश्न २ योगाख्यान ३
कल्याख्यान ४ लिङ्गउद्भव एवं पूजा ५ सनत्कुमार और शैलादि का सम्वाद ६
दधोचि चरित्र ७ युग धर्म निरूपण ८ कोपकथन ९ सूर्यवंश एवं सोमवंश
वर्णन १० सृष्टिवर्णन एवं विपुर आख्यान ११ लिङ्गप्रतिष्ठा कथन १२ पशुपति
विमोक्षण १३ शिवव्रत १४ सदाचार निरूपण १५ प्रायश्चित्त कथन १६
श्रीशैल वर्णन १७ अन्धक आख्यान १८ वाराह चरित्र १९ नृसिंह चरित्र
२० जलम्बर वध २१ शिवसहस्रनाम २२ दक्षयज्ञ विनाश २३ कामदेव
दहन २४ गिरिजा सह शिव विवाह २५ विनायक आख्यान २६ शिवचल्य
२७ उपमन्यु कथा ।

उत्तरभाग—१ विश्वमाहात्म्य २ अश्वरोध कथा ३ सनत्कुमार तन्दि
सम्वाद ४ शिवमाहात्म्य ५ ज्ञान यागादिक वर्णन ६ सूर्य पूजा विधि ७ शिव
पूजा ८ बहुविध दानार्थ विधि ९ आहुतप्रकरण १० मूर्त्ति प्रतिष्ठा प्रकरण ११
घोरतम कथा १२ ब्रजेश्वरी महाविद्या गायत्री मन्त्रिमा वर्णन १३ त्र्यम्बक-
माहात्म्य १४ पुराण श्रवण माहात्म्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर फाल्गुनी पूर्णिमा को तिल धेनु सहित
भक्तिपूर्वक ब्राह्मण को दान करने से जरा मरण वर्जित होकर शिव सायुज्य
प्राप्ति होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग करने अन्त में
शिवलोक में गमन होता है और अनुकामणिका श्रवण किस्वा पाठ करने से

श्रोता एवं पाठक उभय शिवभक्त होते हैं एवं बहुकाल खर्ग भोग करते हैं ।

द्वादश वराहपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर भाग २४००० सहस्र श्लोक विष्णुमाहात्म्य वर्णन भूमि वराह संवाद मानवकल्प प्रसंग ।

पूर्वभाग—१ आदि छत वृत्तान्त रश्मा चरित्र कथन २ दुर्जय प्रतिश्राव कल्प कथा ३ मन्ना तपस्या आख्यान ४ गौरी उत्पत्ति कथन ५ विनायक कथा ६ नागकथा ७ सेनांनी एवं आदित्यकथा ८ देवगण कथा ९ कुबेर गण सकल कथा १० वृषकथा ११ सत्यतप कथा १२ व्रत आख्यान १३ अगस्त्यगीता १४ सद्गोता १५ महिपासुर वध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की श्रुति एवं साहात्म्य कथन १६ पर्वीध्याय १७ श्वेत उपाख्यान १८ गोदान कथा १९ भगवद्धर्म २० व्रत एवं तीर्थ कथा २१ अचि अपराध कथा २२ शारीरिक प्रायश्चित्त २३ सकल तीर्थ महिमा २४ मथुरा साहात्म्य विशेष वर्णन २५ ऋषिपुत्र प्रसङ्गा-धोन यमकीक वर्णन २६ कर्म विपाक २७ विष्णु व्रत निरूपण २७ गीकर्ण साहात्म्य ।

उत्तरभाग—पुनस्त्व कुरुराज सव्याद सकल तीर्थ साहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन २ अशेष धर्माख्यान ३ पौष्कर पुण्य कथा ।

फलश्रुति—यह पुस्तक लिखकर चैत्री पूर्णिमा को काञ्चन गरुड़ एवं तिन धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा बन्धित होता है और पुराण पाठ करने किस्वां अथवा करने से भगवान की भक्ति होती है । और अनुक्रमणिका पाठ किस्वां अथवा करने से संसार नाशनी विष्णुभक्ति लभ्य होती है ।

त्रयोदश स्कंदपुराण

सप्तखण्ड १००० सहस्रश्लोक—१ महाेश्वरखण्ड २ वष्णवखण्ड ३ ब्रह्मखण्ड ४ काशीखण्ड ५ अचन्तीखण्ड ६ नागरखण्ड ७ प्रभासखण्ड । इस पुराण में कार्तिकेय ने महाेश्वर धर्म काड़ा है ।

प्रथम साहेश्वरखण्ड ।

प्राय १२००० सहस्र श्लोक—१ कीदारमाहात्म्य २ दत्त यज्ञ कथा ३ शिव लिंग अर्चन फल ४ समुद्रमन्थन ५ देवेन्द्र चरित्र ६ पार्वती उपाख्यान एवं विवाह ७ कार्तिकेय उत्पत्ति ८ तारकासुर युद्ध ९ पाशपतआख्यान १० चण्डा-

ख्यान ११ दूत प्रवर्तन १२ नारद समागम १३ कुमार माहात्म्य १४ पञ्च तीर्थ कथा १५ धर्म न्यायख्यान १६ नदी, एवं सागर कीर्तन १७ इन्द्रयुद्ध कथा १८ नाड़ी जङ्घ कथा १९ प्रथिवी प्रादुर्भाव २० दमनक कथा २१ मछी सागर संयोग २२ कुमार कथा २३ नाना आख्यान युक्त तारक युद्ध २४ तारक बध २५ पञ्च निङ्ग निवेश २६ हीमाख्यान २७ ऊर्ध्व लोक स्थिति २८ ब्रह्मांड स्थिति एवं परिमाण २९ वक्रेश कथा ३० महाकाल समुद्रव एवं अद्भुत कथा ३१ वासुदेव माहात्म्य ३२ करितीर्थ वर्णन ३३ नाना तीर्थ कथा ३४ गुप्तचक्र कथा ३५ पाण्ड्यनी की पुण्य कथा ३६ महाविद्या प्रसाधन ३७ तीर्थ यात्रा समाप्ति ३८ अरुणाचल माहात्म्य ३९ सनक एवं ब्रह्मा की कथा ४० गौरी तपस्या एवं तीर्थ निरूपण ४१ महिषासुर की पुत्र का आख्यान एवं उस का अद्भुत बध ४२ शोनाचल में भगवती का नित्य अवस्थान कथन ।

द्वितीय वैष्णवखण्ड—१ भूमि वराह आख्यान रोचक ऋषमहात्म्य २ कामदा कथा ३ श्री निवास स्थिति ४ कुशाचल आख्यान ५ सुवर्ण सुख कथा ६ नाना ख्यान युक्त भारद्वाज कथा ७ मतङ्गाङ्गन सन्वादे ८ उल्का में पुद्गली-त्तम माहात्म्य ९ मार्कण्डेय कथा १० अश्वरोष कथा ११ इन्द्रयुद्ध आख्यान १२ विद्युन्मति कथा १३ जैमिनि कथा १४ नारद कथा १५ नीलकण्ठ आख्या-न १६ नृसिंह वर्णन १७ राजा की अश्वमेध कथा एवं ब्रह्मलोक गति १८ रथ-यात्रा विधि एवं जन्म और ज्ञान यात्रा विधि १९ दक्षिणा मूर्त्ति आख्यान २० गुण्डिका आख्यान २१ रथ रत्ना विधान २२ शयनीश्वर वर्णन २३ मंत्रोक्त श्व तोपाख्यान २४ शम्भोश्वर २५ दोनोश्वर २६ भगवान का सांख्यिकज्ञत कथन २७ विष्णु पूजा २८ मोक्षसाधन मन्त्रोक्त नाना योग निरूपण २९ द-श्रावतार कथा ३० ज्ञानादि कीर्तन ३१ बदरिका माहात्म्य ३२ वैतथ्य थिला जात अग्न्यादि तीर्थ माहात्म्य ३३ भगवान की वास का कारण कपा-ल मोचन तीर्थ कथा ३४ पञ्च धारा तीर्थ कथा ३५ मेघ संस्थापन ३६ कार्तिक माहात्म्य में अदाससा माहात्म्य ३७ धूम्र कोष आख्यान ३८ कार्तिक आस का दिन कृत्य ३९ भीष्मपञ्चक ज्ञत आख्यान ४० तीर्थ माहात्म्य प्रसङ्ग से ज्ञान विधान ४१ पुत्रादि कीर्तन एवं साक्षात्कार कथा और पञ्चाङ्ग ज्ञान एवं घण्टा बादनदि फल ४२ ज्ञाना पुण्य द्वारा अर्चन फल ४३ तुलसीदल से अर्चन फल ४४ त्रैलोक्य माहात्म्य ४५ इतिहास वर्णन ४६ एकादशी एवं वा-गरण माहात्म्य ४७ मन्त्रोक्त विधान ४८ नामं माहात्म्य ४९ ध्यानादिखण्ड

कथा ५० मथुरा तीर्थ माहात्म्य ५१ हादश बंन माहात्म्य ५२ श्रीमद्भागवत
माहात्म्य ५३ बव्य शाण्डिल्य सन्वाद् ५४ अन्तर्लिप्ता कथन और श्रीनाथ के-
शवंदेवादि विग्रह स्थापन ५५ भाष में ज्ञान दान जप माहात्म्य और नाना-
ख्यान ५६ वैशाख माहात्म्य ५७ श्यां दान फल ५८ जल दान फल ५९
कामाख्या वर्षण ६० श्रुतदेवचरित्र ६१ व्याध उपाख्यान ६२ अक्षय दत्तोयादि
विशेष पुण्य कीर्तन ६३ अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसङ्ग ऋषि प्रति
विमोक्ष कथा आधार सङ्घर्ष एवं स्वर्गद्वार चंद्रहरि और धर्महरि वर्षण ६४
स्वर्ण वृष्टि आख्यान ६५ तिक्तद्वार उचित संरयू मिलन कथा ६६ सीताकुंड
कथा ६७ गुप्त हरि कथा ६८ संरयू और घर्षरा आख्यान ६९ गोप्रभाव ७०
दुग्धोद कथा ७१ गुप्त कुण्डादि पञ्चतीर्थ कथा ७२ चौपाकादि त्रयोदश तीर्थ
वर्षण ७३ गयाकूप माहात्म्य ७४ माण्डव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्षण ७५
अजिंतादि मानसादि असंख्य तीर्थ वर्षण ।

द्वतीय ब्रह्मखण्ड—१ सेतुमाहात्म्य प्रसङ्ग से ज्ञान एवं दर्शन अन्य फल
कथन २ गालव तंपस्या ३ राक्षसाख्यान ४ चक्र तीर्थ माहात्म्य ५ देवीपतन
कथा ६ वेताल तीर्थ माहात्म्य ७ पाप नाशदि तीर्थकथन ८ मङ्गलादि
तीर्थ माहात्म्य ९ ब्रह्मकुण्ड वर्षण १० इनुमत् कुण्ड महिमा ११ अगस्त्य
तीर्थ फल १२ राम तीर्थ कथन १३ लक्ष्मी तीर्थ निरूपण १४ शंखादि तीर्थ
महिमा १५ साध्यष्टत् तीर्थ महिमा १६ धनुष्कोव्यादि तीर्थ महिमा १७
चौरकुण्डादि माहात्म्य १८ गायत्रादि तीर्थ माहात्म्य १९ रामनाथ महिमा
एवं तत्वज्ञानोपदेश २० सेतु यात्राभिधान २१ धर्मारण्य माहात्म्य एवं तत्-
स्थान सभूति और पुण्य कथा २२ कर्मसिद्धि आख्यान २३ ऋषिवंश २४
अक्षरातीर्थ माहात्म्य २५ वर्षण एवं आश्रम धर्म और तत्व निरूपण २६ देव-
स्थान विभाग २७ बकुलाकी कथा २८ छत्रां नन्दा शान्ता श्रीमाता एवं मत-
ङ्गिनी देवी की अवस्थिति २९ इन्द्रेश्वरादि माहात्म्य ३० द्वारकादि निरूपण
३१ चोडासुर आख्यान ३२ गङ्गाकूप निरूपण ३३ श्रीरामचरित्र ३४ सत्य
मन्दिर वर्षण ३५ जीर्थ मन्दिरादि उच्चार कथा ३६ शासन प्रतिपादन ३७
जातिभेद कथन ३८ स्तुतिधर्म निरूपण ३९ नानाख्यान से वैष्णवधर्म नि-
रूपण ४० चातुर्मास्य सकल धर्म निरूपण ४१ दान व्रत महिमा ४२ तंपस्या
पूजा एवं सच्छत्र कथन ४३ प्रकृति आख्यान ४४ शास्त्रधाम निरूपण ४५
तारकासुर कथ उपाय ४६ लक्ष्मी अर्चन एवं महिमा ४७ विष्णु की श्राप से

हृत्सल्य प्राप्ति एवं पार्वती का अनुनयं ४८ महादेव का ताण्डव नृत्य राम नाम निरूपण ४९ हरल्लङ्घन पतन ५० जवन कथा ५१ पार्वती जन्म और चरित्र ५२ तारक वच ५३ प्रणव ऐश्वर्य-कथन ५४ तारक चरित्र ५५ दत्त यज्ञ समाप्ति ५६ हादय अक्षर निरूपण ५७ ज्ञान योग आख्यान ५८ हादय आदित्य महिमा ५९ आबणादि पुष्प कथा ।

द्वितीय ब्रह्मखण्ड उत्तरभाग—१ शिव का अद्भुत माहात्म्य २ पञ्चाक्ष महिमा ३ भोकर्ण महिमा ४ शिवरात्रि महिमा ५ प्रदीप व्रत कीर्तन ६ सीमवार व्रत ७ सीमन्तिनो कथा ८ भद्रायु उत्पत्ति कथन ९ सदाचार १० शिव धर्म कथा ११ भद्रायु विवाह एवं महिमा १२ भस्म माहात्म्य १३ श्वराख्यान १४ ऋसा माहेन्द्र व्रत १५ रुद्राक्ष माहात्म्य १६ रुद्राध्याय माहात्म्य आदि पुष्प कथन ।

चतुर्थ काशीखंड । विष्ण्वारद सम्वाद—१ सत्यलोक प्रभाव २ भगवत्याज्जम में देवता सकल का आगमन ३ पतिव्रता चरित्र ४ तीर्थयात्रा प्रशंसा ५ समपुरी आख्यान ६ यमुपुरी निरूपण ७ शिवशर्मा की भुवलोक इन्द्रलोक अग्नि-लोक प्राप्ति ८ अग्नि उद्भव ९ ऋष्याद वरुण सम्भव १० गन्धर्वती शकल-पुरी एवं ईश्वरो का उद्भव और चंद्र मङ्गल बुध एवं रवि आदि लोक का उद्भव ११ सप्तऋषि एवं भुवलोक का वर्णन १२ भुवलोक की पुष्पकथा १३ सत्यलोक निरूपण १४ स्कान्य और भगवत्य का आलाप १५ मणिकर्णिका का उद्भव १६ गङ्गा का प्रभाव एवं सहस्रनाम १७ वारानसी प्रशंसा १८ भैरव आविर्भाव १९ दण्डपाणि एवं ज्ञानरवि का उद्भव २० कलावती आख्यान २१ सदाचार निरूपण २२ ब्रह्मचारि कथा २३ स्त्रीलक्षण कथन २४ कल्याण-स्य निर्देश २५ अविमुक्तेश्वर वर्णन २६ गृहस्थ एवं योगि धर्म २७ कानूजान २८ दिवोदास कथा २९ काशीवर्णन ३० योगि चर्या कोलाक ३१ शंखाक कथा ३२ सुपदाक एवं ताक तीर्थ कथा ३३ अरुणाक का उदय ३४ दशरथ-मेघ आख्यान ३५ मन्दराचल से गणपति की माया प्रकाश ३६ पिशाच मोचन आख्यान ३७ गणेश प्रेषण ३८ गणपति का आगमन और माया प्रकाश ३९ छविनी से माया का प्रादुर्भाव ४० विश्वामाया का विस्तार ४१ दिवोदास विमोचन ४२ पञ्च नदीत्पत्ति ४३ त्रिन्दुमाधव सम्भव ४४ वैष्णव तीर्थ आख्यान ४५ महादेव का काशी में आगमन ४६ जैशायस्य के संहत मणेश का आख्यान ४७ शिवचन्द्र आख्यान ४८ कन्दनैश्वर एवं व्याघ्रेश्वर का उद्भव

४६ श्रीलेश्वर एवं कृत्तिकास का उद्भव ५० देवता सकल का अधिष्ठान ५१ दुर्गासुर का पराक्रम ५२ दुर्गाविजय ५३ कांकारेश्वर वर्णन ५४ ऊँकार महावाक्य ५५ त्रिभोचन समुद्भव ५६ कीदार आख्यान ५७ धर्मेश्वर कथा ५८ वीरेश्वर आख्यान ५९ गङ्गा महावाक्य कीर्तन ६० विश्वकर्माेश्वर महिमा ६१ दक्ष यज्ञोद्भव ६२ सतीश्वर एवं अमृतेश्वर उपाख्यान ६३ पराशर भुजस्तम्भ ६४ चित्रतीर्थ समूह वर्णन ६५ सुक्ति मण्डप कथा ६६ विश्वेश्वर विभव ६७ यात्रा परिक्रम ।

पञ्चम भवन्तीखण्ड—१ महकाल यवन का आख्यान २ ब्रह्मशीर्षच्छेद ३ प्रायश्चित विधि ४ अग्नि उत्पत्ति एवं आगसन ५ देवदक्ष ६ नाना पाप नाशन शिवस्तोत्र ७ कपाल मोचन आख्यान एवं महाकाल वन स्थिति ८ कर्णेश्वर तीर्थ आख्यान ९ अक्षराङ्गण कथा १० स्वर्ग में रुद्रकुंड उपाख्यान ११ कुन्दुडविश एवं मर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन १२ स्वर्गद्वार चतुःसिंधु शंकरांक गन्धवती एवं दशशमेध कालाश तीर्थ वर्णन १३ पिशाचकादि यात्रा १४ हनुमान एवं यमेश्वर वर्णन १५ महाकालेश्वर यात्रा १६ वास्तोकेश्वर तीर्थ १७ भेषजाख्य शुक्ल तीर्थ कुशस्थली प्रदक्षिण १८ अक्षर सन्दाकिनो कपाल चन्द्रार्क वैभव कारभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन १९ मार्कण्डेश्वर २० यज्ञवापी २१ सोमेश्वर २२ नरकान्ताक २३ कीदारेश्वर २४ रामेश्वर २५ सौभाग्येश्वर २६ नरार्क २७ केशार्क २८ शक्तिभेद २९ खर्णाक्षर सुख ३० षोडशेश्वरादि तीर्थ वर्णन ३१ अन्धक स्तुति कीर्तन ३२ कालारखलिङ्गसंख्या ३३ स्वर्णशृङ्ग ३४ कुशस्थली ३५ भवन्तशिव ३६ उज्जयिनी ३७ पद्मावती ३८ कूर्मद्वती ३९ रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान ४० विद्याला एवं प्रतिकल्प ४१ ऊर्वशांति क तीर्थ कथन ४२ घिप्रा ज्ञानादि फल ४३ नाग कृत शिव स्तुति ४४ हिरण्णाक्ष बधाख्यान ४५ सुन्दर कुंड ४६ नीलगङ्गा ४७ पुष्कर ४८ विन्ध्यवासनी ४९ पुरुषोत्तम ५० अविनास ५१ अघनाशन ५२ गोमती ५३ वामन एवं कुंडतीर्थ वर्णन ५४ विष्णुसहस्रनाम ५५ कालभैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान ५६ नागपञ्चमी में नृसिंह महिमा वर्णन ५७ जयन्तिका कुठारेश्वर यात्रा ५८ देवसाधक और ५९ कर्कराज ६० विष्णेशादि सुरोत्थ तीर्थ विवरण ६१ रुद्रकुंडादि बहु तीर्थ निरूपण ६२ अष्टतीर्थ निरूपण ६३ रेवामाहात्म्य ६४ धर्मपुत्र का वैराग्य व्रतः मार्कण्डेय संगम ६५ प्रागल्भ्य उपाख्यान ६६ अष्टता कीर्तन ६७ प्रतिकल्प में नर्मदा वर्णन ६८ आर्यस्तव ६९ नर्मदास्त्वैव ७०

कानरात्रि कथा ७१ महादेवस्तुति ७२ पृथक् २ कल्प को अद्भुत कथा
 ७३ विग्रह्याख्यान ७४ जालेश्वर कथा ७५ गौरीव्रत ७६ विपुत्र दण्डन कथा
 ७७ देहपात विधान ७८ कावेरी संगम ७९ दारुतीर्थ व्रजामित्र ईश्वर कथा
 ८० अग्नि ८१ रवि ८२ मेघनाद ८३ द्विदारुक ८४ देव ८५ नर्मदेश्वर ८६ का-
 पिनाख्य ८७ करञ्जक ८८ कुंडलेश्वर ८९ पिप्लनाद और ९० विमलेश्वरादि
 तीर्थ कथनं ९१ शचीहरण आख्यांन ९२ मन्दक वध ९३ शूलभेद उद्वेग ९४
 पृथक् दान धर्म कथन ९५ दीर्घ तापस आख्यान ९६ ऋष्यशृङ्ग कथा ९७
 चित्रसेन कथा ९८ काशीराज मोचण ९९ देवशिकता आख्यान १०० शयरी
 चरित्रं १०१ व्याघाख्यान १०२ पुष्करिण्यर्क १०३ तापितेश्वर १०४ शक्र १०५
 करोटीक १०६ कुंमारेश १०७ अगख्येश १०८ साहज १०९ लोकेश ११०
 धनदेश १११ मङ्गलेश ११२ कामज ११३ नागेश ११४ गोपार ११५ गौतम
 ११६ शंख चूडन ११७ नारदेश ११८ मन्दिकेश ११९ यक्षेश्वर १२० दक्षिष्क-
 न्य १२१ हनुमन्तेश्वर १२२ रामेश्वर १२३ सोमेश १२४ पिङ्गलेश्वर १२५ ऋ-
 णमोच १२६ कपिलेश्वर १२७ पृथिकेश्वर १२८ जलेश्य १२९ चंडाक १३०
 यम १३१ कंकडडीश १३२ नादिक १३३ नारायण १३४ फौटीश्वर १३५
 व्यास १३६ प्रभासिका १३७ नागेश्वर १३८ संकर्षण १३९ मन्मथेश्वर १४०
 एरंडी संगम १४१ सुवर्णेशिक १४२ कारञ्ज १४३ कामञ्ज १४४ भांडीर १४५
 वाहिनोभव १४६ चक्र १४७ धौतपाप १४८ स्कान्द १४९ आगिरस १५०
 कोटि १५१ अयोनि १५२ अंगार १५३ चित्तोवन १५४ इन्द्रेय १५५ जम्बुकेश्य
 १५६ सोमेश १५७ कौहर्नाथिक १५८ नार्थीदे १५९ आर्क १६० आम्नेय १६१
 भागवेश्वर १६२ ब्राह्म १६३ देव १६४ भागेश १६५ आदिवाराह १६६ रामेश
 १६७ सिद्धेश १६८ पांडव्य १६९ कङ्कटेश्वर १७० ब्राह्म १७१ सोमेश १७२ जत-
 न्देश १७३ तापेश १७४ क्लिषो भव १७५ शोचनेश १७६ खरादेश १७७
 हादशो तीर्थ १७८ शिव १७९ सिद्धेश १८० मङ्गलेश्वर १८१ विष्णु शराह
 १८२ कुंडेश १८३ श्वेतवाराह १८४ भागवेश १८५ खोश्वर १८६ शलादि
 १८७ कुंभारक्षामि १८८ संगमेश १८९ नरकेश १९० मोच १९१ साप १९२
 भोपक १९३ नाग १९४ शिव १९५ सिद्धेश १९६ मार्कंड १९७ अक्षर १९८
 कांभोद १९९ शूलरोप २०० भांडव्य २०१ गोपकेश्वर २०२ कपिलेश २०३
 पिंगलेश २०४ सुतेय २०५ नाग २०६ गौतम २०७ आख्येश २०८ अर्दुकच्छ
 २०९ कोदारेश्वर २१० कणखलेश २११ जालेश्वर २१२ शाखग्राम २१३

पराङ् २१४ चन्द्रप्रभास २१५ आदित्य २१६ श्रीपति २१७ जंमक २१८
 मूलस्थान २१९ शूलेश २२० आम्बेय एवं चित्रदैवक २२१ शिखीश्वर ३:२
 कोटि २२३ दशकन्ध २२४ सुवर्णक २२५ ऋणमोक्ष २२६ भांगभूति २२७ पुङ्ग
 २२८ सुषुम्भ २२९ आमलेश्वर २३० कपालेश्वर २३१ शृङ्गेरपङ्कीभव २३२
 कोटी २३३ लीटनेश्वर तीर्थ विवरण २३४ फलश्रुति कथन २३५ दमि जङ्गल
 माहात्म्य रोहिताश्व कथा २३६ धुन्नुमार उपाख्यान २३७ धुन्नुमार बधोपाय
 २३८ धुन्नुमार बध कथन २३९ चित्रवङ्ग उद्भव एवं २४० नङ्गिमा कथन २४१
 चंडीश प्रभाव २४२ रतीश्वर वर्णन और कीदारेश्वर वर्णन २४३ नाच तीर्थ
 कथन २४४ विष्णुपदी उद्भव २४५ सुखार २४६ प्यंवात्म्य २४७ ब्रह्मा सरोवर
 २४८ चक्र २४९ लज्जिता २५० बङ्ग गोमख २५१ कद्रावर्त्त २५२ मार्कंड २५३
 रावणेश्वर २५४ शुद्धपट २५५ देवान् २५६ मते २५७ ज्ञिहीद २५८ सखूति
 और १५९ शिवोद्भेद तीर्थ वर्णन २६० फलश्रुति ।

षष्ठनागरखंड—१ लिंगोत्पत्ति आख्यान २ हरियन्द्र कथा ३ विश्वामित्र
 माहात्म्य ४ त्रिगंजु स्तंभ गति ५ हाटकेश्वर माहात्म्य ६ व्रत्तासुर बध ७
 नागविल्व और ८ शंख तीर्थ कथा ९ अचलेश्वर वर्णन १० चमत्कार पुराख्यान
 ११ गयशीर्ष १२ बालसखर १३ बालमंड १४ ऋगाह्वय १५ विष्णुपाद १६
 भोकर्ण १७ युगरूप १८ समाथय १९ सिद्धेश्वर २० नाग सरोवर २१ मसार्थय
 २२ अगल्य २३ भ्रमणगर्तनेश २४ भैष्म श्री इन्दुवैर और अर्क २५ सार्मिष्ट २६
 शोभनार्थ श्री २७ दौगर्भमान अर्जकेश्वर तीर्थ वर्णन २८ जमदग्नि उपाख्यान
 २९ नैः चित्रिय कथा ३० राम ऋद ३१ नागपुर ३२ षड्लिङ्ग ३३ यज्ञभू ३४
 मुंडिरादि ३५ त्रिकार्क ३६ सती परियागेश ३७ यागेश त्रान्खिल्य और
 ३८ गाडुर तीर्थ कथन ३९ लक्ष्मी समर्पिगति प्रापकथन ४० सीमप्रसाद कथन
 ४१ अम्बा हृद ४२ पादुकाखर ४३ आम्बेय ४४ ब्रह्मकुंड ४५ गीसुख ४६
 लोहषट्पाखरा ४७ आजानालेश्वरी ४८ शालेश्वरी ४९ राजवापी ५० रामेश्वर
 ५१ लक्ष्मणेश्वर ५२ कुशेश्वर श्री ५३ लक्ष्मणेश्वर तीर्थ वर्णन ५४ लिङ्ग उपाख्यान
 ५५ अष्टषष्टि समाख्यान ५६ दमन्ती एवं त्रिजातक उपाख्यान ५७ रवती ५८
 भद्रिका तीर्थ ५९ चोमहरी ६० कीदार ६१ शुक्ल ६२ सुखारक श्री ६३ सत्य-
 सत्येश्वर तीर्थ आख्यान ६४ कर्णोत्पत्ता नदी कथा ६५ अष्टेश्वर ६६ याज्ञवल्क्य
 ६७ गौरी और ६८ गणेश तीर्थ कथा ६९ वास्तुपदा आख्यान ७० अजा षड्
 कथा ७१ श्रीभाग्यादि कथा ७२ शूलेश्वर कथा ७३ धर्मराज कथा ७४ सिद्धा-

सुन्दरेश्वर आख्यान ७५ गाणपत्य त्रय कथा ७६ जावान्ति चरित्र ७७ मकरेश्वर कथा ७८ कालेश्वरी एवं ७९ अन्धकोपाख्यान ८० अप्सराकुण्ड उपाख्यान ८१ पुष्यादित्य उपाख्यान ८२ रोहिताश्व उपाख्यान ८३ नागरोतुपत्ति कीर्तन ८४ भार्गवचरित्र ८५ विश्वामित्र चरित्र ८६ सारस्वत चरित्र ८७ पैयन्नाद ८८ कंसारीश एवं ८९ पौण्ड तीर्थ वर्णन ९० सावित्राख्यान संहित ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा ९१ सुख तीर्थ निरोक्षण ९२ कौरव चित्र ०३ षाटकेश चित्र ९४ एवं प्रभास चित्र उपाख्यान ९५ पौष्कर चित्र ९६ नैमिष चित्र एवं ९७ धर्म्य अरख्य चित्र ९८ वारानसी ९९ द्वारका एवं १०० अवनती पुरी कथन १०१ हन्दावन १०२ खाण्डवारख्य एवं १०३ अहैताख्य पुरी कथन १०४ कल्प १०५ शान्प्रथम एवं १०६ नन्दप्रथम का उपाख्यान १०७ असि १०८ युक्त एवं १०९ पितृसंज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन ११० अर्बुद १११ रैवत एवं ११२ शैत्र दन तीन पर्वती का उपाख्यान ११३ गंगा ११४ नर्मदा एवं ११५ सरस्वती दन तीन नदियों का उपाख्यान ११६ कुपिका श्री शङ्ख ११७ अमरक एवं वात्समखन दन चार तीर्थ का षाटकेश्वर तीर्थ चित्र के समान फल कथन ११८ साखादित्य ११९ आहकल्प १२० युधिष्ठिर १२१ भ्रान्तक १२२ जलशायि १२३ चातुर्मास्य एवं १२४ अशुभ्य शयन व्रत कथन १२५ मङ्गलेश १२६ शिवरात्रि १२७ तुला पुष्य दान १२८ पृथ्वी दान कथन १२९ वात्सकेश्वर १३० कंषात्त भोचनेश्वर १३१ पाप पीड १३२ सप्तसिंघ वर्णन १३३ युगपरिमाणादि कथन १३४ निवेशशाक १३५ भाष्याख्य कथन १३६ एकादश वृद्ध कथन १३७ दान माहात्म्य १३८ द्वादश आदित्य उपाख्यान ।

सप्तम प्रभास खण्ड—१ सीमेश वर्णन २ विश्वेश वर्णन ३ अर्वाख्य वर्णन ४ सिद्धेश्वरादि का पृथक उपाख्यान ५ अग्नितीर्थ ६ कपर्दीश तीर्थ वर्णन ७ भीम ८ मेरव ९ चण्डीश १० भास्कर ११ अंगारके श्वर १२ बुध हृदयसिंघ मङ्गल चन्द्र शनि १३ राहु केतु एवं १४ शिव स्वरूप मूर्ति वर्णन १५ सिद्धेश्वरादि पञ्चवृद्ध अवस्थिति वर्णन १६ धरारोडा १७ अजापाला १८ मङ्गला १९ कालिता एवं ईश्वरी २० लक्ष्मीश २१ वाहवेश २२ अर्वाश २३ कामेश्वर २४ गौरीश्वर २५ वरुणेश्वर २६ उग्रेश्वर २७ गणेश्वर २८ कुमारीश्वर २९ शकल्य एवं उत्तक ३१ भीतम ३२ दैत्येश्वर और ३३ चक्रतीर्थ संहितार्थ कथन ३४ भूतीयादि सिद्ध कथन ३५ आदि नारायण कथन ३६

चक्र-राख्यान ३७ साब्वादित्य कथा ३८ कण्टक शोधिनी कथा ३९ सच्चिदप्रती
 कथा ४० कापालीश्वर कथा ४१ कीटीशकथा ४२ बालब्रह्म कथा ४३ नरकेश
 ४४ सख्यतीर्थ ४५ एवं निधीश्वर कथा ४६ बलभद्र कथा ४७ गङ्गा कथा एवं ग-
 येश कथा ४८ जाश्ववती कथा ४९ पाण्डुकूप सक्तथा ५० शतमेघ लक्ष्ममेघ
 एवं कीटिमेघ कथा ५१ दुर्वाभार्क ५२ यदुख्यान एवं ५३ हिरण्यारंगम कथा
 ५४ नगरार्क ५५ श्रीकृष्ण ५६ संवर्षण एवं समुद्रकथा ५७ कुमारी चित्र पान्न
 एवं ५८ ब्रह्मेश की पृथक् कथा ५९ पिङ्गला ६० संगमेश्वर ६१ शंकरार्क एवं
 ६२ घटेश को कथा ६३ ऋषितोर्थ ६४ नन्दार्क तीर्थ ६५ चितयंकूप कीर्तन
 ६६ शशपान ६७ पर्वार्क और ६८ अंशुमती की अज्ञुत कथा ६९ वाराह ७०
 स्वामि वृत्तान्त ७१ छाया निङ्गास्त्र एवं ७२ गुल्फ कथा कनकनन्दा ७३ कु-
 न्ती एवं ७५ गंगेश कथा ७६ चममोद्भेद ७७ विदुर एवं ७८ त्रिकोकेश कथा
 ७९ मञ्जनेश ८० त्रैपुरेश और ८१ षण्ड तीर्थ कथा ८२ सूर्यार् प्राची ८३ च-
 चण एवं ८४ उमानाथ कथा ८५ भुङ्गार ८६ मूलस्थल एवं ८७ चवनाकेश
 कथा ८८ अजपानेश ८९ वानार्क एवं ९० कुत्रेश्वर कथा ९१ ऋषितोषा
 कथा ९२ संगमेश्वर कीर्तन ९३ नारदादित्य कथन ९४ नारायण निरूपण
 ९५ तमकुंड साहाय्य ९६ मूलचण्डीश वर्णन ९७ चतुर्वक्त्र गणाय्यक्त एवं ९८
 कनकेश्वर कथा ९९ गोपाल स्वामि १०० वक्रव स्वामि एवं १०१ सारुती
 कथा १०२ जैमार्क १०३ उन्नत १०४ विघ्नेश एवं १०५ जन स्वामि कथा १०६
 कान्तमेघ १०७ वक्रिण्यो १०८ उर्वशीश्वर एवं १०९ भद्रा कथा ११० शङ्खावर्त
 १११ इक्षुतीर्थ ११२ गोप्यद एवं अच्युत गृह कथा ११३ कालेश्वर ११४ हुङ्गार
 कूप एवं ११५ चण्डीश कथा ११६ आशापुर विघ्नेश एवं ११७ कलाकुण्ड कथा
 ११८ कपिलेश्वर कथा ११९ नरहव शिव कथा १२० नक्त १२१ कर्कोट और
 १२२ डाटकेश्वर कथा १२३ नारदेश १२४ यन्त्रभूषा एवं दुर्गकूट एवं गणेश
 कथा १२५ सुपर्णनाम्न १२६ भैरवी एवं १२७ भक्ततीर्थ कथा १२८ कर्दमात्म
 कीर्तन १२९ गुप्त सोमेश्वर कीर्तन १३० बहु स्वर्येश १३१ शृङ्गेय एवं १३२
 कीटीश्वर कथा १३३ मार्कण्डेश्वर १३४ कीटीश्वर एवं १३५ दामोदर गृह
 कथा १३६ स्वर्यरेखा १३७ ब्रह्मकुण्ड १३८ कुम्भीश्वर १३९ भोमेश्वर १४० ज-
 ह्मायर्थ चित्र शृङ्गाकुण्ड एवं १४१ सर्वज्ञ कथा १४२ विघ्नेश १४३ गंगेश एवं
 १४४ रैवत कथा १४५ अर्बुदेश्वर कथा १४६ अचलेश्वर कथा १४७ नागतोर्थ
 कथा १४८ वशिष्ठाश्रम वर्ण १.९ भद्रार्क साहाय्य १५० त्रिनेत्र साहाय्य

१५१ केशरमाहात्म्य १५२ तोर्यागमन कीर्तन १५३ कोटीश्वर १५४ रूपतीर्थ एवं १५५ हृद्योक्तेषु कथा १५६ सिद्धेश १५७ शुकेश्वर एवं १५८ सण्णिकारिकेश्वर कीर्तन १५९ पंगु १६० यमएवं १६१ वाराह तीर्थ वर्णन १६२ चन्द्रप्रभास १६३ पिण्डोट १६४ श्रीमाता १६५ शुक्ल १६६ एवंकाल्यायनी तीर्थ माहात्म्य १६७ पिंडारक माहात्म्य १६८ कनकल १६९ चक्र एवं १७० मानुपतीर्थ माहात्म्य १७१ कपिलाग्नि शीर १७२ रत्नानुबन्ध तीर्थ कथा १७३ गणेश १७४ पाथेश्वरयात्रा १७५ मुद्गनयात्रा कथन १७६ चण्डोत्थान १७७ नागोद्भव शिव ज्वाल एवं १७८ महेश कथा १७९ कामेश्वर एवं १८० मार्कण्डेय उत्पत्तिकथा १८१ उद्दामकेश एवं १८२ सिद्धेश गत तीर्थ कथा १८३ श्री देवसाता उत्पत्ति १८४ व्यास एवं १८५ गौतम तीर्थ कथा १८६ कुल भान्ता माहात्म्य १८७ राम एवं कोटि तीर्थ कथा १८८ चन्द्रोद्भव १८९ ईशानशृङ्ग १९० ब्रह्मस्थानोद्भव १९१ त्रिपुष्कर १९२ कद्रु हृद एवं १९३ गुणेश्वर कथा १९४ अविमुक्त माहात्म्य १९५ उमा माणेश्वर माहात्म्य १९६ मञ्जीवस प्रभाव १९७ जम्बु तीर्थ वर्णन १९८ गङ्गाधर एवं मिय कथा १९९ फलश्रुति २०० द्वारका माहात्म्य प्रसंग शब्द शर्मा कथा २०१ एकादशी जागरणादि व्रत २०२ महा हाटयो कथा २०३ प्रल्हादाद एवं ऋषि समागम २०४ दुर्वासा उपाख्यान २०५ यात्रा उपक्रम कीर्तन २०६ गोमती उत्पत्ति कथन २०७ गोमती स्नादि फल २०८ चक्रतीर्थ माहात्म्य २०९ गोमती समुद्र सङ्गम २१० दुःसनकादि द्रुदाख्यान २११ नृग तीर्थ कथा २१२ गो प्रचार कथा २१३ गोपी द्वारका गमन २१४ गोपीसरोवर अख्यान २१५ ब्रह्मतीर्थोदि कीर्तन २१६ नानाअंगान युक्त पञ्च नदी आख्यान २१७ शिवकिङ्क २१८ महातीर्थ एवं २१९ ज्ञान्य पूजादि कीर्तन २२० त्रिविक्रम मूर्ति कथा २२१ दुर्वासा एवं श्री ज्ञान्य कथन २२२ कुशदेव्य बधोपाख्यान २२३ एवं प्रतिमा आख्यान एवं २२४ विशेष पूजा फल २२५ गोमती एवं द्वारका में तीर्थ आगमन कीर्तन २२६ ज्ञान्य मन्दिर दर्शन फल २२७ द्वारावती अभिषेक २२८ द्वारका तीर्थ वास कथा २२९ द्वारका पुर कीर्तन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर हेमचन्द्र युक्त ब्राह्मण को दान करने से शिव लोक प्राप्ति होती है।

चतुर्दशोऽध्यायः ।

पूर्व उत्तर २ भाग २३ अध्याय उत्तर भाग इत्युक्तान संज्ञक

दस पुराण में त्रिविक्रम चरित्र बहुविध बर्णित है कूर्म कल्प का आख्यान ।

प्रथम पूर्व भाग—१ पुराणप्रश्न २ ब्रह्मा शिरच्छेद कथा ३ कपाल मोचन आख्यान ४ दक्ष यज्ञ विनाश ५ महादेव का काल रूप धारण ६ कामदेव दहन ७ ब्रह्माद नारायण का युद्ध एवं देवता असुर का युद्ध एवं सूर्य की कथा ८ भुवनकोश वर्णन ९ काम्य व्रत आख्यान ११ दुर्गाचरित्र १२ तपती चरित्र १३ क्लृप्तेन वर्णन १४ सरोवर माहात्म्य १५ पार्वती जन्म तपस्या एवं त्रिवाह कथन १६ गौरी उपाख्यान १७ कौशिकी उपाख्यान १८ कुमार चरित्र १९ अन्धक बध उपाख्यान २० साध्य उपाख्यान २१ जावालि चरित्र २२ अरजा कथा २३ अन्धक युद्ध एवं गण कथन २४ मरुत जन्म कथा २५ बलिचरित्र २६ लक्ष्मी चरित्र २७ त्रिविक्रम चरित्र २८ ब्रह्माद की पूर्व में तीर्थ यात्रा २९ ध्रुवचरित्र ३० प्रेत उपाख्यान ३१ नक्षत्र पुरुष आख्यान ३२ ओदाम चरित्र ३३ त्रिविक्रम चरित्र २४ ब्रह्म उत्साह ३५ ब्रह्माद एवं बलि सन्वादाद ३६ सुतल में सरि प्रशंभा कथन ॥

द्वितीय उत्तरभाग—१ माहेश्वरी संहिता श्रीकृष्ण के भक्ति का कीर्तन २ भागवती संहिता अवतार कथा ३ सौरी संहिता सूर्य महिमा कथन ४ गणेश्वरी संहिता गणेश महिमादि कथन । यह संहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता में एक सङ्ख्य श्लोक ॥

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर कार्तिकी संक्रान्ति को घृत धेनु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण को दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ग लाभ होता है एवं भोगादिक और देहान्त में विष्णु के परम पद को प्राप्ति होती है यह पुराण पाठ किम्बा श्रवण करने से परम गति प्राप्ति होती है ।

पञ्चदश कूर्मपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर २ भाग १७००० सङ्ख्यश्लोक । उत्तरभाग पञ्चपाद में विभक्त लक्ष्मी कल्पचरित्र । इसी कल्प में हरि ने कूर्म रूप धारण किया है एवं पन्द्र युद्ध प्रसंग से धर्मार्थ काम मोच का माहात्म्य कहा है ॥

प्रथम पूर्वभाग—१ पुराण उपक्रम कथन २ लक्ष्मी इन्द्रयुक्त सन्वादाद ३ कूर्म ऋषि गण कथा ४ वर्णाश्रमाचार कथा ५ जगदुत्पत्ति कथा ६ काण्ड संख्या एवं लयान्त में विभु स्तव ७ सर्ग संक्षेप कथा ८ अक्षर चरित्र ९ पार्वती सङ्ख्यानम् १० योग निरूपण ११ षडगुण्य आख्यान १२ स्नायम्भुव कथा १३ देवतादि उत्पत्ति १४ दक्ष यज्ञ नाश १५ वृक्ष-वृष्टि कथा १६ कश्यप

बंध कथन १७ पात्रेय वंश कथन १८ क्षत्र चरित्र १९ मार्कण्डेय क्षत्र स-
स्वादि २० व्यास पाण्डव की कथा २१ युगधर्म कथा २२ व्यास जैमिनी की
कथा २३ वाराणसी माहात्म्य २४ प्रयाग माहात्म्य २५ त्रिकोक वर्णन २६
वेदशाखा निरूपण ।

द्वितीय उत्तरभाग—१ ऐश्वरीगीता २ नानाधर्म प्रकाशिका व्यास गीता
३ नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य ४ ब्राह्मीसंहिता ५ भागवती संहिता
इस में सकाश वर्णन से पृथक् हृत्ति निरूपण है ।

उत्तरभाग में प्रथम पाद में ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथ-
न । द्वितीय पाद में क्षत्रिय की हृत्ति निरूपण । तृतीय पाद में वैश्य जाति
की चार प्रकार की हृत्ति निरूपण । चतुर्थ पाद में शूद्र की हृत्ति कथन ।
पञ्चम पाद में वर्णसंस्कार की हृत्ति कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक हैम कुम्भ युक्त ब्राह्मण को
दान करने से परमागति होती है और श्रवण किम्बा पाठ करने से सर्वोत्कृष्ट
गति मिलती है ॥

षोडश मत्स्यपुराण ।

१४००० सप्तसहस्रिक सत्य कल्प कथा—१ व्यास कर्तृक नरसिंह वर्णन २
मत्तु एवं मत्स्यसम्वाद ३ ब्रह्मांड वर्णन ४ ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्तिकथन
५ मातृक उत्पत्ति ६ मदन हादशी कथा ७ लोकपाल पूजा ८ मन्वन्तर क-
थन ९ वैश्य राक्षसाभि वर्णन १० सूर्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति ११ बुध का
संगम १२ पिंड वंशानु कथन १३ आहकाल निरूपण १४ पिंडतीर्थ प्रचार १५
सोमोत्पत्ति १६ सोमवंश कीर्तन १७ ययाति चरित्र १८ कार्तवीर्यचरित्र
१९ स्रष्टवंश कीर्तन २० ऋगुवाप २१ विष्णु का दश मूर्ति धारण २२ पुरुवंश
कथा २३ कृताशन वंश कथन २४ क्रिया योग कथन २५ पुराण कीर्तन २६
नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत २७ मार्कण्डेय श्रयण २८ क्षणाष्टमी व्रत २९ तडाग
विधि माहात्म्य ३० पादुकोत्सव ३१ सौभाग्य श्रयण वर्णन ३२ अगस्त्य व्रत
कथन ३३ अनन्त व्रतीया ३४ रस कल्पानु व्रत कथा ३५ आनन्दकार व्रत
सारस्वत व्रत ३७ उपराग अभिषेक ३८ सप्तमास स्नपन व्रत कथा ३९ भीम
हादशी व्रत ४० अनङ्ग श्रयण व्रत ४१ अश्विन श्रयण व्रत ४२ अंगारक व्रत ४३
सप्तमी सप्तक व्रत ४४ विश्वीक हादशी व्रत ४५ 'दशधा' सिद्धप्रदान व्रत ४६
अहशान्ति ४७ अह स्वरूप कथन ४८ शिव चतुर्दशी व्रत ४९ सर्वफल त्याग

व्रत ५० सूर्यवार व्रत ५१ संक्रान्ति स्नान ५२ विभूति द्वादशी व्रत ५३ धष्टि व्रत माहात्म्य ५४ स्नानविधि क्रम ५५ प्रयाग माहात्म्य ५६ होप एवं लोका-
नुवर्णन ५७ अन्तरोच और दिशा कथन ५८ ध्रुव माहात्म्य ५९ इन्द्र भवन वर्णन ६० त्रिपुर घातन ६१ पिष्ट प्रवर माहात्म्य ६२ सन्वन्तर निर्णय ६३ चतुः-
युग सम्भूति युगधर्म निरूपण ६४ बष्पाङ्ग सम्भूति ६५ तारकासुरोत्पत्ति एवं
माहात्म्य ६६ ब्रह्म देव अनुकीर्तन ६७ पार्वती सम्भव कथा ६८ शिव तपो-
वन वर्णन ६९ अनङ्ग देह दाह ७० रतिविलाप ७१ गीरी तपोवन ७२ शिव
प्रसादन ७३ पार्वती ऋषि सम्वाट एवं विवाह ७४ कार्तिकेय जन्म औ विजय
७५ तारक बध ७६ नरसिंह वर्णन ७७ पद्मकल्प कथा ७८ अम्बकासुर घातन
७९ बारानसी माहात्म्य ८० नर्मदा माहात्म्य ८१ प्रवरातुलम ८२ पिष्ट
गाथा कीर्तन ८३ उभयमुखी दान ८४ कृष्णाजिनदान ८५ सावित्र्यु पाख्यान
८६ राजधर्म ८७ विविधोत्पात कथन ८८ ग्रह शान्ति कथन ८९ यात्रा नि-
मित्त कथन ९० स्वप्नमङ्गल कीर्तन ९१ वामन माहात्म्य ९२ बराह
माहात्म्य ९३ समुद्र मन्थन ९४ कालकूट अभिशान्तन ९५ देवासुर विमर्दन
९६ वास्तुविद्या ९७ प्रतिमा लक्षण ९८ देवता स्थापन ९९ प्रासाद लक्षण १००
देवमंडप लक्षण १०१ भविष्य राजा का उद्देश कथन १०२ महादान कथन
१०३ कल्प कथा ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक विषुव संक्रान्ति की ब्राह्मण
को दान करने से परम पद मिलता है और इस पुराण के पाठ किन्वा श्रवण
करने से आयुः कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है ।

सप्तदशगुरुपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर २ खण्ड में १८९०० श्लोक गरुड़ प्रति भगवान् ने कहा है
इस पुराण में तार्किक कल्प की कथा है ।

प्रथम पूर्वखण्ड—१ पुराण उपक्रम वर्णन २ संक्षेप स्वर्ग वर्णन ३ सूर्यादि
पूजा विधि ४ दीक्षा विधि ५ सख्मी पूजा प्रकरण ६ नव व्यूह अर्चन ७ विष्णु
पूजा विधान ८ वैष्णव पञ्जर ९ योगाध्याय १० विष्णु सहस्र नाम ११ विष्णु-
ध्यान १२ सूर्य पूजा १३ सत्युच्छयाचर्चन १४ नानामंत्र १५ शिवपूजा १६ गण-
पूजा १७ गोपालपूजा १८ ब्रह्मलोक मोहन श्रीरामाचर्चन १९ विष्णुपूजा एवं
पञ्चतल्पपूजा २० चक्रार्चन २१ देवपूजा २२ न्यासादि कथन २३ सन्यादि

उपासना २४ दुर्गाचर्चन २५ सुरार्चन २६ माहेश्वर पूजा २७ पवित्रा रीपणा-
 चर्चन २८ मूर्तिध्यान २९ वास्तु प्रमाण ३० प्रासाद कक्षण ३१ सकल देवता प्र-
 तिष्ठा ३२ भक्तन देवता प्रथक् पूजा ३३ अष्टांग योग ३४ दानधर्म ३५ प्राय-
 क्षित विधि क्रम ३६ द्वीप ईश्वर भौर नरक वर्णन ३७ मूर्त्य व्यूह कथन ३८
 ज्योतिष आह वर्णन ३९ मासुद्रिक स्वर ज्ञान ४० नवरत्न परीक्षा ४१ तीर्थ
 माहात्म्या ४२ गयामहात्म्या ४३ मन्वन्तर प्रथक् २ आख्यान ४४ पित्राख्यान
 ४५ वर्षाधर्म ४६ द्रव्यशुद्धि ४७ द्रव्य समर्पण ४८ आहकथा ४९ विनायक
 पूजा ५० अहयज्ञ ५१ आश्रम कथा ५२ मननाख्यान एवं प्रथीच ५३ नीति-
 सार ५४ वृत्तान्ति ५५ मूर्त्यवश ५६ सोमवंश ५७, हरि भवतार कथन ५८ रामा-
 यण ५९ हरिवंश ६० भारताख्यान ६१ आयुर्वेद ६२ निदान ६३ चिकित्सा
 ६४ द्रव्यगुण ६५ रीति विष्णु कवच ६६ गण्ड कवच ६७ त्रिपुर आख्यान ६८
 प्रश्न चुडामणि ६९ अशुभ ७० श्रीपथी नाम कथन ७१ व्याकरण शास्त्र ७२
 छन्दःशास्त्र ७३ सदाचार ७४ ज्ञानविधि ७५ वैश्वदेव तर्पण ७६ सभ्या ७७
 पार्वण कर्म ७८ नित्ययज्ञ ७९ सपिण्ड्याह ८० धर्मभार निष्कृति ८१ प्र-
 तिमंक्रम ८२ युगधर्म कृतफल ८३ योगशास्त्र ८४ विष्णुभक्ति ८५ भगवत्प्रणाम
 क्रम ८६ वेष्टव महात्म्या ८७ नरसिंह स्तव ८८ ज्ञानाभ्युत् ८९ गुह्याष्टक
 स्तव ९० विष्णु अर्चना ९१ वेदान्त सार सांख्य और सिद्धान्तशास्त्र ९२
 ब्रह्मज्ञान ९३ आत्मज्ञान ९४ गीतासार एवं फल कथन ।

द्वितीय उत्तरखण्ड प्रेत कल्प कथा—१ धर्म प्रकटित कारण २ पूर्वयोनि
 गति कारण ३ दानादिफल ४ श्रीर्षे देहि क क्रिया ५ यमलोक मार्ग वर्णन ६
 षोडश आह फल ७ यममार्ग से निष्कृति कथन ८ धर्मराज वैभव ९ प्रेत
 षोडश निर्णय १० प्रेत चिह्न निरूपण ११ प्रेत चरित्र १२ प्रेत कारण १३
 प्रेतकाल्य विचार १४ सपिण्डी कारण १५ प्रेतत्व मोक्षण आख्यान १६ विसृति
 कारण दान १७ प्रेत आवश्यक दान १८ शारीरिक विनिर्देश १९ यमलोक
 वर्णन २० प्रेतत्व उद्धार कथन २१ कर्म कर्ता निर्णय २२ जल्यु की पूर्व क्रिया
 कथन एवं पश्चात् कर्म निरूपण २३ षोडश आह कथन २४ स्वर्ग प्राप्ति क्रिया
 २५ सूतक संख्या २६ नारायण बलिकर्म २७ वृषोत्सर्ग माहात्म्या २८ निबिच
 त्याग २९ अपठत्यु क्रिया ३० मनुष्य कर्म विपाक ३१ कृत्याकृत्य विचार
 ३२ सुक्तिकारण विष्णु ध्यान ३३ स्वर्ग गमन विहित आख्यान ३४ स्वर्ग सुख
 निरूपण ३५ भूलोक वर्णन ३६ समलोक वर्णन ३७ पञ्चलोक लोक कथन ३८

ब्रह्माण्ड स्थिति कीर्तन ३८ ब्रह्माण्ड ध्वनेक चरित्र कथन ४० ब्रह्मजीव निरूपण ४१ आतमन्तिक जय कथन ४२ फलश्रुति निरूपण ।

फलश्रुति—यह पुराण पाठ करने किम्बा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिख कर विषुव संक्रान्ति को सुवर्ण इंस हय युक्त ब्राह्मण को पान करने से स्वर्ग लाभ होता है ।

अष्टादश ब्रह्माण्डपुराण ।

४ पाद तीन भाग १२००० सहस्रांशोक्त प्रथम भाग में—१ प्रक्रिया पाद २ अनुषङ्ग पाद ३ उपोद्घात पाद मध्य भाग ४ उपसंहार पाद शेष भाग इस पुराण में भाविकल्प की कथा है ।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरम्भ—१ कृतप्रसुदेश २ नैमिषाख्यान ३ हिरण्यगर्भोत्पत्ति ४ लोका कल्पना कथा ॥

द्वितीय अनुषङ्गपाद—१ कल्प मन्वन्तराख्यान कथा २ लोका ज्ञान कथन ३ मानसिक सृष्टि विवरण ४ रुद्र प्रसव विवरण ५ महादेव विभूति वर्णन ६ ऋषिसर्ग वर्णन ७ अग्नि उत्पत्ति विवरण ८ काल सञ्जाव वर्णन ९ प्रियव्रत समूह उद्देश १० पृथिवी आगाम एवं विस्तार वर्णन ११ भारतवर्ष वर्णन १२ अन्धवर्ष वर्णन १३ जम्बूदि सप्तद्वीप वर्णन १४ अधः एवं उर्ध्वलोक विवरण १५ अहाचार १६ आदित्य ब्यूह विवरण १७ देव ग्रह वर्णन १८ भोलकण्ठाख्यान १९ महादेव वैभव २० अभावस्था कथा २१ युग तत्व निरूपण २२ यज्ञ प्रवर्तन २३ मध्य एवं अन्तर् युग की क्रिया एवं सतप्रयुग की प्रजा का लक्षण २४ ऋषि प्रवर वर्णन २५ वेद आख्यान २६ स्त्रायम्भुव निरूपण २७ शेष मन्वन्तराख्यान २८ पृथिवी दीप्ति ।

मध्यभाग उपोद्घात पाद—१ सप्तऋषि कथा २ प्रजापति उपाख्यान ३ देवादि उद्भव ४ जय एवं क्रीड़ा ५ मरुत् उत्पत्ति कीर्तन ६ काश्यप विवरण ७ ऋषि वंश निरूपण ८ पिण्डकल्प कथा ९ आक्ष कल्प कथा १० वैवस्वतोत्पत्ति ११ वैवस्वत सृष्टि विवरण १२ मनुषुच निर्णय १३ गन्धर्व निरूपण १४ इक्ष्वाकुवंश विवरण १५ अश्विवंश विवरण १६ अमावसु अर्चन १७ रजि चरित्र १८ ययाति चरित्र १९ यदुवंश निरूपण २० कार्तवीर्य चरित्र २१ जमदग्नि विवरण २२ हर्षिण्यवंश विषय २३ सागर उपाख्यान २४ भार्गव चरित्र गय वध २६ समर विवरण २७ पुनर्वार भार्गव विषय २८ देवासुर

शुद्ध में श्लोक्या का प्राविर्भाव वरणन २८ शुद्ध कर्तृक इत्यस्तव ३० विष्णु माहात्म्य विवरण ३१ इतिवश निरूपण ३२ कश्चिद्युग के भविष्य राजागण का चरित्र ॥

अन्तभाग उपसंहार पाद—१ वैवस्वत मन्वन्तर का संक्षेप विवरण २ भविष्य मनु का कर्म चरित्र ३ कल्प प्रलय निर्द्देश ४ काल परिमाण विवरण ५ परिमाण और लक्षण सहित चतुर्दश ऋक विवरण ६ नरक एवं विकर्म वर्णन ७ मनोमयपुर आख्यान ८ प्राकृतिक लय विवरण ९ शैवपुर वर्णन १० सत्वादि गुण सम्बन्ध से जीव की गति विवरण ११ अनिर्द्देश्य ब्रह्म वर्णन ॥

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण किन्वा पाठ करे उसका पाप मोचन होय एवं देवलोका में गति होय यह पुराण लिख कर * स्वर्ण सिंहासनस्थ करके ब्राह्मण को दान करने से बृहन्निको प्राप्ति होती है ॥

० इतिहास तिमिर नाशक तीसरा खण्ड में यह सिद्ध किया गया है कि पहले आर्यलोग लिखना न जानते थे किंतु यह भ्रम है पुराणों में प्रायः लिखने का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अद्वकर्मणिका से भालुम हुआ होगा और इस का अनेक प्रमाण भेजे कई एक स्थलों में संग्रह किया है इतिहास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नीचे लिखा है। अब इसलोग मेक्समूलर साइन् के लेखी को मानते या पुराण को। यद्यर्थ में मेक्समूलर को भ्रम हुआ है और उसी को मूल मानकर राजा जी चले है तब वह क्वी न भूलें।

“ इस का कुछ प्रमाण नहीं मिलवा कि इनको लिखना भी जाता ही वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन सूक्त ऋचासाम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय ग्रंथ पाठ पाठक पठन मनन सोपथ इत्यादि सब शब्द जब उन के अर्थ पर ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के जमाने में लिखना किसी को नहीं जाता था वेद वा ब्राह्मण वा भूतों में इसका कहीं कुछ जिकर नहीं है कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिस से इसका इयारा पाया जाय उपाधि मूल में जो अति प्राचीन ध्याकरण है और जिन्हें का जिकर पाणिनि ने किया है यदि कोई शब्द ऐसा मिले भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ मालूम होता है। [इसी तरह उपादिसूत्र में दीनारः जिन्हें तिरोटम् सूत्रों इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिये हैं दीनारः (Denarius) रूमो शब्द है और जिं घातुः को जिस से जिन निकला है सायन ने कहा उपादि से लिखा^७ छोड़ दिया है तिसिंह ने भी अपनी खरसंजरी में जिं घातु को

छोड़ि अनेकान साधन कीं मन भान कछी न करे चित चाड़ी ।
 नन्द के लाल सों नेह करे किन भूमत दौरि हृथा जिय दाहो ॥
 आसु लौं गीचन सीं हरिचन्द से कौन ने बोलि तौ प्रीत गिवाही ।
 है गनिका सबरी गज गोध अजामिन आदिका याकी गवाही ॥ १ ॥

छोड़ दिया है यह धातु किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में नहीं मिलता है।] जैसा अरबी शब्द किताब (पुस्तक) जिस का अर्थ हो लिखना है अथवा यूनानी शब्द पेपर (कागज़) जिस का अर्थ हो पेपरिस वृक्ष को कान्त से बनाया हुआ है कोई भी ज्ञाय नहीं लगता संस्कृत में सूत्रों की रचना ऐसी है कि जुबानी याद रखे जायं सूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिये कदापि नहीं रचा मनुजी ने जहाँ पढ़ने पढ़ाने का बहुत विस्तार पूर्वक नियम बांधा है [वृक्षारभे वसने च पादौयाह्यो गुरोस्सदा । संइत्यहस्तावधेयं संहि वृक्षा-
 ज्ञसिः स्मृतः ॥ अध्वप्यमण्यु शुर्नित्यक्रान्तमन्दिः । अधीप्य भो इति ब्रूयाद्विरामोस्त्विति चारमेत् ॥] पुस्तक कक्षम दवात कागज़ का नाम भी नहीं लिखा लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा ही नहीं कियी और देखो अब तो लिखना पढ़ना ये दोनों ऐसे बँह हो गये हैं कि पर्यायी से जान पड़ते हैं एक के स्मरण के साथ ही दूसरे का स्मरण भी हो जाता है निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली [यदि पहले होती महाभारत में जहाँ कौरव पांडव के दूतों का ज्ञान लिखा है उन के साथ पत्र जाने का भी ज्ञान लिखा होता ।] पत्र लिखनी मपो ये सब शब्द पीछे से काम में आये उत्तर में पहले भोजपत्र पर और दक्षिण में पहले तालपत्र पर लिखा-होगा इसी से जिस पर लिखे उसका नाम पत्र रह गया और ताल पत्र पर लीकों के खींचने अर्थात् खोदने से यह काम ही लिखना ठह-
 रा लिप खीपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द काम में आया यदि पाणिनि के समय में भी लिखना किसी को मालूम होता वह अवश्य इस के लिये कोई शब्द बनाता उसने जो वर्ष अक्षर और विराम लिखा है वर्ष का अर्थ आवाज़ का रंग है अक्षर का अर्थ अविनाशी है वि-
 राम का अर्थ आवाज़ का बंद होना है यदि वह लिखना जानता होता अ-
 नुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपझानीय का नाम स्रोपदेव को तरह बि-
 न्दु द्विविन्दु ब्याज्जति और गजकंभाज्जति रखता ।”

वैष्णवसर्वस्व

संप्रदायपरंपरा और स्तब्ध पुराहत समेत ।

‘ चतुर्भुज भुजच्छाया समालंबा त्पुनिर्भयाः ॥
जयति संप्रदायास्ते चत्वारो हरिवल्लभाः ॥ ’

सर्वस्वपंचकाण्ठेता तदीयनाम्नांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्री हरिश्चन्द्र

रचित ।

पटना—“खड्गबिन्दास” प्रेस—काकोपुर ।

साहन प्रसाद सिंह ने मुद्रित किया ।

१८८८.

वैशाखसर्वस्व ।

(पूर्वाह्न)

१—हरि में पर अक्षर-ब्रह्म स्वरूप नित्य नीला का गीलीक में धाम है जहाँ श्रीहृन्दावन में श्री यमुना जी के निकट अनेक कुंजलताओं से वेष्टित एक सन्निभय महायोगिनिनाम्न है उस भूमि का नाम बिहार भूमि और तीर्थों की नाम मूल स्वरूप योगपीठ गिलासे संज्ञित उस कुट्टिम का नाम खेला तीर्थ है, जहाँ वेद वेदान्तादि सर्वशास्त्र वेद्य सच्चिदानन्द घन परमात्मा परमानन्द स्वरूप अनेक कोटि नित्यसिद्ध, साधन सिद्ध, भक्त, योग, गौ, और श्री गोपीजनो से वेष्टित उस योगपीठ पर एकाग्र चिन्ता से ध्यानावस्थित होकर श्रीशंखरी श्री गानावस्था का ध्यान करते हैं ।

२—एता समय सब देवताओं के पूर्वज, सब विद्याके ईशान, सब भूतोंके ईश्वर चराचर के गुण, सुसुद्ध गरण, गुण ब्रह्मस्वरूप श्री शिवजी उस गोकुल मंडप में गये वहाँ अनेक प्रकारके गान से भगवान को रिभाया और संसार के उद्वारके हेतु प्रेम मार्ग का सिद्धान्त पूछा, और भगवान ने प्रेममार्ग का परम गुप्त तत्व और रहस्य सब शिव जी को कहा, जो मुनिकर शिव जी ने जगत् के विरुद्ध दिग्भ्यर रूप प्रेमामन्द में मग्न हो अनेक प्रकार से नृत्य किया और कभी उस प्रेममार्ग का प्रकाश न किया. यदि कभी कुछ कहा भी तो भगवान की परामाया श्री पार्वती से ही कहा क्योंकि युगस्वरूप के परम गुप्त बिहार के अनुभव करने वा कहने सुनने का पुरुष शरीरधारियों में शिव जी को छोड़ कर और कोई अधिकारी नहीं ।

३—श्री महादेव जी की इस अवस्था में देखकर नारद जी ने अनेक बार तत्व पूछा परन्तु श्री महादेवजी ने श्रु बतयां पर कब त्रिपुरासुर के युद्धमें भगवान ने त्रिपुर का नाश किया तब नारदजी ने बड़ी स्तुति किया और जब भगवान ने प्रसन्न होकर कहा कि 'धर मांगो' तब नारदजी ने यज्ञी वर मांगा कि प्रेममार्गका तत्व इसकी बताइये और भगवान ने प्रेममार्ग के अनेक तत्व इनकी बताये और सनकादि सिद्धों तथा आदि ऋषियों को भी भक्ति मार्ग का उपदेश किया इसमें श्री नारदजी भक्ति मार्ग के तीसरे आचार्य हुए ।

४—श्री नारदजी ने कृपाकर के उस तत्व को प्राण्डिश्य, मार्ग को शिखर

आदि ऋषियों से कहा और अनेक ऋषियों की वाकों तथा शास्त्रों की विचित्र प्रहृतियों से व्याकुल श्री व्यासजी की भी अपना तत्वोपदेश किया ।

५—व्यासजी ने उस तत्व की श्री शुकदेवजी से कहा ।

६—श्री शुक्याचार्य यह परम्परा में तृतीय और सप्तम दोनों हैं तृतीय तो यों है कि नित्यलीला से विद्युत् एक शुक संसार में भ्रममाण होकर कहीं शांति न पाता हुआ कैलास में योगवट पर जा बैठा वहाँ श्री महादेवजी पार्वती जी से परमगुप्त भगवद्गुह्य कहते थे और यह लीला शुक उस नित्य लीला से विद्युत् वह सब चरित्र ज्ञान बल से सुनता था तथा कैवल्य लीला के अधिकारी होने ही के कारण उस रहस्य स्थान में उस का प्रवेश भी हुआ, श्री महादेवजी श्रीपार्वती जी से अंबिकावन में युगल स्वरूप का विहार तत्वकह रहे थे क्योंकि उस अंबिकावन में पुरुष भी जाय तो स्त्री हो जाय क्योंकि पुरुष शरीर उस गुप्त रहस्य सुनने का अधिकारी नहीं उस लीलास्थ शुक ने वे रहस्य चरित्र सुने उस के नेत्र से प्रेमाश्रु के बिन्दु गिरे और श्री महादेवजी के जंचा पर पड़े महादेव जी ने यह ज्ञान कर कि इस शुक ने हमारा रहस्य सुना बड़ा क्रोध किया और उस के मारने को अपना त्रिशूल चलाया और वह शुक वहाँ से भागा और व्यासजी के स्त्री के गर्भ में छिपा इस से दानाणी और स्त्री को अवध्य ज्ञान कर शिवजी का त्रिशूल फिर आया और शुकदेवजी ने व्यासजी के घर में जन्म लिया तो जो रहस्य शुकदेवजी ने साक्षात् शिवजी से सुने थे वे अपने शिष्य श्री विष्णु स्वामी से कहे इससे तो ये (शुक) तृतीय हुए । और घर से निकल जाने के पीछे नारदजी से “अहो बकीयं स्तनका-लकूटं” यह श्लोक गाते हुए सुन के भगवान के चरित्र पूछे तब नारदजी ने कहा कि तुम्हारे पिता ये सब चरित्र भली भाँति जानते हैं उन से जाकर पूछो यह नारदजी का वाक्य सुन शुकदेवजी घर आए और अपने पिता व्यासजी से सब रहस्यमंत्र सीखे, इस रीति से ये षष्ठ हुए ।

७—श्री विष्णुस्वामी महाराज शुद्धिष्ठर के राज्य समय से किञ्चित् कलि-युग होते द्रविड़ देश में एक राजा हुआ उस का मंत्री सर्वगुण संपन्न एक ब्राह्मण हुआ जिस का नाम नारायण भट्ट था उन के घर में भाद्रपद कृष्ण भौमवार रोहिणी नक्षत्र दो पहर की समय में श्रीविष्णु स्वामी का जन्म हुआ इनका बाल्यपन का नाम माधव भट्ट था सातवें वरस में इन के पिता परलोक सिधारि और माता पति के साथ सती हो गई तब श्री विष्णु स्वामी अपने मामा

रंगनाथ के साथ विद्याभ्यास के हेतु श्री काशी क्षेत्र में चले मार्ग में पंढरपुर के राजा मंगलसेन को भेट कर के काशी में आए और सदाशिव नामक ब्राह्मण से विद्याध्यन किया और जब शुद्धचिन्ता में गुह ने यह मांगा कि हम को व्यास सूत्र में कुछ संदेश है सो व्यासजी के मुख से वह अर्थ सुनाय दीजिये तब योग-बल से श्री विष्णु स्वामी ने एक दिव्यरथ मंगाया उस पर आप आरुढ़ होकर अपने गुह और उन के अनुज हरिहर भद्र और पुत्र रंगनाथ भद्र को साथ लेकर व्यासजी के आश्रम में जाकर व्यासजी के मुख से श्रुताहैत मत के अनुसार मायावादका खंडन कर के गुह को मुनवाया और फिर प्रथीपर आकर हरिहर भद्र रंगनाथ को शिष्य किया और सात सै बरस भगवान की आशा से अपना शरीर रक्खा परन्तु यह काशी की यात्रावात्ता प्रसंग सब चरित्र के ग्रंथों में नहीं मिलता केवल श्री विष्णुस्वामी चरितामृत नामक ग्रंथ ही में मिलता है सर्वचरित्र सम्मत मत यह है कि श्री विष्णुस्वामी ने घर में सब विद्या पढ़ी और उनको इस बात का सीच पड़ा कि हम अब किन गुणों कर के अपने पिता से अधिक होय क्योंकि हमारे राजा से बढ कर इस देश में कोई राजा नहीं और हमारे पिता से बढ कर राजा के घर में और कोई भानपात्र नहीं तब कुवेर को सेवा करें तो कुवेर भी इन्द्र का अनुयायी है और इंद्रादिक देवता रुद्र के हैं और रुद्र तो ब्रह्मा का पुत्र है ब्रह्मा भी नारायण के नाभि में से निकला है और नारायण भी अनेक भूतखादि भवतार बारम्बार लिया करते हैं इस से परतंच ज्ञात होती हैं इस से उपनिषदों में सर्वेश्वर जिस्को कहा है हम उस की उपासना करेंगे और जो सर्वेश्वर है उसकी सेवा महाराजोपचार से करने योग्य है ऐसा विचार कर के छत्र चमर, सिंहासन, शय्या, धूप, दीप, भोग, राग इत्यादि राज सेवा सामग्री सिद्ध कर के और भगवान का नाम रूपादि न जान कर के सर्वस्वामी के भाव से सेवा करने लगे, ऐसे ही नित्य सेवा करें पर जब उसको कोई अज्ञीकार न करे जब ऐसे ही बहंत दिन बीते और उन की सेवा अज्ञी-कृत न हुई तब उन्होंने ये यह पण किया कि यदि प्राण से सर्वेश्वर मेरी सेवा न ग्रहण करेंगे तो मैं भी अन्न ग्रहण न करूंगा और ऐसे ही विना अन्न जलादि से छ दिन बीत गये तब सातवें दिन नित्य को भांती भोग घर के प्रतिज्ञा की कि यदि प्राण भी सेवा का अज्ञीकार न होगा तो हम अन्न प्रवेश करेंगे ऐसी वृत्ति की दृढ़ता देख कर श्री मच्छ्छुगुणैश्वर्य भगवान्

थाविर्भूत हुए और सब सेवा का अङ्गीकार किया जब स्वामी भीतर गए और वहाँ सच्चिदानन्द रूप धन साक्षात् पर ब्रह्म हुआ सुरक्षी भूपित दक्षिण और बायें दोनों भागों में स्वामिनी समेत को देख कर बोले कि आप यहाँ क्यों आए हैं आप तो पुराण और तन्त्रों के प्रतिपाद्य साकार देवता हैं और हम ने तो श्रुतिशिरः प्रतिपाद्य निर्गुण सर्व स्रष्टा सर्वस्वामी की उपासना और सेवा को, यह श्री विष्णु स्वामी का वाक्य सुन भगवान बोले—‘यदि हम से बड़कर कोई ईश्वर है तो उस ने तुम्हारी सेवा क्यों नहीं किया ? और मैंने यदि चोर भाव से किया तो उस ने दण्ड क्यों नहीं दिया ?’ तब विष्णुस्वामी ने कहा—‘तुम साक्षात् ईश्वर ही हम तुम्हारे शरणापन्न हैं अपना सङ्कल्प आप स्थापन कर के हमारा संशय दूर करो’ इस पर भगवान ने अनेक युक्ति और प्रमाणी से अपना स्वरूप प्रतिपादन किया तब विष्णुस्वामी ने कहा कि आप स-परिवार यहीं विराजो और मेरी सेवा का अङ्गीकार नित्य करो, तब आप ने आज्ञा किया कि हमारी मूर्त्तियों की प्रेम से सेवा करो हम सब स्वीकार करेंगे और भगवान ने पंचाक्षर मंत्र का उपदेश कर के गीता और श्री भागवत परम शास्त्र है, हमारी सेवा ही मुख्य धर्म है और प्रेम मात्र साधन है यह उपदेश किया और आप अंतर्हित हुए । भगवान के कहे हुए प्रकारसे और जैसी मूर्त्तिका स्वामी ने दर्शन किया था वैसी मूर्त्तियाँ निर्मित करा के स्वामी सेवा करने लगे और लोकोपकार के हेतु आप ने शिष्य संग्रह भी किया और किसी लेख के मत से आप ने विवाह कर प्रतिरोध किया किसी के मत से आप ने विवाह नहीं किया केवल चिट्ठों सन्दास कर के सतत श्री हरिः शिवन किया । जिस का मत “विवाह किया” यह है उसी का यह भी लेख है कि आप ने शरीर सात सौ बरस रक्खें और आप को जो पुत्र हुआ उन का नाम श्रीगोपीनाथ था जिनका उसी लेख के मतानुसार चैत्र कृष्ण ११ अष्टमि नक्षत्र प्रथम प्रहर में जन्म हुआ था और २१-पीठी तक बंश भी रहा और हरिहर, रंगनाथ, जयगोविन्द, भट्टाचार्य, मोहनलाल, व्यक्तेश, नरहरि, चिंतामणि, सोमगिरि, पद्मावती, लक्ष्मेश्वर, चंद्रसेन, हरिजीथी, शंकर, गोविंददास, देवजीव, यज्ञनारायण, नरसिंह, लक्ष्मणगिरि, हरिदास, गोविन्ददास, दयाराम, जीवनराम, मनसाराम, कृष्णदत्त, बोपदेव, केशव, जयदेव, रत्नपाल, दुर्गावती, नामदेव, विश्वमंगल इत्यादि शिष्यवर्ग स्वामी ही के वाक्य में हुए हैं वरंच श्री महाप्रभु जी को भी स्वामी ने आप

ही उपदेश कर आचार्य पदवी दे भाव्य करने की आज्ञा दी परन्तु यह मत अप्रमाण है वास्तव में श्रीगोपीनाथ से ले कर श्रीविल्वमंगल तक सात से परम्परा प्राप्त शिष्य हुए और यहाँ जिनका नाम लिखा है वे उन में प्रसिद्ध थे और बड़ों की नाम काल-बन्ध से सुप्त हो गए इसी से यहाँ पहिले और वर्धन कोड़ों से उस घोर काज का वर्धन किया जाता है जिस में वेदिका धर्म प्रायः उच्छिन्न सा हो गया था। भगवान ने बुद्धावतार ले कर बहूत से उपधर्मों का उपदेश करके सारे भारतवर्ष को उस धर्म से परिपूर्ण कर दिया। उस के कुछ काल पीछे एक दिन कैलास के शिखर पर सिद्ध षट् की निचे रत्नवेदि पर व्याघ्रचर्म के आसन पर बैठ के श्रीपुत्रपीत्तम का ध्यान करते रहे कुछ काल के बाद भगवान् उनको समाधि से प्रगट हो कर कहने लगे कि “तुम हापराटि युगों में मनुष्यादि में अंग से अवतीर्ण हो कर अपने बनाये हुए सुन शिवजी ने स्त्रीकारा अनन्तर अपने को प्रगट करने की संधि देख रहे थे उसी समय दक्षिण में द्रविड़ देश के एक महा शिव भक्त ब्रह्मब्राह्मण था उस को कोई संतति नहीं थी इस लिये वह ब्राह्मण कुछ अनुष्ठान करता था सो एक दिन आप प्रसन्न हो कर “वरं ब्रूहि” यह बोले यह शिव जी की बाणी सुनते हो ब्राह्मण ने कहा “महाराज। यदि आप प्रसन्न हैं तो सुभे-पुत्र मिले” इस पर शिव बोले “निर्गुण सुभे-पुत्र चाहोगे तो एक-सी-पांच-बरस का सि-ल्लेगा और दून्ना सर्व गुण संपन्न १२ वर्ष का मिलेगा। इस पर ब्राह्मण बोला “महाराज। तब तक आप ठहरिये जब तक मैं अपनी स्त्री से इसी सन्नाह पुत्र मन्नादेव की का ठहरने का विचार जानके स्त्री से पूजने गया और स्त्री की सम्यति से शंकर की से कहा महाराज। सर्व गुण संपन्न पुत्र सुभी दीजिये शिवजी ने बहुत प्रच्छा काइ कर अन्य सर्व गुण सम्पन्न कोई पुत्र न देखकर स्वयं उसका पुत्र होना स्त्रीकार किया और गर्भ काक समाप्त होने पर इस ब्राह्मण के स्त्री से अवतीर्ण हुए। ब्राह्मण ने शिव का प्रसाद जान कर उस पुत्र का नाम शंकर रक्खा और कामसे उपनयन तक संस्कार किये और साम जेद पढ़ाया। यह जनम से हो महाकवि हुआ कमी शक्ति, कमी शिव और कमी शिष्य का स्वव करता था जिस से वे देवता प्रत्यक्ष होकर प्रसन्नोत्तर देते थे। ज्ञानिमा-दि सिद्धि तो इस की वंश में श्री कुछ काल के अनन्तर किसी ब्राह्मण के घर में अवतीर्ण शरीर से यथा विधि विवाह हुआ। यह स्थाश्रमी होकर वैवाश्रि

धर्मका अर्जन किया और लक्ष्मी ऐश्वर्य संतति की इच्छा करने वाली लोगों के लिये उपासना काण्ड प्रसिद्ध किया। सर्वजन में इस की कीर्ति होने के कारण सब इसके वाक्य पर विश्वास करने लगे। ऐसे एकादश वर्ष व्यतीत हुए तब शंकराचार्य ने अपने तात से कहा कि पिता अब कुछ अनिष्ट होगा ऐसा ज्ञात होता है इस लिये मेरी मनीषा काशी में जाने का है सो आप की आज्ञा चाहता हूँ यह सुन पिता ने कहा बहुत अच्छा है परन्तु हम को भी काशी को ले चलो तब शङ्कराचार्य ने अपने मा चाप को शीविका में बैठाकर स्त्री समेत काशी में आगमन किया काशी में आते ही शंकराचार्य को कालञ्जर आया और अपनी अंत की विला ज्ञान मणिकार्णिका में स्नान किया और “निमज्जता नाथ भशार्णवान्तश्चिराम्भया पीतइवासि लव्यः” इस श्लोकार्थ से स्तवन करते करते प्राण त्याग किया।

यह पुत्रका अन्त देख कर माता पिताने बहुत विलाप किया अन्तर गौर्येशभूत शंकराचार्य की स्त्री ने अग्रिम आधा श्लोक पढ़ा यथा “त्वयापि लव्यं भगवन्निदानो मनुत्तमं पात्रमिदं दयायाः” यह श्लोकार्थ सुनते ही शंकराचार्य जीवित होकर स्त्री से बोले कि यद्यपि तुमने इसकी जीवित किया तथापि हम मर्यास करेंगे ऐसा कहकर चतुर्विध कुटीचर, बहूदक, जंस और परमहंससामक मर्यास किया यद्यपि शास्त्र की आज्ञा, यावत् महिरामत्त के समान ज्ञान से मत्त हुए विना शिखा सूत्र का त्याग करने के विषय नहीं तथापि इन्हीं ने अपना पूर्व श्रौचिष्णु का “जनान्महिसुखान्कुरु” यह वाक्य स्मरण करके शिखा सूत्रका त्याग किया और काषाय वस्त्र और दंड पहन लिया अनंतर इनके बहुत से शिष्य भी हुए क्योंकि “यद्यदा चरति शूद्रस्तत्तदेवेतरोज्जमः । सद्यथमाणं कुरुते लोकस्तदन वर्तते ” अनंतर शंकराचार्य ने वही भगवान का वाक्य पूर्ण मनोगत कर के व्याससूत्र का भाष्य मायावाद अर्थात् दैत्य मत के अनुसार किया कुछ दिन के अनंतर प्रायः पुन का मत इस देश में फैल गया।

उसी समय गुजरात देश में गाहिल पत्तन में एक राजा था उसका पुत्र कुमारपाल नामक था यह हम सूरि नाम किसी खेताश्वर जैन से पढ़ाया गया था किसी समय कुमारपाल ने स्वप्न में राहू से यथा हुआ पूर्ण चन्द्र देखा और हमसूरि से इस का फल पूछने की तत्काल आज्ञा। स्वप्न का वृत्त सुनते ही हमसूरि ने उसकी बहुत निंदा की, राजपुत्र हमसूरि के दुष्टभाषण

सुन घर आया और हेमसूरि को मारने का विचार करते करते जिय राज तब जागा। प्रभात होते ही हेमसूरि ने शिष्य द्वारा राजपुत्र को कहना भेजा कि यह 'सम्र' बहुत लाभदायक है आज से सातवें दिन राज्य सर्व तुम्हारे इच्छागत होगा यदि यह असत्य हो तो हमें दण्ड देना नहीं हमारी आज्ञा मानना' राजपुत्र ने हां कहा और ऐसा ही हुआ तब राज पुत्र से कह कर हेमसूरि ने वैष्णव जैव मोमांसक सब को नगर से निकलवा दिया।

उसी काल में सूर्यांश देवप्रबोध नामा और जैमिनि के अंग्र भट्टाचार्य नामा पूर्व में द्रो पण्डित हुए वे लोग जब काशी में आये तब सुना कि गुजरात में जैनों ने वेदमार्ग का नाश किया ये सुन के वे लोग गुजरात गये और काल पाकर हेमसूर्य के विश्वास पात्र शिष्य हुए। एक दिन पद्मावती की अतरंग आराधना में हेमसूर्य ने इन दोनों को मद्य पीने को दिया। देवप्रबोध ने तो मारि डरके पी लिया भट्टाचार्य ने कहा कि थोड़ी देर ठहर के पीयेगं अनन्तर हेमसूर्य ने वेद धर्म की निन्दा करना शुरू किया। यह सुन कर भट्टाचार्य की आंखों से आमू गिरने लगा और हेमसूर्य ने जाना कि यह कोई कृपा हुआ ब्राह्मण है। हेमसूर्य ने उसे अपने ऊपर के कमरे में कौद किया वहां जैनमार्ग को बहुतसी पुस्तकें रखी थीं। जिनको पढ़ कर भट्टाचार्य ने वह वशीकरण सिद्ध कर लिया जिससे हेमसूर्य ने राजा को वश कर लिया था, उस राजा की एक रानी वैद्यक थी और नित्य शालिग्राम का पूजन करके जल पीती थी, उसका महल भट्टाचार्य के बंगले से बहुत निकट था। एक दिन उस रानी ने लक्ष्मी सांस लेकर यह आधा श्लोक पढ़ा "किं-करोमि क्वं गच्छामि को वेदातुद्धरिष्यति" यह सुनते ही भट्टाचार्य ने उत्तर दिया "माविशीद वरारोहि ! भट्टाचार्यऽस्तुभूतले" और यह कहके कूद पड़े कि जो वेद प्रमाण हो तो हम न मरें, कहते हैं कि इतने ऊंचे से गिरने से वेद की सत्यता से उनके प्राण तो नहीं गये पर 'जो वेद सत्य ही' इस सन्देह के वाक्य कहने से उनकी एक आंख में चोट आई और वहां से निकल कर उस नगर में एकांत में वे कृपि कृपि रहने लगे, एक दिन एक बगीचे में एकांत में एक तुलसी का पेड़ देखा और वहीं बैठे रहे जब सांभल हुई तब मासी आया और तुलसी की पुड़िया फूल में कृपा कर ले चला, भट्टाचार्य ने मासी से बहुत बड़ पूर्बक रानी का सब हतान्त जाना और किं करोमि क्व गच्छामि' यह पूरा श्लोक लिखकर मासी को दिया। वह रानी को

देवे। रानी ने एकांत में भट्टाचार्य को बुलाया और यह जेन बनकर उसके
 महल में गये और फिर ब्राह्मण होकर रानी को दर्शन दिया, रानी ने इस-
 की बड़ी पूजा किया और दोनों ने मिल कर वेद धर्म के लिये बड़ा विद्याप
 किया, रानी ने उन को अपने महल में छिपा कर रखा फिर जैसा वशीकरण
 का बाजू हैमसूर्य ने राजा के हाथ में पहनाया था वैसाही दूसरा बाजू
 भट्टाचार्य ने बनाकर रानी से राजा के हाथ में बंधवा दिया और वह बाजू
 अपने पास मंगवा लिया इस परिचार से राजा को बड़ा ज्वर आया, राजा ने
 हैमसूर्य से ज्वर की निहत्ति का उपाय पूछा उस ने कहा कि ब्राह्मण को
 काश पुरुष दान देने से ज्वर छूटेगा, राजा ने एक ब्राह्मण का लड़का खोज कर
 जनेऊ पहना कर काश पुरुष की दान दिया, और उससे राजा को ज्वर छूट
 गया। राजा के चित में उसी दिन से ब्राह्मणों का महत्व बढ़ा और ब्राह्मणों को
 राज्य में रहने की आज्ञा मिली उसी समय देव प्रबोधाचार्य भी प्रायश्चित्त
 करके नरसिंह जो से वर पाकर सिद्ध होकर पालकी पर चढ़ कर बहुत से
 शिष्यों के साथ उस नगर में आये, भट्टाचार्य इन से आकर मिले। एक दिन
 जब ये आठ करत थे तब हैमसूर्यने अपने मंत्र से इनका आठ नाश करना
 चाहा और जहाँ पाक होता था तहाँ मद्य बरसाना चाहा भट्टाचार्य ने भी
 मन्त्र से नारियल उड़ाये जो जैनसिद्धों के सिर पर गिरने लगे जिससे वे बड़ा
 से भाग गये। दूसरे दिन सब ब्राह्मण मिल कर राजसभा में गये राजा ने प्र-
 षामादि से इन का बड़ा सत्कार किया, ज्योतिषी ने पंचाङ्ग सुनाया ज्ञात्ते जे
 कहा आज अमावस्या है आठ करना चाहिये सुनते ही हैमसूर्य ने झुड़
 कर कहा कि आज अमावस्या नहीं पूर्णमासी है, अंत में यह ठहरी जिसकी
 बात झूठ हो वह अपने मग की पुस्तक समेत पृथ्वी में गाड़ा जाय, सांझ की
 हैमसूर्य ने अपनी इष्ट देवता पद्मावती से प्रार्थना करके उसका लुण्ठ चन्द्र-
 मा के स्थान पर उदय कराया, देव प्रबोधने नृसिंह जो के प्रसाद से यह बात
 जानकर राजा से कहा कि यह कुण्डल है और इसका प्रकाश केवल बारह
 कोश तक है। राजा ने उसी समय सवार भेजकर जब यह वृत्त जाना तब
 १२ दिन हैमसूर्य को पुस्तकों समेत पृथ्वी में गाड़ दिया, जिस समय हैमसू-
 र्य मारा जाता था उस समय बड़ी भीड़ हुई और सब लोगों ने मिल कर
 गया था। कहा कि 'अब तुम धर्मका सच सच तत्व बतानो' तब, यह श्लोक
 देखा और हैमसूर्यने प्राण त्याग किया:—“हरिर्भागीरथो विप्राः विप्राः भागीरथो
 सुनते हो हैमसूर्य

हरिः भागीरथी. हरिर्विभाः सारमेकं जगत्त्रये” जैनों का बल टूटने से वेद फिर प्रवर्त होये, और वैष्णव शैवमत प्रचार हुआ, भट्टाचार्य ने अपना वेदान्त मत चलाया और पद्मावती को आप दिया कि तू मनुष्य हो, वही सरस्वती नाम से भट्टाचार्य ही को कन्या हुई और भट्टाचार्य ने उस का विवाह ब्रह्मा को अंश शुरेश्वराचार्य नामक अपने शिष्य से कर दिया। शुरेश्वर अपनी स्त्री को लेकर काशी में रहने लगे जिस समय, भट्टाचार्य अताशु होकर जैन ग्रन्थ पढ़ने की प्रायश्चित में तुषान्त करके जन्मने लगे उस समय शंकराचार्य ने आकर इनका हाथ पकड़ा और कहा कि हम से वाद करो, भट्ट ने कहा तुम काशी जाव वहाँ हमारे जामाता से वाद करना हम तो अब देह त्याग करती है। शंकराचार्य काशी में आये और शुरेश्वर को स्त्री को मध्यस्थ कर के वाद आरम्भ किया, पद्मावती ने पूर्व वैर क्षरण कर के शंकराचार्य का पक्ष किया सातवें दिन शुरेश्वराचार्य हारे और शंकराचार्य ने उन्हें सन्धापी किया। अंजक दक्षिण में गोकर्ण शिवलिंग में आये और चार शिष्यों को आज्ञा दिया कि चार दिशा में जाकर तुम लोग शिक्षा सूत्र परित्याग पूर्वक सन्धास मत का प्रचार करो। उन शिष्यों में मध्वनामक एक ब्राह्मण को भगवान श्री रामचन्द्रजी ने रात्र को स्वप्न में आज्ञा दिया कि तुम तो इतमान के अंश हो और वैष्णव मत फैलाने का तुम्हारा अवतार है सो उठो और शंकराचार्य का मत खण्डन करके हमारे तत्व वाद की अनुसार व्यास मूल की व्याख्या कर के वैष्णव मत फैलाओ। भट्टाचार्य ने भगवदाज्ञानुसार दूसरे दिन से शंकराचार्य का मत काण्ठरव से खण्डन करके वैष्णव मत का प्रचार किया।

श्लमङ्गल के पीछे और भट्टाचार्य के पक्षसे द्रविड़ देश में रामानुज नाम एक ब्राह्मण हुये लक्ष्मी की तप से प्रसन्न करके उनसे वर मांगा कि हम से भगवत् सिद्धान्त का जो लक्ष्मीजी ने गुरुजी को आज्ञा दिया और गुरुजी ने नारायणीय सिद्धान्त रामानुज से कहा जिसकी अनुसार श्रीरामानुजाचार्य ने गीता और मूल पर भाष्य करके विशिष्टा हैत वैष्णव सम्प्रदाय संसार में फैलाया। इसी सम्प्रदाय में अगस्त्य और परशुराम के बनाये हरिहरोपासक और लक्ष्मी के उपासक वैष्णव शाखान्तर में हुए हैं।

इस काल से बहुत पूर्व ही पण्डरपुरमें व्यास और सूर्य की अंश से निम्नादित्य ब्राह्मण हुये जिनको श्री विद्वल नाथ जी ने अपना सिद्धान्त कहा और उसकी अनुसार उन्होंने हैतावत मत प्रवर्त किया, जैनों की बल से बुद्ध सम्प्रदाय की श्री निवासाचार्य ने सूत्र और गीता पर भाष्यकारके फिर से प्रवर्त किया।

यह चारो सम्प्रदाय अर्थात् विष्णुस्वामी, मध्व, रामानुज, और निम्बोदित्य की पूर्व व्यवस्था हुई, ये सम्प्रदाय ब्रह्म, ब्रह्म, लक्ष्मी, और सनकादि के क्रमसे प्रवर्त्त किये हुये वास्तव में एक पर प्रगट अलग-अलग संसार में प्रसिद्ध हैं ।

मध्वाचार्य से श्री जगन्नाथजी ने आज्ञा किया था कि 'जो इन चारो सम्प्रदाय के बाहर हैं वह हमारा प्यारा नहीं है । ,

इन्ही सम्प्रदायों के चार उपसम्प्रदाय हैं विष्णुस्वामी का उपसम्प्रदाय चैतन्य, रामानुजका नन्द, मध्वाचार्यका प्रकाश, और निम्बोदित्यका स्वरूप, इनमें स्वरूप और प्रकाशको सम्प्रदाय कान्तवन्तसे विच्छिन्न हो गई ये चारो उपसम्प्रदाय मूलसम्प्रदाय से अविच्छिन्न हैं केवल आचार्योंके रुचिसेदसे नामान्तरसे प्रसिद्ध हैं ।
चतुर्भुजभुजच्छाया व्यवसायत् सुनिर्भयाः । जयन्तिस सम्प्रदायाश्चत्वारो हरिवल्लभाः ॥१॥

उत्तरार्द्ध ।

अथ श्री विष्णु स्वामी सम्प्रदाय परम्परा ।

श्री पुरुषोत्तम, शिव जी, श्री नारद जी, श्री व्यास जी । व्यासजी के दो शिष्य शुकदेवजी और शण्डिल्य, शण्डिल्य के शिष्य गर्ग और कौण्डिन्य, शुकदेवजी के शिष्य विष्णुस्वामी, विष्णुस्वामी से क्रम से परमानन्द सुनि, आनन्द सुनि, प्रकाश सुनि, श्रीकृष्ण सुनि, नारायण सुनि, जै सुनि, श्रीसुनि, शङ्कर भट्ट पद्मभट्ट गोपाल भट्ट श्रीधर भट्ट श्याम भट्ट राम भट्ट सेतु भट्ट कृष्ण भट्ट दिवाकर भट्ट कृपाल भट्ट विद्याधर भट्ट दिनकर भट्ट मधुनिधान भट्ट ज्ञान देव भट्ट शुकदेव भट्ट शिवदेव शान्तिदेव दयानन्देव जमादेव सन्तोषदेव धीरजदेव ध्यानदेव विज्ञानदेव महाचार्य तत्त्वाचार्य नृसिंहाचार्य सूवाचार्य सुबुद्धाचार्य प्रदुधाचार्य प्रवीधाचार्य भद्रवाचार्य रुद्राचार्य भगवन्ताचार्य रामेश्वराचार्य ब्रह्मविधिचर्याचार्य सुदयाचार्य लक्ष्मनारायणाचार्य ज्ञानदेव नामदेव पिकोचनदेव पत्यादि विखमङ्गल जी तक सात से आचार्य हुए हैं इसी से श्री महाप्रभु जी पदले से गिनने से सात से सातवें आचार्य हैं ।

कहते हैं कि विष्णुस्वामीने फिरसे जन्म लिया था और व्यास अवतार कहलाते थे ।

श्री ब्रह्मजी मतके अतिरिक्त श्री विष्णुस्वामीके सम्प्रदायके लोग और कहें कहीं भी मिलते हैं जैसा कि श्री प्रेमाकर गुसाईं के शिष्य नारायण दास जी खारखत जिनको श्री शुकदेव जीने दर्शन दिया था उन के पीछे पुरुषोत्तम जी और वंशीधर जी इस वंश में प्रसिद्ध हुए हैं नामा जी ने इन्ही नारायण दास का भक्तमान में वर्णन किया है यह गद्दी नवल गोस्वामी के नाम से अब तक प्रसिद्ध है ऐसेही ब्रज में और भी कुछ लोग इस सम्प्रदाय के हैं ॥

अथ श्री मध्व सम्प्रदाय ।

देवता	अंशवतार	शुद्धोक्तिव्यङ्ग्य पुण्यतिथि ।	संज्ञ ।
१ वायुदेव	श्री भानन्द तीर्थ स्वामी	६८ माघ-शुक्ल	१ स्वतद्विषयस्यहृन्दावने
२ बुद्धदेव	पद्मनाभतीर्थस्वामी	७ कार्तिक कृष्ण	२ वंदिकार्यम
३ ममयदेव	नरहर तीर्थस्वामी	८ पौष कृष्ण	३ अनोर्गोदी
४ गरुडदेव	माधव तीर्थ स्वामी	१७ भाद्रपद कृष्ण	४ इंविरुपाची
५ रुद्रदेव	अचीभ तीर्थ स्वामी	मार्गशीर्ष कृष्ण	५ मेखुर-भीमातीर
६ इन्द्रदेव	जय तीर्थ स्वामी	८ आषाढ कृष्ण	६ मत्तखेडा
७- सूर्यदेव	विद्यानिधि राजतीर्थ	६४ वैशाख शुक्ल	७ जगन्नाथ
८ चन्द्रदेव	कवीन्द्र तीर्थ स्वामी	७ चैत्र शुक्ल	८ पोपा सरोवर
९ रामदेव	वागोय तीर्थ स्वामी	४ चैत्र शुक्ल	९ आनिगोदी
१० अग्निदेव	रामचन्द्र तीर्थ स्वामी	३३ वैशाख शुक्ल	१० मत्तखेडा ।
११ वरुणदेव	विद्या तीर्थ स्वामी	८ कार्तिक कृष्ण	११ आनिगोदी ।
१२ कुबेरदेव	रघुनाथ तीर्थ स्वामी	३६ मार्गशीर्ष कृष्ण	१२ कीसुर
१३ प्रवाहदेव	रघुवर्य तीर्थ स्वामी	८ ज्येष्ठ कृष्ण	१३ पेनगोडी

देवता	शंशावतार	युक्तोऽस्यल्लङ्घपुस्तान्तिय	सूक्त
१४ नैऋतिदेव	रघुत्तम तीर्थ स्वामी	३८ पीप युक्त	११ १४ वे चक्रमगर
१५ तुंबुकदेव	वेदव्यास विधि तीर्थ	२४ चैत्र युक्त	२ १५ युद्धर पुर भीमातीर
१६ ब्राह्मगन्धर्व	विद्याधीप तीर्थ	१८ पौष ऋण्य	१४ १६ सांगनि ऋण्यातीरं
१७ द्रुहू गन्धर्व	वेदनिधि तीर्थ स्वामी	१७ कार्तिक युक्त	१२ १७ निवृत्ति संगमतीर
१८ सीमसङ्घवि	सत्यवर्ष तीर्थ स्वामी	८ फाल्गुण युक्त	६ १८ विन्धोच नगर
१९ जावालि ऋषि	सत्यनिधि तीर्थ स्वामी	२२ मार्गशीर्ष युक्त	४ १९ माचारगुडो कावेरीतीर
२० विष्णुमित्र	सत्यनाथ तीर्थ स्वामी	३९ मार्गशीर्ष युक्त	११ २० कोलुर
२१ मिथान्तिधि	सत्यादिभिमान तीर्थ	६९ ज्येष्ठ ऋण्य	१४ २१ चारपी
२२ पराशर ऋषि	सत्यपूर्ण स्वामी	२२ ज्येष्ठ ऋण्य	२ २२ माना मदरी
२३ जामदग्नि ऋषि	सत्य विजय स्वामी	१३ ज्येष्ठ ऋण्य	१२ २३ सावपुर सावगूर
२४ नाथपञ्चवि	सत्यप्रिय स्वामी	९ चैत्र युक्त	१३ २४ तुङ्गभद्रा तीर
२५ मांडव ऋषि	सतप्रबोध तीर्थ स्वामी	४० फाल्गुण ऋण्य	१ २५ सतिविबहुर
२६ —	सत्यसन्ततीर्थ स्वामी	११ ज्येष्ठ युक्त	२ २६ —
२७ —	सत्यबर तीर्थ स्वामी	२ ज्येष्ठ युक्त	७ २७ —
२८ —	सत्य घर्म तीर्थ स्वामी	—	— २८ —
२९ —	सतप्र सङ्ख्य तीर्थ स्वामी	—	— २९ —

अथ श्री चैतन्य सम्प्रदाय परम्परा ।

श्रीकृष्ण ब्रह्मा नारद व्यास मध्व पद्मनाभ ऋद्धरि माधव अक्षीभ्य जयतीर्थं
ज्ञानसिंधु दयानिधि विद्यानिधि राजेन्द्र जयधर्मा पुरुषोत्तम ब्रह्मण्य व्यास-
तीर्थ कक्षीपति माधवेन्द्र, उन के तीन शिष्य ईश्वर १ अर्द्धत २ और नित्या-
नन्द, ईश्वर के श्रीकृष्ण चैतन्य उन के गोपालभट्ट उन के गोस्वामी गोपीनाथ
जिन का वंश अत्र प्रसिद्ध है । श्रीकृष्ण चैतन्य को मुख्य चौदह पार्षद और
चौंसठ महन्तों के नाम नीचे लिखे के अनुसार जानो । और श्रीकृष्ण चैतन्य
विद्या में केशवपुरी के शिष्य थे ।

अर्द्धत १ अमिराम २ नित्यानन्द ३ सुन्दर ठक्कुर ४ धनञ्जय पण्डित ५ क-
मलाकार ६ साङ्गस पण्डित ७ पुरुषोत्तम ८ श्रीधर ९ इलाशुष १० गौरीदास
११ लङ्कारण १२ परमेश्वर १३ कृष्ण १४ ।

श्रीलाञ्छर चक्रवर्ती १ गदाधर पण्डित २ गदाधर ठक्कुर ३ नरहरि ४
सुज्जन्द ५ सदाशिव कविराज ६ जगदानन्द पण्डित ७ दामोदर ८ वनमाकी
९ रघुनाथ भट्ट १० गदाधर भट्ट ११ प्रबोधानन्द १२ राघोगोस्वामी १३ भृगुर्भ
गोस्वामी १४ काशीमिश्र १५ रूप गोस्वामी १६ सनातन गोस्वामी १७ रघु-
नाथदास १८ रघुनाथ भट्ट १९ गोपाल भट्ट २० लोकनाथ २१ दूसरे गदाधर
भट्ट २२ जीव गोस्वामी २३ गोविन्द २४ माधव २४वासू घोष २६ शिवानन्द
की स्त्री २७ परमानन्दपुरी २८ राघोदास २९ शक्रांबर ब्रह्मचारी ३० जगदीश-
पण्डित ३१ श्रीलाचार्य ३२ गुरुद्व ३३ गोपीनाथ सिंह ३४ शङ्कर ३५ गुणसा-
गर राय ३६ माधव ३७ भास्कर ३८ वनमाकी ३९ सार्वभौम ४० सिंघानन्द ४१
लोकनाथकविचन्द्र ४२ श्रीनाथ ४३ रामनाथ ४४ काशीमिश्र ४५ रामानन्द ४६
प्रतापचन्द्र ४७ काकीदास ठक्कुर ४८ माकी स्त्री ४९ गोपीबाबाचार्य ५० शारङ्ग
दास ५१ विश्वेश्वर ५२ सत्यराज ५३ रामानन्द ५४ गोविन्द ५५ गुरुद्व ५६
आचार्यरत्न ५७ श्रीवल्लभ ५८ हनुदाबन ५९ शिवानन्द ६० जगन्नाथपण्डित
६१ अनन्त ६२ हरिदास ६३ हृदयानन्द ६४ ॥

अथ श्रीरामानुज सम्प्रदाय ।

पुरुषोत्तम लक्ष्मी विश्वक्सेन श्रुतकोप श्रीनाथ पुण्डरीकाक्ष राममिश्र
यामुनाचार्य पूर्णाचार्य रामानुज गोविन्दाचार्य पराशर वेदान्ताचार्य क-
लि वैरिदास श्रीकृष्णपाद लोकाचार्य श्रीशैलनाथ वरवर सुनि वरदनारायण

श्रीनिवासदास प्रणतार्तिहराचार्य्य वरदाचार्य्य वैकटेश वरदाचार्य्य प्रणतार्तिहर
वेङ्कटाचार्य्य वेङ्कटेश वरदाचार्य्य प्रणतार्तिहर श्रीनिवास वेङ्कटाचार्य्य कृष्णाचार्य्य
शेषाचार्य्य श्रीनिवासरङ्गाचार्य्य यह तो वर्तमान श्री हन्दाबनस्व स्वामी रङ्गा-
चार्य्य तक परम्परा लिखी है परन्तु रामानुज संग्रदाय में चौदत्तर गयी है ।
और देशाचार्य्य से प्रबोधानन्द राघवानन्द रामानन्द यह रामानन्दी शाखा
है । रामानन्द से अनन्तानन्द कृष्णदास कीलदास अग्रदास नारायणदास गो-
विन्ददास कान्हरदास तक अग्रदासी शाखा है । और निश्वादित्य और रा-
मानुज सम्प्रदाय से मिनकर श्रीजानकी घाट की और सिधिलापुर की सम्प्र-
दाय स्वतन्त्र बन गई है । कितने साधु अग्रस्वामी की सम्प्रदाय की पौधारी
बाबा को रामानुज की अन्तर्गत मानते हैं पर महाराज विश्वनाथ सिंह ने
अपनी पुस्तक परम्परा में इन लोगों को निश्वादित्य की अन्तःपाती हितहरि-
वंश जी की सम्प्रदाय में माना है ।

षष्ठ श्री निश्वादित्य सम्प्रदाय परम्परा ।

इस सनकादि नारद निश्वादित्य । निश्वादित्य का नाम निश्वाक और
गियमानन्द की है । इन की माता जयन्ती और पिता अरुण द्राविड़ ब्राह्मण
इसो से इनको आरुणी भी कहते हैं । अन्तरङ्ग रूप इनका श्रीललिता जी और
रङ्गदेवी का है मर्यादा में ये सुदेशन चक्र का अवतार हैं । शिष्य परम्परा
श्रीनिवासाचार्य्य विश्वाचार्य्य पुरुषोत्तमाचार्य्य विलासाचार्य्य स्वरूपाचार्य्य
साधवाचार्य्य बलभद्राचार्य्य पद्माचार्य्य श्यामाचर्य्य गोपालाचार्य्य कृपाचा-
र्य्य देवाचार्य्य सुन्दर भट्ट पद्मनाभ उपेन्द्र भट्ट रामचन्द्रभट्ट वामनभट्ट कृष्ण-
भट्ट पद्माकरभट्ट भूरिभट्ट साधवभट्ट श्यामभट्ट गोपालभट्ट बलभट्टभट्ट गोपी-
नाथभट्ट केशवभट्ट गङ्गलभट्ट केशवकाशीरिभट्ट श्रीभट्ट हरिव्यासदेव । हरि
व्यासदेव जी से पांच शाखा नीचे लिखे हुए को अनुसार यथा ।

श्रीभूराम कर्णहरदेव मधुरेश नरहरिदास प्रह्लाददास इत्यादि ।

दूसरी शाखा ।

कर्णहरि परमानन्ददेव नागजी मोहनदेव आत्माराम नारायण दास भग-
वानदास गिरधारीदास गोपालदास ।

तीसरी शाखा ।

श्रीभूराम मधुरेशदेव बदरीशदेव जयरामदेव कृष्णदेव धर्म दास जी ।

चौथी शाखा ।

व्यासदेव परशुराम हितहरिवंश नारायणहित हन्दावनहित श्री गोविन्द
हित ।

पांचवीं शाखा ।

व्यास जी के पहिले किसी महात्मा से है यथा श्री आशाधीर जी श्रीहरि-
दास स्वामी विद्वन्निपुणविनोदविद्यारण विद्यारणदास जी नरहरदेव जी
रसिकदेव जी पीतांबरदेव गोवर्द्धनदेव नरोत्तमदेव । रसिकदेव जी के दूसरे
शिष्य ललितकिशोरी उनकी मौनीदास जी जिनको श्रीवन में टट्टी है ।

श्रीभूराम जी के भाई आत्माराम उन को दो शिष्य परंपरा एक सन्तदास
को एक माधव दास को ।

इसी सम्प्रदाय में सुमुखन भक्त के पुत्र व्यासजी बड़े प्रसिद्ध हुए हैं संवत्
१६१२ में जन्म पैतालीम वर्ष को भवस्था में श्रीवन आए और बारह सम्प्र-
दाय चलाई ।

श्रीहित हरिवंश जी का निवास देवनगर गौड़नाम्न कश्यप गोत्र यशुवेंद
माध्वनन्दी शाखा पिता व्यास मिथ्य माता तारावती बंशी का भवतार
संवत् १५५६ वैशाख सुदी ११ को जन्म इनके ताऊ नृसिंहाश्रम प्रसिद्ध भक्त
थे इन को बारह भाई और स्त्री का नाम रुक्मिणी, मोहन जी इत्यादि तीन
पुत्र और एक कन्या श्रीर्षामिनी जी से अश्वत्य वृक्ष पर मन्त्र पाया कण्ठदा-
सो और मनोहरी दो स्त्री और व्याही संवत् १५८२ कार्तिक सुदी १३ को
श्रीराधावल्लभ जी को पाठ बैठाया पांच भोग सात अरती का नैम रक्खा
इनका संस्कृत ग्रन्थ श्रीराधा सुधाधिष्ठीक २७० भाषा ग्रन्थ पद चौरासी
सुख्य शिष्य नरबाहन नाहरमल्ल विठ्ठलदास मोहनदास छवीलदास नवल-
दास बलीदास परमानन्दरसिक हठी हरिदास खड्गसेन और गङ्गा, यमुना ॥

इति श्री वैष्णव सरवस्त्रे परम्परा वर्णने—उत्तरार्द्ध समाप्तः ।

श्रीवल्लभीयसर्वस्य

श्री श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु चरणकमलमिलिंदमरंद ।

‘ चिंतासंतानहंतारो यत्पादांबुजरेणवः ॥
स्त्रीयानां तान् निजाचार्यान् प्रणामामि मुहुर्मुहुः ’

सर्वस्वपंचकपणेता तटीयनामांकित अनन्य वीर वैष्णव

श्री हरिश्चन्द्र

रचित ।

पटना—“खड्गविलास” प्रेस—दांकीपुर ।

साहव प्रसाद सिंह ने मुद्रित किया ।

१८८८.

श्रीवल्हभीयसर्वस्व ।

दक्षिण में तैन्नङ्ग देश में आंध्र प्रान्त में आकवोडु जिला में । खम्मम नाकारिकलि ग्राम में यजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा भारद्वाज गोत्र में महादेव पात्र के वंश के ब्राह्मण रहते थे । इसी वंश में रामनारायण भट्ट के पुत्र यज्ञनारायण सोमयागी हुए । ये वेद के अवतार थे इन पर वेद पुरुष अत्यन्त ही प्रसन्न रहते थे । जब इन को वेद में कोई संदेह होता तब ज्ञान कर के वेद पुरुष का ध्यान करते और वेद पुरुष प्रत्यक्ष ही कर संदेह नाश कर देते ।

एक बेर मायावादियों ने इसी से इन से कहा कि आप वेद के अवतार हो तो बकरे से वेद पढ़वाओ तब यज्ञनारायण जो ने बकरे को घोर देख कर कहा "भोसुनायत्ववेदानुच्चारय" इतना सुनते ही वह बकरा वेद-पाठ करने लगा । ऐसे ही दक्षिण में उन ने अनेक चमत्कार दिखाये । ये श्री रामानुजाचार्य मत के बड़े पण्डित थे ।

जब यज्ञनारायण जो ने पहिला सोमयाग किया तब -अग्निकुण्ड में से यह शब्द सुन पड़ा कि ऐसे सौ सोमयाग के पोछे भगवान का अवतार होता है । यतीस सोम याग करके ये देवलोक पधारे ।

इनके पुत्र गङ्गाधर भट्ट सोमयागी साक्षात् शिव जी के अवतार थे जिन्होंने ने अवश्रुत ज्ञान करतो समय लोगों को प्रत्यक्ष अपने केश में से जल धारा निकलती दिखाई । अठ्ठाइस सोमयाग कर के ये देवलोक गये ।

इन के पुत्र गणपति सोमयागी थे, काशी में पण्डितों की सभा में इन्होंने ने गणेश को भांति दर्शन दिया और इसी से सभा में इन का प्रथम पूजन होता था; एक बेर सब प्रमिड नगरो में जाकर शास्त्र का दिग्विजय किया था । तीस यज्ञ करके ये देवलोक सिधारे ।

इन को तीन स्त्री थीं उन में ज्येष्ठ स्त्री के ज्येष्ठ पुत्र वल्हभ भट्ट साक्षात् सूर्य के अवतार थे क्योंकि एक बार इन्होंने ने यज्ञ करते करते सायंकाल की समय प्रहर-दिन चढ़े के सूर्य को भांति दर्शन दिया था, पांच यज्ञ करके ये भी देवलोक गये ।

इनके पुत्र लक्ष्मण भट्ट जी बड़े विद्वान साक्षात् अक्षर ब्रह्मा शेष जी के अवतार हुए । इन को छोटी ही अवस्था में इन के पिता का परलोक हुआ

था दस्रै इन के मातामह ने साक्षन पासन कर के इन को विद्या पढ़ाया था। इन की स्त्री देवकी जी का अवतार श्री इक्ष्वाकर्णु जी थीं। इन के तीन पुत्र हुए। बड़े भाई का नाम नारायण भट्ट उषनाम रामकृष्ण भट्ट। ये कुछ दिन पीछे सन्धासी हो गये तब केशवपुरी नाम पड़ा। यह ऐसे सिद्ध थे कि खड़ाज पड़ने गङ्गा पर खल्ल की भांति चलते थे। मझले श्री महाभूमि जी और छोटे रामचन्द्र भट्ट जी। ये मझा भारी पण्डित थे वेदान्त, सीमासा, व्याकरण, काव्य और साहित्य बहुत अच्छा जानते थे। लक्ष्मण भट्ट जी के मातुल वशिष्ठ भोज के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इन्हें अपने घर ले गये थे। कृष्णकुतूबल गोपाल खोला महाकाव्य इत्यादि कई ग्रन्थ इन्होंने बनाये हैं। श्री श्री महाभूमि जी के विद्या में शिष्य थे और प्रायः श्रयोध्या में रहते थे। बादों ऐसे भारी थे कि प्रायः उस काल के सब पण्डितों को जीता था यहाँ तक कि इसी बाद के साग पर इन को विष दे दिया।

लक्ष्मण भट्ट जी के पूर्ब पुरुषों ने पञ्चानव सोमयाग किये थे सो इन्होंने पांच और कर के सी पूरे किये। अन्त के सोमयाग का आरम्भ चैत सुदी ८ सोमवार पुष्य मन्वन् अभिजित् योग में संवत् १५३२ में किया। जब यज्ञ समाप्त हुआ तो कुछ से यह असौखिक बाणी सुन पड़ी कि तुम्हारे कुल में पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागव्य होगा, यह बानी सुनते ही यज्ञ में सब को बड़ा आनन्द हुआ और लक्ष्मण भट्ट जी ने उसी समय काशी में सवा लख ब्राह्मण भोजन का सङ्कल्प किया। उसी समय में संयोग से दक्षिण में कुछ यवनों का उपद्रव भी हुआ दस्रै लक्ष्मण भट्ट जी कुटुम्ब को ले कर और बहुत सा द्रव्य साथ ले कर काशी की ओर चले।

विदित हो कि श्री लक्ष्मणभट्ट जो संवत् १५३२ के चैत्र के अंत में बहुत से विद्यार्थी और ब्राह्मण भोजन के हित बहुत सा द्रव्य ले कर काशी चले और कांकरवार से सात मञ्जिल पर शृङ्ग सार्थक तीर्थ में जहाँ सर्वतोभद्रकुण्ड में राजा बरुण ने अपने यज्ञ का अवशुतज्ञान किया है तीन दिन तक रहें। वहाँ वैशाख बदी ११ को अक्षराय को श्री ठाकुर जी ने श्री स्वामिनी जी सहित दर्शन दिया और आज्ञा किया कि जब तुम काशी से लौट कर चम्पारण्य आवोगे तब तुम्हारे यहाँ हमारा प्रागव्य होगा। यह आज्ञा कर के एक उपरना, एक तुलसी की माला, एक काण्ठी, दे कर श्री सुख से कंहा कि जब बालक हो तब उरलो यह उपरना उढ़ा देना, यह काण्ठी माला पहना देना

घोर यह बोझा जन्म घोट्टी में पिंखा देना । इतना सुनतेही जब लक्ष्मण भट्ट जो नींद से चौक पड़े तो इन वस्तुओं के सिवा घोर वहां कुछ न देखा ।

लक्ष्मण भट्ट जो भीमरथी, उल्लैन, पुष्कर, इत्यादि तोर्य होते हुए प्रयाग आये । वहां भारद्वाज ऋषि के आश्रम में आकाशवाणी हुई कि तुम हमारे गोच में धन्य हो जिस के घर साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम का प्रागल्ह होगा ।

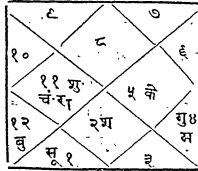
प्रयाग से भट्ट जो काशी आये । वहां गङ्गा ज्ञान काशी विश्वेश्वर का दर्शन करके एक स्नान ले कर उत्तरे घोर वेद का पारायण अग्निहोत्र और ब्राह्मण भोजन प्रारम्भ किया और थोड़े दिनों में सवा लाख ब्राह्मण का भोजन समाप्त किया । इन्ही समय में दिल्ली के यवन राज्य में सुगर्भी और पठानों के विरोध के कारण बड़ा उपद्रव उठा और भारत वर्ष के पश्चिमोत्तर प्रान्त में चारों घोर हल चल पड़ेगई । लोह नगर छोड़ २ कर गांव में वपने लगे । लक्ष्मण भट्ट जो के जाति के लोह भी काशी छोड़ कर इधर उधर चले गये और लक्ष्मणभट्ट जो भी कुटुम्ब ले कर दक्षिण को घोर चले सो जब चम्पारण्य पहुँचे तब शके १४०० संवत् १५३५ वैशाख सुदी : ११ रविवार को श्री इक्ष्मणारू जी का सात महीने का गर्भ थाव हुआ सो माता जी ने कले के पत्ते में वह गर्भ लपेट कर शमी के खोदरे में रख दिया । यहाँ से ये लोग चोंडा नगर में गये और वहाँ सुना कि देशोपद्रव सब शांत हो गया यहाँ एक रात्रि निवास कर के जब लक्ष्मण भट्ट जो फिर काशी की घोर फिर तो उभो शमी के वृक्ष की नीचे ज्ञानीय हाथ के लंबे चौड़े अग्नि कुण्ड में बानक खेनता देखा । श्री इक्ष्मणारू जी के स्नान से दूध की धारा उस समय निकली सो श्रीमहाप्रभू जी को सुखारविंद में पड़ी । तब श्रीलक्ष्मण भट्ट जो ने वेदमन्त्र से और माता जी ने अपनी भाषा में अग्नि और वरुणकी स्तुति किया और अग्निने इक्ष्मणारू जी को मार्ग दिया । माता जी ने बड़े धानंद और वास्तव्य से पुत्र को गोद में उठा लिया । उस समय आकाश से पुंथ हटि हुई और देवताओं ने प्रत्यक्ष हो कर जै जै कार किया । सब के चित्त में अकस्मात् नन्द मंझोखव की धानन्द का अविर्भाव हुआ ।

श्री लक्ष्मण भट्ट जो बानक को लेकर काशी फिर आए और श्री ठाकुर जी को आज्ञा प्रमाण कण्ठी, माता, उपरना और बीड़ा श्री महाप्रभू जी को दिया । तैत्तिरीय शाखा के अनुसार नामकारणादिक सब संस्कार बड़े धानन्द से हुए और जब श्री इक्ष्मणारू जी गङ्गा पूजने को गईं तब श्रीगङ्गा जीने माता

की गोद ही में श्री महाप्रभु जी का चरण स्पर्श किया और स्त्रियों सहित माता जी के बरदान मांगने पर जल में से शब्द सुन पड़ा कि तुम्हारा पुत्र सब बादियों को जीतैगा।

अथ जन्मपत्री ।

स्वस्ति श्री मन्मृपति विक्रमाकं राज्यान्दे १५३५ शके १४०० वैशाखे मासो
 कृष्णपक्षे तिथौ १० रविवासरे घ० १६ प० १४ परच ११ तिथौ धनिष्ठा
 नक्षत्रे घ० १८ प० ४६ शुभयोगे घ० २८ प० २ ववकार्णे श्रीसूर्योदियात् इष्ट घ०
 ३७ प० ४२ वृश्चिक लग्नोदये श्रीलक्ष्मण भद्र पत्नीपुत्र रत्नमजीजनत् ।



सूर्य ० । २ । २ । ११ । लग्न ७ । १० । १८ । ३१ दिनमान ३० । २८ रात्रिमान २८ । ३२ । एक बेर श्री इक्ष्मणगारु जीकी व्रजयात्रा की इच्छा हुई और आप ने अपने पति से निवेदन किया कि छपा पूर्वका व्रज चलिये परन्तु भद्र जीने कहा कि पुत्र का यज्ञोपवीत करके चलेंगे । यद्यपि इक्ष्मणगारु जी ने पति की आज्ञा का ऊख उत्तर नहीं दिया तथापि व्रज यात्रा की आप की बड़ी ही इच्छा थी यहाँ तक कि एक बेर श्री महाप्रभु जी को गोद में लिये आप बैठे थीं सी व्रज का स्मरण कर के उनके नेचों में जल भर आया । सर्वान्तर जाम्नी श्रीमहाप्रभु जी ने माता की इच्छा पूर्ण करने को जम्हाई लिया और मुखारविन्द में चौराबी कोस व्रज का दर्शन कराया । श्रीइक्ष्मणगारु जी को यह देख कर बड़ा ही आश्चर्य हुआ और आपने लक्ष्मण भद्र जी से सब हत्तान्त कहा । भद्र जी ने कहा कि एक बेर हम अग्निशाला में भूमि पर शयन करते थे तब अग्नि ने स्वप्न में हमसे कहा कि तुम इस बालक के विषय में सन्देह मत करना सो यह बालक अलौकिक साक्षात् नारायण का स्वरूप है ।

एक वर श्रीविश्वनाथ जी ने यह विचार किया कि श्री ठाकुर जी ने इस को तो माया मन मैदाने की याज्ञा दिया है और आप अपने संप्रदाय मैदाने की क्यों प्रगट हुए हैं इस में एक वर दर्शन तो करना चाहिये कि आप ने कैसा वेष लिया है और क्या इच्छा है। यह विचार कर योगी बन कर एक सोने का बघनड़ा हाथ में ले कर श्रीलक्षण भट्ट जी के द्वार पर आये। श्री महाप्रभू जी उस समय अत्यन्त रुदन करने लगे और कोई प्रकार से चुप न रहे। तब लक्षण भट्ट जी ने आप ने पाम बैठे हुए ज्योतिषियों से पूछा कि आज कल बालक के घर कैसे हैं ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि यज्ञ तो अच्छे हैं परन्तु एक बघनड़ा इस को गले में पड़ा रहे तो अच्छा है। श्री लक्षण भट्ट जी ने अपने शिष्यों को आज्ञा किया कि अभी बघनड़ा भोज ले कर सोने में मढ़ा कर पोड़वा लाओ। शिष्य लोग जैसे ही बाहर निकले जैसे ही देखा कि एक योगी बघनड़ा लिये खड़ा है। बड़े दर्प से शिष्य लोग योगी को भीतर ले गये। श्री महादेव जी ने श्री महाप्रभू जी को कठुना पढ़ना कर पूछा “भगवान् कोयं वेषः” श्री महाप्रभू जी ने उसी क्षण उत्तर दिया “सर्वेश्वरसर्वात्मा गिजेच्छातः करिष्यति” यह सुन कर सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे बालक के मुख से शब्द स्पष्ट और फिर संस्कृत कैसे निकला। किसी ने कहा योगी बड़े सिद्ध हैं किसी ने कहा नहीं बालक ही बड़ा प्रतापी है। उस पीछे श्रीमहादेव जी कई वर योगी के वेष में खिलौना ले कर प्रायः मिलने को आते थे।

संवत् १५४० चैत्र वदी ८ अर्थात् श्री रामनवमी रविवार को लक्षण भट्ट जी ने वेद विधि से आप का यंत्रोपनिषत् किया। नीरोंनी नामक प्रसिद्ध वाराणसी में केशवानन्द नाम के एक बड़े सिद्ध योगी वैष्णव संप्रदाय के थे। श्री महाप्रभू जी का चम्पारण में प्राग्व्य हुआ उसी समय उन्हीं ने अपने शिष्यों से कहा कि इस समय पृथ्वी पर कहीं पुरुषोत्तम का अवतार हुआ है उनके शिष्यों में से लक्ष्णदास मेघन नामक एक शिष्य को ही यह शुक का बघन सुनते ही यह विचार करके घूमने निकले कि जो पुरुषोत्तम का प्राग्व्य कहीं हुआ होगा दर्शन होईगीं। और जो इसको नाम लेकर पुकारेगा उसी को इस पुरुषोत्तम जानेंगे यह लक्ष्णदास मेघन फिरते फिरते श्री महाप्रभू जी के उपवीत समग्र काशी में आये और भीड़ देखकर जो श्री

लक्ष्मण भट्ट जी के घर में गये तो उनको देखते ही श्री महाप्रभू जी ने आज्ञा किया "लक्ष्मणदास तू आयो" इन्होंने दण्डवत करके उत्तर दिया "जे मैं आयो" और एक अंगूठी श्री महाप्रभू जी के यज्ञोपवीत भिन्ना में दी और तब ये आजन्म श्रीप्रभू जी के साथ ही रहें ।

उपवीत धारण करने के पड़ले और पीछे जब आप खेलते तो ब्राह्मण के लड़कों को शिष्य बनाते और आप गुरु बन कर उपदेश करते ।

लक्ष्मण भट्ट जी के घर के पास सगुन दास नामक ढाढ़ी रहते थे उनकी श्री महाप्रभू जी के दर्शन साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के होय इसके उनका नेम था कि नित्य आप का दर्शन करके तब जन्म पीते । तो जब श्री महाप्रभू जी चरणारविन्द से चमने लगे तब आप उनके घर पधार कर दर्शन देते सो एक दिन श्री लक्ष्मण भट्ट जीने आप से आज्ञा किया कि शूद्र के घर आप मत पधारा करो इस पर श्री महाप्रभू जी ने यह वाक्य पढ़ा "स्त्रियो वैश्या तथा शूद्रा तपियानि पराङ्गति" यह सुनकर लक्ष्मण भट्ट जीने श्री महाप्रभू जी को सगुन दास जी के यहां जाने की आज्ञा दिया ।

यज्ञोपवीत के पीछे श्री महाप्रभू जी को लक्ष्मण भट्ट जी घरही-में वेद पढ़ाते थे परन्तु आप को बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी इस हेतु असाढ़ सुदीर पुष्यार्क योग में माध्वानन्द स्वामी के यहां लक्ष्मण भट्ट जी ने आप को पढ़ने को बैठाया सो चार ही महीने में चारोवेद, ऋग्वेदशास्त्र पढ़ कर सब को बड़ा आश्चर्य उत्पन्न किया, गुरुदक्षिणा में माध्वानन्द स्वामी ने श्री ठाकुर जी को सेवा सांगी तब आप ने आज्ञा किया कि जब श्री नाथ जी को प्रगट करेंगे तब आप को सेवा देंगे । इन्ही को और ग्रन्थों में माधवेन्द्र पुरी करके लिखा है और ये मध्व सम्प्रदाय के आचार्य्य थे । और विद्याविन्नास भट्टाचार्य्य से आप ने न्याय, पातञ्जल और काव्य पढ़ा । श्री महाप्रभू जी की विद्या देख करके लक्ष्मण भट्ट जी को फिर सन्देह हुआ परन्तु श्री ठाकुर जी ने स्वप्न में पुनर्दर्शन देकर वह सन्देह निवृत्ति कर दिया । यही माधवेन्द्र पुरी श्रीकृष्ण चैतन्य के मन्द गुरु हैं और इसी कारण श्री महाप्रभू जी और श्री कृष्ण चैतन्य से मिले भाव था और आप ने उनको श्रीगोवर्द्धन की कन्दरा से लाकर कृष्णसे सासृत ग्रन्थ दिया था और ऐसेही निव्दार्क सम्प्रदाय के आचार्य्य केशव काशीरो जी से भी आप का बड़ा संग रहता था । विदित ही कि चैतन्य सम्प्रदाय के ग्रन्थ वृहद्गीर् गणोद्देश दीपिका ने श्री महाप्रभू जी को

चौंसठ सहानुभावों की गिनती में अनन्त संहिता के ७५ वें अध्याय के प्रमाण से श्रीगुरुदेव जी का अवतार लिखा है ।

एक समय श्री लक्ष्मण भट्ट जी ने मायावादी सन्यासियों को अपने घर भोजन को बुलाया था सो श्री महाप्रभू जी ने ऐसा शास्त्रार्थ उठाया जिसे मायावाद का खण्डन होय तब लक्ष्मण भट्ट जी ने कड़ा जो अपने घर आवे उसका अपमान नहीं करना इसे आप ने उनसे शास्त्रार्थ नहीं किया पर वैष्णव धर्म प्रचार की आप को ऐसी उत्कण्ठा थी कि काशी में जहाँ शास्त्रार्थ होता वहाँ आप जाते और वैष्णव मत का मण्डन और अन्य मत का खण्डन करते यहाँ तक कि लक्ष्मण भट्ट जी के पास लोग दरहना देने आते कि आप के पुत्र ने भरी सभा में हमारा अपमान किया, तब लक्ष्मण भट्ट जी आप को निषेध करते तब जिन पण्डितों से आप निषेध करते उन पण्डितों से शास्त्रार्थ न करते, उस काल में विश्वनाथ के सभामण्डप में पण्डितों की सभा नित्य होती थी और वे लोग एक बात पर निर्णय करके तब उठते थे। सो श्री महाप्रभू जी उस सभा स्थान को भीति पर एक श्लोक नित्य लिख आते और जब पण्डित लोग उसका एक दिन में निर्णय करते तो दूसरे दिन दूसरे श्लोक से उनका सब निर्णय खण्डित होजाता ऐसे ही तीस दिन तक आप ने यह खेन खेना और उसी से पचावलम्बन ग्रन्थ बन गया। एक प्रसङ्ग यह भी है कि आप से बहुत से पण्डित शास्त्रार्थ करने को आते थे और समय बहुत थोड़ा था इस लिये आप ने पचावलम्बन ग्रन्थ करके विश्वेश्वर के द्वार पर चिपका दिया था, और नगर में चारों ओर और विश्वनाथ के द्वार पर भी डगडुगी फिर दी थी कि जिसकी हमसे शास्त्रार्थ करना हो वह पहले जाकर वहाँ पत्र देख लै। यह सुन कर जो पण्डित वहाँ पत्र देखने जाते वह सब अपने प्रण का उत्तर पाकर चले जाते और इसी से पचावलम्बन ग्रन्थ बना।

श्री लक्ष्मण भट्ट जी को श्री महाप्रभू जी के इस घोर शास्त्रार्थ करने से बड़ा जोश हुआ और आप ने वास्तव्य भाव से यह सोचा कि ऐसा न हो कि द्वेष करके जादू से कोई पण्डित हमारे पुत्र को मार डाले यह विचार कर आप ने देश जाने का मनोरथ किया क्योंकि, बारह वर्ष की काशी में रहने को आप को प्रतिज्ञा भी पूरी हो गई थी। यह सब बात विचार कर आप सकुटुब्ध काशी से दक्षिण चले।

वहाँ से सात मंजिल पर यह सुन कर कि विष्णुस्वामी संप्रदाय की कोई

पण्डित लक्ष्मण भट्ट जी अपने पुत्र सहित काशी में अनेक पण्डितों की जीत कर यहाँ आते हैं, बहुत से पण्डित मिन कर एक साथ लक्ष्मण भट्ट जी के डेरे पर शास्त्रार्थ करने गए और जब श्री महाप्रभु जी ने उनको शास्त्रार्थ में जीता तब लक्ष्मण भट्ट जी ने प्रसन्न हो कर कहा कि बरदान मांगो तब आपने दो बरदान मांगे प्रथम तो यह कि आप हमको शास्त्रार्थ करने जाने से कहीं रोको मत और दूसरे यह कि शास्त्रार्थ में कोई हमारा तेज पराभव न कर सके। लक्ष्मण भट्ट जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक दोनों बरदान दिए।

लक्ष्मण भट्ट जी साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम के धाम अचर ब्रह्म शेष जी के स्वरूप हैं, इस से आप को बिकाल का ज्ञान है सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब कांकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्ट जी को बाला जी में बुलाया और वहीं आप ने डेरा किया पुत्रों को अनेक शीला देकर राम कृष्ण भट्ट जी को श्री यज्ञनारायण के समय की श्री रामचन्द्र जी पधराय दिए और कहा कि देश में जाकर सब गांव और घर आदि पर अधिकार और विभिनाटि तैलङ्ग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्म पालन करो। ऐसेही श्री यज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्राम जी और मदनसोहन जी श्री महाप्रभु जी को देकर कहा कि आप आचार्य्य होकर पृथ्वी में दिग्गज्य करके वैष्णव मत प्रचार करो और छोटे पुत्र राम चन्द्र जी को जिनका काशी में जन्म हुआ था अपने मातामह को सब स्थावर जङ्गम संपत्ति दिया * और श्री महाप्रभु जी के ग्यारह वर्ष की अवस्था में

* ये रामचन्द्र भट्ट बड़े पण्डित थे। गोपालकीर्त्ता महाकाव्य, कृष्ण कुतूहल महाकाव्य और शृङ्गार वेदान्त ये तीन ग्रन्थ इनके मिलते हैं। अयोध्या में ये रहते थे और श्री महाप्रभु जी को विद्यागुरु करके मानते थे। वैष्णव दोहता श्री महाप्रभु जी से इन्होंने पाई थी कि नहीं इसमें संदेह है। और राम कृष्ण भट्ट जी कुछ दिन पीछे सन्यासी हो कर केशवपुरी नाम से खुड़ाऊ पहन कर जल पर चलने वाले बड़े सिद्ध विख्यात हुए। इन लोगों के समय काल के प्रसिद्ध पण्डित थे धी, सध्व मत में व्यासतीर्थ, निम्बार्क मत में केशव भट्ट, रामानुज मत में ताताचार्य्य और व्यङ्कटाध्वरि, शंकर मत में आनंदगिरि, स्मार्त्ती में वा अन्य मत में सुकुंदानंद, कोबलानंद, माधवानंद, बरदराज के महन्त इस्त शृङ्गार और रङ्गनाथ जी के महन्त आनंदराम।

लक्षण वाला जी का शृङ्गार करते करते शरीर समेत उनके स्वरूप में लय हो गए। उनके पुत्रों ने लक्षण भट्ट जी के वस्त्र का मौकिक संस्कार खड़ी धूम धाम से किया और श्रीमहाप्रभू जी ने एक वर्ष तक यथा शास्त्र विहित सब रीति का बरताव किया।

काशी में वैष्णव तन्त्र, शैव तन्त्र, कौमारिण पारम्पर, मोहन इत्यादि मत के ग्रन्थ और शैव, पाशुपत, कान्ता मुक्ता, अक्षीर, ये चार शैव संप्रदाय और विष्णुसामी इत्यादिक चार वैष्णव संप्रदाय के ग्रन्थ नहीं मिलते थे इस हित दक्षिण के सरस्वती भण्डार में जा कर इन ग्रन्थों को आप ने अवलोकन किया और वेद की ३६ शाखा की संहिता व्याख्यान इत्यादिक कण्ठग्रहण किया। फिर जब दक्षमगाह जी पति के हित विनाश करतीं तब आप को दुःख होता चले श्री बाला जी ने स्वप्न में दक्षमगाह जी को विनाश करने का निषेध किया।

जब आप को पृथ्वी परिक्रमा की इच्छा हुई तब माहेश्वर की अपंने मामा के पाव पधुंचाने को आप विद्या नगर पधारे और मार्ग में अपने अन्तरङ्ग दासीदेव दास जी को शेषक किया।

विद्यानगर में राजा * कृष्णदेव के यहाँ आचार्य के मामा रंगनाथ विद्या

* राजा कृष्णदेव की बंस परम्परा यों है। पाण्डु बंस में चन्द्रबीज राजा के दो पुत्र थे बड़ा मेघ छोटा नन्दि नन्दि को भूतनन्दि उस को नन्दिन। नन्दिन के दो पुत्र शेषनन्दि और यशोनन्दि। इन दोनों को चौदह पुत्र थे जिन को अमिच और दुर्मिच नामक दो भाई राजाओं ने जीत लिया। इन में से सात भाई दक्षिण गए जिन में थे नन्दिराज ने नन्दपुर वा रंगोका बसाया (१०३६ ई०) उन के बंस में फिर चालुक्यराज (१०७६ ई०), विजय राज जिन्होंने विजयनगर बसाया (१११८), विमलराज (११५८), नरसिंह देव जो बड़ा प्रसिद्ध हुआ (११८०), रामदेव (१२४८) और भूपराज (१२०४) भूपराज अपुत्र था इस से इस ने अपंने निकटस्थ गोचक कोर तुक्कराय को गोद लिया। बीर तुक्कराय (१३२४) की सभा में सरयन के बड़े भाई माधवाचार्य (विद्यारथ) बड़े प्रखिल थे और इन्होंने वेदी पर भाष्य किया है और अनेक ग्रन्थ बनाए हैं। बीर तुक्कराय की सभा में कई विधायत के लोग आए थे। इन के हविहर राय (१३६३) उन के देवराज

भूषण दानाध्यक्ष थे श्रीमहाप्रभु जी अपने मामा के घर उतरे और वहीं यह सुना कि राजा क्षण्डेव को सभा में आज कब निज मत मतांतर का वाद होता है यह सुन के आप ने इच्छा किया की हम भी चलेंगे दूसरे दिन प्रातःकाल स्नान संघ्या होम कर के ब्रह्मचारी का भेष कर आप राजा के सभा में पधारें। इनका दर्शन पातेही सब सभा तजोहत हो गई और राजा क्षण्डेवराय ने बड़े आदर से इनको बैठाया। तब आप ने राजा से सभा का हत्तान्त पूछा। राजा ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि आज क महीने से सब मत मतान्तर के पण्डितों से यहाँ शास्त्रार्थ हो रहा है सो माया मत वालों को अब तक किसी ने जीता नहीं है। यह सुन कर आप ने पण्डितों से प्रश्न किया और शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। चौदह दिन तत्व विचार में बारह दिन स्थानवदादेश इस सूत्र से प्रारम्भ हो कर व्याकरण में और एक दिन जैन बौद्ध शास्त्र विचार में इस तरह सब मिला कर सत्ताइस दिन शास्त्रार्थ हुआ और जितने वादी सभा में उपस्थित थे सब निरुत्तर हुए। तब राजा ने

(१३६७) विजयराज (१४१४), और उनके पुत्ररदेव (१४२८)। पंडरदेव को श्री रङ्गराज ने जीत कर अपने पुत्र रामचन्द्रराय को (१४५०) राजा बनाया। इन के नृसिंहराय (१४७३), फिर वीर नृसिंहराय (१४८०) उन के अच्युतराय और उन के क्षण्डेवराय० राजा क्षण्डेव ने सं० १५७० तक (१५२४ ई०) राज्य किया और गुजरात जय किया और सुसलमानों से लड़े। राजा क्षण्डेव के सेनापति नार्गनायक ने मथुरा जीत कर राज्य स्थापन किया जो १६ पीढ़ी तक रहा। इन के रामराज हुए जो निर्जामशाह और इमदादुल मुल्क की लड़ाई में मारे गए। उन के पीछे श्री रङ्गराज, त्रिमल्लराज, वीरसंघ पतिराज, द्वितीय श्री रङ्गराज, रामदेवराय, व्यङ्गटपतिराय, द्वितीय लमधराय, द्वितीय रामदेवराय और द्वितीय व्यङ्गटपतिराय हुए। द्वितीयव्यङ्गट सुगर्षों से हार कर चन्देदेवगिरि में बसे। इन के पुत्र रामराय उन को हरिदास (१६८३), चक्रदास (१७०४), त्रिमदास (१७२१) रामराय (१७३४), गोपालराव व्यङ्गटपति, त्रिमल्लराय, वीर व्यङ्गटपति और रामदेवराय क्रम से राजा हुए। इस वंश के अन्तिम राजा रामदेवराय जिन को सं० १८७५ (१८२८) ई० में टीपू मुसलतान ने मार कर राज्य नाश कर दिया।



सब पण्डितों से जयपत्र लिखवा कर उन पर अपनी मुहर करके इनको दिया और सब पण्डितों और मत के आचार्यों ने मिल कर आचार्य पदवी से महाप्रभु जी को पुकारा। राजा कण्णदेव ने कनकामिषिक से आप जी पूजा किया और सपरिवार शरण आकर सेवक हुआ। १ इस अभिषेक के सोने की श्री महाप्रभु जी ने दीर्ग ब्राह्मणों को बांट दिया और अनेक ब्राह्मण के लड़कों के यज्ञोपवीत और लड़कियों के विवाह और अनेक का ऋण शोधन इस से हुआ। इस सुवर्ण कूर्तिया एक घाली भर कर मुहर राजा ने आप को भेंट किया था जिस में से सात मोहर आप ने भङ्गीकार करके उस का श्री नाथ जी का नूपुर बनाया। फिर राजा को और वहाँ के अनेक ब्राह्मणों हृदयति सब वाञ्छित आदि यज्ञ और अनेक महादान कराया और उस से जो द्रव्य एकत्र हुआ उस का तीन भाग किया। एक भाग से श्री विठ्ठलनाथ जी को कटि मेखला बनी दूसरे भाग से पिता ज्ञा ऋण शोधन किया और तीसरे भाग को कारपीय यज्ञ के व्यय निर्वाहार्थ माता को सौंप दिया। और अनेक दिन तक ज्ञान भक्ति वैराग्य व्रत यज्ञादि धर्म का उपदेश करते आप विद्या नगर में बिराजे।

कुछ दिन तक विद्यानगर में निवास करने के उपरान्त माता से आज्ञा लेकर दृष्टी परिक्रमा करने की संवत् १५४८ वैशाख बदी २ को आप नगर से बाहर चले। उस समय ब्रह्मचर्य व्रत के कारण सीमा हुआ वस्त्र नहीं

१ विद्यानगर के, कृष्णगढ़ के और नवानगर के राजा लोग उसी काल से इस मत के सेवक होते आते हैं किन्तु विद्या नगर का वंश अब नहीं रहा उस काल में दक्षिण प्रान्त के सब राज्य बने हुए थे। विद्या नगर जाने के पूर्व आप ढूंढेमाचल, गोधा इत्यादि होते हुए चोड़ा गए थे। चोड़ा के राजा ने एक म्याना और दो प्यादा साथ देकर आचार्य को विद्या नगर पहुंचवाया था। यहाँ पर एक बात और जानने के योग्य है कि श्री महाप्रभु जी विद्या नगर की सभा में श्री विष्णुस्वामी को गद्दी पर बिराजे। इसी समय श्री विश्वमहन्त जी ने श्री विष्णुस्वामी के रक्षक और मतभेद सब आप को देकर तिलक किया था। यह भी जनश्रुति है कि श्री महाप्रभु जी ने सभा में योग बल से अपना कामखलु फेंका जो मूर्ख का सा सभा में प्रकाश किया। तदनन्तर आप सभा में गए।

पहरते थे इस से धीतों उपरना पहर कर दण्ड कमण्डल छत्र और पादुका धारण किए हुए आप चकते थे। (इसी ब्रह्मचर्य के दण्ड धारण पर भ्रम से बहुत से मुख आक्षेप करते हैं कि श्री ब्रह्मभाषार्थ पढ़ते दण्डी थे फिर गृहस्थ हुए) दासोदर दास और कृष्णदास ये दो सेवक आप के साथ थे। पड़ले भीमरथी के तट पर पण्डरपुर में आप वहाँ सप्ताह परायण करके बैठक स्थापित किया। (आगे जिस तीर्थ के वर्णन में पा० वै० स्था० यह संकेत देखी यहाँ संभवतो कि परायण करके बैठक स्थापन दिया) फिर नासिक त्रांबक पञ्चवटी गोदावरी तीर्थ में आप वहाँ चयाह पा० वै० स्था० वहाँ से उज्जयिनी में आप वहाँ सिंघा और अङ्गपात कुण्ड (जिस में भगवान जब सान्दीपनी जी को यहाँ पढ़ते थे तब पटिया धीते थे) में स्नान करके महाकालेश्वर का दर्शन करके नगर के बाहर एक पीपल की डाल गाड़ कर उस पर कमण्डलु का जल आप ने छिड़का जिस से वह तत्क्षणात् एक वृक्ष हो गया और उस के नीचे सप्ताह पा० वै० स्था० (यह पीपल का वृक्ष अद्यापि वर्तमान है) वहाँ से पुष्कर जी की यात्रा कर आप व्रज की ८४ कोम की परिक्रमा करने को हेतु संवत् १५४८ के भाद्र पद कृष्णष्टमी अर्थात् जन्माष्टमी के दिन श्री गोकुल में पधारि। तब श्री नाथ जी की यमुना जल में स्नाना करते देख आप भी उनके समीप जाने लगे, तब तो श्री नाथ जी गिरिराज ऊपर आए, वहाँ भी आप उनके पीछे पीछे गये, इसी से श्री भगवान ने प्रसन्न हो यह वरदान दिया कि “यावत् यमुना जी में गङ्गा जल रहेगा तावत् तुमारी सम्प्रदाय अचल रहेगी” ऐसा कह कर श्री नाथ जी अन्तरध्यान हो गए। तब आप जिस मार्ग से पूर्व में गए थे पूर्व गत मार्ग से आ अपने व्याकुल शिष्यों से मिल कर आसन पर आए। तदनन्तर श्री आचार्य जी महाप्रभु जी व्रज की यात्रा करने चले, और उस का निर्णय करके अनुक्रम से वर्णन किया है। और जिस जिस स्थल में आप ने श्री महाप्रभु का परायण कर बैठकें नियत की है, लो अद्य पर्यन्त प्रसिद्ध हैं उस जगै ऐसा चिन्ह किया है।

श्रीयुगलसर्वस्व ।

अर्थात्

श्री नित्यकीर्त्तना की निकुंज सख्ता सखी सङ्गचरी
सेवका परिवार आदि का नामरूप वर्ण
समावादि वर्णन ।

श्री भागवत, उसकी टीका, प्रदमपुराण, नारदपुराण, कृष्णजन्मखंड, बाराहपुराण,
आदिपुराण, रहस्यपुराण, ब्रह्मांडपुराण, नारदपंचरात्र, गौतमीतंत्र, रासोह्यसतंत्र,
वृन्दावनपटल, लघुराधा वृहद्राधातंत्र, हयग्रीवपंचरात्र, तथा श्रीहरिरायजी
श्रीगोकुलनाथजी की भावना, श्रीद्वारकेशजी श्रीब्रजधीशजी श्रीगोपि-
केशजी की रहस्य भावना और उज्ज्वलनीलमणि तथा गणोद्देशदीपिका
आदिक ग्रन्थों से संग्रह किया ।

DEDICATION.



हे अन्तरंगी जन ।

आज तक जो पुस्तकें प्रकाशित हुईं वह दूसरे को समर्पित हुईं थीं परन्तु यह युगकर्मवृत्त तुम को समर्पित है माथे चढ़ा कर अंगीकार करो। इस को अनधिकारी के हाथ खबरदार खबरदार मत देना और इस से परमानन्द लाभ कर के मेरा परिश्रम सफल करना।

भाद्रपद कृष्ण ८ सं० १९३३

श्रीनन्दमहोदय



आप लोगों के खरखरज
का शक्ति
हरियन्द्र

युगलसर्वस्व ।

दीक्षा ।

भरित नेह नवनीर नित, वरसत सुरस अघोर ।
 जयति अपुरव घन कोज, नखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
 तन्ममामि निज परम गुरु, श्रीवक्त्रभ द्विज भूप ।
 जाको लुपा अपार लहि, उवखी ह्यो भवकूप ॥ २ ॥
 यो वृन्दावन राज है, जुगल केलि रस धाम ।
 तहं को परिकर आदि को, वरनत या धन माम ॥ ३ ॥
 वंग, सखी, परिचारिका, पशु पच्छी नर वृन्द ।
 इन सब को वरनन करत, निज अनुभव हरिचन्द ॥ ४ ॥
 प्रेमवारि परजन्य जो, जिन सम धन्य न अन्य ।
 सोई श्याम परजन्य के, दादा श्री परजन्य ॥ ५ ॥
 दादी नाम वरीयसी, नाना सुसुख वखान ।
 नानी देवी पाठला, जानी और न आन ॥ ६ ॥
 बड़ो मात श्री रोहणी, पिता नन्द सरदार ।
 माता जसुदाजू अई, जा हित यद्य भवतार ॥ ७ ॥
 बड़ काका लपनन्दजू, अरु अभिनन्द प्रमान ।
 नन्दन अरु संनन्द ये, काका छोटे जान ॥ ८ ॥
 तुंगा अतुला पीवरी, कुवला पुनि रस धाम ।
 लनटे क्रम सी जानिये, काकिन के ये नाम ॥ ९ ॥
 मामा जसवरधन, जसोधर जसदेव सुदेव ।
 मौसी विदित जसस्त्रिनी, मौसा मल्ल सटेव ॥ १० ॥
 तडुल पुरट कुबिर ये, सगरे ददा समान ।
 गोष्ठ कलौल करुण्ड ये, मातामह सम जान ॥ ११ ॥
 श्रीला भेरी अरु शिखा, पितामहो सी होय ।

पूरनमासी भगवती, सिद्ध विधाइनि सीय ॥ १२ ॥
 जटिला भेजा घरघरां, मुखरा घोरान जान ।
 करवालिक्का करालिक्का, मातामही समान ॥ १३ ॥
 मंगल दिंगल रंगपिठ, पट्टन साटर पिंग ।
 नेह करत पितु से सवे, संगर संकर भृंग ॥ १४ ॥
 तरलाच्छिनी तरालिक्का, शुभदां कुशला नारि ।
 सालिवाङ्गदा बल्लला, ताकी आदि विचारि ॥ १५ ॥
 और हृ हषा मेदुरा, भरी नेह चित चाय ।
 हरि पै बल्लता करत, जैसे जसमति माय ॥ १६ ॥
 परम नेहवारी अहै, नाम धनिष्टा धाय ।
 तथा तिलिखा अश्विका, तांकी जुगल सहाय ॥ १७ ॥
 वेदगर्भ भागुरि महायज्वा, द्विज निरधारि ।
 सुलभा गौतमी भारगी, चंडिलादि द्विज नारि ॥ १८ ॥
 भाई ओ बल्लदेव से, भक्तन के अवलम्ब ।
 कनमहं जिन इति लख किय, खल कुल लख प्रह्व ॥ १९ ॥
 भाबी ओ मति रेवती, जा जो हरि पै चाव ।
 सख्य तथा वाल्मि, जाकी अनुपम भाव ॥ २० ॥
 मण्डल दरडौ कुण्डली, अद्रकण्ण से श्वात ।
 बहिन नन्दिरा मन्दिरा, नन्दौ, नन्दा सात ॥ २१ ॥
 धाय अश्विका को सुधन, बिलय नाम को जीन ।
 हरि तन रच्छत सर्वदा, असि लै संग रहि तीन ॥ २२ ॥
 दिव्यसक्ति कुलवीर प्रणि, महाभीम रनभीम ।
 रणधिरं रणधिर सरप्रभ, सूर सभा बल सीम ॥ २३ ॥
 इन आदिक हरि जेठ जे, गोप बाल सरदार ।
 पितु आयसु नित संग रहि, रच्छत सदा कुमार ॥ २४ ॥

वीरभद्र भद्राङ्ग भट, गोभट यच्च सुरेश ।

भद्रमण्डली भद्रवरधन, ये सुहृद इमेस ॥ २५ ॥

गद्य ।

विशाल, वृषभ, श्रीरक्षी, देवप्रस्थ, वरुषप, मिलिन्द, कुसुमापीड, भण्ड-
वन्ध, कर्त्तव्यम, मरन्द, चंदन, -कुंद, कलिंद और कुनिक इत्यादि कनिष्ठ
सखा हैं, ये सेवा करे हैं ॥ २६ ॥

दामन, सुदामा, किंकिणी, तोकक्ष्ण, चंग, भद्रमेन, बिंलाभी, पंडरीक,
बिटकाच, कलंबिका, प्रियंकर और श्री दाम आदि समान सखा हैं; तिनमें
श्रीदामा सुख्य है, पीठमर्द है, बड़ीष्ट है ॥ २७ ॥

सब सखा की सेना को भद्रमेन सेनापति है, अर्त्तोकक्ष्ण तो मानो श्रीक्ष्ण
हो को दूररो प्रतिमूर्ति-है, और यह श्री क्ष्ण को बहुत ही प्यारो है ॥ २८ ॥

सुवन्ध, अर्जुन, गन्धर्व, वसन्त, उज्ज्व, कीकिल, मनंदन, और विदग्ध
आदि प्रिय नर्मसखा हैं; इन सों कोई रहस्य छिप्यो नहीं है ॥ २९ ॥

मधुमंगल, पुष्याक और इंस आदि विदूषक हैं और कड़ा भारतीय गन्ध-
वंद और वैध आदि श्रीक्ष्ण को बिट है ॥ ३० ॥

भंगुर, शृङ्गार, संधिक और गहल आदि चेटक हैं; तथा रत्नक पत्रक,
पत्नी, मधुकंठ, मधुव्रत, शालिक तांडिक, मान्नी, मालू और मानाधर आदि
दास हैं ॥ ३१ ॥

पल्लव, मंगल और पुल्ल कोमल और कपिल आदि छोटे बालक नाचि
नाचिके विचित्र विचित्र चेष्टा करिके प्रभु को हंसावे हैं ॥ ३२ ॥

सुबिज्ञान, विशालाच, रसाक, रसशांती और अशुक इत्यादि पान
रुवाइवेवारि हैं ॥ ३३ ॥

पयोद और वारिद नाम को पानी पियावे को काम करे, तथा सारंग
बहुल आदि बख्त धरावे हैं ॥ ३४ ॥

प्रेसनंद नाम को अतर नगावे और मधुकंदला सैरंगी कोसादिक
सवारें है ॥ ३५ ॥

मकरंदादिक सदा शृंगार करे हैं, तथा समना, कुसुमील्लास, पुष्यहास हर
इत्यादिक चंदन और मासादिक को काम करे हैं ॥ ३६ ॥

दक्ष, सुवन्ध, कर्पूर और सुगन्धकुसुम आदि नाई हैं; क्रेश को काम करे,

तेल लगावें, पांव दावें और दर्पण दिखावै हैं ॥ ३७ ॥

स्वच्छ, शीतल और प्रगुण आदि धन संबंधी काम करै हैं, अथ कमल विमल आदि पोढ़ा, खड़ाज, छाता लिये माथ चली हैं ॥ ३८ ॥

धनिष्ठा, चंदनकला, गुणमाला, तडिलभा, भरणी, इन्दुप्रभा, शोभा और रंभा इत्यादि दासी हैं, और विनमें धनिष्ठा मुख्य घाय माहृतुत्वा है ॥ ३९ ॥

कुरंगी, शृंगारी, सुलख्या और मखिका इत्यादि दासी दक्षिण्यन, मार्जन तथा और घर के काम करै हैं ॥ ४० ॥

विशारद, तुंग, नीतिसार, मनोरम और वावटूक इत्यादि दूत निकंज विहार के उपयोगी हैं ॥ ४१ ॥

दोहा ।

वृन्दा, सेला, सुरलिक्षा, वृन्दारिका सजान ।

दूतो सबै निकुंज की, वृन्दा तासु प्रधान ॥ ४२ ॥

पूगी बीरा नाम की, दूती परम प्रसिद्ध ।

जामीं लड़ि कोऊ बची, करत सबै जी सिद्ध ॥ ४३ ॥

सीभन दीपक नाम के, है मसालची खास ।

मधुरराव सुविचित्ररव, ये जुग बन्दो पास ॥ ४४ ॥

चन्द्रहास, शिव, चन्द्रमुत्त, नचवैया ये तीन ।

मुखद्, सुधरकर बड्ढि, सारंग शृदंगप्रवीन ॥ ४५ ॥

सुधाकांठ कलकांठ इन, आदि गान रस लीन ।

सबै कलारत अति सुप्र, गाय बजावै बिन ॥ ४६ ॥

सारंग, रमद्, बिल्लास ये, नाटक नट अभिराम ।

सबीशभिनय जानहिं निपुन, करहिं सदा नट काम ॥ ४७ ॥

दरजी रौचिक नाम को, गणध्वं गण सुसुनार

चिच्च बिचिच्च चितेर दोऊ, कर्मठ, पवन कुहार ॥ ४८ ॥

बड्ढमान अथ बड्ढे को, है बड्ढे सुखरास ।

पोटी मन्थन दाम, कुंठार आदि फर्रास ॥ ४९ ॥

सुमुक्त कुंड कांडोक्त कारंड करंड अनिक ।

सेवक सेना में रहत, धरे दासपण टेक ॥ ५० ॥

इंसो वंसी पिंगला, गंगा रंगा नाम ।

प्रियां पिशंगी धूमलां, मशि सारनौ भक्ताम ॥ ५१ ॥

इन आदिक जे नैचिकी, तिन में हरि को जेत ।

तिन में घवनी सुख्य अति, निज कर कीचि छण टेत ॥ ५२ ॥

बनी वई है अति भले, उत्पल गंध पिशंग ।

कपि सुन्दर दृधिलोक्त है, नाम सुरंग कुरंग ॥ ५३ ॥

खान व्याघ्र भ्रमरक टोक, विदित कलखन जंभ ।

शिरखी तांडविक शुक्ल लुगल, कौकत परम प्रशंस ॥ ५४ ॥

नित्य बाग वृन्दाविपिन, जहाँ लुगल रम केनि ।

करचि नित्य, को लखि सकै, बाहु बाहु पर सेनि ॥ ५५ ॥

कोडा गिरि गिरिराज है, नीलमंडपक घाट ।

गफा बनी मणिकान्दली, केलिकुंज रस टाट ॥ ५६ ॥

गद्य ।

केनि मगोवर को नाम. मानभी गंगा है और वक्के सुख्य घाट को नाम पारंग है और वामें सुविलास नाम को नाव है ॥ ५७ ॥

जन्तोश्वर नामा पर्वत पै इन्दिराजय नामा सुन्दर मन्दिर है, जहाँ अनिक प्रकार की संगमरवर पत्थर की आभीदवर्षन नाकी सुगन्ध सो भरी बैठक है । जाके आगे पावन नाम सुन्दर कुण्ड है, जापै मन्दार नामक मणि को फेरम है और कुंज और आकाम नामक मछा तीर्थ है; जिन के चित्त में काम को वासना को छेड़ है वै या तीर्थ को दर्शन नहीं पावै हैं । और वहाँ की पृथ्वी को नाम अनङ्गरंग है और श्रीजसुना जी के घाट को नाम खेता तीर्थ है और पुष्पिन को नाम कोला पुष्पिन है जहाँ कदम्बराज नामक बड़ो कदम्ब को हृत्त और भांडीरवट नामक बड़ को हृत्त है, जहाँ नित्य लुगल स्वरूप को विहार है ॥ ५८ ॥

आपके दर्पण को नाम शरदिन्दु है और पंखा को नाम मधुसाहस है और स्मर नाम को नित्य कोलाकमल श्री इन्द्र में धारण करे हैं और गेंदा को नाम चित्रकीरक है ॥ ५८ ॥

उज्ज्वल नाम आपं को बाण है विश्वासकार्मुक नाम धनुष और मणिवह नाम वाकी डोरी है और अनेक रत्न सों लड़ी बड़े सुन्दर मूठ की तुष्टिदा नाम की छुरी है ॥ ६० ॥

शृङ्ग को नाम संसुघोष और श्री राधाचित्तहारिणो, महानन्दा, तथा सुवन मोहिनी ये तीन बंसी हैं, और सुरकी को नाम सरसा है, और मदनचुञ्जल बंधुर और षड्भ्र ये तीन वैष्णु हैं, और काकली को नाम मूकितपिका है, जाको अवन करिको कीइल मूक छोड़ जाय हैं, और गौरी और गूजरीटोडो ये दोऊ राग अत्यन्त प्यारे हैं । और बोणा को नाम नादवरांगिणी है । ६१ ।

वेच को नाम मंडल है और लह को नाम पञ्चशीकार है और दोहिनी को नाम अष्टतटोहिनी है ॥ ६२ ॥

श्री माह चरण ने नव रत्न की भुजा पर रत्ना बांधो है और रंगद नाम के बाजू और चंकन नाम के कंकण और रत्नसुखी नाम की झंगूठी है और निगम शोभन नाम को पीताम्बर है, और कलभंकार नाम की कंकिनी है और नूपुरन को नाम हंस गंजन हैं, जाके शब्द सुनंतरी श्री ब्रजदेविन के चित्त चलायमान होत हैं । ६३ ।

हार को नाम तारमणि है, और माला को नाम तडियभा है और कण्ठा को नाम कौस्तुभ है, जाके नीचे भुजंग मणि की पदक है । रति और राग के अधि देवता मकराकृत कुण्डल हैं और रत्नपार नाम को मुकुट है और अमरडामर नाम को सोस फूल है और मोर के चन्द्रक को नखरत्नविडम्बका नाम है और गुजा को माला को नाम रागवल्ली और तिलक को नाक दृष्टिमोहन है और पल्लव, पत्र पुष्प और मोर के पच्छ तथा कामल इत्यादि सों गुथी श्रीं चरणारविन्द तक बनमान्ता शोभित है और जो पंचरंगी फूलन सो गुथी काटि के नीचे तक सुंदर माला है वाको नाम वैजयंती है । ६४ ।

श्री युगल सर्वस्व को प्रथमप्रकरण समाप्त भयो ।



अथ युगल सर्वस्व की दूसरी प्रकरण लिखियत है ।

सोरठा—मंगल साधव नाम, मंगल व्रज वृन्दा विपिन ।

मंगल राधा बाम, मंगल सब व्रज गोपिका ॥

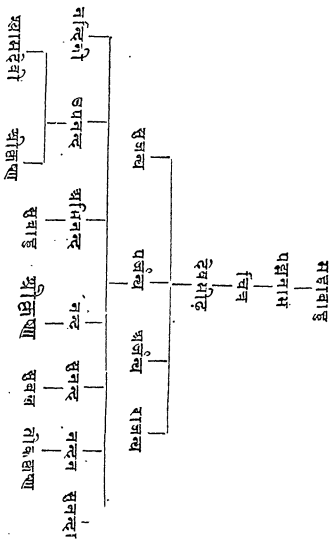
अथ श्री पूर्ण-पुरुषोत्तम की मंगल समय कहत हैं । श्रीशुभ सखति ईश्वरे
नास्ति हापराह ८६३८०४ शेष १२५ श्रीसूर्ये दक्षिणायने वर्षाकृती भाद्रपदे
मासि कृष्णे पक्षे अष्टम्यां घटि ५६ पक्ष ४५ बुधवासरे कृत्तिकानक्षत्रे घटि २८
पक्ष ० हर्षणयोगे घटि ४१ पक्ष ३० कौत्सव कारणे इष्ट ४६ घटि १४ पक्ष एत-
त्समये चन्द्रवंशांतःपाति वैश्रवंशावतंस गुरुगोलाक्षयसेवापरायण श्री मत्पुत्र-
न्यासश्रीमन्नन्दराज्यष्टे श्रीयशोदा कुचौ पुत्ररत्नमजीजनत् ।



१८५५८०९८०५ सृष्टि प्रारंभतो गताब्दाः ।

१८०२८४३८०५ बाराहकल्पप्रवेशप्रारंभगताब्दाः ।

नंदा स्तव ।



अथ लपनन्द जी की वर्षान । लपनन्द जी श्री नन्द राय जी की सब भाइन में बड़े हैं । गांव में इन की बड़ी मान है । गांव में की कछु काहु की धर्म वा साइत वा औपधी पूछनो ज्ञीय । ती इन सीं आय की पूछें । इन्हे भयवहात्मख सिव है और ब्रज की सब गांव की देव पितर की रीति जो कोई करे सो इन सीं पूछि की करे । केशी देव्य के भय सीं हुन्दावन छोड़ि की ये महा वन में सब भाइन के साथ वास करे हैं । इनकी स्त्री की नाम तुंगी है । इन की वर्षा गौर दाढ़ी खेत और नामि तक लम्बी है और चरे रङ्ग की बख्ख पछिन हैं और नव लाख गज और लाखन हाथो घोड़े इन की पास हैं ।

अथ चभनन्द जी की वर्षान । इन की वर्षा गौर है, शरीर पुष्ट और वनवान, केश सब खेत ज्ञीय गये हैं, पर दांत नहों टूटे, गालन पै सुन्दर गल-सुच्छा है और आठलाख गज हैं और लाख बख्ख पछिन हैं ।

अथ नन्द जी की वर्षान । श्री नन्दराय जी की वर्षा गौर है; केश कछु श्याम और खेत मिलुयां हैं । तींद बड़ी है, छातो ज चो है, बख्ख नीलो पहिरे हैं, इन की स्त्री की नाम श्री यमोदा है, जिन की अंग कछु खून है और रंग सांशरी है । फूजन सीं वेनी मटा गूथो रहे और बख्ख पीरो पछनै । और इन की नैहर की नाम देवकी है । श्रीनंदरायजी के ७२०००००००० बह-त्तर करोड़ गज हैं और भैंस बकरी बहुत हैं । भाइन के हिस्सा में श्रीनंदराय जी की नव लाख गज मिली हैं, सो अब वे गज मोहना नामक स्वारिधान के सरदार के पास हैं । लपनंदजी और अभिनंद जी ने आप राज्य नहों लियो तासीं नंदराय जी ब्रज के राजा भये । इनके कुलदेवता नारायण हैं, इन के कुल की वेद साम और शास्त्रा कौशुमी है; पर जबसो ब्रज के राजा गये तब सो यजुर्वेद और साध्य दिनी प्राणा भई । इनके कुलपुरोहित शाण्डिल्य हैं इनके राज्य में तीन प्रकार की गोप बसे हैं, प्रथम वे जो व्यापार और गोरक्षण करे हैं, दूसरे वे जो गाय भैंस रखे और खेती करे हैं, और तीसरे वे जो बकरी इत्यादि फीटे जीव पाले । श्रीनंद रायजी की मुख्य मंदिर उत्तराभिमुख है और दरवाजी के बाहर दीड और बड़े र सिंघ बने हैं, भीतर बड़ी चौक है वहां एक ज चो चौतरा है जा पै सभ्त को सब ब्रज की लोग आयकी बैठे हैं, ताके पीछे जो

दरवज्जा है, बाकी दोऊ और बड़े २ छाथी बने हैं और वाहू के भीतर दरवज्जा को है बाकी दोड़ और चन्द्रमा और सूर्य बने हैं बाकी भीतर अनेक चौक हैं जिन में सर्वतोभद्र कमलचौक और मणिचौक ये तीन मुख्य चौक हैं, ताकी आगे श्रीवन्नरानोजूको मंदिर है और भीतर बाहर ताई अनेक दर दालान और मंदिर हैं और इनके बीच में कहुं वाहुं बड़े बड़े हल्ल लगे हैं और कहीं तुलसी को यावरी है। इनकी या पारकी राजधानी को नाम गोकुल और वा पार की राजधानी को नाम नंदीश्वर है। गोकुलके देवता चिन्तामणि माधव श्री मयुरानाथजी हैं और नंदगांव के ग्रामदेवता नंदीश्वर शिव है, और शैलासन और पांडु नाम की दो अथाई हैं।

अथ सुनन्दजी की वर्णन। सुनन्दजी की शरीर बड़ी ही पुष्ट है और अवस्था हू हू नहीं भई है, केश सब श्याम हैं और ब्रज की सेना को सब प्रबन्ध करे हैं और सृंग और तरवार सदा हाथ में लिये रहें, बख्त पीरे पहरे हैं। इनकी स्त्रीको नाम कुधला और गऊ नौ लाख हैं।

अथ नन्दन की वर्णन। ये सबसे छोटे हैं, रंग गेहूआं और केश बड़े लम्बे लम्बे हैं। बख्त सफेद पहिने और स्त्री को नाम अतुला है बाकी रंग भीर है और श्याम रंग की बख्त पहिरे हैं। इन की निज की गऊ सात लाख हैं।

श्रीनन्दजी की माता की नाम वरीयसी है इन की अंग नाटी और केश सब श्लेत होय गये और बख्त चरे हैं।

अर्जन्धकी स्त्री को नाम नटी और राजन्धकी स्त्री को सूर्रा है। नन्दराय जी के फूफा की नाम गुरुवीर है और ये हथभान की के मामा लगे हैं। और नन्द रायजी के दोऊ बहिन के पतिन को नाम सोन और काम है।

उपनन्द जी के पुत्र को नाम लक्षण (कोऊ कोऊ को मत है कि उपनन्द जी को पुल्ल नहीं भयो सो जब नन्द राय जी को पुत्र भयो तब उपनन्द जी के गोद में दे दियो तासो भगवान् की नाम नन्द जी उपनन्द जी दो-उन की बंश परम्परा में आवै है) और इनकी एक बेटी या की नाम कामा और प्रसिद्ध नाम शाहदेवी है। जाकी रंग सावरी है और रूप में सब लक्षण को उन्दार है।

अभिनन्द जी के पुत्र का नाम सुन्दर है; या की रंग गोरो और बख्त चरी है। यह श्रीलक्षण के साथ रक्षा के हेतु सदा लल्लुट लिये रहै, क्योंकि श्रीलक्षण को बड़ो भाई है तासो याकी सख्य में शाल्क्य भिनी है।

सुनन्द जो के पुत्र को नाम सुवन्त है, याको रंग नाल और वस्त्र कारो है और श्रीकृष्ण को बड़ो प्यारो भिन् है, क्योंकि याको और भगवान् को प्रवस्था एक ही है।

नन्दन जू के पुत्र को नाम तो क्षत्र्य है (कोऊ को मत है कि या को रंग श्वास और वस्त्र पीत है) याके पुकारवे को नाम तोक है और या को वल्लभ योन्नत सबहुंश्रीकृष्ण को भी है और यह श्रीकृष्ण को प्रत्यन्त प्यारो है, क्योंकि आप को नेम है कि जो छोड़ी हू वस्तु अरोगें तो अपने हाथ सों पहिणो कयर या के सुन्न में देत है।

अब जन्म समय को भाव लिखत हैं। तहां श्री पूर्ण पुत्रपोत्तम ने विश्वा-
वसु नाम संवत में जन्म लियो है ताको भाव यह है,—जो विश्वावसु गंधर्वन को राजा है ताके संवत में आपने जन्म लियो तासों यह जतायो कि हम पान विद्या की प्रवृत्ति करेंगे। और दक्षिणायन में जन्मलियो ताको भाव यह है कि आप अपनेक नायकागण को दक्षिण छोड़ेंगे और भक्तजन सों हू दक्षिण रहेंगे, और यज्ञप्रयतार में स्त्री को नाम हू दक्षिणा है तामूं दक्षिण-
चयन में जन्मलियो। और वर्षा ऋतु में जन्म लियो ताको भाव यह है कि वर्षा ऋतु सब जगत को जीवन है और सब ऋतुन की अपेक्षा आनन्द दायक है या जो सों सब अन्न आदि उत्पन्न होय हैं तासों यह जनायो कि हम ज-
गत के हेतु हैं और सब को आनन्द देंगे। अब सब महीना छोड़िके भाद्र पद में जन्म लियो ताको यह हेतु है कि भद्र पर्वत् कल्याण वही भाद्र वाको पद नाम घर अर्थात् कल्याण को घर तासो आप ने सब मास छोड़िके भाद्रपदही में जन्म लियो। अब वर्षा ऋतु के २० दिन को एक ऐसे तीन पाद हैं तामें मध्य पाद में जन्म लियो ताको भाव यह कि प्रथम पाद में उष्णता विशेष है और तृतीय में शीतता, तासों मध्य के पाद में जन्म लियो, और ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीन देवता हैं तामें मध्य में विष्णु है ताको हेत यह जो प्रधान मध्य में रहे हैं तासो मध्य पाद में जन्म लियो सो जाननो। अब कृष्ण पक्ष में जन्म लियो ताको कारण यह है कि आप को अपने नाम को पक्ष है तासों यह जनायो कि हम अपनी पक्ष धारेंगे। और अष्टमी तिथि को कारण यह है कि अष्टमी शिव तिथि है, कल्याण रूप है, यद्वा श्री महादेव जो परम वैष्णव है तिनकी तिथि है, यद्वा पन्द्रहो तिथि के मध्य में अष्टमी है सो प्र-
धान मध्य में रहे है तासों, यद्वा अष्टमी जयतिथि है सो हम असुरन को

जय करेंगे यह जनायो। वा यह श्री वसुदेवजी की जन्मतिथि है। और रात को जन्म लियो ताको हित यह है कि हम चन्द्रवंशी हैं सो चन्द्रमा रात्रि की राता है तासों हम को दिन सों प्रयोजन नहीं। और अर्धरात्र को जन्म लियो ताको हित यह है कि वा समय में कोई कार्य नहीं कियो जाय है, खल्य वेत्ता है, तासों जा समय मेरे भक्त खल्य रहें वा समय जन्म लियो चाहिये। और चन्द्रमा के उदय होत जन्म लियो ताको हित यह है कि जैसे चन्द्रमा जगत को आह्लाद करे है तैसे आह्लाद हम करेंगे यह जनायो, यहा हम चन्द्रवंशी है सो अपने वंशख के उदय संग अपनी उदय कियो। और भगवान के जन्म समय आकाश में मेघ छाये याको हित यह है जैसे मेघ सब को आनन्द देत है तैसे हम आनन्द देंगे, यहा मेघ प्रसन्न भये कि हमारी नाम घनश्यामं श्रीठाकुर जी को होयगी, हमारी लपमा ब्रह्म को दी कायगी तासों प्रसन्न भये, यहा जल को नाम जीवन है सो जीवन जगत को हम करेंगे यह जनायो। और रोहिणी नज्जल पर जन्म लियो ताको भाव यह कि जैसे यद्यपि चन्द्रमा को अनेक नक्षत्र हैं तथापि वाके साथ नित्य रोहिणी ही रहै है तैसेही यद्यपि आप को अनेक सखि सेवन करै तथापि सुख्य श्रीप्रिया जी ही हैं। और रोहिणी में जन्म ग्रहण करके आपने श्री बलदेवजी से सहोदरता सूचन कराई। बुधवार में आपने जन्म लियो ताको हित यह है कि सब ग्रहण में बुध अत्यन्त सुंदर है तासों आप अनौक्तिक सौन्दर्य प्रगट करेंगे और बुध आप के वंशको पूज्य हू है तासों वंश को पक्षपात जनायो। वा “त्रिणु चन्द्रसुते” यानी बुध के दिन आप अवतीर्ण भए। काहू पुराण को मत सोमवार के हू जन्मदिन मानवे को है सो वाहू में पूर्वाज्ञा भाव जानने। इत्यादि अनेक भाव हैं कहां ताई लिखिये।

अथ हस्त चिन्ह वर्णन ।

जब खुर तोरन कमल कता बंसी चिकोन ध्वज ।
 वृक्ष शंख घट अग्निकुण्ड शंखुश गृह रथ गज ।
 सफारी ऊर्ध्वरेख कलस फल सब मन भाये ।
 छत्र गदा धनु सरसुचक्र शंख विजन सुहाये ।
 वर पानपात्र गो सीप तिल खस्तिक श्रीश्री क्षण्यकार ।
 हरिचन्द्र चिन्ह बत्तीस ये सीहत नित जन सीसपर ॥ २
 इति श्रीयुगल सर्वस्व के पूर्वाज्ञे को दूसरी मकारण ।

उत्तरार्ध ।

अथ अष्ट सखिन के नाम ।

अपने मत से । श्रीचन्द्रावली जी, श्रीललिता जी, श्रीविशाखा जी, श्रीचम्पकनता जी, श्रीचन्द्रभागा जी, श्रीराधासङ्गचरी, श्रीश्यामा जी और श्रीभामा जी । इन में श्रीचन्द्रावली जी को स्वामिनित्व है और सबन को सखित्व है याही से पञ्चाध्याई में अन्तर्धान और आविर्भाव और महाराष्ट्र तोनिहूँ समे में काचित् काचित् करिके सात ही गिनाई हैं । और सप्तावरणात्मक श्रीस्वामिनोजी तथा श्रीठाकुरजी को स्वरूपहूँ है । यथा चतुर्व्यूहात्मक, कालात्मक, संयोगात्मक, और वियोगात्मक श्रीठाकुरजी को स्वरूप है । वियोगात्मक स्वरूप हज में प्रगटे है और हज ही में विराजत है मयुरा हारका नाहीं ज्ञात ॥ तथा श्रीस्वामिनोजी शक्ति त्रयात्मक स्वामिन्यात्मक संयोगात्मक और वियोगात्मक हैं । तिन में वियोगात्मक स्वरूप है वर्ष पहली सधा कुञ्ज में प्रादुर्भाव भए हैं और संयोगात्मक स्वरूप पूर्ण पुरुपोत्तम के साथ ओ यसोदा जी के यहां प्रगटे हैं और पञ्चावर्णात्मक स्वरूप पन्द्रह दिन पछे श्री हृषमानंजु के घर प्रगट होत हैं याही से एक एक प्रावर्ण की सेवा के हेतु एक एक सखी को प्रादुर्भाव है । और श्रीचन्द्रावलीजी युगल स्वरूप के प्रेम की मूर्ति हैं रासलोका में विशेषरूप प्रीयकता अर्थात् परकीया विभाग सुख प्राप्ति की कारण है और स्वामिनोजी के मान के कारण इन को प्रागद्य है याही से एकादश सखा की भांति सात सखी सुख्य हैं और याही से विष्णु में सप्त-रभ्य तथा गुसाई जी के घर सात बालकान को प्रादुर्भाव है । कोऊ महत्त्वा को मत है कि श्री स्वामिनोजी और श्रीचन्द्रावलीजी को स्वामिन्यात्मक स्वरूप के अतिरिक्त एक एक सख्यात्मक स्वरूपहूँ है । यथा । श्रीस्वामिनोजीको राधा सङ्गचरी वा रङ्गदेवात्मक और श्रीचन्द्रावली जी को इन्दुसख्यात्मक ॥

अथ अन्य मत से अष्ट सखिन के नाम ।

ललिता, विशाखा, तुङ्गविद्या, रङ्गदेवी, सुदेवी, इन्दुरेखा, चन्द्रभागा, और चम्पकनता । एक के मत से ललिता विशाखा चन्द्रभागा संख्यावली तुङ्गभद्रा श्यामा भामा और तुलसा । एक के मत से श्रीचन्द्रावली ललिता विशाखा पद्मा भद्रा धन्वा रङ्गदेवी और श्यामा हैं ॥

एक के मत से । ललिता, विशाखा, चन्द्रभागा, श्यामा, भामा, कुमुदा, तुलसी, और साधनी ।

एक मत में । लक्ष्मिता, विशाखा, चन्द्रभागा, चम्पकाशता, चित्रा स्वर्ण
शेखा, इन्दुमती, और संध्यावली ।

इति श्री युगल सर्वस्व उत्तरार्धे को प्रथम अध्याय संपूर्ण ।

अथ स्पष्ट वर्णन । श्रीगोपीजन के यूथ अनगिनत हैं इन की कोऊ
संख्या नाहीं करि सकत ।

इन यूथनी में एक पुराण के मत सों ये सुख्य यूथाधिकारिणी हैं और इन
के यूथ में इतनी सखी हैं । यथा चन्द्रावली १६०००, सुशीला १६०००,
शशिकला १४०००, चन्द्रमुखी १३०००, साधवी ११०००, कदम्बमाला १३०००,
कुन्ती १००००, यमुना १४०००, जाम्बवी ८०००, सावित्री १५०००, सुधा-
मुखी १४०००, शुभा १४०००, पद्मा १४०००, गौरी १४०००, सर्वसंगला
१६०००, सरस्वती १३०००, भारती १००००, अपर्णा १४०००, रति १००००,
गंगा १४०००, अंबिका १६०००, घती १३०००, नंदिनी १००००, सुंदरी
१३०००, कल्याप्रिया १६०००, मधुमती १४०००, चम्पा १३०००, और
चंदना १४००० ॥

काहू के मत सों श्रीनंदराय जी को परम्परा यह है । आभीरभानु के च-
न्द्रसुरभि तिन के मीलुक मीलुक कों महाबाहू तिन के कञ्जनाभ तिन के
वीरभानु तिन के धर्मधीर तिन के धर्मश्रवा तिन के काननेन्दु तिन के जयवल्ल
तिन के जयकीर्ति तिन के यशोधन तिन के कण्ठभानु तिन के महाबुद्धि तिन
के मानमेश तिन के मनोरथ तिन के वराहद तिन के चित्रसेन तिन के सुनंद
तिन के उपनंद तिन के महानंद तिन के नंदन तिन के कुलनंद तिन के
वन्धुनंद तिन के केलिनंद तिन के प्राणनंद तिन के नंद हैं ।

एक मत सों चित्रा जी को वर्णन । श्रीकुण्ड के पूर्व आनंद सुखद नाम
इन को निकुंज है इन को वय तीरह वर्षे षाठ महीना की वर्ण गौर वस्त्र
जाती पुष्य तुल्य और सेवा चित्र की है ।

श्यामली जी दीऊ स्वरूप की सवम्बिनी हैं श्रीठाकुर जी के काका की
बेटी हैं सांवली रंग है । श्रीठाकुर जी की उनहार बहुत मिलत है । कोऊ
को मत है कि श्री ठाकुर जी की काका की बेटो को नाम श्यामदेवी है
श्यामली जो श्री ठाकुरानो जी की काका की बेटो हैं परंतु श्री ठाकुर जी की
। चपातिनी हैं ।

अथ अष्ट सखिन के राग तथा बाजन को वर्णन । तहां श्री

स्वामिनी जी संयोग में विषंची जाति की वीन और वियोग में बंधी बजावत हैं । राग कोदार और कान्हरी रात में तथा दिन में सारंग और मालकोस वर्षा में भैव और मङ्गार ।

श्री चन्द्रावली जी ।	बाजा	श्रमृत कुंडली राग सीरठा	[और जलतरङ्ग ।
श्री ललितता जी ।	बाजा	वीन	राग भैरवकलिंगड़ा ।
श्री विशाखा जी ।	बाजा	मृदंग	राग सारंग ।
श्री चन्द्रभागा जी ।	बाजा	स्वरीदय	राग कोदार ।
श्री चम्पकलता जी ।	बाजा	रवाव	राग कान्हरी ।
श्री भामा जी ।	बाजा	चङ्ग	राग कल्याण ।
श्री सन्ध्यावली जी ।	बाजा	सारङ्गी	राग सीरठा ।
श्री इन्दुलखा जी ।	बाजा	तान	राग विहाग ।
श्री चित्रा जी ।	बाजा	सितार	राग संकरा ।

अन्य मत सौं बाजन की वर्णन ।

श्री ललितता जी मृदंग । श्री जमुना जी सहनाई । श्री विशाखा जी सुरमण्डल । श्री श्यामला जी दुधार । श्री चम्पकलता जी सारङ्गी । श्री भामा जी करताल । श्री कामा जी तुरही अरु सहचरी किन्नरी ॥

अथ अन्य मत सौं प्रियाजी की हस्त की चिन्ह ।

जब माला कमल बाटिका भ्रमर व्यञ्जन छत्र अर्धचन्द्र कर्णफूल मडवा अरु जलपात्र ।

अथ वामहस्त की चिन्ह ।

लक्ष्मी सोप हृत्त वेदी आसन कुसुमलता अरु चामर ।

अथ श्री ठाकुर जी की दक्षिण हस्त की चिन्ह ।

हाथी अंशुष घोड़ा हृत्त वानं गऊ पङ्खा मडवा बंधी चक्र माला और कमल ।

अथ श्री ठाकुर जी की वाम हस्त की चिन्ह ।

मडवा कमल तर्वार थापा धनु परिष विल्वहृत्त मीन वान अरु नंदावर्त्त ।

अथ श्री ठाकुरजी की उत्सव । भादों सुदी २ को दसूठन, भादों सुदी ५ को श्री चन्द्रावलीजी की जन्म, कारवदी ८ को महीना की चौक, पौष सुदी ८

को अन्नप्राशन, माघ बदी ६ को नामकरण, वैशाख सुदी ८ को व्याह और असाढ़ सुदी ३ को गौना । पूष सुदी ८ को श्री नन्दजू को जन्म, माघ सुदी ६ को यशोदाजू को जन्म और सावन बदी ५ अठवामा तथा अगहन सुदी २ को श्रीठाकुरजी कूख में पधारि हैं । कार्तिक सुदी १५ को यज्ञपत्नी को अंगीकार ।

आधिदैविक ऊँह्य आधिदैविकी सुभद्रा आधिदैविक अर्जुन आधिदैविकी रक्लिणी और अधिदैविकी सत्यभामा की व्रज की लीला में अङ्गीकार हैं तैसही आधिदैविक बभ्रुदेवजी और रेवतिजी सदा व्रज में विराजत हैं और मर्यादा श्रुतिरूपा गोपी इन को यूथ है ।

श्रीठाकुरजी के बूआ को नाम मैना है और धरानन्द अर्थात् सुनन्दजी को बेटो सुभद्रा श्री ठाकुरजी की प्यारी बहन है । श्रीवृषभानुजी विविक और श्रीकीर्ति जी भक्ति को स्वरूप हैं तथा देवतां की आदि जननी महामाया देवकी जी को स्वरूप है और धर्म को स्वरूप बसुदेवजी को है इन दोउन को व्रज में कंबहूँ २ बाललीला के दर्शन होत हैं ।

गोलोक में श्रीगोवर्द्धन की विस्तार बारह हजार कोम है और भगवान के आनंद से उन की उत्पत्ति है । श्रीस्वामिनीजी के सात्विक भाव से रास की उत्पत्ति है । तिरानवे कोटि रासलीला और उतने ही कुञ्ज हैं विनहूँ में चौरासो मुख्य हैं । निज निकुञ्ज में श्री ठाकुरजी कंबहूँ गौर विराजत हैं कंबहूँ श्याम । सात्विक कुञ्ज फूलन के हैं, राजस मणि कांच इत्यादि के और तामस धातु पाषाणादिक के हैं । निर्गुण कुञ्ज इच्छामय घट ऋतुसम्पन्न हैं । कुञ्ज मण्डल में पहलो निकुञ्ज श्री यमुनाजी को दूसरो अग्नि कुमारिका को तीसरो श्रुति रूपा की सुखिया श्री चन्द्रावलीजी को और चौथो निज निकुञ्ज है । ऐसीही अन्तरङ्ग कुंज में इन स्वरूपन के आधिदैविक, स्वरूप क्रम से श्री यमुनाजी श्री राधा सहचरी श्री चन्द्रावलीजी और जुगल स्वरूप विराजत हैं और वे स्वरूप अलौकिक मनुष्य के ज्ञान के बाहर के हैं जिन स्वामिनी और सखिन को जगत भजन करत है वे गुणमई हैं ।

श्री चन्द्रावलीजी को गांव व्रज में रिठीरा है । नवधा भक्ति बालख्य में तो श्री नवन्द के स्वरूप में और शृङ्गार में सखी स्वरूप में रहत हैं । व्रज में अनेक अवतारन के बरदान से श्रुतिरूपा, कटकिरूपा, यज्ञसीता, रंभासहचरी, लीलालीकवारी, रजोगुण की, तमोगुण की, सतीगुण की, कोशलपुरी, पुलिंदी, श्वेतदीप की, मिथला की, ऊँहवैकुंड की, भूमिगोलोक की, अज्ञितपद

की, दिव्या, विष्णुलोक की, अदिव्या, ससुद्रकन्या, अक्षरा, पुरंधी, लता, गोपी, वरिष्मती, नागकन्या, सुतलनिवासिनी और श्रीरामावतार की मानवी इतनी लूथन को मनीरथ पूर्ण पुरुषोत्तम ने पूर्ण कीनी है ।

इन में जानन्धरी तो रङ्गजीत नामक गोप की कन्या भई है और मख्य अवतार के वरदान की वरिष्मती अक्षरा नागकन्या और सुतलवासिनीन ने हज के पास वरिष्मल नगर में जन्म लीने है । रिषीरूपा बङ्ग देश में मङ्गल गोप के घर पांच हजार उत्पन्न भई है । और श्री नंदरायजी ने इन की बङ्गाले से लाय के मङ्गल में रक्खे है । कोशल की स्त्री न्य त्रपनंद की पत्नी है । मानव की राजा दिवसपति गोप व्रज में बसत है सो देवतान की स्त्री वा की कन्या गोपी भई है । सिन्धु देश में चम्पक देश की राजा विमल वाके यद्यं भवध और मिथनापुर की स्त्री एक करोड़ प्रगटी है ये पञ्चले काम वनमें रहीं फिर हारका गई जाती इन की राज्यक्षोला प्रिय है । दक्षिण में अशोर नगर की गोप पानी न बरिसवे से व्रज में आय बसे है विन की विटी यज्ञ जानकी और पुल्लिंदी भई है । दिव्य बाह, गोपेष्ट, पतङ्ग भागव, शुक्ल और नीतिविद ने छः ऋषु हषमान है इन के घर उई विष्णुपदवाग्मिनी, रमासम्बी, जलकन्या, श्वेत दीप की स्त्री लोकाचलवासिनी और अजितपद की स्त्री प्रगटी है । बीति-होत्र, सुत, अग्निभुक्त, गोपति, श्रीकर, श्रान्त, पावन, श्राभ, और व्रजेश ये नव ऋषु उपनंद है । त्रिगुणा और दिव्याऽदिव्या के यूथ को इनके घर प्रागव्य है ।

और अवतारन में स्वकीया छोड़ के और स्त्री से रमण करे तो धर्म की मर्यादा जाय वाही से जब पूर्ण पुरुषोत्तम प्रगटे है तब इन सबन को मनोर्य पूर्ण भयो है ।

विशेष कर के श्री रामावतार को स्त्रीन को व्रज में प्रागव्य है जा से श्री राम जू साक्षात वासुदेव स्वरूप और मर्यादा पुरुषोत्तम है और अत्यन्त ही सुंदर है देखतमात्र स्त्रीजन को चित हरन करत है सो मर्यादा पुरुषोत्तम में चाग्रत होइ के पुष्टि पुरुषोत्तम से रमण की अधिकारणी होत है । ताहू में अग्निकुमार दण्डकारन्य के पांच हजार ऋषी को मुख्य नित्य लीला में अंगी-कार है क्योंकि पुरुष होइ के प्रभु में इन ने स्त्री भाव कीन्हो है सो कुमारि-कान को यूथ जा को सुखिया श्री राधा सहचरी जू है इन्हीं दण्डकारन्य के ऋषिन को है ।

सुअस गोप को स्त्री जसा से कीर्ति जी को प्रागव्य है सुनैनाजी इन की

अंग हैं चन्द्र वंश में जुरंग नामक राजा और वा की स्त्री विद्यासाची सीं सुनैना जू की उत्पत्ति है ।

श्री जानकी जू इनहीं के गृह प्रगटी हैं और संदीदरी, पृथ्वी, पारवती, और सुनयना इन सवन सीं आप सीं माछ सम्बन्ध है । जब ऋषिन को ब्रह्म-तेज एक चड़ा में बंद होय के रावण के पास आयो तब संदीदरी ने वा कीं अपने गर्भ में धारण कियो सो नारद जी के कहिवे सीं रावण ने वा गर्भ कीं पीड़ित करि वा चड़ा में भरि के जनकपुर के पास गड़वाय दियो । ताही सीं श्रीजानकी जी प्रगटी है और श्री लक्ष्मण जी सब ब्रह्मान के भरत जी सब विष्णु के और शत्रुघ्न जी सब शिवन के आधिदैविक स्वरूप हैं ।

बालुहादिनी, चावशीक, अतिशोका, सुशीला, हेमा, लक्ष्मणा ये ६ श्री जानकी जी की कुञ्जन् की, श्रीभना, सुभद्रा, शान्ता, सन्तोषा, शुभदा, सत्य-वती, सुस्रिता, चावंगी, लोचना, हेमांगी, सेमा, जेमदात्रो, सुधाची, धीरा, धरा, और चारुपा, ये सीरहसिंगार की, माधवी, मनोजवा, हरिप्रिया, बागीशा, विद्या, सुविद्या, नित्या और वैसा ये आठ अंग की मुख्य सखी हैं ।

इति श्रीयुगल स्वर्वस्व के उत्तरार्ध की द्वितीय अध्याय स्फुट प्रकरण समाप्त भयो ।

उत्तरार्ध ।

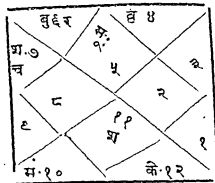
३ अध्याय ।

अब प्रसङ्गवशात् अन्य अन्य रहस्य निरूपण करत हैं । १ । रसिक जन और संहालान के निकुञ्जादि वर्णन में अनेक मत हैं तिन की परस्पर विश्व देखि के शंका न करनी काहे सीं कि यह तो निकुञ्जकीला भाव सिद्ध है जैसे जाको भाव को अधिकार है वैसी वाहि दर्शन होत है । २ । रहस्य पुराण में तिरानवे कोटि रासकीला लिखी हैं । ३ । तिरानवे कोटि कुञ्ज हैं । ४ । धाम एक भूमंडल पर श्रीहन्दावन एक गोलोक को नित्य ठन्दावन । ५ । सब कुञ्जन में ८४ कुंज मुख्य हैं । याही सीं ८४ देवक हूँ श्रीमहाप्रभु जी ने अङ्गीकार किए हैं । ६ । श्रीठाठारजी के गुणमय नौ स्वरूप उन को भाष्या १ अजा २ अरुपा हेनिर्गुणां ४ निराकारा ५ सनातनी ६ निरीहा ७ परब्रह्मभूता ८ अविनाशिनी और ९ निरंजना सो इन नद्यो स्त्रीन सीं अथवादिक प्रेम भक्ति उत्पन्न

होत भई । ० । और निर्गुण स्वरूप श्रीठाकुर जी की एक सच्चिदानन्द घन ताको स्त्री अनौकिकी तारों प्रेम लक्षणा उत्पन्न भई ताके सचज सचित और सुद्धत तीन पुत्र भए । ८ । अथवादिश प्रेमज की एक एक की नौ नौ पुत्र भए तेही ८१ और ३ प्रेमलक्षणा की पुत्रन के पुत्र यद मित्रि कै चौरासी प्रकार के प्रेम तेई निकुञ्ज होत भए । ९ । अथवा की भार्या अति ताके ८ पुत्र मूच्छकंज उन की संज्ञा उन के नाम यथा प्रीतिकुंज प्रेमकंज कंदर्पकंज लीलाकंज मञ्जुकंज विहारकंज उल्हाटकंज मोहनकंज दुग्धकंज १० कीर्त्तन की स्त्री नर्त्तकी ताके नौ देहकंज पुत्र भए यथा ह्रावकंज, भावकंज, कटाचकंज, अन्नकंज, सुहाकंज, रङ्गकंज, वेनीकंज, रोमराजी-कंज, नीवीकंज । ११ । अर्चन की भार्या पूजा ताके ८ पुत्र विहारकंज यथा कटिघोषकंज, मानकंज, स्वसनकंज, तिष्ठनकंज, संगीतकंज, आनन्दकंज, धानकूजितकंज, विविधाकारकंज, दुग्धकंज, ह्रावकंज, । १२ । पाद सेवन की स्त्री पादोदका ताके ८ अङ्गारकंज, यथा नैचकंज, कूडकंज हारकंज, ताखूला-कंज, घाड़कंज, नावन्धकंज, ह्रासकंज, उल्हाडकंज, उग्रताकंज । १३ । स्मरण की स्त्री स्मृति ताके ८ महाकैतिकंज यथा कौकिलान्नापकंज शीवकंज प्राक्लि-ङ्गनकंज, चुम्बनकंज, अधरदानकंज, दर्शनकंज, दर्पनकंज, प्रसापकंज, उन्-मादकंज, । १४ । बंदन की स्त्री नति वाके ८ एकान्तकुञ्ज यथा दर्पकंज, उल्हादनकंज, उल्हाडकंज, दीगकंज, अधीनकंज, सुरतकंज, आर्षणकंज, उल्हाटनकंज, मूर्छाकंज, । १५ । दास्य की स्त्री विनया वाके ८ गोप्यकंज यथा वगवारणकंज, स्वभनकंज, प्रियास्वन्धारोद्घणकंज, आविश्यकंज, व्यात्तान्नाप-कंज, पर्येकशयनकंज, प्रियाचरणताडकानकंज, नष्टक्षतकुञ्ज, दन्तक्षतकंज । १६ । सख्य की स्त्री मैत्री तारों ८ भावकंज, यथा क्षपितरंगकंज, विगताभ-रणकंज, भूषणकंज, कंपकंज, रतिपलापकंज, तुत्तुन गिरकंज, प्रियावामभवन-कंज, सदनशुद्धकंज, आसक्तकंजकंज, । १७ । निवेदन की स्त्री शालसमर्पिणी ताके ८ परमरसकंज यथा पीड़ावाटाकंज, सुरतयमनिपिधकंज, दुतुककंज, वास्विकमकंज, व्यवस्तभावकंज, कामटंककंज, किंकिनिरयकंज, वीरविपरी-तकंज, सुरत्तातकंज, । १८ । सुद्धत की स्त्री सुद्धदा तारों कलिक्काकौतुककंज और सचित की स्त्री हितकारिणी तारों सुरतकंज तथा सचज की स्त्री सचजा तारों सचज प्रेमकंज येई ८४ कंज भए । १९ । इतं कंजन में एक एक में सब कंज अन्तरभावों रहत हैं काहुं प्रकन रहत हैं और काहुं प्रकाशितहोत हैं । २० ।

अथ और स्फूट रङ्गस्य वर्णन करत हैं। ब्रज में सप्तावरण स्वरूप श्रीठाकुर जी को तथा श्रीस्वामिनीजी को विराजत है ॥ २ ॥ वासुदेव संकर्षण प्रद्युम्न अर्जुन कालिधर संयोगरसात्मक और वियोगरसात्मक यह सात स्वरूप मिलि कौ पूर्ण होत हैं सो इन में अन्यकल्पन में कहुँ एक कहुँ दोय ऐसि स्वरूप प्रकट होत हैं ॥ ३ ॥ जब पूर्ण प्राकट्य भयो तब छ स्वरूप मथुराजी में प्रकटे वियोगात्मक स्वरूप ब्रज ही में प्रगटे ॥ ४ ॥ श्रीशक्ति भूगति कीलाशक्ति मनोरथात्मक स्वामिन्यात्मक वियोगात्मक संयोगरसात्मक यह सात स्वरूप श्रीस्वामिनी जी के हैं तिन में अन्य युगन में कोउ एक स्वरूप प्रकटत हैं जब पूर्ण प्राकट्य भयो तब पांच स्वरूप कीर्त्ति जी के यहां प्रगटे और जब श्रीठाकुर जी प्रकटे तिन के साथ सायाहत संयोग वियोग रसात्मक दोय स्वरूप यहां प्रकटे सो जब कीर्त्तनो अग्रुन घर सों श्री स्वामिनी जी कां लाईं तब श्रीठाकुर जी साता को गोद सों किनके और हंसे वाही समैं इन दोऊ रसात्मक स्वरूपन को उन पंचावरणात्मक स्वरूप सैं स्थापन कीनो ॥ ५ ॥ जब कहु आवरण सों मथुरा पधारे तब वियोगरसात्मक सुख्य स्वरूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय में विराजि ॥ ६ ॥ श्रीस्वामिनीजी को मनोरथात्मक को स्वरूप हैं ताही में अन्य के प्रभु सों रमण करिवे के मनोरथ तथा वरदान आदि सों जे स्वामिनी प्रकटत हैं ते मिलि रहत हैं और स्वामिन्यात्मक स्वरूप में प्रति कुंज प्रतिमंडल प्रतिजुय में जी स्वामिनी जी के अंग स्वरूप रहत हैं तिनकी एकता है ॥ ७ ॥

अथ श्रीस्वामिनी जन्म समय ।



अथ ब्रह्मणी द्वितीय प्रहरार्धे श्वेत वाराह कल्पे दापरान्ते विश्वावसु संवत्सरे भाद्रपदेशुक्ताष्टम्यां गुरु वासरे अरुणोदये विशाखायां सिंहाश्विनोदये पाङ्गसुभूर्त्तं हयान्विते

श्रीस्वामिन्याजन्म ॥ ८ ॥

नव हुषभानों का जल ।

नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चाकवख	गुण	युग	गज
सत्यभानु	सत्यकला	श्रीबलितानी	गौरमोजखेत	श्रीरोठगना चित्तगौरवख काले	शौदार्य	७५	२२००००
गुणभानु	गुणकला	श्रीविशाखाजी	मुलाबी, कैयखेत	रंगप्रदाना	विद्या	६७	२१००००
धर्मभानु	धर्मकला	श्रीरंगदेवी	मांवाला, कैयखेत	वखलान श्रीरीर लना	धर्म	६४	२०००००
रचिभानु	रचिरकला	श्रीचिचानी	पीन श्रीरीर लंब चौड़ा कैय प्राध- काचर	लीला	ज्योतिष	६०	१८००००
सुभानु	सष्टकला	श्रीतुंगविद्याजी	सांवाला, कैय अधकाचर	डाढी, पीन, प्रमन्नवदन	रोचकता	५७	१८००००
चंद्रभानु	चंद्रकला	श्रीचंद्रावलीजी श्रीचंपकलाजी	गौर कैय कण्ठ किंचित्खेत	रचित	कला	५४	१७००००

नव दृषभानों का चक्र ।							
नाम	स्त्री नाम	संतति	वर्ण	चानकस्थ	गुण	वय	गज
वरभानु	वरकला	श्रीहृदयेखाजी	शाल, किश काले	धानी पड़लवानो	गानविद्या	५२	१६०००००
बदधिभानु	कमला	श्रीसुदेवीजी	पक्का	किश काले खेत	व्यायाम पशुपरीक्षण	५०	१५०००००
श्रीदृषभानुजी	कीर्तिजी	जोदामा श्रीराधिकाजी	लाल	किश काले	राज्यविद्या	४५	१०००००००

युगल सर्वस्व के उत्तराई को तीसरी प्रकारण समेत भयो ।

अथ चतुर्थ अध्याय ।

६४ गुण श्रीमगवान के

सुरभ्याङ्ग १ सर्वसङ्गजनान्वित २ कचिर ३ तेजोयुक्त ४ वनो ५ धयोयुक्त ६ विविधाङ्गुतभाषान्वित ७ सत्यवाक्य ८ प्रियम्बद ९ वावटूक १० पण्डित ११ बुद्धिमान १२ प्रतिभान्वित १३ विदग्ध १४ चतुर १५ दक्ष १६ कतज्ञ १७ दृढ़ व्रत १८ देशकान्तपात्रज्ञ १९ ब्राह्मचर्य २० पवित्र २१ वशी २२ स्थिर २३ दान्त २४ क्षमाशील २५ गम्भीर २६ घृतमान २७ सम २८ वदान्य २९ धार्मिक ३० गूर ३१ आरुण्य ३२ ज्ञानदायक ३३ दक्षिण ३४ विनयो ३५ लज्जामान ३६ शरणागनपालक ३७ सुखी ३८ भक्तसुहृत् ३९ प्रेमवश ४० सर्वशुभङ्कर ४१ प्रतापी ४२ कौन्तिमान ४३ लोकप्रिय ४४ साधुप्रमाथ्य ४५ नारीमनोहर ४६ सर्वा-
राध्य ४७ सच्चिदानन्द ४८ ज्येष्ठ ४९ ईश्वर ५० नित्य सुन्दर ५१ सर्वज्ञ ५२ स-
च्चिदानन्दधन ५३ सर्वसिद्धिसंयुक्त ५४ अविचिन्त्य ५५ सदाशक्ति ५६ अनैक
कोटि ब्रह्माण्डविग्रह ५७ अवतारावलीडीज ५८ उत्तारिगतिदायक ५९ आत्मा-
राम गुणाकर्षी ६० अत्यन्त शङ्कन और चमत्कार लीला लल्लो के समुद्र
६१ अतुल्य मधुर प्रेम प्रिय मण्डल सौ मण्डित ६२ सुरनी वादन सौ सर्वमान-
साकर्षी ६३ अत्यन्त शक्यौकिक उज्ज्वल अङ्गुत तथा उच्चत रूपश्री सौ चराचर
को भोजन ॥ ६४ ॥

प्रथम पचास सङ्गन गुण । ६० तक १० अङ्गुत । और चार असाधारण गुण ।
२४ नित्य प्रिया सङ्गरी ।

चन्द्रावली १ विशाया २ लक्षिता ३ श्यामा ५ पद्मा ५ शैव्या ६ भद्रिका
७ तारा ८ विचित्रा ९ गोपाली १० घनिष्ठा ११ पालिका १२ पञ्चनाची १३
मनोरमा १४ मंगला १५ विमला १६ लीला १७ लक्षणा १८ शारिका १९
विशारदा २० तारावली २१ चकोराची २२ शंकरी २३ कुङ्कुमा २४ ।

इन में विशाया लक्षिता श्यामा पद्मा सखी और शेष युधपति हैं ।

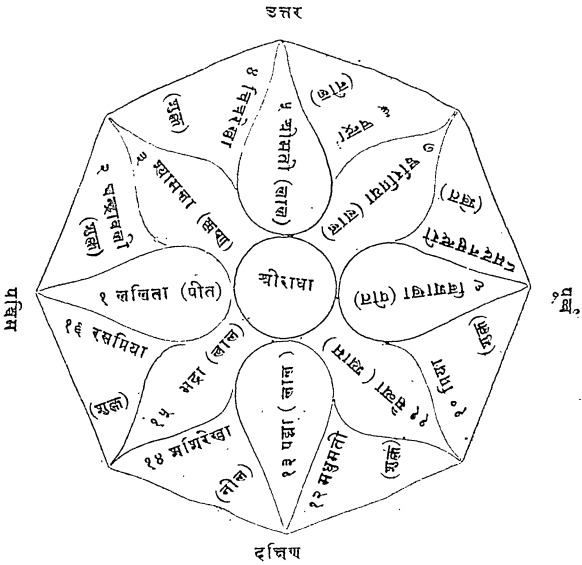
अथ युधपति अपर ।

चन्द्रावली और शुभोला १६००० शशिकला १४००० चन्द्रसुखी १३०००
माधवी ११००० कदम्बमाता १३००० कुन्ती १०००० यमुना १४००० जाम्बवी
८००० पद्मसुखी ८००० सावित्री १५००० सुधासुखी १४००० शुभा १४०००
पद्मा १४००० गौरी १४००० सर्वमंगली १६००० सरस्वती १३००० भारती

१०००० अर्पणा १४००० रति १०००० गङ्गा १४००० अश्विका १६००० सती
१३००० निन्दिनी १०००० सुन्दरी १३००० कृष्णमिया १६००० मधुमती
१४००० चम्पा १३००० चन्द्रना १४००० ।

श्रीस्वामिनीजी की १६ नाम ।

राधा १ रासिश्चरी २ रासवासिनी ३ रसिकेश्वरी ४ कृष्णपागाधिका ५
कृष्णमिया ६ कृष्णस्वरूपिणी ७ कृष्णवामाङ्ग संभूता ८ परमानन्दरूपिणी ९
कृष्णा १० हन्दावनी ११ हन्दा १२ हन्दावनविनोदिनी १३ चन्द्रावली १४
चन्द्राकान्ता १५ शतचन्द्रनिभानना १६ ॥



अथ उत्सवव न पर रागन की खंगीकार ।

जन्मोत्सव	सारङ्ग
दान	टोडी
संभो	गौरी
विजयदशमी	मारु
रास	कोदार कान्हरा तथा सर्व
कार्तिक	भैरव ईमव कल्यान
स्वार्थशीर्ष	पंचम
पूस	आसावरी
साघ	सगनकोस धसन्त
फागुन	धनाश्री विद्वाग आदि सब राग
दोल	हम्मोर सारंग
चैत	पूर्वी
वैशाख	मधु सारङ्ग कोदार
ज्येष्ठ	सारंगशुद्ध
आषाढ	सामन्तसारंग गौड़ सोरठ
श्रावण	अकार
जागने की समय	भैरव पंचम
शुद्धार करती समय	रामककी
अरोगती समय	यथक्तु
दिन	टोड़ी आसावरी सारंग धनाश्री
तीसरे पहर	गौरी पूर्वी धनाश्री
सैन आरती वा कुंजविहार	कोदार कान्हरा ईमन
एकान्त विहार	विद्वाग सोरठ धरज कलिंग

अथ तंत्र मत से सखीग की वर्णन ।

१. ललिता	स्वर्णवर्ण	रत्नाभरण	पीताम्बर
२. चन्द्रावती	”	शुभ्र तवस्त्र	संज्ञोर की सेवा
३. श्यामला	”	श्यामवस्त्र	सुदङ्गसेवा

४ चित्ररेखा	स्वर्णवर्ण	शुक्लाश्वर	डफ की सेवा
५ श्रीमती	"	रक्तवर्ण	दासी की सेवा
६ चन्द्रा	"	नीलवस्त्र	रवाव
७ हरिप्रिया	"	लालवस्त्र	रपङ्ग
८ मदनसुन्दरी	"	श्वेतवस्त्र	रघाव और गाना
९ विशाखा	"	पीतवस्त्र	वंशी
१० प्रिया	"	श्वेतवस्त्र	वंशी
११ शैव्या	"	श्यामवस्त्र	गाना
१२ मधुमती	"	शुद्धवस्त्र	चरन सेवा
१३ पद्मा	"	लालवस्त्र	सारंगी
१४ शशिरेशा	"	नीलवस्त्र	यन्त्र
१५ भद्रा	"	रेशमीलालवस्त्र	सुरमण्डल
१६ रसप्रिया	"	चीन शुक्लवस्त्र	तुमरी

एक एक की सात सात सखी ।

- १ ललिता की इन्दुमुखी १ रसज्ञा २ शुभदा ३ सुसुग्धी ४ वल्लभी ५ चन्द्रिका ६ चतुरा ७ ।
- २ चंद्रावती की चंचला १ मधुरा २ हस्तकमला ३ मधुर भाविनी ४ विलासिनी ५ रसवती ६ खंजन लोचना ७ ।
- ३ श्यामला की सुखदा १ चम्पकलिका २ रसदा ३ रससंजरी ४ सुमञ्जरी ५ शीला ६ चारुमती ७ ।
- ४ चित्ररेखा की चन्द्रप्रभावती १ वासन्ती २ मातृती ३ जाती ४ चन्द्रकान्ती ५ सुकुन्तला ६ रश्मा ७ ।
- ५ श्रीमति की भ्रमरशम्भोरा १ सुशीला २ सुवेशिनी ३ आमलिकी ४ सुधाकरिणी ५ श्रिया ६ रतिप्रिया ७ ।
- ६ चन्द्रा की शकप्रिया १ मधुकारी २ सुवेश्या अश्रुतोद्भवा ४ सुरली ५ वल्लभी ६ वृन्दा ७ ।
- ७ हरिप्रिया की पाचिजातप्रिया १ शुभा २ पंचस्वरा ३ रत्नमाता ४ सदिरा ५ रासवल्लवी ६ मातंगममनी ७ ।

- ८ मदनसुन्दरी की तारावती १ कुण्डलधारनी २ कैशरी ३ मित्रहृन्दा ४
नक्षत्रा ५ अच्युतमालिका ६ चन्द्रा ७
- ९ विद्याया की मायावती १ कौशिकी २ कोमलाङ्गी ३ सुचन्दनी ४
पोयूदभाषिणी ५ सख्यवती ६ कुञ्जवासिनी ७
- १० प्रियाकी कपोत मालिका १ लोपामुद्रा २ किंशुकप्रिया ३ इलावती
४ कुंकुमा ५ कमला ६ मदानसा ७
- ११ शैव्या की साहिद्री १ वहुला २ प्रियावादिनी ३ सुक्तावती ४ चित्ररे-
पा ५ सुप्रिया ६ लोचनकुण्डला ७
- १२ मधुमती की अरुन्धती १ चित्रवती २ त्रिरत्ना ३ पद्मगंधिनी ४ मे-
नका ५ कानिका ६ रङ्गकेतकी ७
- १३ पद्मा की काममूर्च्छिनी १ कुसुदप्रिया २ तानप्रिया ३ नित्यविलासिनी
४ श्रीरावती ५ चारकांठा ६ सिद्धमदरा ७
- १४ शशिश्या की सुलोचना १ नन्दव्या २ भानन्दकालिका ३ सुनन्दा ४
भानन्ददायिनी ५ सुरंगाची ६ सुयोगी ७
- १५ भद्रा की केलिकोला १ प्रियम्बदी २ श्यामाराधा ३ श्यामसेव्या ४ क-
स्तूरी ५ मानभञ्जनी ६ विचित्रवसना ७
- १६ रत्नप्रिया की संसृष्टिकिनी १ पिकस्वरा २ शृंगगाना ३ रासविद्या-
रिणी ४ रसमञ्जरी ५ तिलोत्तमा ६ चारुमती ७

श्रीललिता श्री अनुराधा श्री श्रीविशाखा श्री श्रीचम्यकलताश्री श्री दन्दुसुखा श्री तुंगविव्या नान्दीसुखी श्री संगदेवी श्री सुदेवी श्री चित्रा		पितानाम	मातानाम	रंग	वस्त्र रंग	सुख संवा
		सुचिभातु	स्विकला	कुंसुमप्रभा	सुनहला	जलादि पान की
उदधिभातु	कमला	सलोना	सूहा	केशपाशरच- नादि शारकी		
धर्मभातु	धर्मकला	कमलकेसर- प्रभा	उड़हुलकेफूल	आभरण		
सुभातु	सुष्टकला	गौर	पीला	गान		
वरभातु	वरकला	हरतालप्रभा	अनारकेफूल	श्या कहां- नो		
चन्द्रभातु	चन्द्रकला	चयकप्रभा	नील	व्यंजनादि		
गुणभातु	गुणकला	दामिनीप्रभा	चांदनारा	वस्त्रादि		
सत्यभातु	सत्यकला	नीरोचनप्रभा	सयूर पिच्छ	पानकी कीड़ी		

अथ अन्य मतों अष्ट सखीन की वर्णन ।							
नाम	रंग	वस्त्र	माता	पिता	पति	चातुर्य	सेवा
लाता सुन्दरी	गोरोवन	मयूरपत्र	शारदा	विशोक	वालीक	मध्या वाक्य	ताम्रूल
विशाखा	विजली	चांदतारा	सुदक्षिणा	पावन	वल्लभ	सामादि भेटकाव्य	वस्त्र
चम्पकलता	चंपा	नीला	वाटिका	राम	चंडाज	दीव्य	पाक वस्तु
विवा	कुंकुम	काला	चंचिका	चतुर	पोठर	भागम ज्योतिष पशुविद्या जल पान	सवारना जल केश
तंगविद्या	केसर	पीले	मिषा	पौष्कर	वालिस	संगीत साहित्य मेलन	चीणा
इन्दुलीखा	हरिताल	लाल	सागर	विला	दुर्बल	कोक वगीकरण देन्य	चन्दन
रंगदेवी	पद्म किजल्ल	सफेद	करुणा	रंगसार	चक्रेशणा	शुभार	
महेश्वरी	गौर	नील	सुदेवी	देववसु	कीपन सु- लट्ट	अंजन शय्य ग चरण सेवा	पीकदान

अथ अन्य मतों में सखीन की वर्णन चक्र ।							
नाम	रंग	कौन की सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दल	स्थान
श्रीललिता	चन्द्रमा	श्रीस्वामिनीजीकी	पीला	पीना	पश्चिम
चंद्रावती (नी)	सोना	श्रीललिताजीकी	खेत	सफेद	उपकी वाएं
श्यामला	सोना	श्रीस्वामिनीजीकी	काला	रुदंग	...	काला	वायव्य
चित्रलेखा	तपया	श्रीठाकुरजीकी	खेत	उफ	माना	सफेद	उपकी वाएं
श्रीमती	सोना	श्रीठाकुरजीकी	लाल	...	दास	लाल	उत्तर
चन्द्रा	सोना	श्रीठाकुरजीकी	लोला	रवाव	माना	नील	उपकी वाएं
हरिप्रिया	सोना	...	पीला	उपंग	...	लाल	ईशान्य
सदनसुन्दरी	चन्द्र	...	सफेद	रवाव	माना	धूस	उपकी वाएं
विद्याखा	गौर	श्रीस्वामिनीजीकी	पीत	बंगी	...	पीत	पूरुब
श्रीपिया	सोना	विद्याखाजीकी	सफेद	बंगी	...	सुक्त	उपकी वाएं
सैव्या	सोना	श्रीललकी	काला	मंजू मुखयंत्र	...	प्रथम	श्रमिकोण
सधुमती	सोना	युगल स्वरूप की	सफेद	...	माना	शुक्त	उपकी वाएं

अन्य सत सौ शष्ट सखीन की चक्र ।

नाम	रंग	किसको सखी	वस्त्र	वाद्य	सेवा	दत्त	स्थान
पद्मा	फूल	...	लाल	सारंगी	...	लाल	दक्षिण
इन्दुलेखा वा श्यामरेखा	चन्द्रमा	थीठाकुरजीकी	पट्ट	सुदंग	गाना	नील	उम के बाएं
भद्रा	सोना	श्रीशुगल	लाल	खरमंडल	...	लाल	नेष्टत
रसप्रिया	सोना	शुगल	लाल	शुक्ल	उम के बाएं
हृन्दा (वन- प्रिया)	हरदी	...	सफेद साटन	तंबूरा
श्रीचन्द्रावली	लालसोना	...	हुनरी	...	बादोके फूलकी साला

श्री रामचन्द्र की दक्षिण चरण की २४ चिन्ह क्रम से ।

एड़ी में खस्ति चिन्ह । १ पीतरंग	अंगूठे में ज्व । १३ । खेत रक्त ।
मध्यतरवा में छर्ष रेखा । २ लाल रंग ।	ऊर्ष रेखा के दक्षिण ओर कल्प
ऊर्ष रेखा के बायें तरफ अष्टकोण ३	हृत् । १४ । हरिहरण ।
खेत अक्षय ।	अंकुश । १५ । श्याम ।
श्री । ४ । वालाकं सन्निभ ।	ध्वज । १६ । लोहित चित्रित ।
हृत् । ५	सुकुट । १७ । तप्त कांचन वर्ण ।
सुसल । ६ } खेत धूम्र ।	चक्र । १८ ।
सर्प । ७ । सित ।	सिंहासन । १९ । रत्नमय ।
वाण ८ खेत । पीत अक्षय हरित ।	कालदण्ड । २० । कंसावत ।
आकाश । ९ । नील ।	चामर । २१ । अत्यंत धवस ।
अष्टदत्त कमल । १० । अक्षय	छत्र । २२ । सितलाता ।
खान्दन । ११ । विचित्र वर्ण जिष्णे	नृ । २३ ।
चारि छोड़े खेत ।	जपमाला (२४ चिन्ह) खेत पीत
वज्र । १२ । बिल्वुरी वर्ण ।	अक्षय हरित । अक्ष वज्रवत ।

श्रीराघव की बायें पदाङ्ग की २४ चिन्ह क्रम से ।

पद मध्य में दक्षिण पद लौ ऊर्ष रेखा	षट्कोण । ९ । मङ्गलखेत ।
की जगह पै सरयू । १ । सित ।	त्रिकोण । १० । अक्षय ।
एड़ी में गौ पद । २ । सितरक्त ।	गदा । ११ । श्यामल ।
सरजू के दक्षिण ओर भूमि । ३ । पी-	जीवाला । १२ । दीप्तिरूप ।
तरक्त सित ।	अंगुष्ठ में विन्दु । १३ । पीत ।
कुम्भ । ४ । ऊर्ष वर्ण कुम्भ खेत ।	गोपद की बाईं ओर । शक्ती । १४ ।
पुताका । ५ । विषवर्ण ।	रक्त श्याम सित ।
कम्बू फल । ६ । श्याम ।	सुषाकुण्ड । १५ । सितरक्त ।
अर्ष चन्द्र । ७ । धवस ।	त्रिवली । १६ । त्रिविधोपवत ।
दर । ८ । सितकण्ठवाच ।	मञ्जरी । १७ । रूपवत ।

पूर्ण सिंधु । १८ । घवल ।
 वीणा । १९ । पीतरत्न सित ।
 वंसी । २० । चित्र विचित्र ।
 धनु । २१ । हरित पीत अरुन ।

बीण । २२ । चित्र विचित्र ।
 मरान्त । २३ । चरण चंचुलाह । सित ।
 चन्द्रिका । २४ । सित पीत अरुण
 विचित्र रंग ।

जो चिन्ह श्री रामजी के दक्षिण पद में हैं सोई चिन्ह श्रीजानकी जी के वाम पद में हैं और जो श्रीराघव के वाम पद में सोई श्री लालिजी के दक्षिण पद में ।

उपसंहार ।

विदित हो कि सर्वसदाश्रीशिरोभाष्यचरण आचार्यवर्य श्री महाप्रभु जी ने युगल स्वरूप की सेवा और भावना जो अपने समुदाय में सुख्य मानी है तथापि प्रचार बालमेवा और बाल भाव का किया है इस का कारण यह है कि संसार के स्वभाव दुष्ट जोव इस उत्तम रस के अधिकारी नहीं हैं उन को प्रवृत्ति सद्गज ही नीच है और चित सांसारिक विषयों से कलुषित है तो वे शीघ्र यदि यह रक्ष्य कहे मुनें तो उलटे अपराधी हों । यह तो जल कमल की भांति जो भक्त संसार में रहते हैं उन्हो के कहने सुनने के योग्य है क्योंकि सिंगार भावना सिंघनो का दूध है जो या तो सिंघ के बच्चे के मुँह में ठहरे या स्वर्ण के पात्र में और पात्र में रखी तो फट जाय वैसे ही यह उत्तम रस पात्र बिना नहीं ठहरता और बाल भाव तो गल का दूध है अनेक प्रकार के सत् पात्र में ठहर सकता है यद्यपि नास्तिक इत्यादि खटाई और बहिमुख से पीतल के पात्र में इस को भी विकार होता है तथापि सर्व साधारण में इस के कहने सुनने वाली को कहना सुनना तो मानी अपने माता पिता का गुप्त रक्ष्य उद्घाटन करना है इस के तो जो अनन्य अधिकारी हों उन्हो से कहना सुनना योग्य है । इस मेरे लिखने का तात्पर्य यह कि जिन के पास यह ग्रन्थ रहे वे इस को किसी साधारण स्थान में वा साधारण लोगों के हाथ में न फेंक दें वरन् इस को बहुत यत्न पूर्वक रखें ।

श्री
तदीयसर्वस्व

अर्थात्

श्री नारद छत भक्ति भूत्र का इति समेत इहत् भाष्य ।

प्रेमिजनों के दासानुदास प्रेमपथ के भिक्षुक तदीयनामांकितअनन्यवीरवैष्णव

हरिश्चन्द्र

द्वारा

‘केनापिदेवेन हृदिस्थितेन’

लिखित

“ भक्त्यात्वनन्धया उभ्यो हरिरन्धत् विडम्बनम् ”

पटना—“खड्गविलास” प्रेस—बांकीपुर ।

साहब प्रसाद सिंह ने मुद्रित किया ।

१८८९.

उपक्रम ।

हम आर्य लोगों में धर्म तत्व के मूल ग्रन्थों का भाषा में पचार नहीं। यही कारण है कि भिन्नता स्थान २ पर फौकी हुई है। अनेक कोटि देवी दे-पताओं का माहात्म्य, छोटी छोटी बातों में ब्रह्मपत्या का पाप, और तुच्छ तुच्छ बातों में बड़े बड़े यज्ञों का पुण्य, अहं ब्रह्म का ज्ञान, और मूल धर्म छोड़ कर उपधर्मों में भाग्य ने भारत धर्म से वास्तविक धर्मों का शीप कर दिया। जिस जगत् कर्ता ने हम लोगों को उत्पन्न किया, संसार के सुख दिए, हुए भले का ज्ञान दिया, और अपना सत् मार्ग दिखनाया उस-से यहाँ की प्रजा विमुख हो कर धर्मान्तर में फँस गईं। यदि प्रथम कर्तव्य उस की भक्ति के अनन्तर कामानुष्ठान में प्रवृत्त होते तो कुछ बाधा नहीं थी। यह न होकर गौण कर्म तो मुख्य हो गए और मुख्य वस्तु गौण हो गईं। इसी से सारा भा-रतवर्ष भगवद्विमुख हो कर छिन्न भिन्न हो गया जो कि इस की अवनति का मूल कारण हुआ। कभी भगवद्विमुख कोई देश या जाति उन्नत हो सकती है ? धर्म हमारा ऐसा निर्वन्त और पतना हो गया है कि केवल स्वयं से वा एक चुन्नू पानी में मर जाता है। कच्चे गले सड़े मूत वा चिडंटी की दृशा ह-सार धर्म की हो गई है। प्रायः !!

इसी धर्म पथ को ससुद्धत करने की एक ईश्वरवादी अनेक आचार्यों ने परिष्कृत और सज्ज धर्म प्रकाशित किए हैं और अनेक लोग इन मार्गों में द्रोक्षित हैं। किन्तु हम लोगों में भी वाह्यवेष ब्राह्मण्य और आचार विचार वा परिनिन्द्यादि भाष्य ऐसे समा गए हैं कि उन का धर्म किसी काम नहीं आता। या तो ईश्वरवादी हिन्दुमताज से सम्पूर्ण बहिष्कृत हो जायेंगे या कर्ममार्ग से ऐसे दृब जायेंगे कि नाम मात्र के भक्त रहेंगे।

इसी विषमता को दूर करने को इस ग्रन्थ का आविर्भाव है। इस में मुक्त कण्ठ से कहा गया है कि केवल प्रेम परमेश्वर का दिव्य मार्ग है। यद्यपि यह ग्रन्थ वैष्णवों के श्रेणी पर लिखा गया है किन्तु परमेश्वर के भक्तमात्र के हेतु यह लक्ष्य है। क्रिस्नान आदि विदेशी धर्मों में जो जन समझे कि कृष्ण उन के निर्गुण परमेश्वर का नाम है, वैष्णवों को तो कुछ बात ही नहीं है, शैव कहें कि विष्णु शिव ही का नामान्तर है, ब्राह्मण समझें कि हरि ब्रह्म ही को कहते हैं, उपासना और आर्य समाज इसे अपना ही तत्व मानें, सिद्ध

इसमें गुरु का पथ देखें और ऐसे ही भक्ति मार्ग वाले मात्र सब लोग इसकी अपनी निज सम्पत्ति समझें। इससे कोरे कर्म मार्गी वा बहु भक्त वा स्वयं ब्रह्म लोग यदि सुभा की गान्धी भी देंगे तो मैं अपने को कृतार्थ समझूंगा।

लोगों को उचित है कि इस ग्रन्थ को देखें। निश्चय रखें कि परमेश्वर को पाने का पथ केवल प्रेम है। और बातें चाहे धर्म की हों या लोक की दोनों वेड़ी ही हैं। बिना श्रद्ध प्रेम न लोक है न परलोक। जिस संसार में परमेश्वर ने उत्पन्न किया है जिस जाति वा क्षुद्रुष्य से तुम्हारा सख्य है और जिस देश में तुम हो उससे सहज सरल प्रेम करो और अपने परम पिता परम गुरु परम पूज्य परमात्मा प्रियतम को केवल प्रेम से दूँदो वस और कोई साधन नहीं है।

हरिश्चन्द्र ।

समर्पण ।

नाथ !

आज बहुत दिन पर कुछ कहने चले हैं० कुछ कहते कहां से वैसा चित्त रहता तब न कहते। क्या आप से कुछ छिपी है। भला आप से क्या आप तो ००००० हैं आप के लोगोंही से न छिपेगी। बोल चाल ही से मालूम पड़ेगी। प्यारे ! ऐसा क्यों ? हम हजार बुरे बुरे बुरे लाख दफे बुरे पर आप तो भले ही न ? फिर क्यों ? क्या हमारी करनी पर गए ? तब तो ही चुकी। भला ध्यान तो कीजिए हम से वा किसी से भी आप से तुलना क्या ? हाय ! तुलना क्या कुछ बात ही नहीं। हरे ! हरे ! जो आप अपने बड़ाई देखिए तो हम क्या बड़े २ क्या हैं। पर ऐसी तो नाथ ने आज तक कभी की नहीं यह नई क्यों होती है। नाथ ! अपनाए की लाज तो हम पामरों की होती है तो बड़ों की क्यों न हो, और फिर जो जितना बड़ा वैसी ही उस की दयालुता भी बड़ी तो फिर आप को कृपा का क्या पूछना है। पर हाय क्या हमारे अपराध उस दया से भी बड़े निकले। प्यारे ! क्या इसी दशा में रहें ? नाथ ! क्या वे दिन अब दुर्लभ ही जायेंगे। हाय ! उन पवित्र आसुओं से क्या अब हृदय नहीं सिंचित होगा। क्या वे सर्व चिन्ता विस्मारक प्रियाभाप अब कार्य रत्नों को फिर न पूर्ण करेंगे। क्या वे दिन अब इस जीवन में निश्चन्दे दुर्लभ ही गए। तो फिर ऐसे जीवन ही से क्या ? हम जीवन की आशा ही क्यों करते हैं। केवल जनम भर पाप कमाने और आप को और अपने को झूठ बदनाम करने को। धिक् ! ऐसे जीवन पर। हम तो इस की आशा इसी से करते थे कि दिन दिन हमारी चित्त वृत्ति लज्जित होगी और दिन दिन प्रेमानन्द बढ़ेगा इस हेतु नहीं कि प्रबाह रज्जु में इस दिन दिन और जकड़ते जायेंगे और केवल जीवन भार ढो कर संसार में निरत हो कर अन्त में आप के कहना कर भी वैसे ही डूबेंगे जैसे तुम्हारे बिना संसार डूबता है। जीवन का परम फल तुम्हारे अमृत मय प्रेम है यदि वही नहीं तो फिर यह क्यों ? क्या संसार में कोई ऐसा है जिससे प्रेम करें। जो फल आज सुन्दर कोमल हैं और जो फल आज सुखादु हैं, पर कल न इन में, रंग है न रूप न खाद, सूखे गले मारे मारे फिरते हैं भला उन से अतुराग ही क्या ? प्रेम की तो हम चिरस्नाई किया चाहें यहां प्रेम पात्र ही स्थाई नहीं। तो चलो वस ही चुकी फिर इन से प्रीति का फल ही क्या ? फल शब्द से आप कोई बांका मत समझिएगा। प्रेम का यह सहज स्वभाव है कि वह प्रत्यक्ष चाहता है सो यहां दुर्लभ है। हम ने माना कि ऐसे भी सत् लोग हैं जो प्रेम का प्रत्यक्ष दे वड भी तो परिणाम दुःख स्वरूप ही है। "संयोगविषयो भान्ताः"

कहा ही है। तो जिस के परिणाम में दुःख है वह वस्तु किस काम की। फिर उस दुःख में जीवन की कौसी बुरी दशा होगी। तो ऐसे प्रेम ही से क्या और जीवन ही से क्या इसी से न कहा है “ जैसे उड़ि जहाज को पच्छी फिर जहाज पर आवै। ” और जाय कहां। तो देखो संसार से यह कितना उदासोना है जिस को तुम्हारे प्रेम का लेश भी है। तो नाथ। जो फिर उस उत्तम जीव को इसी संसार के पंक में फंसायो तो कैसे बने। हम न माना कि हमारी कारनी वैधी नहीं। हाय। भला यह किस मुंह से और कौन कह सकता है कि हम इस के योग्य है पर अपनी और देखो। नाथ। भ्रम नहीं सही जाती। ज्ञानिम. प्रेम. परायण और स्वार्थ. पर. संसार से जो भ्रम बहुत ही घबड़ता है। सम तुम्हारे ज्ञेह के वाधक ही है बाधक कोई नहीं, और जो स्वार्थ पर नहीं है वे बिचारे भी क्या है कि कुछ सन्तोष देगे, हाय। क्या करें। हार कर के खेह कर के जैसे हो जैसे तुम्हारे ही शरण जाते हैं और वहां से भी दुरदुराए जायं तो फिर क्या करें। अंत हो गई नाकों में दम आ गई भ्रम नहीं सही जाती। इस चम्बित चम्बण को कम तक चवायं। सच कहते हैं भ्रम किसी को बात भी नहीं सुझाती। यद्यपि चित्त परबंस हों कर दिन २-३ काटा फंसता जाता है और संसार का और अपने जीवन का मोह बढ़ता ही जाता है पर साध ही जो भी ऐसा भिचता जाता है जिस का कुछ कहना नहीं। धन के विषय में भी वैसा ही कोजिए। सारे संसार को दिव्या-इए कि हमारे यों डंका दे कर इस संसार रूपी शत्रु दुर्ग से निकलते हैं और मेरा भी मान रख कोजिए। हे नित्यनूतन धन नित्य नव. प्रेम बरसाइए।

हाय। आज इसने आप को कितना कष्ट दिया और कितना बके। जसा भी तो कितने दिन से हो रहा था। और फिर बके किस के प्रागे। बकने ही से तो कुछ सन्तोष होता है। जाने दीजिए। देखिये यह आप के लीगों का सर्व्वज्ञ है इसे अंगीकार कोजिए। भला कहां परम पथिल अष्टमसय प्रेम मार्ग कहां हमारे पामर बुध। पर क्या हुआ। ऐसी वचस बातें जो मुंह से निकली हैं यह हमारे करतूत नहीं है तुम ने कही है। शिव वा नारद कौन हैं? आप ही। यद्यपि जब बुझ जाय तब काठ का काठ है पर जब तक अश्वि के संग से दहकता रहे काठ भी आग ही काइलाता है। शराबी को कोई ज्ञाति नहीं होती है। थोड़ी शराब पीये तो शराबी बहुत पीये तो शराबी। इसे वाते इतना बके हैं। इसे सुन कर प्रसन्न होना सुधारना इस का प्रचार करना यह सब तुम्हारा और तुम्हारे जनों का काम है हमारी तो कर्त्तव्यता इतनी ही थी कि निवेदन कर दिया।

चैव शुक्. प्रसं० १८३२। 7

आप का हरिश्चन्द्र।

श्री तदीयसर्वस्व ।

भाक्तभूव का वृषज्ञाप्य ।

दोहा ।

भरित नेह नव नीर निते, वरसत सरस अथोर ।
जयाति अपूरव घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥
करि करुना लखि जग. विमुख, कियो प्रेमः पय चारि ।
जय बल्लभ न्नव गोपिका, प्रीति कृष्ण अवतारु ॥
जिहि लहि कि कलु लहन काँ, आस न चित मै होय ।
जयति जगत पावन करन, कृष्ण वरन यह दोय ॥

१ ॐ अथातो भक्तिं व्याख्यास्यामः ।

अब हम यहाँ से भक्ति की व्याख्या करते हैं । १ ।

उप शब्द मङ्गल वाचक है । अतः शब्द से नारद जी अपने कहे हुए पूर्वोक्त वाक्यों को व्यावर्तन करते हैं । और इन सूत्रों के द्वारा प्रतिज्ञा पूर्वक भक्ति शास्त्र का व्याख्यान आरंभ करते हैं ।

२ ॐ सा कस्मै परमप्रेमरूपा ।

वह ईश्वर में परम प्रेम रूपा है । २ ।

सा नाम पूर्वोक्त भक्ति कस्मै नाम सदा प्रश्नात् ईश्वर में परम प्रेम रूपा अर्थात् साधनान्तर शून्या है कि शब्द से ईश्वर का ही बोध होता है क्योंकि ईश्वर में सदा प्रश्न बनाही रहता है । “ नैकः सर्वः सवः कः कि ” विष्णु सहस्र नाम में भगवान के नाम है क्योंकि वेद ईश्वर के विषय में ‘नेतिनेति’ बोलते हैं ।

३ ॐ अमृत रूपा च ।

और अमृत स्वरूपा है । ३ ।

अमृत नाम मधुर है और मोक्ष स्वरूप है क्योंकि जो भक्ति रत हैं उनको मोक्षांतर की अपेक्षा नहीं होती ।

४ ॐ यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृती-
भवति तृप्तो भवति ।

जिसको पाकर मनुष्य सिद्ध होता है और अमृत होता है और तृप्त होता है । ४ ।

यत् अर्थात् भक्ति स्वरूप अमृत को पाकर सिद्ध नाम साधनांतर निरपेक्ष और अमृती भवति नाम स्वयमानन्द रूप होता है मृत्यु से निडर हो जाता है तृप्त अर्थात् एतत् व्यतिरिक्त इस या परलोकगत सुखविषयक निरीच्छ होता है ।

५ ॐ यत्प्राप्य न किञ्चिद्वाञ्छति न शोचति
न द्वेष्टि न रमते नोत्साही भवति ।

जिसको पाकर (मनुष्य) फिर न किसी को चाहता वा (किसी हेतु) शोक करता, वा (किसी का) द्वेष करता वा (किसी में) रमता वा (किसी विषय का) उत्साह करता है । ५ ।*

क्योंकि पूर्वोक्त बातों का मुख्य कारण मन है परन्तु जब वह इसने भक्ति से किसी (परमेश्वर) को अर्पण किया है तो उसके अभाव से ये बातें आप न होंगी क्योंकि कार्य कारण के बिना नहीं हो सकता ।

६ ॐ यज्ज्ञानान्मत्तो भवति स्तब्धो भवत्या-
त्मारामो भवति ।

जिसको जानकर पागल हो जाता है स्तब्ध हो जाता है और आत्माराम हो जाता है । ६ ।

* कोष्ठ में दिये हुये शब्द पूर्व सुद्धित मूल वृत्ति में नहीं हैं ।

भक्ति का स्वरूप यह कर सूत्र में फल कहते हैं। कि उस भक्ति का स्वरूप जान करके मनुष्य मत्त अर्थात् पागल होजाता है ' जड़ोन्मत्तपिशाचवत् ' निशम्य कर्माणि गुणान्तुल्यान् वीर्याणि लीलातनुभिः कृतानि । यदातिहर्षोत्पुलकाश्रु गद्गदं प्रोत्कण्ठ उद्गायति रीति नृत्यति । यदा ग्रहग्रस्तइव काचिद्धसत्या क्रंदते ध्यायति वंदते जन् ॥ मुहुःश्वसन् वक्ति हरे जगत्पते नारायणेत्यात्मगति र्गतत्नपः । तदा पुमान् मुक्तसमस्तबंधनस्तद्भावभावानुकृताशयाकृतिः ॥ निदग्धवीजानुशयोमहीयसा भक्ति-प्रयोगेण समेत्यधोक्षजम् ॥ श्रीमद्भागवत में परम भागवत श्री प्रह्लाद जी ने दैत्य पुत्रों को उपदेश करती समय भक्तों की वर्णन में ये तीन श्लोक कहे हैं । (यहाँ यह भी बात समझनी चाहिए कि ये असुर बालक उपदेशपात्र नहीं थे तथापि भक्त जनों के चित्त में जो प्रेम का उमङ्ग आता है तो पात्रापात्र का विचार नहीं करते) भक्त जन भगवान के अनेक लीलार्थ धारण किए हुए स्वरूपों के कर्म और अतुल्य गुण और वीर्यों को सुन कर जब अत्यन्त हर्ष से रोमांचित अश्रु से गद्गद कण्ठ हो जाते हैं तब बड़े ऊँचेस्वर से गाते रोते नाचते हैं कभी भूत लगे हुए मनुष्यों के समान हंसते हैं और चिह्नाते हैं कभी बारंबार लंबी सांस लेते हैं कभी तादात्म्य गति से ' हेहरे, नारायण, जगत्पते, ' आदि नाम कर्तिन लज्जा छोड़ के करते हैं । जब ऐसी गति हो जाती है तब मनुष्य सब बन्धनों से छुट कर भगवद्भाव ही के भाव, वही अनुकरण. वही चेष्टा, वही आशय, वैसी ही आं-कृत्यादि करने लगता है और अपने प्रेम से सुकर्म दुष्कर्मों के बीजों को जला कर अपने परम भक्ति से भगवान को प्राप्त होता है ।

तो परम भक्ति प्राप्त होने का यही लक्षण है कि मनुष्य पागल हो जाता है और स्तब्ध हो जाता है अर्थात् उसको लोक और वेदभूत प्रेत देवता इत्यादि किसी को मानना वा किसी को नमस्कार वा किसी का किसी रीति आदर करने की आवश्यकता नहीं रहती, और आत्माराम हो जाता है अथात् संसार के विषयों में प्रीति छोड़ आत्माराम अर्थात् ईश्वर ही में सदा-रमण करता है ।

पंजिना अनुवाक समाप्त हुआ ।

७ ॐ सा न कामयमाना निरोधरूपात् ।

वह (भक्ति) कामना के अर्थ नहीं होती क्योंकि (यह) निरोध रूपा है ७ ।

जो कामना के लिए की जाती है वह भक्ति नहीं वह लोक व्यापार है, जब श्री नृसिंह जीने श्री प्रह्लाद जी को वर मांगने के हेतु कहा तब उन्होंने ने भी यह उत्तर दिया कि हम ने आपसे व्यापार नहीं किया भक्ति किया । जो सेवक होकर सेवा के बदले में सेव्य से कुछ चाहे वह सेवक नहीं किन्तु व्यापारकारी बनिया है, और यदि आप वर देना चाहें तो यही दीजिए कि 'हमारे मनमें किसी वर वा राज्य भोगादि वांछा की उत्पत्ति ही न हो.' भगवान ने श्री मुख से भी यही आज्ञा किया है " नमव्यावेशिताधियां कामः कामाय कल्प्यते । भजिता कथिता धाना भूयो बीजाय नेष्यते " ॥ जिन लोगों का चित्त हमारे में शुद्ध रीति प्रतिष्ठित है उनके काम कामना के अर्थ नहीं होते क्योंकि भूने और कूटे वा पकाये धान फिर नहीं उगते ।

इस सूत्र से विषयजन्य प्रेम का भी निवारण किया, इसे लोग संसार विषयियों के इन्द्रियजन्य सुख वा और किसी इच्छा से की हुई प्रीति को हम किसी पर प्रेम करते हैं यह कह कर इस प्रेम शब्द को लजित न करें, क्योंकि प्रेम तो सर्वदा कामनायुक्त है ॥

कामना ही के निवृत्ति के अर्थ कहते हैं कि वह भक्ति निरोध स्वरूपा है ती जब चित्त निरुद्ध होगा तो उस में कोई कामना आपही न होगी ।

भक्तिमार्गीय परमाचार्य श्री श्रीवल्लभाचार्य महा प्रभ ने अपने ग्रंथ निरोध लक्षण में लिखा है, 'अहं निरुद्धो रोधेन निरोधपदवी गतः । निरुद्धानां तु रोधा निरोधं वर्णयामि ते ॥ हरिणा ये विनिर्मुक्तास्ते मन्नाभवसागरे । ये निरुद्धास्तएवात्र मोदमायात्पहर्निशं' ॥ आप आज्ञा करते हैं मैं रोध से निरुद्ध हं और निरोध की पदवी को प्राप्त हो चुका हूं तथापि निरोधाविकारियों के निरोध के अर्थ निरोध का वर्णन करता हूं, फिर आप आज्ञा करते हैं कि जिन को भगवान ने छोड़ दिया है वे संसार में डूबे हुए हैं और जिनको उस ने निरुद्ध किया है वही अहर्निश परमानन्द प्राप्त करते हैं, इस वाक्य से यह दिखाया कि निरुद्ध होना स्वसाध्य नहीं है जिनको वह [ईश्वर] चाहता है निरुद्ध करता है, नहीं तो उसे

छोड़ देता है । मनुष्य का बल केवल उन्नत मार्ग पर प्रवृत्त होना है परन्तु इससे रोग न होना चाहिये कि जब अंगीकार करना वा न करना उसी के आधीन हैं तो हम क्यों प्रयत्न कर हमारे हेतु करने पर भी वह अंगीकार करे वा न करे ऐसी शंका कदापि न करना । क्योंकि आचार्य आज्ञा करते हैं कि “ ह्यिदमनान् जनान् दृष्ट्वा कृपायुक्तोयदा भवेत् । तदा सर्वं सदानन्दं हृदिस्थं निर्गच्छते वहिः ॥ सर्वानन्दमयस्थापि कृपानन्दः सुदुर्लभः । हृद्गतः स्वगुणान् श्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान् तस्मात्सर्वं परिलय्य निरुद्धैः सर्वदा गुणाः । सदानन्दपरिर्गयाः सच्चिदानन्दता लतः । ” जनों को हेशित देख करके जब वह कृपायुक्त होता है तब सर्व सदानन्द रूप बाहर और अन्तः प्रगट कर देता है सर्वानन्दमय जो भी उस के कृपाकाशानन्द दुर्लभ है परन्तु हृदय में बैठा हुआ जब अपने गुणों को सुनता है तो अपने कृपानन्द से लोगों को भिन्नो देता है इस हेतु और सब बन्देड़ा छोड़ कर सदानन्द पर निरुद्ध लोगों को उसका गुण सदा गाना चाहिए । उसमें सच्चिदानन्द का आप से आप प्रागज्य होता है । अर्थात् नियम है कि जो सब परिलया करके उसका भजन करेंगे उनको वह निरुद्ध करके परमानन्द दान कर्हेगीगा । यही उम की प्रतिज्ञा भी है “ कोतेय प्रतिजानीति न मे भक्तः प्रणश्याति । तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ” ॥ इस से उस के वाक्य पर विश्वास रख कर निरुद्ध होना चाहिए ।

निरोध छः प्रकार का है अर्थात् छः प्रकार ; भावना ईश्वर में करने से मनुष्य निरुद्ध होता है यथा प्रथम ‘ भीतिभावनिरोध ’ अर्थात् संसार के दुःखों से भय भीत होकर ईश्वर में अवलम्ब करना. दूसरा “स्वामिभावनिरोध” अथान् ईश्वर को संसार का स्वामी मान कर दास भाव से निरुद्ध होना. तीसरा “ सर्व-भावनिरोध ” अथान् ईश्वर को ‘ वासुदेवः सर्वमि-समहात्मा सुदुर्लभः ’ इम वाक्य के अनुसार छोटे बड़े चेतन सब को ईश्वर मान कर नमस्कार करना और सब ज्ञान पर उसी को देखना. वा स्वामी माता पिता मित्र. सब भाव से ईश्वर ही का भजन. चौथा “ सख्यभावनिरोध ” अर्थात् ईश्वर ही को सखा मान कर निरुद्ध होना. पांचवां “ वास्तव्यभावनिरोध ” अर्थात् श्री गन्द यशोदादिक ब्रज के बड़े छोटे गोप गोपियों के वा इनके सट्टण और किसी के भाव समान ईश्वर में पुत्रवत् जेह करना. छठा “ कान्तभावनिरुद्ध होना ” इश छं निरोधो में पूर्व पूर्व से उत्तर उत्तर अधिक है ।

८ ॐ निरोधस्त लोकवेदव्यापारसंन्यासः ।

निरोध तो लोक, वेद व्यापार का त्याग करना* है । ८ ।

इस सूत्र में निरुद्ध होने का स्वरूप कहते हैं कि लोक और वेद के व्यापार का छोड़ देना ही निरोध है ।

९ ॐ तस्मै अनन्यता तद्विरोधिषूदासीनता च ।

और उसमें अनन्यता और उसके विरोधियों पर उदासीनता भी निरोध है । ९ । *

अर्थात् बिना अनन्यता हुए निरोध की सिद्धि नहीं होती ।

१० ॐ अन्याश्रयाणां त्यागोऽनन्यता ।

अन्य आश्रयों का त्याग करना अनन्यता है । १० ।

लोक में यह प्रत्यक्ष है कि स्वामी को सेवक, मित्र को मित्र, पुरुष को स्त्री वही प्रिय होगी जो अनन्य हो 'अनन्याश्चिन्तयन्तो मामित्यादि' श्रीमद्वाक्य भी है, व्यास सूत्र में भी 'अनन्याधिपातिः' ईश्वर का गुण लिखा है ।

११ ॐ लोके वेदेषु तदनुकूलाचरणं तद्विरोधिषूदासीनता ।

लोक और वेद में श्रीमद्भगवदनुकूलाचरण करना यही 'तद्विरोधिषूदासीनता' है । *

* ८ पूर्व सुद्धित सूत्र वृत्तिमें संन्यास शब्दका अर्थ 'सकोडलेना' किया है ।

* ९ पूर्व सुद्धित सूत्रवृत्ति में इसका अर्थ यों है—'और भगवान् में अनन्यता और उस अनन्यता के विरोधी कर्मों में उदासीनता है ।'—

* ११ पूर्व सुद्धित सूत्रवृत्ति में यह अर्थ है—'और लोक या वेद में केवल उन्ही (प्रेमपात्र) के अनुकूल आचरण करने से इस अनन्यता के विरोधी कर्मों में उदासीनता प्राप्त होती है ।'

अर्थात् जब हमने उनके अनुकूल ही सब आचरण किए तो तद्विरोधियों में सदासीनता भावही आ गई क्योंकि तदीय होनेही से भिनके सब पुरुषार्थ पूर्ण होगए हैं और सब मङ्गलामङ्गल नष्ट होगए हैं उनको कार्यान्तर करने की आश-
 ष्यकता ही नहीं तो उनके वैदिक वा लौकिक कार्य आपही निवृत्त होगए । ११।

१२ ॐ भवतु निश्चयदाढ्याद्भूङ्क्व शास्त्ररक्षणं ।

निश्चय को दृढ़ होने को पहिले शास्त्र रक्षण * होय । १२।

क्योंकि श्रीमुख से आप ने आज्ञा किया है “ त्रैगुण्यविययावेदा नित्त्रैगुण्यो भवाङ्गुन । निर्द्वन्द्वो नित्य सत्स्यो नियोगक्षेम आत्मवान् ॥ यावानर्थ उदपाने संश्र्वेतः संप्लुतोदके । तावान् सध्वैषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ कर्मण्येवाधि कारस्ते मा फलेषु कदाचन । माकर्मफलहेतुर्भूर्मातेसंगोस्त्वकर्मणि ॥” हे, अङ्गुन वेद त्रिगुण वियथ हैं तू तो तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग होकर निर्द्वन्द्व और अपने स्वल्प में स्थित हो और अपने योग क्षेम की चिन्ता मत कर । परन्तु जब तक तेरे हृदय में-अर्थों की तरंग उठती है तब तक तेरा सब वेदों में ज्ञात ब्राह्म ण के (कहे) अनुसार कर्म में अधिकार है वहां भी कर्म के फल मे तेरा अधिकार नही इसमे न तो तू फलों की इच्छा कर और न अकर्मों हो । तो जब तक कामना की तरंग चित्त में उठती हैं और जब तक अनन्या भक्ति दृढ़ नहीं हुई है तब तक वेद मानी फिर छोड़ दे ।

१३ ॐ अन्यथा पतित्याशंकया ।

अन्यथा पतित होने की शंका है । १३ ।

अर्थात् जो सिद्ध होने के पहिले कर्मों को छोड़ दे और न यह सिद्ध हो न वह तो व्यर्थ पतित हो जाता है परन्तु भगवत्कर्म करता हुआ अन्य कर्मों से च्युत जो सिद्ध न होगा तो भी उस जीव का नाश नहीं हैं और जीव का कल्या-
 ण है, जड़भरतजी का उदाहरण इस में प्रमाण है, क्योंकि उन्होंने अपने मुख से कहा है, “ अहं पुरा भरतोनाम राजा विमुक्तदृष्टश्रुतसंगबंधः । आराधनं भग-
 वत ईहमानो मृगोभवं मृगसंगाद्धतार्थः ॥ सा मां स्मृतिर्भृगुदेहेपि वीरकृष्णार्चनप्रभवा नो अहाति । अतो ह्यहं जनसंगादसंगोविशंकमानो विवृतश्वरामि ” श्रीमुख से भी

* १२ अर्थात् शास्त्र के कड़े हुए कर्मों का असुष्ठान ।

आप ने भागा किया है “ पात्रं निवेद नायुत्र विनाशस्तस्यविद्यते । नहि कल्याण-
कृत् कश्चिद्गतिं तात गच्छति ” इत्यादि ।

१४ ॐ लोकोपि तावदेव किंतु भोजनादि व्यापारस्त्वाशरीरधारणावधि ।

श्लोक (श्लोकव्यवहार) भी तभी (अर्थात् निश्चय ही के
पूर्व) तक है किन्तु भोजनादि व्यापार तो जब तक शरीर
है तब तक है । १४ । *

इस में कितने लोग ऐसी शंका करते हैं, वरख हंसते हैं कि जब खाना
पीना आदि व्यवहार छूटना ही नहीं तो कर्म छोड़ देना यह प्रयुक्त है । परन्तु
इसी शंका के निवारणार्थ यह सूत्र है, भोजनादिव्यापार शरीर रक्षार्थ हैं और
जब तक शरीर है तब तक अवश्य कर्तव्य है । इनको जो छोड़ना हो तो विष
खाके एक साथही न मर जाना । हां तदीयों को उन भोजनादि व्यापार की
चिन्ता करनी अवश्यही नहीं चाहिए और जो कर्मोंका कहो तो कर्मों का त्याग
अनन्यता की पुष्टि के हेतु है, क्योंकि विना निःसाधन हुए मनुष्य अनन्य नहीं
होता । हम से यह सिद्ध हुआ कि जब तक निश्चय न हो तब तक लोक और वेद
दोनों मानना परन्तु जब निश्चय दृढ़ हो जाय और कामनाओं की निवृत्ति हो
जाय तब लोक और वेद दोनों छोड़ कर केवल “कृष्णएव गतिर्मम” यह उच्चा-
रण करना । श्री विष्णुस्वामी मत के बीजधारक श्री विद्व मंगलचार्य ने भी
यही कहा है ।

“संध्यावंदन भद्रमस्तु भवते मोक्षान तुभ्यं नमः ।^१ भोदेवोः पितरश्च-तर्पण-
विधौ नाहं क्षमः क्षम्यतां ॥ यत्र कापि निषद्य यादवकुलोत्तंसस्य कंसद्विषः ।
स्मारंस्मारमघं हरामि तदलं मन्ये किमन्येन-मे ” ॥

द्वितीय अनुवाक समाप्त हुआ ।

† १४ कोष्ठ में दिया हुआ विशेष सूत्रवृत्ति मे है ।

१५ ॐ तल्लक्षणानि वाच्यन्ते नानामतभेदात् ।

उम (भक्ति) के लक्षण विविध मत भेद से वर्णन किए जाते हैं ॥ १५ ॥

इस सूत्र में एक शंका है कि सूत्र का लक्षण 'स्वल्पाक्षरमसंदिग्धम्' ऐसा है । सूत्रों में कोई बात व्यर्थ न होनी चाहिए यहाँ लक्षण तो आपही कहेंगे तो इस सूत्र की क्या आवश्यकता थी । ऐसा नहीं यह सूत्र इस अर्थ का प्रतिपादक नहीं है कि हम आगे उस के लक्षण कहेंगे वरन ऐसी प्रतिज्ञा है कि संसार में इस प्रेम को लोग अनेक मत से मानते हैं परंतु वास्तव में वह प्रेम नहीं है, प्रेम वही है जो ज्ञान में बहा जायगा, जैसा स्त्री पुरुष का कामनार्थ प्रेम वा अन्य किसी प्रकार की त्रिगुणात्मिका देव भक्ति नहीं है । यद्यपि संसार में वह प्रेम कही जाती है और उनके अनेक प्रकार लोग लक्षण कहते हैं यही बात अग्रिम (इतुर्ध्व) सूत्रों में सिद्ध करेंगे ।

१६ ॐ पूजादिष्वनुरागइति पाराशर्यः ।

भगवत् पूजादिक में अनुराग, रूपा भक्ति यह (पराशर्य) श्रीव्यासदेव का मत है ॥ १६ ॥ ❀

क्योंकि अनेक पुराणों में तथा जैमिनिसूत्र के भाष्य में बहुत कर्म वितान की प्रशंसा की है और पूजनादि केवल प्रेम के साधन स्वरूप हैं फल रूप नहीं श्री महा प्रभु जी ने भी सेवा निर्णय में आज्ञा किया है 'कृष्णसेवा सदा कार्या मानसी सा परा मता' इत्यादि जीवों के असुरावेश, निवृत्त्यर्थ और मानसी सेवा सिद्ध्यर्थ बाह्य सेवा (पूजादि) हैं परंतु जब परम प्रेम होता है तब मानसी सेवा भी छूट जाती है ।

१७ ॐ कथादिषु ति गर्गः ।

कथादि में अनुराग गर्गाचार्य का मत है । १७ ।

अर्थात् भगवत्कथा श्रवण को मुख्य मान कर कथा में अनुराग करना यह नागद जी का मत नहीं है प्रेम की ऊकण्टा से जो भगवत्कथा में अनुराग हो वह ठीक है ।

१८ ॐ आत्मरत्यविरोधेनेति शाण्डिल्यः ।

आत्मरति के अविरोध से अलुराग शाण्डिल्य का मत है । १८ ।

शाण्डिल्य भक्तिसूत्र के तृतीयान्हिक के तृतीय सूत्र में मत दिखाते हैं 'ता-
मैश्वर्यपदा काश्यपः परत्वात्' 'आत्मिकपदा वादरायणः' 'उभयपदां शाण्डिल्यः शब्दो
पपत्तिभ्यां' । काश्यप का द्वैत और वादरायण का अद्वैत दिखाकर आप द्वैताद्वैत
अवलम्बन करते हैं । परन्तु द्वैत वा अद्वैत वा अद्वैत वा द्वैताद्वैत मत का
अवलम्बन कर के भक्ति को अपने पूर्व मत के आग्रह से अपनी दीक्षा वा सम्प्र-
दाय के अनुसार बलात्कार से (भक्ति) चलाना नारद का मत नहीं । जब मत-मतांतर
के बाद में बुद्धि अभिनिविष्ट हो जायगी तो तीव्र प्रेमलक्षणा भक्ति में अन्य
मनस्क होने से भेद पड़ जायगा इससे जिस भाव से निरोध हुआ हो उसी भाव
से प्रेम में प्रवृत्त होनाही नारद का मत है । यदि हमारा यह भाव है कि ईश्वर
एक हैं आनंदमय है हम उसके दासानुदास हैं हम से उससे कोई संबंध नहीं
तो उसी भाव से भक्ति करनी । और जो सर्व भाव हो तो सर्व भाव से भक्ति
करनी । द्वैताद्वैत भाव पर चित्त आरुढ़ हो तो उसी भाव से उपासना करनी
अर्थात् जीव ईश्वर के भेदाभेद के झगड़े में बुद्धि फसा कर प्रेम में बाधा नहीं
खालनी । वही वही बात अगले सूत्र से सिद्ध करते हैं ।

१९ ॐ नारदस्तुदत्तर्षिताखिलाचारता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति ।

नारद जी तो सर्व कर्म श्री हरि में अर्पण करना और
श्री हरि की विस्मृति होने में परम व्याकुल होना यही भक्ति
का लक्षण कहते हैं । १९ । *

* 'परन्तु नारद तो भगवान में सब आचारों का अर्पण कर देना और
भगवद्वियोग वा पूर्व संयोग वा लीला के जग मात्र भी भूक्तने में परम व्या-
कुल होने की भक्ति कहते हैं ॥ १९ ॥' यह सूत्र कर्त्त में अर्थ है ।

कर्म दो प्रकार के हैं, लौकिक, और पारलौकिक प्रेमियों के दोनों कर्म यहाँ लिखते हैं, पारलौकिक में भक्तोंको एतावन्मात्र कर्तव्य है कि अपने सब आचरणों को भगवान् में अर्पण करना. और लौकिक में इतना कर्तव्य है कि जब भगवद्विषेगजनित परमानन्द का हृदय से तनिक भी विस्मरण हो तब परम व्याकुलताहोनी. तो अलौकिक कर्म तो तत्समर्पण से निवृत्त हुए लौकिक में जब न्याकुलता का उदय होगा तो आपही सब काम छुट जायंगे इस से लौकिक और पारलौकिक-दोनों कर्मों की प्रवृत्ति से अलग होकर अनवच्छिन्न तैजसधारवत् सर्व-क्षण भगवद्वृत्ति में मग्न रहना, सर्वदा लीला का अनुभव करना, सर्वदा वियोग का अनुभव करना. किसी काम में लगे हों परन्तु चित्त उधरही रखना, जो वह ध्यान तनिक भी भूले तो एक संग न्याकुल होजाना यही भक्ति का लक्षण है।

२० ॐ अस्त्येवमेवं ।

ठीक ऐसाही है ॥ २० ॥ *

पूर्व कथित भक्ति लक्षण को इस सूत्र से अग्यस्थान में स्वकथित वा पर कथित अनेक विधियों के निरास पूर्वक मुक्त कण्ठ से प्रतिज्ञा स्वरूप स्थापन करते हैं। लोक में भी चाल है कि जो बात दो बेर कहते हैं उस पर अपनी पूर्ण दृढ़ता दिखाते हैं इस भाव से यहाँ भी यह सूत्र कहा है अथात् अब इसमें किसी शंका वा अवकाश नहीं।

२१ ॐ यथाव्रजगोपिकानां ।

जैसा व्रज की गोपियों का (प्रेम) है ॥ २१ ॥ *

लक्षण कहके उदाहरण में सब प्रेमियों की शिरोमणि स्वरूप श्री गोपीजन का नाम लेते है अथात् प्रेम का उदाहरण जैसा श्री गोपीजन ने दिखाया वैसा और कौन दिखावेगा। हई है लोक वेदकी कठिन लोह शृङ्खला कबे सूतसी और कौन तोड़ सकता है. जिन के भगवा भी सर्वदा ऋणी हैं उनकी महिमा कौन कह सकता है. श्रीमुखसे कहा है 'नपारयेऽहंनिरवय संयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषा-

* २० है भी ऐसाही ॥

* २१ जैसा व्रज के श्रीगोपीजन की है ॥

पि वः । यामाभंजन्दुर्जरगेहृद्गुह्यं संवृद्ध्यतद्वः प्रतियानु साधुना” । भगवान् श्रीगोपों जन से गले में पी त्वर डाल कर और हाथ जोड़ कर निवेदन करने हैं हे श्री ब्रजदेवियो मैं जो देवताओं की आयुष्य धारण करूँ और उस अनेक कल्प की आयुष्य से आप लोगों में से एक का भी प्रत्युपकार किया चाहूँ तो न कर सकूँगा । क्योंकि महादुर्जर घर की शृङ्खला आप लोगों के सिवाय और कौन तोड़ सकता है । अतएव मैं आप लोगों का सदा ऋणी हूँ । तो भगवान् का यह श्रीमुख वाक्य उन श्रीगोपीजनके प्रति जिन ने भगवान् के श्रीमुख कहे हुए रास प्रसंग के दश श्लोकात्मक भयादा स्थापन के वाक्यों को तृण सा भी नहीं माना कुछ आश्चर्य नहीं है । एक तो साधारण शास्त्र के वाक्य माननीय हैं दूसरे उस में भी भगवद्वाक्य तीसरे जब भगवान् प्रत्यक्ष अपने मुखारविन्द से आज्ञा करे तो ऐसा कौन होगा जो न मानेगा । पर एमें श्री गोपी जन ही हैं कि प्रेम मार्ग के विरुद्ध भगवद्वाक्य को भी न माना ।

भगवान् ने जब परम भागवत उद्भवजी को भक्ति वा उपदेश किया है वहाँ कहा है “रामेण सार्धं मथुरां प्रणीते श्वाफ्लिक मानस्यनुगक्तचित्ताः । गीढा-भावेन नमे त्रियोगतीव्राशयोन्त्यं ददृशुः सुखाय ॥ तास्ताः क्षपाः प्रेष्टतमेन नीता म-यैव वृन्दावनगोचरेण । क्षणार्द्धवृत्ताः पुनरंग तासां हीना मया वल्पसमा वभूवुः ॥ तानाविदन्मथ्यनुपंगवद्ब्रधियः स्वमात्मानमदस्तयेदं । यथासमाधौमुनयोन्धितोये नच-प्रविष्टास्त्र नामरूपे ॥” ब्रह्मा ने भी कह है “पाष्टिर्वर्षसहस्राणि तपस्तप्तं मयापुरा । नन्दगोप ब्रजस्त्रीणां पादरेणूपलब्धये ॥ अहोभाग्यमहे भाग्यं नन्दगोपव्रजौकसां । यन्मित्रं परमानन्दं ब्रह्मसनातनं ” ।

जब उद्भव जी को भगवान् ब्रज विदा करने लगे हैं वहाँ भी श्री गोपीजन का स्वरूप अपने श्री मुख से उद्भव जी को समझाया है. “तामन्मनम्का मत्प्राणाः मदर्थं त्यक्तद्वैहिकाः । ये त्यक्तलोकधर्मश्च मदर्थेतान्विभर्म्यहं ॥ मयि ताः प्रियसां प्रेष्टे दूरस्तेगोकुलस्त्रियः स्मरंतीं गं विमुह्यन्ति विरहौत्सव्यविह्वलाः ॥ प्रधारयंति कृच्छ्रे ण प्रायः प्राणान् कथंचन । प्रत्यागमनसंदेसैर्वैर्बल्योमे मदालिकाः ।” हे उद्भव उन गोपीजन ने मेरे में मन लगाया है मैंही उनका प्राण हूँ मेरे हेतु उनने अपने सब देह के व्यवहार छोड़ दिये हैं और जो लोग मेरे अर्थ लोक और

को छोड़ देते हैं उनको मैं धारण करता हूँ वे गोपियां उन के परम प्यारों से प्यारे मेरे दूर रहने से जब मेरा स्मरण करती हैं तो विरह की उत्कण्ठा से व्याकुल होकर अपने शरीर की सुध भी भूल जाती हैं, बड़ी कठिनता से और बड़े दुःख से मेरे विना किसी रीति प्राण धारण करती हैं, मेरे आने के संदेसे सुन कर जीती हैं। उन गोपियों का आत्मा मैं हूँ और वे मेरी हैं। इत्यादि ॥ जिन श्री गोपीजन से परम भागवत उद्धव जी ने भी कहा “अहो यूयं स्म पूर्णा-र्थाभवत्योलोकपूजिताः ॥ वासुदेवे भगवति यासामर्थापितं मनः ॥ दानव्रततपोयोग जपस्त्राध्यायसंयमैः श्रेयोभि विविधैश्चान्यैः कृष्णेभक्तिर्हि साध्यते । भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमाः । भक्तिः प्रवर्तितादिष्ट्यामुनीनामपि दुर्लभा । दिष्ट्या पुत्रान् पतीन्देहान् खजनान् भवनानि च । हित्वा वृणायुर्युयं यत् कृष्णाख्यं परमंपदम् । सर्वात्मभावो विकृतो भवतीनामधोक्षजे । विरहेण महाभागा महान्मेनुग्रहः कृतः ॥” इत्यादि, और जब श्री उद्धव जी ने अपने ज्ञान कथनानंतर श्रीगोपीजन का स्वरूप जाना है तब यही मांगा है कि हम श्री वृन्दावन में गुल्मलता हों, यथा “नायं श्रियो-गंजनितांततेः प्रसादः स्वर्योपितां नलिनगंधरुचां कुतो न्यः । रासोत्सवेऽस्य भुज-दंडगृहीतकण्ठलब्धाशिषां य उदगान् ब्रजबह्वधीनाम् ॥ आसामहोत्तरणरेणुजुषामहं स्यां वृन्दावने किमपि गुल्मलतौपधीनां । यादुस्यजं खजनमार्यपथं च हित्वा भेजुर्मु-कुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां ॥ यावै श्रियाचितमजादिभि रासकामैर्योगैश्चरैरपि यदा-त्मनिरासगोष्ठ्यां ॥ कृष्णस्य तद्भगवश्चरणारविदं न्यस्तं स्तनेषु विजहुः परिरभ्य तापं-॥” श्रीमहाप्रभु जी ने संन्यास निर्णय ग्रंथमें आज्ञा किया है कि श्री गोपी-जन प्रेम मार्ग की गुरु हैं, तथाच निरोध लक्षण ग्रन्थ में आप ने श्रीगोपीजन तथा ब्रज के गोपों का विरहानुभव प्राप्त होने की उत्कण्ठा दिखायी है । “यच्च दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले । गोपिकानां तु यद्दुःखंतद्दुःखं स्वयान्मम काचित् ॥ गोकुले गोपिकानां च सर्वेषां ब्रजवासिनां । यत्सुखंसमभूत्संन्मे भगवान् किं विश्वास्य-ति ॥ उद्धवागमेन जातउत्सवः सुमहान्यथा । वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि काचित् ॥” इत्यादि । और “गोपी प्रेमकी ध्वजा । जिन घनश्याम किए अपने वस उरधरि श्यामभुजा ” “ गोपीपदपंकजपरागकी जै महाराजरजकीजै आपुनेईगोकुला नगर को । ” “ येहरिरसओपीगोपीसबातियतैन्योरी । कमलनयन . गोविन्दचंद की प्राणपियारी । निर्मत्सरजेसन्ततिनकीचुडामनिगोपी । जेऐसेमर्यादमेदिमोहनगुनंगविं । क्योंनहिपरमानन्द प्रेमभक्तिसुखपार्वे ॥ ” “ अहोविधिनातोपैञ्चरापसारिमगो जनम

जनमदीजोयाहीप्रजवसिवो । अहीरकीजातिसमीपनंदधर घरीघरीघनश्यामहेरिहेरि हं-
सिवो ॥” “ बलिगुरुतज्यौकेतप्रजवनितन भईजगमंगलकारी ॥” इत्यादि श्रीसूर-
दासादिक परम अनुरागियों ने भाषा में भी श्रीगोपीजन का पवित्र यज्ञ वर्णन
किया है । परमअंतरंग श्री नागरीदास जी भी गाते हैं ॥ जयतिललितादिदेवीय-
ब्रजश्रुतिज्ञा कृष्णापियकौलिआधीरअंगी । युगुलरसमत्तआनन्दमयरूपनिधि सकल-
सुखसमयकी छांहसंगी ॥ गौरमुखहिमकिरणकीजुकिरणावली श्रवतमधुगानहियपि-
यतरंगी । नागरीसकलसंकेतआकारिणी गनतगुनगननिमतहोतिपंगी ॥” भवतु ! इन
श्रीगोपीजन के अगणनीय गुण कहां तक लिखें रसिक लोग स्वतः अनुभवकरेंगे ।

२२ ॐ न तत्रापि माहात्म्यज्ञानविरुद्ध- त्यपवादः ।

यहां भी माहात्म्य ज्ञान विस्मृति का अपवाद नहीं । २२ । *

जहां प्रेम है वहां माहात्म्य ज्ञान नहीं जहां माहात्म्य ज्ञान है वहां प्रेम नहीं-
परन्तु श्री गोपीजन में दोनों बातें थीं क्योंकि उनको भगवत् स्वरूप का ज्ञान
नहीं था यह शंका नहीं हो सकती । “ अस्त्रेवमेतदुपदेशपदेत्वयीशेप्रेष्टोभवांस्त-
नुभृतांकिलबंधुरात्मा ” ॥ ‘ व्यक्तभवान्प्रजभयातिहरोभिजातो ’ “ नखलुगोपि-
कानंदनोभवानखिलदेहिनामंतरात्मदृक् ” ॥ इत्यादि श्री गोपीजन के वाक्यों से
उनको माहात्म्य ज्ञान सिद्ध है ।

२३ ॐ तद्विहीनं जाराणामिव ।

उसके बिना जारों के समान है । २३ । *

अर्थात् जहां माहात्म्य ज्ञान नहीं है वहां की प्रीति जारों की सी होती है ।
यद्यपि भगवान में ज्ञान वा अज्ञान से की हुई प्रीति निष्फल नहीं जाती तत्रापि
यह लीला जहां पूर्ण प्रादुर्भाव है वहीं हैं परन्तु माहात्म्य ज्ञान पूर्वक भक्ति में
यह विशेषता है कि एक प्रस्तर में भी ईश्वर बुद्ध्या सत्य प्रेम करने से फल
दायिनी होती है ।

* २२ क्योंकि इनके ऐसे कठिन प्रेम में भी माहात्म्य ज्ञान भूतजाने का
अपवाद नहीं है ।

* २३ क्योंकि बिना माहात्म्य ज्ञानके प्रेम जारों कासा होता है ।

२४ ॐ नास्त्येवतस्मिन्तत्सुखसुखित्वं ।

उस में प्यारे के सुख से सुखी होना नहीं ही है । २४ *
क्योंकि जारों की प्रीति अपनी कामना के अर्थ है तो उस में तत्सुखसुखित्व
कहाँ से आवेगा । इति ।

तोसरा अतुवाक समाप्त हुआ ।

२५ ॐ सा तु कर्मज्ञानयोगेश्चोऽधिकतरा ।

वह (भक्ति) तो कर्म, ज्ञान और योग से भी
अधिक है ।

“तपस्त्रिभ्योधिकोयोगी ज्ञानिभ्योपि मतोधिकः कर्मिभ्यश्चाधिकोयोगी तस्मा-
द्योगी भर्तुः ॥ योगिनामपि सर्वेषां मद्भक्तेनांतरात्मना । श्रद्धावात् भजते यो मां
समे युक्ततमो मतः ” ॥ इन वाक्यों से भगवान् श्री मुख से ज्ञान और कर्म की
अपेक्षा योग को अधिक कह कर अपने भक्त को उससे भी अधिक कहते हैं
और भक्ति ऐसी है कि भगवान् मुक्ति देते हैं परन्तु भक्ति नहीं तथाहि “मुक्ति-
ददातिकर्हिचित्स्मनभक्ति योगं ” । तथा “ न साधयति मां योगो नो सांख्यधर्म-
उद्धव । न स्वाध्यायस्तपस्व्यागो यथाभक्तिर्ममोजिता ॥ भक्त्याहमेकयाप्राज्ञःश्रद्धया-
त्मप्रियःसताम् । भक्तिःपुनातिमन्निष्ठा इवपाकानपि संभवात् ” ॥ और भक्ति में
यह विशेष है कि कर्म ज्ञान और योग इन में अधिकारी अनधिकारी का बड़ा
विचार रहता है परन्तु इसमें किसी अधिकारी का काम नहीं श्री मुख वाक्य
प्रमाण है “ केवलेन हि भावेन गोप्योगावः खगामृगाः येऽन्ये मूढधियो नागाः सिद्धा
मामीयुरंजसा ॥

२६ ॐ फलरूपत्वात् ।

क्योंकि * (ये सब साधन और वह) फल रूप है ।

* २४—क्योंकि उंच में अपने प्रियतम के सुख से सुखी होना नहीं है ।

ज्ञानाभिमानी लोग कहते हैं कि भक्ति का फल ज्ञान है ऐसा नहीं* क्योंकि श्री भगवद्गीता में कहा है “अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहं । विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा नशोचति नकांक्षति । समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिलभते परा” ॥ ढई है संसार के सर्व प्रकार के साधन का फल केवल भगवत् कृपा है और वह बिना भक्ति सिद्ध न होगी तो दोनों प्रकार से भक्ति के बिना अन्य साधन व्यर्थ ही हुए ।

२७३ ईश्वरस्याप्यभिमानद्वेषित्वाद्दैन्यप्रिय-

त्वाच्च ॥

ईश्वर को भी अभिमान से द्वेषित्व है और दैन्य प्रियत्व है ॥ २७ ॥

अर्थात् कर्म ज्ञान और योग में उनके साधकों को अपने अपने साधन का अभिमान होता है तो उन से भगवान प्रसन्न नहीं रहता, ढई है वह तो निराश्रयों का आश्रय, निःसाधनों का साधन, दीनों का बन्धु, पतितों का प्यारा, और सर्व प्रकार से हीनोंका सर्वस्व है । जिन लोगों को अपने साधनों का बल है उनको क्यों वह पूछेंगा । सच्च है, जो स्त्री अपने सौन्दर्य के और जारों के बल से धन कमा लेती है उसे पति क्यों पूछेगा, जो बालक आप धनोपार्जन में समर्थ है उसे माता पिता क्यों भोजन देंगे, जो सेवक अपने गुण से अपना योग क्षेम चला लेता है उसके स्वामी को क्या शोच है । विशेष कर ईश्वर से स्वामी को जिसको सर्वदा दीन ही प्यारा है, उसके सामने तो जब अनन्य होकर सब साधन छोड़कर उससे कहोगे “सर्वसाधनहीनस्य परार्थीनस्य सर्वथा । पापापीनस्य दीनस्य कृष्णपदगतिर्मम” “हे नाथ ! मैं सब साधन से हीन हूँ और संसार के पचड़े में मग्न हूँ पापों से लदा हुआ हूँ और परम दीन हूँ अतएव हे नाथ ! हमारी तो तुमही गति हो क्योंकि मैं और किसी के सामने मुंह दिखाने के योग्य नहीं रहा, वेद कों कैसे मुंह दिखाऊँ, उनके वाक्यानुसार सर्वकर्मनर्ह और पतित हो रहा हूँ, लोक को भी नहीं मुंह दिखा सकता क्योंकि

* ‘ भक्ति ज्ञान से क्यों बड़ी है ’ लेख देखो

लोक में सब से मुख्य रक्षणीय लज्जाका त्याग कर चुका हूँ और लोक के साधनों से विहीन हूँ, हमारा तो और कोई शरण नहीं, महा निरवलम्ब हूँ, कोई हाथ पकड़ने वाला नहीं, अथाह समुद्र में डूबता हूँ, अब इस समय तुम्हारे सिवाय और कोई गति नहीं, मेरी तो तुमही गति ही” इत्यादि। तभी वह तुम्हारी ओर ध्यान करेगा, ऐसा श्रीमुख से भी कहा है “सर्वधर्मान्परित्यज मामेकंशरणं ब्रज । अहंत्वा-सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामिमाशुचः” ॥ सब धर्मों को छोड़ कर एक मेरी शरण आव मैं तुझे सब पातकों से दूर करूँगा शोच मत कर, और यह वाक्य भी कब कहा है जब सब गीता का उपदेश कर चुके हैं तब इसको ठीक देने के भाँति कहा है ।

और आप अपने मुख से अपने इस वाक्य का आग्रह दिखाते हैं “सर्व-गुह्यतमंभूयः शृणुमेपरमं वचः । इष्टोसिमेटदमतिस्ततो वक्ष्यामि तेहितम् ” और भी उद्धव जी प्रति श्री भगवद्वाक्य है “अकिंचनस्यदांतस्य शांतस्यसमचेतसः । मयासं-तुष्टमनसः सर्वाः सुखमयादिशः” ॥ “अज्ञायैवगुणान्दोषान् मयादिष्टानपिखकान् । धर्मान्संख्यज्ययःसर्वान् मांभजेत्ससत्तमः” ॥ तस्मात् त्वमुद्वोत्सुञ्ज्य चोदनां प्रति-चोदनां । प्रवृत्तं च निवृत्तं च श्रोतव्यं श्रुतमेव च ॥ ममेकमेवशरणमात्मानंसर्व-देहिनां । याहिसर्वात्मभावेन मयास्याःशुकुतोभयः ॥ नसाधयतिर्मायोगो नसाख्यं धर्मउद्धव । नसाध्यायस्तपस्यागो यथामक्तिर्ममोर्जिता ॥ भक्त्याहमेकयाप्राह्यः श्रद्ध-यात्माप्रियःसताम् । भक्तिःपुनातिमन्निष्ठा इवपाकमपिसंभवात् ॥ धर्मःसत्यदयोपेतो विद्यावातप्रसान्विता । मद्भक्त्यापेतमात्मानं नसम्यक्प्रपुनातिहि । कथं विना-रोमहर्षं द्रवताचेतसाविना ॥ विनानन्दाशुककल्या शुभ्येद्भक्त्याविनाशयः । वाग्गद्गदा द्रवतेयस्यचिचरुदलमीक्षणहसाति काचिद्वा ॥ विलज्जउद्गायतिनृत्यतेच मद्भक्तियुक्तो भुवनंपुनाति ” ।

तथा—नाहवेदैर्नतपसा नदानेननचेज्यया । शक्यएवंविधोद्भृष्टुं दृष्टवानसिमांय-था ॥ भक्त्याहमेकयाप्रायः अहमेवंविधोर्जुन । ज्ञातुंद्रष्टुं चतत्वेन प्रवेष्टुं चपरंतप ॥ इत्यादि ॥ इन वाक्यों को छोड़ कर भक्तों के दोनों लोक साधन के लिए उस की दृष्ट प्रतिज्ञा है “कौतैयप्रतिजानीहि नमेभक्तःप्रणयति ” “नरकादुद्धराम्यहं” “तान्विभर्म्यहं” “सोयंमेव्रतआहितः” योग क्षेमवहाम्यहं” “तेपामहंसमुद्धर्तौमृत्युसंसा-रसागरात्” इत्यादि ।

२८ ॐ तस्याः ज्ञानमेवसाधनमित्येके ।

उसका (भक्ति का) साधन ज्ञान ही है यह किंी
(आचार्य) का मत है ।

ऐसा नहीं हो सकता । गृत्र, अजामिल, गजेंद्र इत्यादि को किसने ज्ञान दिया है “केवलेनहिभावेन गोप्योगात्रःखगाःप्रगाः” येन्येनृद्विद्योनागाः सिद्धामामी-युरजसा ” भक्ति का साधन तो अपने चित्त का अंकुर और उनकी कृपाही है ज्ञान विचारा क्या साधेगा ।

२९ ॐ अन्योन्याश्रयत्वमित्यन्ये ।

दूमरोंका मत है कि भक्ति और ज्ञानसे परस्पर आश्रयत्व है ।

यह भी नहीं होसकता, जब मनुष्य किसी की भक्ति वा प्रीति कर लेगा तब उसके ज्ञान में क्या प्रवृत्त होगा, पानी पीके जात नगी पूछी जाती ।

३० ॐ स्वयंफलरूपतेतिब्रह्मकुमाराः ।

सनत्कुमारादि और नारद जी का मत है कि भक्ति स्वयं फल रूपा है ।

हई है, पहले भी वह आये हैं ।

३१ ॐ राजगृहभोजनादिपुट्टत्वात् ।

राजा का घर (दरवार) और भोजनादि में ऐसा ही देखा गया है ॥ ३१ ॥

पूर्व कथित फल रूपता का उदाहरण दिखाते हैं ।

३२ ॐ नतेनराजपरितोषेक्षुधाशान्तिर्वा ।

न उससे राजा का परितोष हीगा न क्षुधा मिटेगी । *
ज्ञान के फल रूप होने में दोष दिखाते है कि एक मनुष्य को किसी

* ३२ क्योंकि केवल राजा के जान लेनेही से न राजा का परितोष होता है न केवल भोजन को वस्तुके ज्ञानमे भूख मिटती है (किन्तु उनके सेवन से)

राजा का स्वरूप ज्ञान बहुत अच्छा है पर इससे क्या ? वह राजा बिना अपनी भक्ति कियेही उसे कुछ देगा वा कुछ भोजन रखेगा है हम को उसके स्वरूप का पूर्ण ज्ञान है कि इसमें पूरी है और वह आटा घी जल और अग्नि के संयोग से बनी है पर क्या इस ज्ञान ही से भूख मिट जायगी ? कदापि नहीं । वैसाही भगवान को केवल जानकर कभी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि वह अपने स्वरूपों पर किस नाते दत्त चित्त होगा ? अतएव अगले सूत्र में फिर से आग्रह दिखाते हैं ।

३३ ॐ तस्मात्सैवग्राह्यानुमुक्षुभिः ।

इस कारण मोक्ष की इच्छा करनेवाले उसी (भक्ति) का ग्रहण करें ।

जो अपना कल्याण करना चाहे तो इस सूत्र को कान खोल कर सुने और विश्वास करे ।

चौथा अनुवाक समाप्त हुआ ।

३४ ॐ तस्यास्साधनानिगायन्त्याचार्याः ।

उस (भक्ति) के साधन आचार्य्य कहते हैं ।

पूर्वोक्त सूत्रों में भक्तिही मुख्य है ऐसा कह अब उसके साधन दिखाते हैं ।

३५ ॐ तसुविषयत्यागात्सङ्गत्यागाच्च ।

वह (भक्तिसाधन) *तो विषय त्याग और संगत्यागसे होता है ।

जो कहो कि हम विषय और संग में लगे हुए भी सिद्ध हो जायगे तो यह नहीं हो सक्ता क्योंकि श्री महाप्रभु जी ने अपने ग्रंथ बालबोध में " जीवाः स्वभावतोदुष्टाः " इस वाक्य से जीव को स्वभावतः दुष्ट कहा है तो जीव को आसुरविषय होने में कुछ बिलम्ब नहीं लगता । श्रीहरिराय जी ने अपने ग्रंथ काम दोष निरूपण में इस विषय की किसी निन्दों की है, आप लिखते हैं " दोषेषु

* पूर्व सूत्रित सूत्र इति में तच्छब्द से भक्ति मानकर विषय त्याग वा संग त्याग से वह निवृत्त होती है सिद्धा है ।

प्रथमः कामो विविच्य विनिरूप्यते । यस्मिन्नुत्पद्यते तस्य नाशकः सर्वधामतः ॥
 विषयावेशहेतुत्वाद्भिक्षेपोत्पत्तिकारणं । रजोगुणप्रमुत्पन्नो रजःप्रक्षेपकोमुखे ॥
 ब्रह्मावेशविरोधी च सद्वृद्धेर्वाधकामतः । सत्कर्मनाशकः सर्वप्राकृतासक्तिसाधकः ॥
 चित्ताशुद्धिनिदानत्वाच्चिदुत्पत्तौचवाधकः । भक्तिमार्गमहाद्विष्टा वैराग्याभावसाधनात् ॥
 सर्वत्रापारितोपशानेन लोभसमुद्भवात् । यथाकर्षित्सांमुख्येन्द्रियवैमुख्यकारकः ॥
 कामलोभैर्हरिप्राप्तप्रतिबंधकपर्वतौ । तावुल्लंघ्य नशक्नोति गंतुं कृष्णांतिकं जनः ॥
 संसारमोहेहेतुत्वान्मनोदूषणसाधनम् । अतः सेवाविरोधी च यतः सा मानसीमता ॥
 निरोधस्यमहाञ्छत्रु रन्यत्फूर्तिकरो यतः । गुणगानसपन्नोपि नरोच्यते गुणायतः ॥
 वैराग्यसाधकाःसर्वकामिनस्तैकार्थप्रियाः । अतएवहिदृश्यन्ते गुणश्रवणवैरिणः ॥
 क्रोधःस्वकार्यकरणाह्लोभःप्राप्यापिशाम्याति । घृतहोमेवन्हिरिवकामोभोगेनवर्द्धते ॥
 कामेननाशितमतिः प्रतिभिद्धे प्रवर्तते । अगम्यागमने चौर्ये तथैवाभक्ष्यभक्षणे ॥
 यतउत्पद्यते क्रोधो महद्ब्रह्मसमुद्भवः । लोभोपिजायतेतस्मात्सचार्थविषयेभवेत् ॥
 सार्थःपञ्चदशानर्थमूलंतत्प्रवर्तते । कामेनैवहिक्वार्पण्यं कामिनीपु सतामंतं । प्रार्थय
 न्ति यतस्तुच्छा प्रवेश्यवदनेकरं ” इत्यादि काम दोष पर आपने एक ग्रंथही बनाया
 है तो काम मुख्य दोष है इसमें कोई संदेह नहीं वरञ्च श्री गीता जी में कामही
 के छुड़ाने के आग्रह से सुखपूर्वक भोजनादि का भी निषेध किया है श्रीमुख वार्क्य
 ‘ इन्द्रियाण्यनुशुष्यन्ति निराहारस्यदेहिनः । रसवर्जैरसोप्यस्यपरं दृष्टानिर्वर्तते ’ ।
 इससे भक्ति के सब साधनों में मुख्य विषयों का त्याग है संग त्याग के दोष ४३ ।
 ४४ । ४९ सूत्रों में दिखावेंगे ॥

३६ ॐ अव्यावृत्तभजनात् ।

सतत (निरंतर) भजन से

निरन्तर शब्द यहाँ इस हेतु दिया है कि क्षण क्षण में जीव को आसुरावेश
 होता है और रजोगुण सतोगुण की तरंगें उठा करती हैं तो उसकी निवृत्ति के
 हेतु निरन्तर भजन करे । जिस क्षण में नामोच्चारण का व्यवधान होगा उसी
 क्षण आसुरावेश होगा अतएव भगवान् श्री श्रीबृह्मभार्य ने आज्ञा किया है
 “तस्मात्सर्वात्मनानिल्यं श्रीकृष्णः शरणं मम । वदद्भिरैवसततं स्थातव्यमिति मेमितिः”
 अपने भक्तिवर्द्धिनी ग्रंथ में भी श्रीआचार्यजी ने ‘आव्यावृत्तोभजेत्कृष्णं पूजयाश्रवणादिभिः’

इत्यादि लिखा है; भोजनादिक व्यवहार की भांति कुछ नित्य भजन भी करलेना वा जहां सब काम करते हैं वहां एक घण्टा भर यह भी सही इत्यादि उपेक्षा वा साधारण व्यवहार पूर्वक भजन का निषेध इस सूत्र से किया, जो कहो कि संसार के और कोई काम न करें सो यह नहीं करते वरञ्च जब तुम आवश्यक कार्यों से छूटो तब और कोई व्यर्थ काम करने के बदले निरन्तर भजन करो, जैसा जितने क्षण खाते हो उतनी देर तो निःसंदेह तुम कुछ नहीं कह सकते पर जैसे ही मुंह धो चुको भगवन्नामोच्चारण प्रारम्भ करो ।

३७ ॐ लोकेपि भगवद्गुणश्रवणकीर्तनात् ।

लोक में भी भगवान की गुणों की श्रवण और कीर्तन से ३७

“लोकेपि” अर्थात् जब तक अव्यावृत्त भजन की सिद्धि न हो और लोक के व्यवहार में चित्त निराग्म हो तब तक भगवान् के गुण कीर्तन करके और श्रवण करके निरन्तर भजन का अभ्यास करे क्योंकि बोरे नामोच्चारण से वा ध्यान करने से भजन सुनने या गाने में सर्वसाधारण का चित्त विशेष लग सकता है । श्रीमहा प्रभुजी लिखते हैं “यथामक्ति प्रवृद्धास्यात्तद्योपायोनिरूप्यते । वीजभावेऽद्वैतस्यागामाच्छ्रवणकीर्तनत् ॥ वीजदाल्बप्रकारस्तु गृहेस्थित्वा सधर्मतः । “व्यावृत्तोभजेऽङ्गुणं पूजयाश्रवणादिभिः ॥ व्यावृत्तोपिहरोचितं श्रवणादीयतेत्सदा । ततःप्रेमतयासक्तिर्व्यसनञ्चयदा भवेत्” अर्थात् जो चित्त भक्ति में न रंगा हो तो श्रवणादिक में लगावे और जब उस में कुछ प्रेम और आसक्ति होगी और श्रवणादिक का व्यसन हो जायगा तब आपही भक्ति का बीज दृढ़ हो जायगा यद्यपि भक्ति के अधिकारी सब लोग नहीं हैं पर श्रवण कीर्तनादिक के अभ्यास से सब हो जाते हैं क्योंकि कीर्तन के अधिकारी मुक्त मुमुक्षु और विपयी तीनों हैं । यही श्रीपरमभागवत श्रवणाधिकारा राजा पराक्षीत ने कहा है “ निवृत्ततैरुपगीयमानाद्भ्रवैषधंच्छेत्रमनाभिरामात् । क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान्विरज्येत विना पशुघ्नात् ।”

३८ ॐ मुख्यतस्तु महत्कृपयैव भगवत्कृपालेशाद्वा ।

(उस भक्ति का) मुख्य साधन तो महानुभावों की कृपा है, वा भगवान की कृपा का लेश ॥ ३८ ॥ *

ऐसाही है परम भागवत जड़भरतजी ने रहुगण को उपदेश किया है “रहुगणैतत्तपसानयाति नचेज्ययानिर्बपणाद्गृहाद्वा । नच्छन्दसानैवजलाग्निसूर्ये विनामहत्पादरजोभिषेक्वात् ॥” हे रहुगण यह (सिद्धि) तप से नहीं होती और न यागादि कर्मों से न घर छोड़ के जोगी बनने से न वेदों न जल से अर्थात् स्नान संख्या तर्पणादि से न अग्नि से अर्थात् पञ्चाग्नि साधन वा अग्निहेत्र से न सूर्य से अर्थात् सूर्योपस्थान वा गीष्मताप सेवनादि से । बिना महानुभावों के पदरज में नहाये और किसी से यह नहीं हो सकता यही श्री मुख से भी कहा है “नह्यम्यानितीर्थानि नदेवामृच्छिलमयाः । तेषुन्युरुकालेनदर्शनादेवसाधवः ॥” हे अक्रूर ! जिस को जल मय तीर्थ (गङ्गादि) और मृनय और शिलामय देव पवित्र नहीं करते वा बहुत काल से करते हैं उसको साधु लोग कंबल दर्शन हीं से तत्काल पुनीत करते हैं ।

बरञ्च श्रीमद्भागवत पञ्चमस्कन्ध में श्रीमत्परम भागवत प्रह्लाद जी ने कहा है “मागारदारात्मजवित्तवंपुषु संगोयदिस्याद्भगवत्प्रियेषुनः यः प्राणवृत्त्यापरितुष्टआत्मवान् सिद्धयत्यद्वान्तथोद्विप्राप्रियः ॥ यत्संगलब्धनिजवीर्यवैभवं तीर्थमुहःसंपृगतांहि मानसं । हरत्यर्जोतः श्रुतिभिर्गोर्गजं कोवै नसेवेतमुकुन्दा - ”

देवीपुराण † नवमस्कन्ध के पष्ठाध्याय में गङ्गा जी से भगवान का वाक्य है “मन्त्रोपासकानांच सतांस्नानावगाहनात् । युष्माकंमोक्षणं पापात् दर्शनात्परी-
नात्तथा ॥ पृथिव्यायानितो न संत्यसंख्यानि सुन्दरि । भविष्यन्तिचपुतानिमद्भ-
क्तस्पर्शदर्शनात् ॥ मन्त्रोपासकाभक्ताविश्रमन्तिचभारते । पूतांकर्तुतारितुश्च सुपवि-
त्रावसुन्धरो । मद्भक्त्यायत्रतिष्ठन्तिपादंप्रक्षालयन्तिच । तत्स्थानन्तुमहातीर्थं सुपीवत्रंभ-
वेत्पुत्रं ॥ स्त्रीभोगोन्नःकृतघ्नश्चब्रह्मज्ञोगुरुतत्पगः । जीवन्मुक्तोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्शदर्श-
नात् ॥ एकादशीविहीनश्चसंख्याहीनोतिनारितकः । नरघातीभवेत् पूतोमद्भक्तस्पर्श-

* ३८ परन्तु मुख्य करके तो महात्मा लोगों को कृपा ही से होती है वा भगवान के कृपा लेश से ।

† देवी पुराणजी की देवी भागवत कहते हैं क्योंकि पुराणों में जहां उप-
पुराणों को गिना है वहां कहीं “भागवत” वा “देवीपुराण” ऐसा शब्द है ।

दर्शनात् ॥ असिजीवीमसीजीवीपाचकोग्रामयाचकः । वृषवाहोभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्श ० ॥
 विश्वासाघातीमित्रघ्नो मिध्यासाक्ष्यस्यदायकः । स्थाप्यहारीभवेत्पूतो मद्भक्तस्पर्श ० ॥
 असुप्रवाग्दूषकश्च जारकःपुंक्षलीपतिः । पूतश्चपुंश्चलीपुत्रो मद्भक्त ० ॥ शूद्राणांसुप-
 कारश्चदेवलोग्रामयाचकः । अदीक्षितोभवेत्पूतो मद्भक्त ० ॥ पितरंमातरंभार्या
 भातरंतनयंसुता । गुरोःकुलंभगिनीं चक्षुर्हानिंचवान्धवं ॥ श्वश्रूंचश्वशुरंश्चापिया-
 नपुण्यातिसुन्दरि । समहापातकीपूतोमद्भक्तस्पर्श दर्शनात् ॥ अश्वत्थनाशकक्षैव
 मद्भक्तनिन्दकस्तथा । शूद्राश्रमभोजीविप्रश्च पूतोमद्भक्तदर्शनात् ॥ देवद्रव्यापहारीच
 विप्रद्रव्यापहारकः । लाक्षालोहरसानांच विक्रेतादुहितुस्तथा ॥ महापातकिनश्चैव
 शूद्राणांशवदाहकः । भवेपुरेतेपूताश्च मद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥” तथा देवी का वाक्य
 “ पुनन्तिसर्वतीर्थानि येषांज्ञानावगाहनात् । येषांचपादरजसा पूतापादोदकान्मही ॥
 येषांसंदर्शनंस्पर्शयेवावांछन्तिभारते । सर्वेषांपरमोल्लोभो वैष्णवानां समागमः ॥ नह्य-
 म्मयानितीर्थानि नदेवामृच्छिलामयाः । तेपुनंस्यपिकालेन विष्णुभक्ताःक्षणदहो ॥”
 फिर भगवद्वाक्य “ पुरुषाणांशतंपूर्वं तयातज्जन्ममाततः । स्वर्गस्थंनरकस्थंवा मुक्ति-
 मामोतितत्क्षणात् ॥ यैःकैश्चियत्रवाज्जन्म लब्धयेपुचजन्तुपु । जीवन्मुक्तास्तुतेपूता
 यान्तिकालेहरेःपदं ॥ मद्भक्तियुक्तोऽप्यश्वसुक्तःसद्गुणीन्वतः । मद्गुणाधीनवृत्तियैः
 कथाविष्टश्चसन्ततं ॥ मद्गुणश्रुतमात्रेणसानन्दः पुलकान्वितः । सगद्गदःसाश्रुनेत्रः
 स्वात्मविस्मृतपवच ॥ नवाञ्छतिसुखंमुक्तिं सालोक्यादिचतुष्टयं ॥ ब्रह्मत्वममरत्वंवा तद्वा-
 ञ्छाममसेवने ॥ इंद्रत्वंचमनुत्वंच ब्रह्मत्वंचसुदुर्लभं ॥ स्वर्गराज्यादिभोगश्च स्वप्नेपिचन-
 वाञ्छति ॥ भ्रमन्तिभारतेभक्ता स्ताद्गृज्जन्ममदुर्लभं । मद्गुणश्रवणश्राव्यगानैर्नित्यमुदा-
 चिताः ॥ तेषांतिचमहींपूत्वा नराःशं । इत्येवं कथितंसर्वं पद्मेकुर्यथोचितं
 तदाज्ञयातास्तच्चक्रु ह्रिस्तस्थी सुखासने ।” तथाच सारसंग्रह में पराशर स्मृति
 “सहस्रवार्तिकोपूजा विष्णोर्भगवतो हरेः ॥ सद्गुणगवतार्चायाः कलांनार्हतिपोद्भक्तिं ॥”
 इत्यादि । बृहन्नारदीयपुराण “पूजनाद्विष्णुभक्तानां पुरुषार्थोस्तिनेतरः । तेपुतद्द्वेषतः
 किंचिन्नास्तिनाशनमात्मनः ॥” पद्मपुराण में महादेव जी का वाक्य “आराधना-
 नांसर्वेषां विष्णोराराधनंपरं । तस्मात्परतरंदेवि तदीयानांच पूजनं ॥” श्रीमद्भागवत
 में श्री महादेव जी का वाक्य “ नमेभागवतानांचप्रेयानन्योस्तिवर्हिंचित् ” इत्यादि
 पूर्वोक्त श्लोकों से तदीय जनों का माहात्म्य सिद्ध हुआ तो ऐसे तदीयों की कृपा
 से भक्ति मिले इसमें क्या आश्चर्य है वा भगवान की कृपा से होय क्योंकि

आप कभी २ भक्तिदान देते हैं “ ढदामिबुद्धियोगंत येनमामुपयांतिते ” परन्तु भगवान् की कृपा से भक्तों की कृपा सुलभ है क्योंकि भगवान् भक्तिदान विशेष नहीं करते. “मुक्तिं ददामि कर्हि चित्तमनभक्तियोगं ॥” इत्यादि। अतएव इस सूत्र में महत्कृपा मुख्य करके भगवत्कृपा गौण किया है ॥

३९ ॐ महत्सङ्गस्तु दुर्लभोऽस्योऽसौघश्च ।

और महत्सङ्ग दुर्लभ, अगत्य, और असौघ (सफल) है ॥३९॥*

ऐसाही है “ क्षणाद्धेनापितुल्ये न स्वर्गनापुनर्भवं । भगवत्सङ्गिसंस्य म्लानानां किस्तापिपः ॥ ” इत्यादि श्रीमद्भागवत-में श्रीमहादेवजी का वाक्य है. “असौघसिद्धदर्शनं ” इत्यादि स्मृति तथा श्रीमुख वाक्य “नरोधयति मां योगो नसाख्यंधर्मएवच । नखायायस्तपस्व्यागो नेष्टापूर्तेनदक्षिणा ॥ व्रतानियङ्गदृष्टन्दासि तीर्थानि नियमायमाः । यथावरुद्ध्येत्सत्सङ्गः सर्वंगापहोहिमां ॥” और लोक-में भी प्रसिद्ध है “ सत्संगतिः कथय किंनकरोतिपुसां ” इत्यादि ।

४० ॐ लभ्यतेपितकृपयैव ।

महत्सङ्ग उसकी (भगवान्की) कृपा से ही मिलता है ॥४०॥

“ यस्य गवताः प्रीता स्तस्यप्रतिहोःखयं ” इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है । तथा श्री महादेव जी ने भी कहा है “ अथानवाग्नेस्तवकीर्तितीर्थे योर्तिहिःक्षान्तिविधूतपाप्मना । भूतेष्वनुक्रोशसुसत्वशीलिनां स्यात्सङ्गमोनुग्रहएवमस्तुच ” ॥

४१ ॐ तस्मिन्तज्जने भेदभावात् ।

उसके और उसको जन में भेद को अभाव से ॥४१॥ *

श्रुति भी है. “यस्यदेवपराभक्तिर्यथादेवेतथागुरौ” इत्यादि. “नभेभागवतानांच भुक्तिभेदोस्तिकर्हिचित् ” इत्यादि, श्री मुख से कहा है । तथाच श्रीगोपीजन

* ३९. महत्सङ्गाओं का संग दुर्लभ है क्योंकि उस संग में कोई जा नहीं सकता और जब उस संग में प्राप्त होता है तो खाकी नहीं फिरता अर्थात् सर्वसंग का फल अवश्य होता है ।

* ४१ क्योंकि भगवान् में ही र उनको भक्तों में कुछ भेद नहीं है ।

को "ता.मन्मनस्वामप्राणाः बह्व्योमेमदात्मिकाः" इत्यादि, श्रीमहादेवजी को "यस्त्वाद्द्विट्टिसमाद्द्विट्टियस्त्वागनुसमामनु । त्वदुपासाजगन्नाथु सैवास्तुममगोपते" तथा उद्योग पर्व में दुर्वाधन से पांडवों के हेतु भी कहा है "यस्ताद्द्विट्टि समाद्द्विट्टि यस्तानुसमामनु । ऐकात्म्यमांगतर्विदि पांडवैधर्मचारिभिः" ॥ इत्यादि तथा श्री प्रह्लादादिक भक्तों से भगवान ने यही कहा है "जिसने तुमसे द्वेष किया उस ने मुझ से द्वेष किया" इसका उदाहरण अंबरीष का प्रकरण प्रत्यक्ष है और वहां भी श्रीमुख से कहा है "अहं भक्तपराधीनो दासतंत्र इव द्विज । साधुभिर्मे-स्तद्धयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥" महा भारत में भी कहा है "तुलसीदलमात्रेण जलस्यचुल्लेनच । विक्रीणीते स्वमात्मानं भक्तैर्भ्योभक्तवत्सलः ॥" उद्धव जी से भी ऐसी ही कहा है "नतयामेप्रियतम आत्मयोनिर्नशङ्करः नचसङ्कर्षणोऽनश्री-वात्माचयथा भवान्" ॥ निरपेक्षं स्यात् निर्भरसमदात्तं । अनुब्रजाभ्यहं नित्यं पूय-वेदंश्रेणभिः" इत्यादि श्रीमुख से अपने भक्तों से अपनी एकता स्वाधीनता इत्यादि वर्णन किया तो इस से भगवान और उनके भक्तों की एकात्मता ही सिद्ध हुई है "त्रिषाप्येकं सदागम्यंगम्यमेकप्रभेदनैः । प्रेयप्रेमीप्रेमपात्रवित्तियंप्रणतोत्सहं" ॥

४२ ॐ तदेवसाध्यतां तदेवसाध्यताम् ।

उसी का साधन करो, उसी का साधन करो ॥ ४२ ॥

हम लोग भी मुक्त कण्ठ से यही कहते हैं ।

इति पञ्चम अनुवाक समाप्त इति ।

४३ ॐ दुःसङ्गरसर्वथैव त्याज्यः ॥

दुःसंग का सब रीति से त्याग करना ॥ ४३ ॥

उसके त्याग में वारण करते हैं ।

४४ ॐ कामक्रोधमोहस्मृतिअंशबुद्धिनाश-

* चारों नाम द्वार संप्रदाय के आचार्यों ही के लिए । ब्रह्मा माधव, महादेव, विष्णुस्वामी, संवर्षण निस्वार्क और श्री रामानुज, इन मर्यादा मार्ग के भक्तों की उत्कर्षता हेतु उद्धव को सबसे बड़ा कहा ।

सर्वनाशकारणत्वात् ।

(क्योंकि वह) काम, क्रोध, मोह, स्मृतिभ्रंश, बुद्धिनाश और सर्वनाश का कारण है ॥ ४४ ॥

ऐसाही श्रीमुख से भी कहा है “च्यायतोविषयान्पुंसांसंगस्तेरूपजायते । संगान्त्संजायतेकामः कामात्क्रोधोभिजायते ॥ क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः । स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥ ” विषयों के सुख सोचते सोचते विषय संग होता है और विषय संग से अनेक प्रकार की कामना उत्पन्न होती है, और जब उस कामना के पूर्ण होने में कोई बाधक होता है तब क्रोध उत्पन्न होता है और जब उस क्रोध से अनिवार्य बाधकों का प्रत्यय नहीं कर सकता तब मोह हो जाता है और निराश होके रोने लगता है । फिर इस दुःख से सब स्मृति भूल जाती है और जब स्मृति भूल जाती है तब इस की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती और अन्यथा करने पर प्रवृत्त हुआ तहां उस का लोक परलोक सब नाश होता है ” इस से यह दिखाया किं सब विगाड़ का कारण विषय और उसका संगही है ॥

४५ ॐ तरङ्गायितापीमे सङ्गात्समुद्रायन्ति ।

ये (काम क्रोधादिक) तरंगों की भांति होकर भी (दुःसंगसे) समुद्र से ही जाते हैं ॥ ४५ ॥

दुःसंग में और भी दोष दिखाते हैं—यद्यपि जो लोग सन्मार्ग पर प्रवृत्त हैं उनको अहर्निश भगवदाराधन करते २ काम क्रोधादिक की केवल तरंग आती है, जैसे निलय विषयों की सुरतान्त, तीर्थ गमन, कथा, श्रवण, वा स्मशान दर्शन से ज्ञान की तरङ्ग आती है, जितनी देर स्मशान पर बैठते हैं संसार नश्वर है, पुत्रादिकों में मोह अच्छा नहीं इत्यादि ज्ञान छांटते हैं पर जहां घर आये तहां फिर संसार काम में मग्न होगये, वैसीही अच्छे लोगों को प्रारब्ध वशात् संग से जो कुछ काम क्रोधादिक की तरंग आती भी हैं । तो वह उतनी ही काल रहती है जब तक कि वे अपना स्वरूप भूले रहते हैं । तथापि यदि वेही सज्जन लोग दुःसंग में पड़ जाय तो ये ही काम क्रोध उनको डुबा दें ।

४६ ॐ कस्तरतिकरतरतिमायां ? यः संग्वास्त्व-
जति योमहानुभां सेवते योनिर्भसोभवति ।

कौन तरता है ? माया को कौन तरता है ? जो (संभारी)
संगों को छोड़ता है, जो महानुभाव की सेवा करता है, जो
निर्भय होता है ॥ ४६ ॥

यद्यपि महात्मा की छाया, और संग त्याग मुख्य साधन हैं तथापि कुटुंब-
वादिव का मोह भी एक बड़ी भारी बंधी है इससे इसका त्याग भी मुख्यही है ।

४७ ॐ योविविक्तस्थानं सेवते योलोकबंधमन्मू-
लयति निस्त्रैगुण्योभवति योगक्षेमं त्यजति ।

जो एकांत स्थान सेवन करता है जो लोक बंध को जड़
निकाल देता है, निस्त्रैगुण्य होता है, और योग क्षेम छोड़
देता है ॥ ४७ ॥

क्रमशः उसके साधन कहते हैं—यदि जन समाज में रहेगा तो पहले तो उस
के अनवाञ्छित भगवन्तन में कोलाहलदि से अनेक बाधा पड़ेगी दूसरे अनेक
प्रकार के लोगों से मिलने से उनके व्यवहार में न्यापृत होने और उनके संग पड़
जाने का डर है अतएव श्रीमुख से कहा है “विविक्तजनसेवित्त्वमरतिर्भनसं-
सदि” ॥ और महात्माओं को भी आज्ञा है “विमुक्तबन्धो विचरेदसंगः ॥”
इत्यादि तथा लोक का बन्धन छोड़ना भी एक बड़ा कठिन साधन है कोई हसे
न, कोई नाम न धरे, धोती इतनी ही नीचे पहिने एड़ी न दिखाय, न-

निर्हृज्ज कहावेंगे, मार्ग में जिस चाल से निकलते हैं वैसेही निकलना चाहिए,
इत्यादि लोक कारिपत व्यवहार और भी महा बन्धन के कारण होते हैं इस हेतु
सब लोक बन्धन की मूल लज्जा को चौपट कर डालना “एवां लज्जां परित्यज्य
त्रैलोक्यविवर्षा भवेत्” क्योंकि भक्ति के साधन में श्री मुख से आप ने आज्ञा
किया है “विलज्ज उद्गायति रीतितनूयति मङ्गक्तियुक्तो भुवनंपुनाति” तो सब
के सामने कौन गावेगा कौन रोवेगा कौन नाचेगा ? जो मेरा सा निपट वेहाया

होगा, तथा जब लोक छूटा तब उम से भी बड़ा बन्धन वेद बचा उसके मिटाने के हेतु कहते हैं “ निस्त्रैगुण्यो भवति ” अर्थात् सत्व, रज, तम, इन तीनों गुणों की प्रवृत्ति से अलग हो जाता है श्रीमुख से भी कहा है “ त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्यो भवान्जुन ॥”

परन्तु जो कहो कि लोक वेद छोड़ के केवल अपना भला करना तो चार्वाक का मत है तो इसका खण्डन करते हुए कहते हैं “ योगक्षेमस्यजति ” अर्थात् केवल लोक वेद नहीं छोड़ता बरंच अपने भी खाने पीने पहारने रहने ओढ़ने विछाने सोने इत्यादि का शोक छोड़ देता है “ भोजनान्छादनेचिन्तां वृथाकुर्वन्ति वैष्णवाः । विश्वम्भरो गुरुर्वेषां किं दासान् समुपेक्षते ” और उसकी प्रतिज्ञा भी है “ अनन्याश्चिन्तयन्तो मां येजनाः पर्युपासते । तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ” इत्यादि । क्योंकि जब सब नोड़ फेर अपनी हाय हाय न छोटी तो उस छोड़ने पर धिक्कार है ।

४८ ॐ यः कर्मफलं त्यजते कर्माणि संन्यसति ततो निर्द्वन्द्वो भवति ॥

जो कर्म फल छोड़ता है कर्मां का त्याग करके निर्द्वन्द्व होता है । ४८ ॥

निस्त्रैगुण्य होने का क्रमशः साधन कहते जब तक चित्त में अर्थों की तरंग उठें तब तब कर्मों को नहीं छोड़ना उसका फल छोड़ना और जब कामनाओं की निवृत्ति होजाय तब उन कर्मों को भी छोड़ के निर्द्वन्द्व हो जाना । क्योंकि श्री मुख से भी कहा है “ निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्यो नियोगक्षेम आत्मवान् । यावानर्था उदपाने ” इत्यादि ऊपर लिख आए हैं ।

४९ ॐ वेदानपि संन्यसति वैश्वानरं विच्छिन्नानुरागं लभते ।

वेदों को भी छोड़ देता है और की वज्र अविच्छिन्न अनुराग (प्रीति) को पाता है ॥ ४९ ॥

अब साधन दिखाकर उसकी सिद्ध दशा लिखते हैं जब सिद्ध हो जाता ^३
तब वेदों का त्याग कर देता है और केवल अविच्छिन्न प्रेम पाता है ।

८० ॐ सतरतिस रतिसलोकान्तरयतीति ।

बह तरता है बह तरत है बह लोनों को तारता है ॥५०॥

नारद जी अपनी प्रतिज्ञा दृढ़ करने के हेतु दो बेर कहते हैं और निश्चय कराते हैं, वरंच यह कहते हैं कि वह आपही नहीं तरता किन्तु संसार को तारता है “ पुनातिभुवनत्रयं ” “ तीर्थार्थकृन्तितार्थानि खान्तस्त्रेनगदाभृता ” “ तेषुनन्त्युसंकालेन ” “ मद्भक्तिपुक्तोभुवनंपुनाति ” “ स्वयं समुत्तीर्य सुदुस्तरं ” इत्यादि, वाक्यों से उनका संसार में पवित्र करके तारना सिद्ध है ।

इति षष्ठ चतुर्थाक समाप्त इति ।

५१ ॐ अनिर्वचनीयं प्रेम स्वरूपं ।

प्रेम का स्वरूप कहा नहीं जा सकता ॥ ५१ ॥

तो हम लोग क्या कहे ।

५२ ॐ सूकास्वादभवत् ।

गूंगे के स्वाद की भांति ॥ ५२ ॥

अर्थात् केवल अनुभव सिद्ध है क्योंकि भांठे और सलौने में जो भेद वा स्वाद है वह कहा नहीं जा सकता इतनाही वह सकते हैं कि खाके अनुभव करलो उसमें भं गूंगे के स्वाद का क्या पृच्छना है । यहां वही वहावत है “ विल अपने मरे खर्ग नहीं सूझता ” ।

५३ ॐ प्रकाश्यतेकापिपात्रे । *

* जिस पुस्तक में “ प्रकाशने. ” ऐसा पाठ है वहां अर्थ है कि प्रेम स्वरूप कभी किसी पात्र (कधिकारी) में स्वयं प्रकाश पाता है ।

(तथापि) कभी किसी पात्र (अधिकारी) से प्रकाश
किया जाता है ॥ ५३ ॥ †

“ ब्रूयःस्निग्धरसशिष्यस्यगुरवोगृह्यमप्युत ” इत्यादि वाक्य से सिद्ध है तो इसमें यह शंका हुई कि श्री नारद जी ने संसार में कोई पात्र पाए बिनाही इन सूत्रों का प्रकाश क्यों किया ? इसके उत्तर में हम इतनाही कहा चाहते हैं कि यह किसी पात्र का उद्देश्य करके नहीं कहा बरञ्च स्वतः मुंह से प्रेम के आवेश से निकल गया क्योंकि जब पात्र मर जाता है तब आप से आप ऊपर वह निकलता है उस समय यह विचार नहीं रहता कि नीचे पत्रांतर आधारभूत है वा नहीं । वही दशा इस की भी है जब उस परमानन्द का उच्छ्वास होता है तब यहाँ भी पात्रपात्र विचार नहीं होता पागल की भाँति गूढ़ तब भी अपने आप बकने लगता है ।

५४ ॐ गुणरहितं कामनारहितं प्रतिक्षण-
वर्द्धमानमविच्छिन्नं सूक्ष्मतरमनुभवरूपं ।

(प्रेमस्वरूप) गुणों से रहित, कामनाओं से रहित, प्र-
तिक्षण में वृद्धिगत अविच्छिन्न (एकरस भिन्ना हुआ), सूक्ष्मतर
कीवत् अनुभवरूप है ॥ ५४ ॥

कामना रहित, क्योंकि कामना से यह भक्ति व्यवहार हो जायगी इससे स्वर्गादि कामना के अर्थ यजन स्वरूप भक्ति वा काम पूरणार्थ दंपति के प्रेम का नाम प्रेम है इस का निराकरण किया, श्री मुख से भी कहा है, “ न मय्यावेशिताध्यां कामः कमाय कल्पते भजिताकथिता गानाभूयोवीजायनेष्यते ” इत्यादि और सांसारिक प्रेम से इस शुद्ध प्रेम में आधिक्य दिखाने के हेतु “ प्रतिक्षणवर्द्धमान ” यह कहा क्योंकि संसार में प्रेम पहले तो बड़े चाव से होता है फिर प्रतिदिन अवस्था बल वा रूप गुण धन के घटने से वह प्रेम दिन दिन घटता जाता है और उस अशेष गुण संपन्न नित्य नव विश्वर असीमगुणमण्डित अतुल बल सीम परमानन्द-मय में जो प्रेम होगा वह प्रतिक्षण बढ़ता जायगा क्योंकि उच्चम सौन्दर्य और

† ५३ पर पात्र मिलने से कहीं और कभी महात्मा लोग प्रकाश करते हैं ।

गुण का धर्म है कि जितना २ उसको देखते वा विचारते जाओगे उतनीही उत्तम सूक्ष्मता प्रकट होती जायगी, और जैसा इस प्रेम को संसार के दुःखादि बाधा कर देते हैं वैसे उसमें कोई बाधा नहीं होती क्योंकि भगवद्वियोग के महा दुःख सागर में ये सब संसार के क्षुद्र दुःख डूब जाते हैं “ सर्वपदंहस्तिपदे निमग्न ” और सूक्ष्म इतना है कि उसका उदाहरण नहीं दिया जा सकता इसी हेतु अनुभव रूप वहा है पुराणांतर में कथा है कि सती ने किसी कल्प में श्रीजानकी जी का वेप धर के भगवान की परीक्षा किया था इससे हम सब प्रेमियों के शिरोरत्न श्री महादेव जी ने फिर सती के उस देह का स्पर्श न किया । बोधा ने भाषा कवित्त में कहा है “अतिच्छीन मृनाल ७ तारहु ते तेहि ऊपर पांव दे आवनो है । मोचवेध ते नाको सकीर्न तहां परतीत को टांढो लदावनो है ॥ कवि बोधा अनी घनी नेजहु ते चट्टि तापै न चित्त डगावनो है । यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवार की धार पै धावनो है ॥ ”

५५ ॐ तत्प्राप्यतदेवावलोकयति तदेवशृणोति तदेवभाषयति तदेवचिन्तयति ।

उसको पाकर उसी को देखता है उसी को सुनता है
उसी को बोलता है और उसी का चिन्तन करता है ॥५५॥ *

क्योंकि फिर इसको कहने, सुनने, और देखने को अवशिष्ट नहीं रहता और जहां “ तत्प्राप्यतमेवावलोकयति ” इत्यादि पाठ है वहां यह अर्थ है कि उसको अर्थात् भगवानको प्रेम द्वारा पाकर उसी को देखता है क्योंकि उस अनिर्वचनीय रूप को देख कर और देखने की इच्छा नहीं होती ॥

५६ ॐ गौणीत्रिधागुणभेदादार्तादिभेदाद्वा ।

गौणी (भक्ति) तीन प्रकार की, गुण भेद वा आर्तादि
भेद से ॥ ५६ ॥

* ५५ जिसे पाकर फिर प्रेमी को गुण उसी क देखते हैं वही सुनने हैं और उसी को चिन्तन करती हैं ।

मुख्या भक्तिका स्वरूप दिखाकर गौणी का स्वरूप कहते हैं सत्व, रज, तम गुणों के भेद से सारि की, राजसी, तामसी तीन प्रकार की भक्ति वा श्रद्धा होती है। गुणत्रय विभाग वर्णन में श्रीभगवान ने इसका विस्तार कहा है, वा आर्त, जिज्ञासु और अर्थार्थी इन तीनों के भजन के भेद से भी गौणी भक्ति तीन प्रकार की होजाती है ॥

५७ ॐ उररस्माद्दुत्तरस्मात्पूर्वपूर्वा श्रेयाय भवति ॥

पिच्छले पिच्छले (भेद) से पहला कल्याण हेतु होता है ॥५७

अर्थात् तमोगुणी से रजोगुणी और रजोगुणी से सत्वगुणी अच्छी होती है वैसेही अर्थार्थी से जिज्ञासु और जिज्ञासु से आर्त अच्छा होता है क्योंकि सतोगुणी भक्ति से वा आर्त के भजन से शुद्ध भक्ति मिलने की संभावना है ।

इति मतम अतुवाक समाप्त हुआ ।

५८ ॐ अन्यस्यात्सौलभ्यंभक्तौ ।

अन्य से भक्ति में सुगमता है ॥ ५८ ॥

पूर्व में भक्ति का अनिर्वचनीय स्वरूप कहा है तो इस से जीवों को गंका हो कि ऐसी सूक्ष्म वस्तु के अधिकारी हम कैसे होंगे तो उस शंका मिटाने के हेतु और जीवों को उस मार्ग पर आरुढ़ करने के हेतु कहते हैं कि और जितने साधन हैं सबसे भक्ति (साधन) सुलभ है क्योंकि न इस में विद्या का काम है न धन वा न वेद का न आचार का न उत्तमता का न वर्ण का । क्योंकि गनिका को क्या विद्या थी, गवरी को क्या धन था, श्री गोपीजन ने कौन वेद पढ़ा था, गृध्र का कौन आचार था, गज की क्या उत्तमता थी और केवट का कौन वर्ण था । और सबसे बड़ी सुलभता यह है कि इस में कोई वादविवाद नहीं रहता । क्योंकि—

५९ ॐ प्रमाणांतरस्यानपेक्षत्वात्स्वयंप्रमाणत्वात् ।

(यहाँ) अन्य प्रमाण की अपेक्षा नहीं स्वयमेव प्रमाण है ॥५६॥

क्योंकि वाद की और प्रमाण की इस में आवश्यकता नहीं जब अपने चित्त में प्रेम का उदय हुआ तब उससे बढ़ कर और प्रमाण क्या चाहिए । प्रमाणान्तर की अनपेक्षता दिखाकर भक्ति में और भी उत्तमता दिखाते हैं ।

६० ॐ शान्तिरूपात्प मानन्दरूपाच्च ।

शान्ति रूप और परमानन्द रूप है ॥ ६० ॥ *

अर्थात् इस वे शान्ति रूप होने से रजोमय तमोमय नाना प्रकार के वाद और विकल्प चित्त में आपही नहीं होते और परम शान्ति रूप है इसी से परमानन्द रूप है क्योंकि परमानन्द वहाँही है जहाँ वादादि से प्रतिबन्ध नहीं । और “परमानन्द” शब्द कहने से भगवान की और भक्ति की एकता दिखाई क्योंकि ईश्वर का भी परमानन्द स्वरूप “ आनन्दमयोग्यासात् ” “आनन्दमात्रकरपाद-मुखोदरादि ” “ आनन्दं ब्रह्म ” “ आनन्दं ब्रह्मणोविद्वान् ” इत्यादि श्रुति से भगवान् का आनन्द स्वरूप सिद्ध है, और जीव में आनन्द का तिरोभाव है तो पुनः आनन्द उस जन के साधन ज्ञानादि कर के परमानन्दमयी भक्ति के आविर्भाव विना जीव के ताप की निवृत्ति नहीं होती । और वेदांतियों ने ज्ञान का फल आनन्द कहा है ज्ञान को स्वतः आनन्द स्वरूप नहीं कहा है । और भक्ति का स्वरूप आनन्द तो सूत्र में कहतेही है ।

अब जो जीव को शंका हो कि हम ने तुझारे कहने अनुसार योग क्षेमादिषु सब छोड़ा परन्तु उस लोक की गति क्या होगी इस शंका को मिटाने के हेतु कहते हैं ।

६१ ॐ लोकहानौचितानकार्यानिवेदितात्म-लोकवेदशीलत्वात् ।

लोक हानि में चिन्ता नहीं करना क्योंकि (भक्तों ने) आत्मा, लोक, वेद, शील सब ईश्वर से अर्पण किया है ॥६१॥

* ६० क्योंकि इसमें शान्ति मिलती है और परमानन्द का अंशभव होता है ।

अर्थात् जो वस्तु कोई किसी को दे देता है फिर उसकी हानि का शोच देने वाले को नहीं होता जिसको देता है उसी को होता हैं। हम लोगों को लोकादि हानि का शोच क्यों करना चाहिये उसका सोच वह (भगवान्) आप करेगा अतएव श्री महाप्रभुजी ने आज्ञा किया है “ चिन्तावपिनकार्या निवेदितात्मभिः कदापि भगवानपिपुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीचर्गाति । निवेदनंतुस्मर्तव्यं सर्वदा तादृशैर्जनैः । सर्वेश्वरश्चसर्वात्मानिचेच्छातः करिष्यति । सर्वेषां प्रभुसम्बन्धोनप्रायेक मितिस्थितिः ॥ अतोऽन्यविनियोगेपि चिन्ताकास्त्रस्य षोपिचेत् । अज्ञानादथवा ज्ञानाकृतमात्मनिवेदनं ॥ यैः कृष्णस्तत्कृतप्राणैस्तेपांका परिदेवना ” इत्यादि अथवा चतुश्लोकी में फिर आप आज्ञा करते हैं कि † “ एवं सदास्वकर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति प्रभुः सर्वसमर्थो हि ततोऽनिश्चिन्ततां व्रजेत् ॥ यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतः सर्वात्मना ह्यदिततः किमपरं व्रुहि लौकिकैर्वैदिकैरपि ॥’

अब जो वैसा दृढ़ नियम न सिद्ध हुआ हो तो क्या करना इस का साधन लिखते हैं ।

६२७ मत्तदसिद्धौ लोकाव्यवहारो हेयः किंतु फलत्यागस्तत्साधनं च कार्यमेव ।

उस (निश्चय) के असिद्धि में लोक व्यवहार को नहीं छोड़ना, किन्तु फल छोड़ना, बरञ्च उस (फल) का साधन अवश्य ही करना ॥ ६२ ॥ *

क्योंकि विश्वास दृढ़ भए बिना लोक व्यवहार छोड़ने में वही कहावत होगी “नघरकेहुएनघांठके” परन्तु उस का फल छोड़ देना अर्थात् लोक व्यवहार को असार समझना और विश्वास के सिद्धि के साधन में प्रवृत्त होना, उसके कौन २ साधन हैं सो आगे दिखाते हैं ।

† एवं सर्वैः स्वकर्तव्य मिति पाठ भेदः ।

* ६२ और जो वह प्रेम न सिद्ध होय तो लोक व्यवहार तो न छोड़ दे फलान्तु कर्मों के फल का त्याग करके उसे परम प्रेम का साधन करे ।

६३ ॐ स्त्रीधननास्तिकवैरिचरित्रंनश्रवणीयं ।

स्त्री, धन, नास्तिक, और वैरीका चरित्र नहीं सुनना ॥६३॥

स्त्रियों के चरित्र सुनने से विपरीत में वासना होती है, धन का चरित्र से लोभ की वृद्धि होती है, नास्तिकों का चरित्र सुनने से विश्वास में हानि होती है तथा वैरियों का चरित्र सुनने से उन पर क्रोध की वृद्धि होती है तो ये सब तमोगुणादिक के कारण इस से इनको सुननाही नहीं ।

६४ ॐ अभिमानदंभादिकंत्साज्यं ।

अभिमान, दम्भ आदि की छोड़ना ।

भक्तिमार्ग के मुख्य विरोधी यही दो हैं क्योंकि भक्ति सिद्धि होजाने पर भी इनके फिर उदय होने का भय रहता है । हम बड़े भक्त हैं हम लोगों के उपदेष्टा हैं इत्यादिक अभिमान और बाह्याचरण वा पूजा के आडंबर मे मेद न पड़ेय दंभ और आदि शब्द से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर इत्यादि लिये जाते हैं । जो कहो कि दुस्त्यज है तो बहते हैं ।

६५ ॐ तदर्पिताखिलाचारस्सन्कामक्रोधा- भिमानादिकंतस्मिन्नेवकरणीयं ।

सब आचार उसी (भगवान) को चर्पण कर काम क्रोध अभिमान आदि सब उसी पर करना ॥ ६५ ॥

अर्थात् काम करना तो यही कि वह परम श्रेष्ठ हमें मिले, क्रोध करना तो उसी पर कि क्यों नहीं मिलता ? अभिमान भी उसी का कि हमारा स्वामी सर्वेश्वर है हमारा प्यारा सब से सुन्दर है इत्यादि ।

६६ ॐ त्रिपभंगपूर्वकंनित्यदासनित्यकान्ता- भजनात्मकं वा प्रेमएवकार्यंप्रेमएवकार्यमिति ।

तीनों उपभंग पूर्वक (भगवान का) नित्य दास्य और

नित्यकान्ता की भाँति भजन रूपी प्रेम है कारना प्रेमही करना ॥ ६६ ॥

त्रिरूप शब्द का क्या अभिप्राय है यह कौन जाने यदि हम स्मार्त होते तो ब्रह्मा विष्णु शिव को एक करते व वेदान्ती होते तो त्रिपुटीभंग वा जीव ईश्वर और ब्रह्म की एकता करते परन्तु यह भक्ति शास्त्र है यहाँ इनका प्रयोजन नहीं यहाँ तीनों गुणों को मिटा कर वा भक्ति स्वरूप आनन्ददाश के आविर्भाव से तीनों (सत्, चित्, और आनन्द) का परस्पर पृथक्त्वा का भंग करना वा गुरु ईश्वर और उसके भक्तों के भेद का भंग इत्यादि । अब हम अपना सिद्धान्त दिखाते हैं । युगुल स्वरूप में और उनको पृथक् मानना अर्थात् यह वह और यद् दोनों अलग हैं यह जो तीन प्रकार की भावना है इसका भंग वा प्रेमी प्रेम और प्रेमपात्र इनके भेद के भंग पूर्वक दास भाव से वा कान्ता भाव से प्रेमही करना प्रेम्ही करना ० इति शब्द से इन साधनों के कहने के पीछे और कुछ शेष वक्तव्य नहीं यह बोधन किया ।

इति षष्ठम अधुवाक समाप्त हुआ ।

६७ ॐ भक्ताएकान्तिनोमुख्याः ।

भक्त एकान्ती (अस्थन्तरचारौ) (और सब से) मुख्य होते हैं ।

पहिले सूत्रों में साधारण भक्तों की महिमा दिखाकर अब एकान्ती भक्तों की महिमा दिखाते हैं । भक्तों में भी अनन्य और एकान्ती (अपनी भक्ति को गूढ़ रखने वाले) मुख्य हैं । इस एकान्ती शब्द से भक्ति भी सब संसार को दिखावे की भाँति एक संसारी आचरण है इस का निषेध किया ।

६८ ॐ कण्ठावरोधरोमांचाश्रुभिः परस्परं लपयन्-
नाः पावयन्ति कुलानि पृथिवींच ।

(जो भक्त लोग) कष्ट ज्ञा अधरोध, रोमांच और अश्रु-
आदि से युक्त होकर परस्परभाषण करते हुए कुंठ और घृ-
घिवी को पवित्र करते हैं ॥ ६८ ॥ *

स्मरन्तःस्मारयन्तश्चमियोवीचहरंहरिं । भक्त्यासंजातयामक्ता विश्रत्युत्पुलकांतनुं ॥
क्वचिद्बुदस्यप्युतचिन्तयाक्वचित् हसन्तिनन्दन्तिवदस्यलौकिकाः । नृत्यन्तिगायन्त्यनुशा-
ल्यन्यस्यं भवन्तितृष्णीम्परमेत्यनिर्वृताः ॥ इत्यादि प्रबुद्ध का वाक्य है ।

परम भागवत प्रल्हाद जी ने कहा है " निशम्य कर्माणि गुणानतुस्यान्वीर्या-
णिर्लीलातनुभिःकृतानि । यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गदं प्रोत्कण्ठद्गायतिरौतितृनृत्याति ॥
यदाप्रहस्तइवकाचिद्धसंत्याक्रन्दतेप्यायतिवन्दतेजनं । मुहुःस्वसन्वाक्तिहरेजगत्पते
नारायणेत्यात्मगीतर्गतत्रयः ॥" श्रीमुखवाक्य भी है " एव हरीभगवतिप्रतिहृत्स्वभा-
वोभक्त्याद्रवद्बुदयत्पुलकःप्रमोदात् । औत्कण्ठ्याव्यपकलयामुद्गुर्यमान स्तत्रापि-
चित्तवडिशशनकैर्विमुक्ते ॥" एकादश में भी " श्रुष्वन्सुभद्राणिरथांगपाणे जन्मा-
निकर्माणिचयानिलोके । गीतानिनामानितदर्शकानि गायन्विलज्जोविचरेदसंगः ॥
एवंव्रतःस्त्रप्रियनामकीर्त्या जातानुरागोद्भुतचित्तउच्चैः । हसत्यथोरोदितिरौतैतिगायत्यु-
न्मद्वननृत्यातिलोकबाह्यः" तृतीय में भी " देहञ्चतत्त्वपरमः स्थितमुत्थितं वा
सिद्धोविपश्यतियतोऽप्यवसेत्स्वरूपं । देवादुपेतमथ दैवदद्यादुपेतं वासोयथापरिवृतंमदि-
रामदान्वः ॥" इत्यादि और सब भक्तों का आचरण ऐसाही सुनने में आया है
यथा श्री गोपीजन का " विचिक्वयुस्मत्तकवद्वनाद्वनं " " रुरुदुःसुखरंराजन् "
" कृष्णोद्वपस्यतगति " " ललिताभितितन्मनाः " " विक्षिप्तमंतसोत्तुप " इत्यादि
और श्रीमहादेव जी की जडोन्मत्त पिशाचचर्या लोक में प्रसिद्ध ही है " स्मशाने-
ष्वाक्रोडा स्मरहरपिशाचाःसहस्रराः । चिताभस्मालेपः स्वगपि नृकरोटीपरिकरः । अम-
ङ्गल्यंशीलं भवतुतवनामैवमखिलं । तथापिस्मर्तृणां वरदपरमंमङ्गलमसि ॥" * "स्मशा-
नंचक्रानिलयुल्लिखन्नाविकोर्णविज्ञोत् जटाकलापः । भस्मावयुंष्ठामंलंस्वमदेहो देव-

* ६८ वी परस्पर प्रेम की बात करते हुए प्रेम दर्श्या में गद्गद कंठ होने
से रोमांच होने से और अपने प्रेम की धारुंधरी से अपने कुंठको वरनं पघिवी
को पवित्र करते हैं ।

* इति से कश्चप की का वाक्य तृतीय स्कन्ध में अध्याय ॥-१४ ॥

स्त्रिभिःपद्म्यातिदेवरस्ते ॥ नयस्यलोकेखजनःपरोत्रा नात्यादृतोनोतकाक्षिद्विर्गर्हः ।
 वयंत्रतैर्ध्वरणापाविद्धा माशास्महेजांवतमुक्तमोगां ॥ यस्यानवचाचरितंमनीषिणो शृणुन्-
 ल्यविद्यापटलंबविभित्सवः । निरस्तसाम्यातिशयोपियसुस्वयं पिशाचचर्चर्यामचरद्गतिसस्तां ॥
 हसन्तियस्याचरितंहिदुर्भगा स्खात्मन्नतस्याविद्रुपस्समीहितं । यैर्वस्त्रमाल्याभरणानु-
 लेपनैः श्वभोजनंस्नांमतयोपलालितं ॥ ब्रह्मादयोयत्कृतमेतुपालायकारणंविद्वदभिदं च-
 माया । आज्ञाकरीतस्यपिशाचचर्चर्याअहोविभून्नश्चरितंविडम्बनम् ॥ ”

अहो जव भगवान शिवजी ने जो कि इस मार्ग के परम गुरु और परम
 रहस्यवेत्ता “ ईशानःसर्वविद्याना मीश्वरःसर्वदेहिनां । ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिः ”
 “ अहंकलानांभ्रपभो ” “ विद्याकामस्तुगिरिशं ” “ योदेवानांप्रथमंपुरस्ताद्विश्वा-
 धियोर्द्रोमहर्षी ” “ हिरण्यगर्भपश्यतजायमानोसनोदेवः शुभयास्मृत्यासंयुनक्ति ”
 “ कस्तञ्चराचरगुरुनिर्वैरंशान्ताविप्रहं । आत्मारामंकर्यद्वेष्टिजगतो देवतंमहत् ॥ ”
 “ त्र्यम्बकंयजामहे सुगंधिपुष्टिवर्द्धनं । उर्वारुकमिवबंधनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ”
 “ तस्मिन्महायोगमये मुमुक्षुशरणंसुराः । ददृशुःशिवमासीनं त्यक्तामर्षमिवांतकं ” ॥
 “ विद्यातपोयोगपथ मास्थितंजगदीश्वरं । चरंतंविश्वमुद्दृढं वात्सल्याह्लोकमंगलं ॥ उप-
 विष्टंदर्भम्यांवृत्यां ब्रह्मसनातनं । नारदायप्रवोचंतं पृच्छतेशृण्वतांसतां ॥ कृत्वोरौद-
 क्षिणेसन्त्ये पादपञ्चञ्जजानुनी । बाहुप्रकोष्ठेक्षमाला मासीनंयोगमुद्रया ॥ तंत्रहानिर्वा-
 णसमाधिमास्थितं व्युपाश्रितंगिरिशंयोगकक्षां । सलोकपालमुनयोभनूना म्भयंमनुं प्रांज-
 ल्यःप्रणेमुः ॥ ” इत्यादि श्रुतिपुराणादिवाक्याँ से प्रतिपाद्य श्रीमहादेव जीने यह
 मत्त चर्या अवलम्बन किया तब और भक्तों का क्या पूछना है । ऐसीही ऋषमदेव
 जीकी भी चर्या है यथा “ जडान्धमूकवधिरपिशाचोन्मादक्वदवधूतवेषोऽभिमाध्य-
 माणोऽपिजनानांगृहीत मौनव्रतस्तूर्ण्णीबभूव ॥ ” तथा जडभरत जी की भी ऐसी ही
 चर्या है “ तयेत्यभविरतपुरुषपरिचर्याभगवतेपारिवर्द्धमानानुरागभरद्भूतहृदयशैथिल्यः
 प्रहर्षवेगेनात्मन्यवधीयमानरोमपुलककुलकऔत्कण्ठ्यप्रवृत्तप्रणयवाष्पनिरंक्ष्वावलोकनय-
 न एवं निजरमणारुणचरणारविदानुंघ्यानपरिचितभक्तियोगेन परिष्कृत परमाह्लाद
 गम्भीरहृदयहृदावगाढविषणस्तामपि क्रियमाणंभगवंत्सपर्याप्तस्मार ॥ ” उद्धव जी
 ने भी ऐसीही किया है “ मुक्तकण्ठोरुरोदहः ” श्रुतदेवजी ने भी ऐसीही किया
 है “ ध्रुवन्वासोननर्तह ” राजा चित्रकेतु की भी यही दशा है : “ सत्तमल्लो-
 कपदान्नाविष्टरंप्रेमाश्रुवर्षैरूपमेहयन्मुहुः ॥ प्रेमोपरुद्धाखिलवर्णनिर्गमोनेवाशक्तं प्रस-

मीक्षितुंचिरम्' (श्रीमद्भागवत) ध्रुवजी का भी ऐसाही चरित्र है। 'यत्तद्विष्णुपद-
माह यत्रह्वावधीरत्रतर्त्तानपादिः परमभागवतो अस्मत्कुलदेवताचरणारविन्दोदक-
मिति या'नुसवनमुत्कृष्यमाण भगवद्भक्तियोगेन दृढं हृदय औकण्ठ्य-
दिवशामीलितलोचनयुगलकुङ्कुमलविगलितामलवाष्पकलयाभिष्यज्यमानरोमपुलकोऽधु-
नापि परमादरेणाशिरसाविभक्तिं ॥' इत्यादि। श्री अक्रूर की भी ऐसी दशा हुई
“ तद्दर्शनात्हादविवृद्धसंभ्रमप्रेम्णोर्द्धरोमाश्रुकलाकुलेक्षणः । रथादवरकंसतेज्ज्वलेष्ट-
तप्रभोरमूयंघ्निरजांस्यहो इति ॥” इत्यादि वहाँ तक कहें सब भक्तों के ऐसेही
चरित्र हैं क्योंकि प्रेम भी एक मदिरा है जो पीएगा आपनी नाचेगा, रोएगा,
हंसेगा, बकेगा, श्रीमहाप्रभु जी का भी 'तत्कथाक्षितचित्तस्तत्स्मितान्यो ब्रज-
प्रियः' नाम है।

६९ ॐ तीर्कुर्वन्तितीर्थाणिसुकर्मिकर्माणि सच्छास्त्रीशारत्राणि ।

जो तीर्थों को तीर्थ करते हैं कर्माणि को सुकर्म करते
हैं, शास्त्रों को सच्छास्त्र करते हैं ।

“ तीर्थीकुर्वन्तितीर्थाणि ” “ तीर्थयुनानामुनयोभियन्ति ” “ सूर्यहितीर्था-
णिपुनंसंतः ” इत्यादि वाक्यों से तथा श्रीगङ्गा जी के प्रति भगवान के
वाक्यों से सिद्ध है और संत का कर्मों को सुकर्म करना राजा युधिष्ठिर के यज्ञ
के प्रसङ्ग से और व्यास जी के रम्याद से सिद्ध है संतों की महिमा विशेष कर
के ३६ । ३९ । ४० । ४१ । सूत्रों में लिख आए हैं ।

७० ॐ तन्मयाः ।

(कर्माणि वे) तन्मय (भगवत्स्वरूप) हैं ।

तीर्थादि के पवित्र करने में कारण देते हैं कि “ पवित्राणांपवित्रयो मङ्गला-
नांचमङ्गलं ” इत्यादि वाक्य से संसार में जो कुछ पवित्रता है भगवान की है तो
तन्मय जो भक्त हैं उन के दर्शन स्वर्ग से क्यों न पवित्र होंगे “ तीर्थपाद ” भग
वान का नाम है और उनके भक्त उनका चरित्र सर्वदा गान करते हैं और

भगवान् के चरित्रही से, तीर्थ, कर्म, और गाम्ब्रून सव को सत्तीर्थ, सत्कर्म, और सत्चरित्रता होती है यह क्रम से दिखाते हैं “ तत्रैवगङ्गायमुनाचतत्रगोदावरीसिन्धुसुरखतीच । सर्वाणितीर्थानिषंसितितत्रयत्राच्यु तोदारकथाप्रसंगः ” इत्यादि वाक्यों से तीर्थों का “ तत्कर्महरितोपयत्साविद्यातन्मतिर्यया ” “ धर्मःखनुष्टितः-पुंसां ि - सेनकथासुयः । नोत्पादयेद्यादिरति श्रमएवाहिकेवलं ” ॥ “ दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसंयमैः श्रेयोभिर्विधिवैश्वान्यैः कृष्णेभक्तिर्हिसाध्यते ” ॥ धिग्जन्मनस्त्रिवृद्धिचां धिग्ब्रतंधिग्बहुज्ञतां । धिक्कुलंधिक्क्रियादादचंधिमुखायेत्वधोक्षजे ” ॥ “ देशः कालः पृथग्द्रव्यं मन्त्रतन्त्रत्विवोऽग्नयः । देवतायजमानश्चक्रतुर्धर्मश्चयन्मयः ” ॥ “ नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं नशोभेतज्ञानमलंनिरंजनं । कुतः पुनः-शश्वदभद्रमीद्वरे नचार्पितंकर्मयदप्यकारणं ॥” इत्यादि से भगवान् का कर्म को भी प्रवृत्त करना और एकादश स्कन्ध के ९ अध्याय में “ कर्मण्यकोविदाःस्तथा ” इत्यादि परमं भगवान् चमस जी के वाक्य में भगवत्तोप विना कर्मांतर की प्रवृत्ति की निन्दा से कर्मों का सुकर्म होना तथा “ नयद्वचश्चित्रपदंहरेर्येगोतपावित्रप्रगृणीतकर्हिचित् । तद्वायसंतीर्थमुशंसितमानसा नयत्रन्सानिरमंत्युगिाक्षयाः ॥ तद्वाग्विसर्गोजनताघविप्लवो यस्मिन्प्रतिश्लोकमवद्ववत्यापि । नामान्यनंतस्ययशोकितानियच्छृण्वन्तिगायन्तिगृणंतिनाधवः ॥” इत्यादि से शास्त्रों का सत्छात्र करना सिद्ध है तो तन्मय, तन्मयरूप, तत्समानादरणीय परम भक्त जन तीर्थादिकों को तीर्थ बनावेगें इसमें कौन आश्चर्य है ।

७१ ॐ भोदंतिपितरो नृत्यंतिदेवतः सना- थाचेर्यंभूर्भवति ।

(जिनकी चरित्र देख) पितर आनन्द युत होते हैं, देवता लोग नाचते हैं और यह पृथ्वी सना होती है ।

“ कुलंपथितंजननीचधन्या वसुन्पराभागवतीचधन्या । खर्गेपितेर्पापितरंश्चधन्या येषांकुलेवैष्णवनामधेयं ” ॥ “ सवैपुष्यतमोदेगः सपात्रयत्र लभ्यते ॥” “ सङ्कीर्तनन्वामिं श्रुत्वा येच नृत्यन्ति वैष्णवाः । तेषांपादरजःस्पर्शास्सद्यःपृतावसुन्धरा ॥ तदिदंमनलंधन्यं यशयंसर्वमंगलं । श्रीवृष्णव्रीर्तनंयत्र यतनैवायुषोव्ययः ॥ तत्कीर्तनंभवेवैश्व कृष्णस्यपरमात्मनः । स्थानंतच्चभवेत्तीर्थभूतानांतत्रमुक्तिदं ॥ नात्रपापानि-

तिष्ठति पुण्यानिसुस्थिराणिच । तपस्विनाञ्चरतिनां व्रतामातपसांफलं ॥ ” इत्यादि
शास्त्र में महिमा कही है तथा श्रीमुख से भी गाझा करते हैं (वाराहपुराण)
“ जान्हव्यादानितीर्थीणि पापनिष्कृति हेतवे । कांक्षंति हरिदासानां दर्शनं हरि-
दासवत् ॥ मद्भक्तजनसम्मर्द्दं पादपांसुविसर्जनात् । चतुःसागरपर्यंतं पावनंस्याद्भुजुन्धरे ॥ ”
तथा प्रह्लाद जी से भी भगवान् ने कहा है “ त्रिःसप्तभिःपितापुतः पित्रुभिःसह
तेनव । यत्साधोऽस्पृशेजातो भवान्वैकुलपावनः । यत्रयत्रचमद्भक्ताः प्रशांताःसम-
र्दाः । साधवः समुदाचारातेयुयंलपिक्रीकटाः ॥ ” इत्यादि ।

७२ ॐ नास्तितेषुजातिविद्यारूपकुलधन- क्रियादिभेदः ।

उन (भक्तों) में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन, और
क्रिया आदि का भेद नहीं ।

“ नालं द्विजत्वं देवत्वं ऋषित्वं वासुरात्मजाः । प्रीणनायमुकुन्दस्य नदत्तं न बहु-
ज्ञता ॥ ” “ विप्राद्विपट्गुणयुतादरविदनाभपादारविदविमुखाच्छपचं बरिष्टं । मन्ये ”
“ अहोवत्स्वपचोतो गरीयान्यजिह्वाप्रेवतेतेनामभुभ्यं ॥ ” “ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः
शूद्रो वा यदि चैतरः । विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः ॥ ” “ दैतेयायक्षरक्षां-
सि स्त्रियः शूद्रात्रजौकसः । ” “ विद्याधारा मनुष्येयुवैश्याः शूद्राः स्त्रियोलजाः । सर्वे-
धिकारिणो ह्यत्र विष्णुभक्तौ यथानृप ॥ ” “ किरातहृणां प्रपुल्लिदपुल्कस आभीरवं-
कायवनाः खसादयः । येन्येचपापायदुपाश्रयाश्रयाः शुष्यन्ति तस्मै प्रभ विष्णवे नमः ॥ ”
पञ्चम स्कन्ध में श्रीहनुमद्वाक्य “ नजन्मनूनं महतोनसौभगं नवाङ्गनुद्विर्नाकृतिस्तो-
पहेतुः । तैर्यद्विधिष्ठानपिगोवनीकसां चकारसख्येवतलक्ष्मणाग्रजः ” इत्यादि कुरैलमुच्च-
कुन्दविदेहगाश्रीचम्परीपसगरागयनाहुपाद्याः । मां धात्वलर्कशतधन्वतुं तदेव देवव्र-
तोवा र्मर्तरवोदिलीपः ॥ सीमर्द्युतं कर्णविदेव लपिष्पलदसारखतोद्धवपराशरभूरिपे-
णाः । येन्ये विभीषणहनुमदुपेन्द्रदत्तपार्थाष्टिपेणविदुरश्रुतदेववर्षाः । तैवैविदं-
तितरं तिचदेवमायां स्त्रीशूद्रहृणशूद्रा अपिपापजीवाः । यद्यदृणक्रमपरायणश्रीलक्ष्मिणा
स्तिर्यकूजन्ता अपिकिसुश्रुतधारणायै ॥ ” इत्यादि वाक्यों से तदीयों को समता स्पष्ट
है और वैष्णवे जातिवृद्धि अर्थात् वैष्णवमें जाति भेद करना यह १४ महा अप-

राघ * में से एक गिना है और भागवतों के लक्षण में भी कहा है “ नयस्यज-
न्यकर्मान्यांन.वर्णाश्रमजातिभिः । सज्जतेस्मिन्नहंभावो देहेवै सहरेः प्रियः । ’ और
श्री हरिराय जी ने अपने ग्रन्थ शिक्षा पत्र में भी ऐसा ही लिखा है इसी से

* (१) भगवान् में देव विशेष या तत्व विशेष बुद्धि (२) शास्त्रों में ग्रन्थ
अर्थात् पौरुषेय बुद्धि (३) वैष्णव में जाति बुद्धि (४) गुरु में साधारण मनु-
ष्य बुद्धि (५) प्रतिमा में शिवा बुद्धि (६) प्रसाद में स्वाद्य बुद्धि (७) चर-
णोदक में जल बुद्धि (८) तुलसी में वृक्ष साधारण बुद्धि (९) गऊ में पशु
साधारण बुद्धि (१०) भागवत और गीता में ग्रन्थ साधारण बुद्धि (११)
भगवद् स्तोत्रा में मनुष्य ज्ञान बुद्धि (१२) सांसारिक प्रेम वा स्त्री सुख में
स्त्रीका मान वा स्मरण (१३) श्रीगीपीजन में परकीया भावना (१४) राज-
कीर्त्या में काम बुद्धि (१५) महोत्सव में स्वर्णसुवर्ण बुद्धि (१६) नास्तिक
वादावलम्बन (१७) सन्देश पूर्वक धर्माचरण (१८) अथवा पूर्वक धर्माचरण
वा धर्म में आक्षेप करना (१९) वैष्णव का बाह्य चरित्र देखना (२०) स-
हात्माओं के चरित्र पर गुण दोष विचारना (२१) अपने को उत्तम समझ-
ना (२२) किसी देवता या शास्त्र की निन्दा (२३) भगवत् विग्रह के सा-
सने पीठ लगाकर बैठना (२४) जूता पहनी, (२५) साक्षा पहनी, (२६)
कड़ो किए, (२७) नोक्त वस्त्र पहने [रेग्रम में नील ग्रह है], (२८) बिना
दंत धावन किए, (२९) सन्तत्याग मैथुनादि के पीछे बिना वस्त्र बदले मन्दि-
र में जाना, (३०) भयवृद्धिग्रह के सामने हाथ पैर हिलाना, (३१) ताखू-
लादि खाना, (३२) ऊँचे हंसना, (३३) कुचेष्टा करना, (३४) स्त्री को
घूरना (३५) स्त्रीधरना (३६) दूररे को आदर के हेतु शभिवादन करना,
(३७) दुर्गन्ध वस्तु खाकर या पहनकर, बिना गन्ध दूर भए वा अजीर्ण भए
पर जाना, (३८) सत्त होना अर्थात् नशा सेवन करके जाना, (३९) किसी
का अपमान करना वा मारना, (४०) काम स्त्रीधादि चेष्टा करना (४१)
घर आए मनुष्य की विशेष करके सन्त की अर्थ्यर्चना न करना (४२) सेवा
वा धर्म वा पांडित्य अपने से मानना वा सुकृत को अपना किया समझना
[४३] नास्तिकों का, लंपटों का, हिंसकों का, लोभियों का, मिथ्याचारियों
का संग करना [४४] विपत्ति परमेश्वर ने दिया यह बुद्धि करना [४५]
धर्म के बल पाप करना [४६] किसी को लक्ष्य मात्र भी कष्ट देकर अपने को

वैष्णवों को परस्पर जाति, विद्या, रूप, कुल, धन, और क्रिया आदि का भेद कदापि नहीं करना चाहिये क्योंकि जिस समय ब्रह्म तदीय हुआ उसी समय सब गुण पूर्ण हो गया “ यस्यास्तिभक्तिर्भगवत्प्रकीर्तना, सर्वगुणैस्तत्प्रसमासतेसुराः ” इत्यादि वाक्यों से सिद्ध है ॥

७३ ॐ यतस्तदीयाः ।

क्योंकि (ये) उसकी हैं ॥ ७३ ॥

पूर्वोक्त अभेद मानने का हेतु देते हैं कि जब तुम तदीय हो और वे भी तदीय हैं तब परस्परन्यूनार्थिक भेद कहाँ रहा सब एक से भाई हुए और जब सब विद्या, जाति, क्रिया इत्यादिकों का मूल पवित्र करनेवाला भगवान् इन के हृदय में बैठा है तो वे आपही सर्वोत्तमोत्तम हो गए ।

इति नवम अनुवाक समाप्त हुआ ।

धार्मिक समझना [४७] स्त्री पुत्र शूल्य परिवार आश्रित दीन संत को उपेक्षा [४८] वस्तु को अपने उपयोगी समझ कर सेवा में देना वा असमर्पित वस्तु ग्रहण करना [४९] इष्टदेव की शपथ खाना [५०] भगवत् धर्म का नाम वैचकार द्रव्य कामाना [५१] अन्य देवता से आशा करना [५२] धर्मशास्त्र की मर्यादा का उल्लंघन [५३] बह दशा भए बिना ज्ञान हाँकना वा वैसा आचरण करना [५४] देव चरित्र की भाँति आचरण करना [५५] सम्प्रदाय भेद से वैष्णवों को ऊँचा नीचा समझना [५६] भवतार की तारतम्य दृष्टि से निन्दा करना [५७] संसी में भी किसी को तुम परमेश्वर ही यज्ञ काटना [५८] परमेश्वर को कदापि किसी कारण से भी अप्सुमात्र भी परतन्त्र समझना [५९] क्रोध से किसी को चरणाश्रित वा प्रसाद देना [६०] भगवत् चित्र मूर्त्तिनाम आदि की भवघ्ना करना वा काटना [६१] किसी जीव को किसी प्रकार भी तापदेना वा उद्धेजन करना [६२] तर्कवितर्क से आश्रितकृता से मन डिगाना [६३] भगवदवतार में जन्म कर्म मानना [६४] सृगुण स्वरूप में भेद बुझि ।

७४ ॐ वादोनावलम्ब्यः ।

वाद का अवलम्ब नही करना ॥ ७४ ॥

श्रीमुख से निषेध किया है “ वादवादास्यजेत्तर्कान् पक्षकञ्चननाश्रयेत् । वेदवादारतोनेत्यानपाखण्डनिहेतुकः ॥” इत्यादि क्योंकि वाद से मनुष्य के चित्त में आप्रह की गांठ पड़ जाती है और जहां आप्रह होता है वहां तत्व नहीं प्रगट होता और बहुत वाद करने से तमोगुण उदय होने की भी संभावना है। अब उस में हेतु देते हैं ।

७५ ॐ बाहुल्यावकाशवत्वादनियतत्वात् ।

(क्योंकि वाद में) बहुत अवकाश है और अनियत है ॥ ७५ ॥

व्यासजी ने भी कहा है “ तर्काप्रतिष्ठानान् ” तथा श्रुति भी है “ नैषाम-तीरोपणीयादुःप्रतर्क्यैः ” क्योंकि जितने वाद हैं वे भगवान के तत्व जानने के हेतु हैं सो वादों से कभी नहीं जाना जायगा क्योंकि वहां तक बुद्धि जाती नहीं “ यतोवाचोनिवर्तते अप्राप्यमनसासह ” “ यद्वाचानाम्युदितं ” सनत्सुजात में भी “ तन्नविदुर्वेदविदोनवेदाः ” नेदं यदिदमुपासते ” “ वेदान्तकृद्वेदविदेवचाहं ” “ शब्द-ब्रह्मसुदुर्बोधं प्राणेन्द्रियमनोमयं । अनन्तपारगम्भीरं दृविंगाहंसमुद्भवत् ” “ नितन्मनो-विशतिवागपिचक्षुरात्प्राणेन्द्रियाणिच ” इत्यादि से ईश्वर की वादों से दूरता स्पष्ट है और वेद भी उसके विषय में नेति नेति कहते हैं तब व्यर्थ वाद क्यों करना क्योंकि उस की प्रतिज्ञा है “ मक्त्याहमेकयाग्राह्यः ” इस्से वादों को छोड़ कर केवल उस पर विश्वास करना ।

७६ ॐ भक्तिशास्त्राणि मननीयानितदुद्धोर्धक-कर्मार्ण्यपिकरणीयानि ।

भक्ति शास्त्रों को मनन करना और उस (भक्ति) की बढ़ाने वाले कर्मों को करना ।

* ७५ क्योंकि वाद में बाहुल्य का बड़ा अवकाश है और उस में कोई नियम नहीं है ।

बाद छोड़कर केवल सिद्धान्त स्वरूप भक्ति शास्त्रों को देखना और उनका चिन्तन करना, आचार्य और भगवद्भजन और सिद्धान्तों के रहस्य को जानना और भक्ति ब्रह्मनेत्राले उत्सव, सत्संग, तीर्थयात्रा, कथा श्रवण, तदीयों से आलाप, भगवत्सेवा और गुरुशुश्रूषा इत्यादि कर्म करना । इस्से भक्ति प्रतिक्षण वर्द्धमान रहेगी ।

७७ ॐ सुखदुःखेच्छालाभादित्यक्ते काले
प्रतीक्ष्यमाणे क्षणार्द्धमपि व्यर्थं न नयेत् ।

सुख दुःख इच्छा, लाभार्थि (का अभिमान) छोड़ कर काल की प्रतीक्षा करते हुए भी आधा क्षण भी व्यर्थ न बिताना ॥ ७७ ॥

यद्यपि इच्छादि के परित्याग से पूर्ण काम हो गए हैं और कुछ कर्तव्य है नहीं तथापि भगवद्भजन बिना क्षणभर भी नहीं बिताना क्योंकि यह तो नित्य कार्य है देखो मरने के समय करोड़ उपाय करो क्षण भर भी विशेष मनुष्य नहीं रह सकता ऐसे अनमोल क्षण को व्यर्थ बिताना कैसी मूर्खता की बात है ।

७८ ॐ अहिंसासत्यशौचदयाऽस्तिक्यता-
दिचारिञ्चाणि पालनीयानि ।

अहिंसा, सचाई, शुद्धि, दया, आस्तिक्यता आदि सब, चारित्र्यों का पालन करना ॥ ७८ ॥

क्योंकि सत्व गुण के ये सब कृत्य हैं इन के न करने से वा इनसे विरुद्ध करने से तमोगुण की प्रवृत्ति होती है और भक्ति में बाधा होती है ।

७९ ॐ सर्वदासर्वभावेन निश्चिन्तितैर्भग-
वानेव भजनीयः ।

सर्वदा सब प्रकार से निश्चिन्त होकर भगवान ही का भजन करना ॥ ७९ ॥

साधारण-शिक्षा देकर सिद्धान्त की शिक्षा देते हैं कि सर्वदा सब काल में दुःख में सुख में अनेक कर्मों में प्रवृत्त रहने के समय भी सर्व भाव से अर्थात् उसको अपना सर्वस्व मान कर केवल उसीही का भजन करना और भजन भी निश्चिन्त होकर करना क्या जो किसी प्रकार का खटका रहता है तब भजन मली भाँति नहीं होता ।

८० ॐ सकीर्त्यमानश्शीघ्रमेवाविर्भवत्यनु-
भावयति भक्तान् ।

बहु गाए जाने से शीघ्रही प्रगट होता है और अपने भक्तों को अनुभव कराता है ॥८०॥ *

सो तो उसकी प्रतिज्ञाही है “ नाहंवसामि वैकुण्ठे योगिनांहृदयेनच । मद्भ-
क्तायत्रगायन्ति तत्रतिष्ठामिनारद ॥” और नारद जी ने भी कहा है “ प्रगायतः-
खवीर्याणि तीर्थपादः प्रियश्रवाः । आहूतइवमेशीघ्रं दर्शनयातिचेतसि ॥” श्रीमहाप्रभु
जी ने भी कहा है “ क्लिश्यमानान्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तोयदाभवेत् । तदासर्व-
सदानन्दं हृदिस्थं निर्गतवहिः ॥ सदानन्दमयस्यापि कृपानन्दःसुदुर्लभः । हृद्रतः
खगुणान्श्रुत्वा पूर्णःप्रावयतेजनान् ॥” और श्रीमहाप्रभु जीका “ खयशो गान-
संहृष्टहृदयांभोजविष्टरः । यशःपीयूषलहरी प्लावितोन्यरसःपरः ॥” वाक्य है ।

८१ ॐ त्रिसत्यस्यभक्तिरेव गरीयसी भक्ति-
रेव गरीयसी ।

त्रि (काळ में) सत्य (भगवान) की भक्ति ही सब से
(साधनों से) बड़ी है भक्ति ही बड़ी है ॥८१॥

“ भक्त्यैवतुष्टिमन्येति विष्णुर्नान्येनकेनचित् । प्रीयतेमलयाभक्त्या हरिरन्य-
द्विदम्बन्, भक्त्यातुतोष भगवान् गजयूथपाय” भक्त्याहमेकयाप्राह्वः” भक्तिःपुनाति-
मनिष्ठा” भक्त्यामामभिजानाति” भक्त्यैकलस्यःपुरुषोत्तमोहि” भक्तिमान्यःसमे-
प्रियः” “ भक्तियोगेनसेवते ” भक्त्यैकलस्येपुरुषेपुराणे मुक्तौ किमर्थं कि-

* ८० बहु प्रेम मूर्ति भगवान भजन करने से शीघ्रही हृदय में वा प्रत्यक्ष प्रगट होकर भक्तों को प्रेमानन्द का अनुभव कराता है ।

धतेप्रपन्नः ” “धर्मार्थकामैःकितस्यमुक्तिस्तस्यकारे स्थिता । समस्तजागतांमूलेयस्यभ-
क्तिःस्थिराकरे ॥” “ब्रह्मसंस्थोमृतत्वमेति” “मयिभक्तिर्हि भूतानाममृतत्वव्याकल्पते”
“तन्निष्ठस्यमोक्षोपदेशात्” “तत्संस्थस्यामृतोपदेशात्” “सकृदेवप्रपन्नाय तवास्मीतिप्र-
याचने । अमर्षं सर्वभूतेभ्यो ददास्येत इति मम ॥” “भक्त्यात्वनन्ययाज्ञक्यः” “भक्त्याल-
भ्यस्त्वनन्यया” “ब्रह्मवान्भजतेयोमांसमेयुक्ततमोमतः” “भक्तिप्रियोमाधवः” “मयिसंजा-
यते भक्तिः कोन्योत्सार्योवशिष्यते” “योमेभक्त्याप्रयच्छति” “तदहंभक्त्युपहृतं”
“अण्वप्युपाहृतंभक्तैःप्रेम्णाभूर्ध्वमेभवेत्” “श्रेयोभिर्विधिवैश्वान्यैः कृष्णेभक्तिर्हि
साध्यते” “आपियः सुदुराचारी भजतेमामनन्यमाक्” “अहंभक्तपराधीनो” इत्या-
दि वेद, उपनिषद्, श्रीमुखवाक्य, रामायण, भारत, स्मृति, व्याससूत्र, शांडिल्यसूत्र,
पुराण, और तन्त्रों से सिद्ध है कि सब साधनों में मुख्य साधन केवल भक्ति ही है
विस्तर भयात् विशेष प्रमाण नहीं दिया ।

८२ ॐ गुणमाहात्म्यासक्ति १ रूपासक्ति २
पूजासक्ति ३ स्मरणासक्ति ४ दासासक्ति ५ सख्या-
सक्ति ६ कान्तासक्ति ७ वात्सल्यासक्ति ८ आत्म-
निवेदनासक्ति ९ तन्मयतासक्ति १० परमविरहा-
सक्ति ११ रूपा एकधाप्येकादशधा भवति ॥

(यह भक्ति) एक रूपही होकर गुणमाहात्म्यासक्ति, रूपा-
सक्ति, पूजासक्ति, स्मरणासक्ति, दासासक्ति, सख्यासक्ति,
कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, तन्मयता-
सक्ति, और परमविरहासक्ति रूप से एकादश प्रकार की
होती है ॥ ८२ ॥ *

* ८२ जो भक्ति गुण माहात्म्य के सुनने में रूप में पूजा में स्मरण करने
में दास्य करने में संखाभाव में वात्सल्य भाव में कान्ता भाव में आत्म निवेद-
न में तन्मय में और परम विरह में अलग अलग वा कृष्ण वा सब सासक्तिथी के
होने से एक भी एकादश भाति की सी होती है ।

इस से श्रवणादि नवधा भक्ति गौण है इसका निषेध किया क्योंकि नारद जी का मत है कि भक्ति बीज के हृदय में उत्पन्न होने के पूर्व जो श्रवणादिक है उसको श्रवण भक्ति नहीं पुंकार सक्ते और यह पूर्वोक्त जो श्रवणादिक है वे शुद्धा भक्ति से भिन्न नहीं हैं अतएव प्रति शब्द के साथ आसक्ति का शब्द दिया है। जो यह शंका करो कि जिनको प्रेम सिद्ध है उनको तो पूर्वोक्त आसक्तियाँ होंगी सो नहीं यह विशेष आसक्ति परत्व है। जैसे प्रेमियों को अपने प्रेम पात्र का सब ही अंग सुन्दर लगता है तथापि प्रति प्रेमी को अपने प्रेम पात्रों में कोई अंग वा चेष्टा विशेष मोह के विषय होते हैं, वैसेही पूर्ण प्रेमियों को यद्यपि सबही आसक्तियाँ सिद्ध हैं तथापि किसी की किसी में विशेष रुचि है किसी को किसी में है। श्रवणादिकों को गौणी भक्ति मानने में एक बड़ा दोष यह है कि जैसे अर्जुन सख्य के वा श्री हनुमान जी दास्य के अधिकारी हैं तो जिनके मत में यह भक्तियाँ गौणी हैं उन के मत से ये भक्त भी गौण हुए। तो इस सूत्र से शुक, प्रल्हाद, अर्जुन, बलि, विभीषण आदि एक एक भक्ति के विशेष अधिकारी महानुभावों को गौणमक्त कहनेवालों का मत परास्त हुआ और सिद्ध हुआ कि प्रेम एक ही वस्तु है जो केवल रुचि की विचित्रता से अलग अलग छलवे दिखता है। इन में तन्मयतासक्ति तथा परम विरहासक्ति वियोगी भक्तों को सिद्ध है। शेष आसक्तियाँ संयोगी वियोगी दोनों को सिद्ध हैं। और किसी २ भक्त को एक एक आसक्ति सिद्ध है परन्तु किसी को दो तीन भी सिद्ध हैं और श्री गोपीजन को तो सभी सिद्ध हैं।

१ “गुणमाहात्म्यासक्ति”—जैसा परीक्षित् को नारद को, तथा हनुमान जी को और श्रीपृथुराजा को जिसने केवल हरि गुण श्रवण के अर्थ दस हजार कान मांगे थे। परीक्षित् ने कहा है “ नैवातिदुःसहाक्षुन्मां त्यक्तोदमपिवाधते। पिवंतं त्वन्मुखांभोजच्युतं हरिकथामृतं ॥” नारद जी का वाक्य “ देवदत्ताभिर्मांवीणां खरब्रह्मविभूषितां। मूर्च्छयित्वा हरिकथां गायमानश्चराम्यहं ” “प्रगायतःखवीर्याणि तीर्थपादपुथुश्रवाः। आहूतह्रवमे शीघ्रं दर्शनंयातिचेतिसि ॥” हनुमान जी का तो ध्यानही है “ यत्प्रयत्नरघुनाथकीर्तनं तत्तत्रकृतमस्तकांजलि। बाष्पवारिपरिपूरि-
लोचनं मारुतिनमतराक्षसांतकं ॥” तथा अपने मुंह से कहा है [रामायण उत्तर-
काण्ड १०७ सर्ग ३१ श्लोक.] “ यावत्तवकथालोके विचरिष्यतिपावनी। तावत्

स्थास्यामिमेदिन्यां तवाज्ञामनुपालयन् ॥” तथा [श्रीमद्भागवत षष्ठम स्कन्ध १९ अध्याय ८ श्लोक] “सुरोऽसुरोवाप्यथशनरोनरः सर्वात्मनायःसुकृतज्ञमुत्तमं । भजे-तरामंमनुजाह्वार्तिहरिं यदत्तरामनयत्कीसलान्दिवं ” ।

२ “रूपासक्ति” —दो प्रकार की एक किशोर रूप में एक बाल रूप में । बाल रूप में श्री मातृचरण श्री नन्दोपनन्दादिक बृद्ध ब्रज वासियों को, तथा किशोर रूप में ब्रज की स्त्री पुरुष पशु पाक्षि मात्र को जैसा “ अहोअमीदेववरामराचितं” इत्यादि श्लोकों में, श्री मुख से भी कहा है और “अक्षण्वतांफलमिदंनपरंविदामः” इत्यादि वेणु गीत के श्लोकों से तथा “ वामबाहुकृतवामकपोले ” इत्यादि युगल गीत के श्लोकों से सिद्ध है ।

३ “ पूजासक्ति ” —महाराज पृथु को, जैसा उन्होंने कहा है “ यत्पादसेवा-मिरुचिस्तपसिनामशेषजन्मोपाचितंमलंभिः । सद्यःक्षिणोऽयन्वहमेवतीसती यथापदांगुष्ठ-विनिःसृतासरिद ॥” इत्यादि ।

४ “ स्मरणासक्ति ” —परम भागवत प्रह्लाद को, जैसा “सोहंप्रियस्यसुहृदः परदेवताया लीलाकथास्तवदृष्टिहविरंभ्यगीताः । अंजस्तितरम्यनुगुणःगुणविप्रमुक्तो दुर्गाणितेपदयुगाल्यहंससंगः ॥” इत्यादि ।

५ “ दासासक्ति ” —परम भागवत प्रह्लाद और हनुमान आदि को, जैसा प्रह्लाद जी का वाक्य “ आयुःश्रियंविभवमैन्द्रियमाविरिंष्यात् । नेच्छामितेविलुलि-तानुरुविक्रमेण कालात्मनोपनयमानिजमृत्युपाद्वं ॥ ” तथा हनुमान जी का वाक्य “ दासोहंकोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः । ” इत्यादि और यथा अक्रूर जी का वाक्य “ अहंहिनारायणदासदासो दासानुदासस्यच दासदासः ” ॥ विदुर जी का वाक्य “ वासुदेवस्येभक्ता शान्तास्तद्गतमानसाः । तेषांदासस्यदासोहमेवयंजन्म-जन्मनि ॥” इत्यादि । तथा उद्धव जी और युधिष्ठिर को तो हरिदास नाम ही मिला है ।

६ “ सख्यासक्ति ” —जैसा अर्जुन, सुग्रीव, उद्धव, कुबेर, सुदामा, देव, मुद्गल श्रीदामादि, गरुड़, इत्यादि और कभी कभी हनुमान जी को भी हो सकती है । अर्जुन को श्रीमुख से कहा है “ भक्तोसिमेसखाचेति ” तथा अर्जुन का वाक्य “ सखेतिमत्वाप्रसमंयदुक्तं हेऋष्णहेयादवहेसखेति ” तथा श्रीमद्भागवत “ नर्माप्यु-दाररुचिरस्मितशोभितानि हेपार्थहेऽर्जुनसखेकुरुन्दनेति संजाल्पितानिनरदेवद्वदित्यु-

शानिः स्मर्तुं कुठन्ति हृदयं मम माधवस्य ॥ शय्यासनाटनविकल्पनमोजनादिष्वैक्याद्वय-
स्यकृतवानिति विप्रलब्धः । सख्युः सखेवपितृवचनयस्य सर्वं सोहमहान्महितहाकुमते-
रक्षमे ॥” तथा “थाप्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपाथिनी । त्वामनुस्मरतः सामेहद्वयान्नाप-
सर्पतु ॥” उद्धव जी की “वृष्णीनां प्रवरो मंत्रो कृष्णस्य दयितः सखा ॥” श्रीमुख
वाक्य भी “ नोद्धवोष्वपिमन्थूनो यद्गुणैर्नादितः प्रभुः ” “नतथा मे प्रियतमो आत्मयो-
निर्देशकरः । नचसंकर्षणो नश्रीर्नैवात्माचयथाभवान् ” उद्धव जी का वाक्य
“ शय्यासनाटनस्यान ज्ञानक्रीडाशनादिषु । कथं त्वां प्रियमात्मानं वयं भक्तास्त्यजे-
महि ॥” तथा “ मंत्रेषु मां वा उपहूय यस्वमकुण्ठिताखण्डसदात्मबोधः । पृच्छेः प्रभो
मुग्धइवाप्रमत्ततत्रोमनोमोहयतीवदेव ” कुबेर की श्रीशिव जी में, यथा मनुजी का
वाक्य “ हे लं गारिशभ्रातुर्धनदस्य त्वया कृतं ।” तथा श्रीशुकदेव जी का वाक्य
“ उपास्यमानं सख्याच भर्त्रा गुह्यकरक्षसां ।” कोश में भी “ कुबेरः सख्यन्वकसखा ”
इत्यादि । सुवल श्रीदामादि की यथा “ श्रीदामानामगोपालो रामकेशवयोः सखा ।
सुवलस्तोककृष्णाद्या गोपाः प्रेम्णेदमब्रुवन् ।” एवं सुहृद्ब्रह्मचः श्रुत्वा सुहृत्प्रियचिकीर्षया ।”
इत्यादि दशम के १८ अध्याय में सब इनही लोगों के सख्यत्व की सीमा लिखी
है । श्रीसुदामा जी की यथा “ कृष्णस्यासीत्सखाकश्चिद्ब्राह्मणो ब्रह्मविचरः । ननु ब्र-
ह्मभगवतः सखासाक्षाच्छ्रियः पतेः ॥” जिसका भगवान ने ऐसा आदर किया
“ तं विलोक्याच्युतो दूरात्प्रियापर्यकर्मो स्थितः । सहसोत्थाय चाम्येत्य दोर्म्यां पर्यग्रहो-
न्मुदा ॥ सख्युः प्रियस्य विप्रर्षे रंगसंगातिनिवृत्तः । प्रीतोऽप्यमुचदम्बिदूनेत्वाभ्यां पुष्करे-
क्षणः ॥ अयोपवेक्ष्य पर्यके स्वयंसख्युः समर्हणं । उपहृत्या वनिज्यास्य पादौ पादावने-
जनीः ॥ अप्रहीच्छिरसारजन् भगवांल्लोकपावनः । कुचैलमलिनं क्षामं द्विजं धमनि-
संततं ॥ देवीपर्यचरञ्छैव्याचामरव्यजनेन वै ॥ योसौ त्रिलोकगुरुणा श्रीनिवासेन
संभृतः । पर्यं कस्यां श्रियं हित्वा परिष्वक्तोऽग्रजो यथा ॥” जिसके चावल भगवान
ने आपही छीन कर खाए और “ सख्युः प्रियचिकीर्षया ” “ परमप्रीणं
सखेः ” “ पर्यं केभ्रातरौ यथा ” “ दाशार्हकाणामृषभः सखामे ” “ सुहृत्कृतं
फलवपिभूरिकारि ” “ तस्यैवमेसौ हृदसख्यमैत्री ” “ एवं सविप्रो भगवत्सुहृत्तदा ”
इत्यादि । गरुड की जैसी “ भगवान् भगवत्प्रियः ” “ विनतासुतासे विन्यस्त-
हस्तमपरेणुनाममञ्जं ।” तथा हनुमान जी की “ नजन्मनूजं महतो नसौ भगंनवा-

हनुवुद्धिर्नाकृतिस्तोपहेतुः । तैर्विद्विसृष्टानपिनोबनौकसश्चकारसख्येवतलक्ष्यणाप्रज्ञः ॥”
तथा सुभ्राव को बाल्मीकि रा० किष्किन्धा पद्य सर्ग श्लोक १२ “ तमब्रवीत्ततो-
रामः सुभ्रावं प्रियवादिनं । आनयस्व सखे श्रावं किमर्थप्रविलम्बसे ॥” तथा सुभ्रावं
का वाक्य ७ सर्ग श्लोक १३ “ हित्वयस्यभावेन ब्रुवे नोपदिशामि ते । वयस्पतां
पूजयन्मे नत्वञ्चोचिनुमर्हसि ” तथा श्रीरामजी का वाक्य ७ सर्ग श्लोक १९ “ कर्त-
व्ययद्वयस्येन क्षिभेनचहितेनच । अनुक्यञ्चयुक्तञ्च कृतंसुग्रीवतत्त्वया ॥ एपचप्रकृति-
स्थोहमनुनीतस्त्वयासखे । दुर्लभोहीदृशोवञ्चुरस्मिन्काले विज्ञेयतः ॥” इत्यादि ।

७ “ कान्तासक्ति ”—यथा श्री गोपीजन को । यद्यपि श्रीगोपीजन को
सभी आसक्तियां सिद्ध हैं यह पहले लिख आए हैं और विरहासक्ति में निरूपण भी
करेंगे तथापि श्री गोपीजन की आसक्तियों में कान्तासक्ति अङ्गी भाव से है जो “कृष्णवि-
दुःपरकान्त ” इत्यादि वाक्यों से सर्वत्र सिद्ध है ।

८ “ वात्सल्यासक्ति ”— श्रीनन्द, यशोदा, कौशल्या, दशरथ, सुमित्रा, कश्यप,
आदिति, धनिष्ठा, श्री वृषभानु, कौर्त्तिदा, पूर्णमासी इत्यादि को ।

९ “ आत्मनिवेदनासक्ति ”—यथा बाले को, सर्वस्वात्मनिवेदनेबलिरसूत ।

१० “ तन्मयतासक्ति ”—यथा श्री शिव जी को, जिनका अभेद पुराणों से
सिद्ध है ।

११ “ परमविरहासक्ति ”—यथा श्री उद्धवादिको, “ योगेनकस्तद्विरहंसहेत ”
इत्यादि । तथा श्री गोपीजन को ।

अब श्री गोपीजन में सभी आसक्तियां सिद्ध हैं यह दिखाते हैं ।

१ “ गुणमाहात्म्यासक्ति ”—श्री गोपीगीत, वेणुगीत, युगुलगीत, भ्रमरगीत,
आदि से सिद्ध है, २ “ कृपासक्ति ”—गोपीनांपरामानन्द आसीद्गोविन्ददर्शने ।
क्षणयुगशतमिव यासां येनविनाभवंत् ॥ अपरानिमिषपट्टम्यां जुपाणातन्मुखांजुं
आर्पातमपिनातुष्यसंतस्तच्चरणयथा ॥” इत्यादि से, ३ “ पूजासक्ति ” फल फूलादि
दान से, ४ “ स्मरणासक्ति ”—“ स्मरंलःकृष्णचेष्टित ” इत्यादि से, ५ “ दासासक्ति ”
“ भवामदास्यः ” “ श्यामसुन्दरतेदास्यः ” “ शिरस्सुचार्किकरीणां ” इत्यादि, ६
“ सख्यासक्ति ”—“ सखउदेयिवात् ” “ भजसखेभवत् ” “ कितवयोधितः ” इत्यादि से
७ “ कान्तासक्ति ”—“ कान्तकामद ” “ प्रेष्ठोभवात् ” “ दयितदृश्यतां ” “ सरतना
धते ” इत्यादि वाक्यों से । ८ वात्सल्यासक्ति—“ गोप्यः सुमृष्टमाणिकुण्डलः ” से

दामोदर लीला आदि में स्पष्ट है। ९ “आत्मनिवेदनासक्ति” — “यःपत्यपत्य” इत्यादि श्लोकों से, १० “तन्मयतासक्ति” — “कृष्णोहं” इत्यादि वाक्यों से, ११ “परमाविरहासक्ति” “क्षणयुगशतमिव” इत्यादि से। और इन श्री गोपीजन को नित्यलीला में श्री मुख का दर्शन होते भी केवल पलक की ओट में जिनको परमविधोग होता है और कहती हैं कि हे निर्दई विधाता इस मुखचन्द्र देखने के हेतु तुझको रोम रोम में आंखें बनानी थी उसके बदले यह उलटा अन्धेर किया कि बिना वात की पलक बना दी। तो जिनका प्रेम और विरह इतना सीमा के बाहर है उनको ये सब आसक्तियां सिद्ध हों इस में क्या आश्चर्य है। जिन की चरणारविन्द की रेणु के प्रसाद से लोग प्रेम पद के अधिकारी हो सकते हैं उन के प्रेम का क्या पूछना है। भक्तिमार्ग के उद्धार कर्ता श्रीआचार्य जी ने जिनकी स्पृहा की है यथा ‘गोपिकानांचयत्तदुःखं तत्तदुःखंस्थान्ममकृत्स्विन् ॥’ और जिन को अपने मार्ग का गुरू लिखा है यथा “गोपिकाप्रोक्तागुरवःसाधनेमताः” तो अब इस से बढ़ कर उनके आदर के हेतु वा प्रमाण के हेतु हम क्या कहें।

ये प्रेम के ग्यारह अलग २ भेद नहीं हैं किन्तु स्वरूप हैं। क्योंकि जो अलग होती तो जिस को एक सिद्ध हो उस को दूसरी न होती और यदि दो सिद्ध होंगी तो एक से जिस को दो सिद्ध हो उस की विशेषता होगी और प्रेमियों में कोई छोटा बड़ा नहीं इस से भक्ति एकही है केवल प्रेमियों की रुचि भेद से अलग दिखाती है।

८३ ॐ इत्थैवंवदन्तिजन जल्पनिर्भया एक-
मताःकुमारव्यासशुकशाण्डिल्यगर्गाविष्णुकौण्डिन्य
शेषोद्धवारुणबलिहनुमद्विभीषणादयो भक्त्याचार्याः

कुमार (सनकादिक) व्यासजी, शुकदेवजी, शाण्डिल्य, गर्गाचार्य, विष्णु, कौण्डिन्य, शेष, उद्धवजी, आरुणि, बलि, हनुमानजी, विभीषण, आदि भक्ति के आचार्य, लोक के उप-
हास से निर्भय होकर पूर्वाक्त मार्ग कहते हैं ॥ ८३ ॥

* ८३ लोगों की वक्तवाद से निर्भय होकर एक मत से कुमार व्यास शुक शाण्डिल्य गंगा विष्णु कौण्डिन्य शेष उद्धव आरुणि बलि हनुमान और विभीषणादिक भक्ति के आचार्य यही कहते हैं।

कुमार—सनकादिक, इन का प्रेम मार्ग निम्बार्क मत के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान् ने इन लोगों से अपना तत्व हंस का स्वरूप लेकर कहा है और इनकी वंश परम्परा मन्वन्तर वर्णन में श्रीमद्भागवत में लिखी है “महर्षयः सप्तपूर्वेषु चत्वारोऽरोमनवत्तया । मद्भावामानसात्वाता येषांलोकइमाःप्रजाः ॥” और प्रमाणिक स्मार्तो के निवेदों में भी एकादशी के प्रसङ्ग में ४९ दंड का वेध मानने वालों का इन का मत “कपालवेधमित्याहुः राचार्यायिहरिप्रियाः” “निम्बार्को भगवान्येषां” “मित्याहुः सनकादयः ॥” इत्यादि वाक्यों से प्रमाण करके लिखते हैं और निम्बार्कचार्य ने अपना परमाचार्य इनही लोगों को माना भी है जैसा उन्होंने दश-श्लोकी में कहा है “उपासनायं नितरांजनैःसह प्रहाणयेऽज्ञानतमोनिवृत्तये । सन-दनाद्यैर्मुनिभिर्योक्तं श्रीनारदायाखिलतत्वसाक्षिणे ॥” इत्यादि और खोग तो भक्ति साधनार्थ ही प्रगट हुए हैं क्योंकि यद्यपि उन्होंने ने अपना शिष्य रूपी वंश तो स्थापन किया पर पिता की आज्ञा भी न मान कर मोह करने वाली और सृष्टि न किया यथा “तेनैच्छन्मोक्षधर्माणो वासुदेवपरायणाः” इत्यादि वरंच भक्ति स्थापनार्थ यह भगवान्ही का अवतार है “तस्मिन्तपोविधिविधिलोकसिसृक्षया मे आदौ सनात्सतपसः सच्चतुःसनोभूत् । प्राकृत्यसंग्रहविनष्टमिहात्मतत्त्वं सन्ध्याजगौदमुनयो-यदचक्षतात्मन् ॥” इति ।

व्यास—व्यास जीने तो मुक्तकण्ठ होकर कहाही है कि “आलोक्यसर्व-शास्त्राणि विचार्यचपुनःपुनः । इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयोनारायणः सदा ॥” इत्यादि जो कहो कि अनेक पुराणों में व्यास जी ने अनेक मत और उपासना कही है तो उस में भक्ति की विशेषता कहाई आई यह शंका मत करना क्योंकि व्यास जी को तो दृढ़ प्रतिज्ञा है “वेदेरामायणैवैवपुराणेभारतेतथा । आदावन्तेचमध्वेच हरिःसर्वत्रगीयते ॥” इत्यादि इन को भक्ति मिलने का विशेष वर्णन भक्त वंश परंपरा में मिलेगा ।

शुकदेवजी—शुकदेवजी ने राजा से पहिले ही सिद्धान्त स्वरूप कहा है “देहा-पत्यकलत्रादिध्वात्मसैन्येष्वसत्सुपि । तेषांप्रमत्तोनिधनं पदयन्पि नपदयति ॥ तस्मा-द्भारतसर्वात्माभगवान्द्वारिरीद्वरः । श्रोतव्यःकीर्तिव्यश्च स्मृतैर्व्यक्षेच्छताभुवं ॥ एतावा-नुसांख्ययोगाम्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया । जन्मलामुपरःपुंसांमंतेनारायणस्मृतिः ॥ प्राये-णमुनयोरानु न्वृताविधिनिषेधतः । नैर्गुण्यस्थारमन्तेस्यं गुणानुकथने हरेः ॥” इत्यादि

क्यों न कहे वेद जिनको मुक्त लिखता है “शुको मुक्तो वामदेवोवा” और भगवान की माया जिनको कभी व्यापीही नहीं, जिनको देख कर छिपों ने भी लज्जा न की, जिन्होंने पिताको वृक्षों में से उत्तर दिया और प्रेममार्ग का सिद्धान्त स्वरूप श्रीमद्भागवत प्रगट करके राजा परीक्षित को मोक्ष दिया तथा ससाह में भी बीच २ में जब लीला स्मरण आती थी तब वेसुघ हो जाते थे उन के प्रेम का निरूपण यहां क्या हो सकता है ॥

शाण्डिल्य—शाण्डिल्य जीने तो खतन्त्र भक्तिशास्त्र ही रचा है जिसमें ज्ञान योगादि से भक्ति साधन ही उत्तम कहा है ।

गर्ग—गर्गाचार्य ने अपनी गर्गसंहिता में अनेक प्रकार के भक्ति के रहस्य तथा यादव आदि के नष्ट होने पर जब भगवत्त्व का जानने वाला कोई नहीं रहा तब वज्रनाम से अनेकों प्रकार का रहस्य, जो ब्रजमें तथा उद्धव नारदादिकों के मुख से सुना था, कह कर फिर से भक्ति मार्ग का स्थापन किया । इनको वात्सल्य और दास्य दोनों भक्ति सिद्ध थी ।

विष्णु—लोक में जिनका नाम विष्णु स्वामी प्रसिद्ध है । विशेष वर्णन परम्परा में देखो ।

कौण्डिन्य—कौण्डिन्य के विषय में हम इतनाही जानते हैं कि हमारे आचार्य ने अपनी गुरु परम्परा में श्री गोपीजन के समान इनको भी माना है यथा “ कौण्डिन्योगोपिकाः प्रोक्ता गुरवः ” इति और जिन को तन्मयतासक्ति थी जिनको इस आसक्ति से वृक्षों में भी सर्वत्र श्री अनन्तकां प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था ।

शेष—शेष जी ने केवल दास्य भक्ति की शिक्षा के हेतु श्री लक्ष्मण जी का स्वरूप लेकर संसार को दिखाया कि दास्य इसका नाम है और इस रीति करना होता है और आप ने भी पञ्चवटी में अपने सब गुप्त सिद्धान्त उपदेश किए तथा श्री लक्ष्मी जी और गरुड़ जी से नारायणीय सिद्धान्त पाकर उन्होंने ने चित्रकेतु इत्यादि को उपदेश किया जो मत अब तक रामानुजीय नाम से प्रसिद्ध है । और जिस में यामुन शंठकोप इत्यादि महात्मा और अग्रत्वामी इत्यादि प्रेमी हुए ।

उद्धव—उद्धव जी का क्या पूछना है जिनको प्रेमपात्र और प्रेमी अर्थात् श्रीभगवान तथा श्री गोपीजन ने आप अपने मुख से प्रेममार्ग का उपदेश किया है उनकी क्या बात है । ये वही उद्धव जी हैं जिनको छोटपेन से खेल्हीं में

भगवत्पूजा का व्यसन था। और जिनको भगवान ने अपना तत्व संसार में स्थापन करने के हेतु ब्रह्मशाप उल्टेघन करके पृथ्वी में छोड़ा उन का क्या पूछना है।

आरुणि— इनही का नामांतर निम्बार्क है और ये सनकादिकों के मत के प्रवर्तक हैं और इन के दश श्लोक जो मिलते हैं उनमें युगल स्वरूप की भक्ति का सिद्धान्त किया है।

“ब्रूह्मगिनिं ब्रह्मपरं वरेण्यं च्याये मङ्गल्यं कमलेक्षणं हरिं । अंगेतु वामे नृपमानुजा सुदा विपाजमानामनुरूपसौभगां ॥ सखीसहस्रैः परिसेवितांसदा स्मरेमदेवींसकलेष्टकामदाम् ॥”
ये बड़े प्राचीन हैं क्योंकि श्रीमद्भागवत में वेद स्तुति में इनका मत कहा है और जहाँ परीक्षित राजा को मिलने के हेतु ऋषिगण आये हैं वहाँ भी इनका नाम है यथा “ राजपिवर्या अरुणादयश्च ” ये श्रीस्वामिनी जी के कंकण के पूजाखितार हैं अतएव इन को लोग सुदर्शन तत्व कहते हैं और किसी समय इन्होंने ने यतियों का निमन्त्रण किया था उनके आने में विलम्ब हुआ और जब भोजन करने बैठे साक्ष हो गई इस से उन यतियों ने कहा कि अब हम नहीं खायेंगे तब इन्होंने ने कहा कि आप लोग खाइये अभी सूर्य है और आप नीम पर चढ़कर सूर्य बन के दर्शन दिया अतएव निम्बार्क नाम पड़ा। इन के सेव्य श्री स्वरूप श्रीगोपीजन वल्लभजी और शालिग्राम सर्वेश्वर जी अभी विद्यमान हैं तथा श्रीनिवासाचार्य पुरुषोत्तमाचार्य इन्द्रादि सुरेश्वर पण्डित और हरिवंश जी, व्यासजी, स्वामी हरिदास जी इत्यादि प्रेम इन्हीं के सम्प्रदाय में हुए हैं।

बलि—इनको सर्वस्वात्मनिवेदन भक्ति सिद्ध थी अपने पितामह साक्षात् प्रल्हाद जी से उपदेष्टा और भगवान से पात्र पावें तो फिर इनका क्या पूछना है। कहते हैं कि यतीन्द्र, बलि अंशुप और विष्वक्सेन नाम के किसी काल में प्राचीन चार वैष्णव सम्प्रदाय थे परन्तु अब सब लुप्त हुए।

हनुमान्—श्रीहनुमान् जी की दास्य भक्ति का वर्णन ऊपर दास्यासक्ति निरूपण में कह आये हैं और क्या कहें केवल भगवान की कथा श्रवण के हेतु जिनका जीव धारण है उनके प्रेम का महात्म्य कौन कह सकता है ? क्योंकि उन्हीं ने भगवान से यही बर मांगा है कि “ यावत्तवकथा लोके विचारिष्यति पावनी । तावत्स्थास्यामि मेदिन्यांतवाङ्गामनुपालयन् ॥” और जिनका मत अथापि श्रीभगवान के

मुखारविन्द से सुने हुए विष्णुतत्व के अनुसार “ मध्वमत ” नाम से प्रसिद्ध है।
 विभीषण—इन्होंने कुसंगति में रह कर भी भगवद्भक्ति लोगों को सिखाई,
 वरुच “ सच्छुदेवप्रपन्नाय तवास्मिइति याचते । अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्गतं मम ॥”
 यह जगदुपकारिणी प्रतिज्ञा इन्हीं के हेतु हुई है।

८४ ॐ यद्भदं नारदप्रोक्तं शिवानुशासनं
 विश्वसति श्रद्धधते सभक्तिमान् भवति सप्रेष्टंलभते
 सप्रेष्टंलभत इति ।

इस नारद जी की कहे हुए शिवानुशासन पर जो वि-
 श्वास और श्रद्धा करता है वह भक्तिमान् होता है, वह प्यारे
 को पाता है वह प्यारे को पाता है ॥ ८४ ॥ इति

उपदेश करके उसका फल कहते हैं। विशेष करके प्रेष्ट शब्द से यह दि-
 खाया कि भगवान् इत्यादि को ब्रह्म, विष्णु, नारायण, भगवान् इत्यादि भावों से
 तो और लोग भी पावेंगे परन्तु प्रियतम भाव से वही पावेगा जो इस प्रेम सूत्र
 पर विश्वास करेगा और प्रेम मार्ग पर चलेगा।

इति नारदीये भक्तिशास्त्रे दशमोऽध्यायः समाप्तः ॥

यह श्रीनारद जी का कहा हुआ भक्तिशास्त्र दस अनुवाक में “तदीयसर्वस्व”
 नामक, तदीय नामांकित अनन्य वीरवैष्णव हरिश्चन्द्र कृत भाषा भाष्य सहित
 समाप्त हुआ। इति ।

सूचना ।

श्रीनारदसूत्रभाष्य—तदीयसर्वस्व ।

प्रथम यह सूत्र केवल वृत्ति समेत हरिश्चंद्रास म्यागझीन में छपा है . उसी-पर से पृथक् पुस्तकाकार भी यह चतुःश्लोकी सहित छपा है । बाबू हरिश्चंद्र जीने जो भाष्य (तदीयसर्वस्व) लिखा वह ' कविवचनसुधा ' में क्रमशः छपता गया और तदनंतर पुनरपि स्थान स्थान पर न्यूनाधिक संशोधन करके बाबू साहब ने यह पृथक् पुस्तकाकार क० व० सु० पर से छपवाया । अबकी ग्रंथावली में तीनों पुस्तक मिलाकर छपवाया गया है । और नारदसूत्रवृत्ति में जहां कुछ भिन्नता जानी गई उसको उसी सूत्र का अंक देकर टिप्पणी (नोट) में निवेश किया है । क्योंकि एकही पुस्तक से सर्व काम चल जाय । अतएव पाठक वर्ग भक्ति मर्म जिज्ञासु इस बात को उचित जान कर भगवत्प्रेम में अनुरागी हों—

कक्षाप्रकाशक—

भक्तिसूत्र वैजयन्ती

अर्थात्

श्रीगण्डिल्ह्य ऋषि की भक्ति की सौ सूत्रों पर

भाषा भाष्य

पटना ।

“खड्गविलास” प्रेस—वांकीपुर ।

साहब प्रसाद सिंह ने छापकार प्रकाशित किया ।

१८८८

प्राण प्यारे !

देखो आज वसन्त पंचमी है इस से बहुत लोग आम के मौर वा फुलों के गुच्छे लेकर तुमको मिलने आवेंगे तो मैं भी यह एक फूलों की वैजयन्ती माना बनाकर लाया हूँ श्रंगीकार करो; वैजयन्ती माना बनाने का यह हितु है कि बनमाना होगी तो झोली के खेन में शंभूभैरवों और इस के सिवाय इस वैजयन्ती में निखय करके ज्ञानादिक को जय करना है. पर प्यारे ! बहुत सन्हाल के यह माना पहरना टूट न जाय क्योंकि सूत कच्चा है और कलियां ताजी और कोमल हैं इस से कुम्हिलाने का भी भय है ; जो हो इस वसन्त पंचमी को ल्यौहारी सुम्ने यही दो कि इस संत्यानाशी 'अङ्ग ब्रह्म वाद' को पूर्ण रूप से नाश करके और भी सब बातों में इस नव वसन्त में भारतवर्ष की सब आपत्तियों का वसन्त करो और अपने भक्तों के चित्त में प्रेम के नव पङ्ख पार से लड़लड़े करो जो संदा एक संस रं हैं ।

माघ शु. ५ सं. १८३०

काशी

}

तुम्हारा हृदयिन्द्र

॥ शाण्डिल्य शत सूत्री भाषा भाष्य सहित ॥

ॐ नमःशाण्डिल्याय तन्मतप्रवर्तकाचार्य्यैः

श्री वल्लभेश्वर जमः

जेहि कहि फिर कहु लखन को , प्रास न चित में होय ।
जयति जगत पावन करन , प्रेम बरन यह दिय ॥

ॐ अथातीभक्तिजिज्ञासा ॥ १ ॥

जीवों को कर्म ज्ञानादिक अनेक साधनों से खिन्न होकर भी शान्त न पाने देख कर भगवान् शाण्डिल्य ने भक्ति शास्त्र प्रगट करके जो इच्छा से यह भक्ति के सौ सूत्र कहते हुए इस प्रेम मार्ग की प्रवर्तिकाया इसमें पड़की पूर्णोक्त सूत्र कहा। अब भक्ति की जिज्ञासा अर्थात् विचार आरंभ करते हैं ॥ १ ॥ यद्यपि ज्ञान कर्मादिकों की भांति भक्ति भी स्वसाध्य नहीं है तथापि जो भक्ति मार्ग पर प्रवर्त होते हैं उन को भगवान् भक्ति देता है इस आशा से भक्ति सीमांसा आरंभ करते हैं।

सा परानुगतिरैश्वर्ये ॥ २ ॥

सो भक्ति ईश्वर में पूरे अनुराग को कहते हैं ॥२॥ यहाँ परा शब्द कामनाओं को निवृत्त के हेतु और अनुरक्ति शब्द हृदय के सच्च प्रेम के अर्थ दिया है और ईश्वर शब्द महात्म ज्ञान के हेतु है जैसा श्रीगोपीजन की।

तत्संस्थस्यामृतत्वोपदेशात् ॥ ३ ॥

क्योंकि उस में जो चित्त लगाता है वह अमृत फल पाता है यह महात्मनाओं ने कहा है ॥ ३ ॥

ज्ञानमितिचेन्नद्विषतोऽपिज्ञानस्थतदमंस्थितेः ॥ ४ ॥

वह भक्ति ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र है यह संदिग्ध मत करो क्योंकि ज्ञान तो वैषयों को भी होता है पर उस ज्ञान से मोति नहीं होती ॥ ४ ॥ जैसे कोई किसी मनुष्य को जानता है कि वह असुक है और उस को असुक अधिकार है पर इतना जानने ही से उस मनुष्य की उस में प्रीति ही यह नियम नहीं।

तयोपपन्नयाच्च ॥ ५ ॥

क्योंकि पूरी भक्ति से ज्ञान का चय होता है ॥ ५ ॥ जैसे श्री गोपी जन को महात्म ज्ञान पूर्ण था तथापि प्रियतम कितव इत्यादि नाम से भगवान को पुकारती थीं । अथवा भक्ति से ज्ञान अर्थात् सुक्ति वासना चय हो जाती है जैसा आपने श्रीसुख से कहा है कि यद्यपि मैं चारों प्रकार की सुक्ति देता हूँ तथापि मेरे भक्त मेरी सेवा छोड़ कर नहीं लेते ।

द्वेषप्रतिपक्षभावाद्भ्रमशब्दाच्चरागः ॥ ६ ॥

द्वेष से प्रतिकूल होने से और रस शब्द प्रतिपाद्य होने से उस भक्ति का नाम अनुराग है ॥ ६ ॥ क्योंकि स्नेह और विरोध दो वस्तु धन्य हैं और भी किसी के द्वेष से विरोध बढी करेगा निम्न का उस में पूर्ण अनुराग होगा और ज्ञान में यह बात नहीं क्योंकि स्वरूपज्ञान द्वेषियों को भी होताही है और रस परम आनंद रूप है वह रस जिस को पाकर मनुष्य आनंदी होता है वह भक्ति स्वरूप ही है (इस कहने से पूजाविर्भवन को उपेक्षा किया) चकार से अशु पात रोमांच और वाणी स्तंभादिक भक्ति का स्वरूप कहा ।

न क्रियाकृत्यनपेक्षणाज्ज्ञानवत् ॥ ७ ॥

और वह भक्ति ज्ञान की भांति कृपा करने वाली के आधीन नहीं है ॥ ७ ॥ अर्थात् भक्ति अपने साधन की नहीं है केवल उस की कृपा से मिलती है इस से भक्ति की बहुमुखता दिखाई ।

अतएव फलानन्तरं ॥ ८ ॥

इसो से इस के फलों का अन्त नहीं है ॥ ८ ॥ क्योंकि मनुष्यके सब साधन कीयमाण और ईश्वर की कृपा अज्ञया है ।

तद्वत् प्रपत्तिशब्दाच्च न ज्ञानमितरप्रपत्तिवत् ॥ ९ ॥

क्योंकि ज्ञान वाकों की शरणागत है और विना ज्ञान भी इतर प्रपत्ति होता है ॥ ९ ॥ क्योंकि श्रीसुख ने कहा है कि बहुत जनों के प्रोछे ज्ञानो मेरे शरण आता है तो इससे ज्ञान का साधन भक्ति फलरूप है यह प्रगट किया और विना ज्ञान भी भक्ति मिलती है इस से उस को विशेषता दिखाई ।

इति प्रथमाह्निक ।

सा मुख्यतरापिञ्चितत्वात् ॥ १० ॥

श्री भक्ति मुख्य है क्योंकि इतर ज्ञान योगादिकों में भी इस की अपेक्षा रहती है ॥ १० ॥ तो इस से कोरे ज्ञान से मोक्ष मिलता है इस का खंडन किया क्योंकि जब भक्ति की उम में अपेक्षा रही तो वह स्वतः सुकृति दाता न ठहरा इस से भक्ति ही मुख्य ठहरो ।

प्रकरणाच्च ॥ ११ ॥

प्रकरण से भी ॥ ११ ॥ अर्थात् भक्ति अंगी है और ज्ञानादिक अंग है तो काम पूरा कोई अंग विशेष नहीं कर सकता और अंग अंगी के आधोन है इस से भक्ति ही अस्त देनेवाली है ज्ञान उस का साधन मात्र है ।

दर्शनफलमित्ति चेन्न तेन व्यवधानात् ॥ १२ ॥

दर्शन मात्र फल रूप है यह नहीं क्योंकि उम से व्यवधान है ॥ १२ ॥ अर्थात् ज्ञान मात्र ही फल है यह नहीं है क्योंकि छान्दीय्य श्रुति में पहिले ज्ञानियों का नाम लेकर फिर कहा है कि वह अर्थात् भक्तिमान स्वराह होता है तो पहिले ज्ञान की गौण कारके भक्ति की मुख्यता वेद ने कही इस से भक्ति ही परम साधन है ।

दृष्टत्वाच्च ॥ १३ ॥

और ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ १३ ॥ क्योंकि यदि किसी स्त्री पर कोई प्रशुभ्य रोभ कर प्रीति करेगा तो पहिले जब वह जानेगा कि यह स्त्री सुन्दर है तब प्रीति करेगा प्रीति करके न जानेगा अर्थात् जानने का फल प्रीति है प्रीति का फल जानना नहीं है । इस से अनेक मत को ईश्वर विषयक ज्ञान मात्र ही को परम पुरुषार्थ कहते हैं इसका निराकरण किया ।

अतएव तद्भावाद्ब्रह्मलीनां ॥ १४ ॥

इसी से ब्रह्म के श्री गोपीजनो का विज्ञान के बिना भी सुकृति पाना प्रत्यक्ष है ॥ १४ ॥ इस सूत्र से भक्ति की परम श्रेष्ठता दिखलाई क्योंकि श्री गोपीजन को यद्यपि ब्रह्म विषयक कुछ भी ज्ञान न था तथापि जो गति केवल प्रेम से श्री गोपीजन को मिली सो किसी को न मिली ।

भक्त्या जानातीति चेन्नाभिज्ञाया साहाय्यात् ॥ १५ ॥

जो कही भक्ति से ज्ञान होता है सो नहीं क्योंकि ज्ञान तो भक्ति का

सहायक है ॥ १५ ॥ क्योंकि जो मनुष्य को ईश्वर विषयक महात्मज्ञान होगी तभी भक्ति में प्रवृत्ति होगी ।

प्रागुक्त च ॥१६ ॥

पहिले कक्षा भी है ॥ १६ ॥ अर्थात् श्री गीता जी में अठारवें अध्याय के जीवन श्लोक में आप ने श्रीसुख से कक्षा है ब्रह्म भाव पाकर प्रसन्न आत्मा न कुछ सोचता है न कुछ चाहता है तब लोगों को समान दृष्टि से देखता हुआ मेरी भक्ति पाता है ।

एतेन विकल्पोऽपि प्रत्युक्तः ॥ १७ ॥

इस से विकल्प भी निरस्त हुआ ॥ १७ ॥ अर्थात् ज्ञान के अङ्गत्व निर्णय में जो कुछ संदेह था वह ऊपर के भगवत् वाक्य से मिट गया और भक्ति का अंगित्व निश्चय हुआ ॥

देवभक्तिरितरस्मिन् साहचर्यात् ॥ १८ ॥

ईश्वर के अतिरिक्त देवताओं की भक्ति भी उस परा भक्ति के समान नहीं क्योंकि जगत में उसकी समान और भी भक्तियाँ हैं ॥ १८ ॥ जैसा लिखा है जैसी देवता में भक्ति करनी वैसी गुरु में करनी तो इस सूत्र से अनन्य भक्ति स्थापन किया ।

योगस्तु भयार्थमपेक्षणात् प्रयाजत्रत् ॥ १९ ॥

और योग तो वाञ्छेय यज्ञ में प्रयाज की भांति भक्ति और ज्ञान दोनों का अंग है ॥ १९ ॥ इससे योग की अंगत्वात्ता दिखलायी ।

गौण्या तु समाधिसिद्धिः ॥ २० ॥

गौणी भक्ति से तो समाधि की सिद्धि होती है ॥ २० ॥ इससे परा भक्ति की अपेक्षा इसकी महा गौणता सिद्धि हुई ।

हेयारागत्वादितिचिन्नोत्तमास्पदत्वात् सङ्गवत् ॥ २१ ॥

भक्ति राग है इससे (राग को कोई ऋषि दुःख स्वरूप मानते हैं यह समझ कर) त्याग करने के योग्य है यह नहीं क्योंकि इसका आश्रय उत्तम है सङ्ग की भांति ॥ २१ ॥ जैसा साधारण स्त्री पुरुष के अनुराग में परस्पर वियोग का और संयोग छुटजाने का दुःख होता है वैसा ईश्वर के अनुराग में नहीं होता क्योंकि संग दुःखदाई है यह नियम नहीं है सङ्ग से अनेक सुख होते हैं वैसेही ईश्वर का अनुराग परम सुख स्वरूप है ॥

तदेव कर्मज्ञानियोगिभ्य अधिक्व शब्दात् ॥ २२ ॥

इम मे भक्ति ही मुख्य है क्योंकि कर्मों-ज्ञानी और योगियों से उस की अधिक कहा है ॥२२॥ श्रीगीता जी के छठवें अध्याय के ४६ और ४७ वें श्लोक में आपने श्रीमुख से कहा है कि तपस्वी ज्ञानी और कर्मों से योगी अधिक है और योगियों में हमारे भक्त अधिक हैं ।

प्रश्नानिरूपणाभ्यामाधिक्वमिद्धैः । २३ ।

यद् अधिक्यता प्रश्नोत्तर से सिद्ध है ॥ २३ ॥ श्री गीताजी में १२ वें अध्याय में अर्जुन ने पूछा है कि जो अन्न को उपवासना करते हैं और जो आप की भक्ति करते हैं उन में मुख्य कौन है इसके उत्तर में आपने कहा है कि जो मेरे भक्त हैं वे अधिक हैं । इस से बिना किसी अर्थवाद से भक्ति की परमोत्तमता सिद्ध हुई ।

नैवश्रद्धात् साधारण्यात् ॥ २४ ॥

श्रद्धा भी भक्ति नहीं है क्योंकि उस को साधारणता है ॥ २४ ॥ क्योंकि श्रद्धा कर्मादिकों में भी होती है ।

तस्यांतत्त्वेचानवस्थानात् ॥ २५ ॥

क्योंकि श्रद्धा से भक्ति तत्व की एकता करने से अनवस्था होती है ॥ २५ ॥ अर्थात् श्रद्धावान भजन करता है ऐसा लोग कहते हैं तो यदि श्रद्धा भक्ति एक ही होती तो अङ्ग भाव से प्रयोग न होता ।

ब्रह्मकाण्डं तु भक्तौतस्यानुज्ञानाय सामान्यात् ॥ २६ ॥

अतएव भक्ति प्रतिपादन के अर्थ उत्तरकाण्ड की संज्ञा ब्रह्मकाण्ड से ज्ञान-काण्ड की सामान्यता है ॥ २६ ॥ अर्थात् जो ज्ञान की मुख्यता होती तो अर्थात् ब्रह्मजिज्ञासा यह न कहते इस से कंठरव से ज्ञान की अपेक्षा भक्ति की उत्तमता से सिद्ध किया । इति २ कां । इति १ अध्याय ॥

बुद्धिहेतुप्रवृत्तिरविशुद्धैरवघातवत् ॥ २७ ॥

बुद्धि के हेतुओं की प्रवृत्ति ध्यान कूटने की भांति विशुद्धि तक है ॥ २७ ॥ बुद्धि अर्थात् ब्रह्म साक्षात्कार यद्यपि कल्पनिष्पाद्य नहीं अर्थात् अपने किए हुए उपायों से बाहर है तौभी उस के हेतु अध्याय मननादिकों का अनुष्ठान आवश्यक है जैसे जब तक सब दिशोंके बरसकर न निकल जाय धान शुद्ध नहोगा

तदङ्गानाञ्च ॥ २८ ॥

उभ के अंगों की भी ॥ २८ ॥ अर्थात् जैसे थवण मननादिक की आवश्यकता है वैसे ही गुरु की सेवा आदि उस के उपायों की भी है ।

तामैश्वर्य्यपदां काश्यपः परत्वात् ॥ २९ ॥

उभ की काश्यपाचार्य्य ऐश्वर्य्यपदा कहते हैं अलग हीने से ॥ २९ ॥ अर्थात् सर्वेश्वर्य्यमय ईश्वर को मान कर उस की सेवा करना यही पुरुषार्थ कहते हैं । इन के मत में जीव और ईश्वर का नित्य भेद प्रगट हुआ ।

आत्मैकपरं वादरायणः ॥ ३० ॥

वादरायण आचार्य्य इस की आत्मपर कहते हैं ॥ ३० ॥ वेदान्त मूच में व्यास जी का मत है कि आत्मज्ञान ही से सिद्धि मिलती है ।

उभयपरं शांडिल्यः शब्दीपपत्तिभ्यां । ३१ ।

शाण्डिल्याचार्य्य शब्द और उपपत्ति से उभय पर कहते हैं ॥ ३१ ॥ युक्तियों से और वाक्यों से जीव का ईश्वरांग होना सिद्ध है और ईश्वर में सर्व सार्थ्य इत्यादि दिव्यगुण उभकी विश्लक्षणता भी प्रकाश करते हैं । इस से शाण्डिल्य दोनों मत मानते हैं अर्थात् अपने को ईश्वरांग मान करके भी उस की उपासना करना ।

वैषम्यादसिद्धमिति चेन्नाभिज्ञानवद्वैशिष्ट्यात् । ३२ ।

वैषम्य से असिद्ध होगी ऐसा नहीं है क्योंकि ज्ञान की भांति अवैशिष्ट्य है ॥ ३२ ॥ अर्थात् जिस रीति " यह वह है " यह भूत वर्तमान और काल की प्रतीति एक ही समय होती है क्योंकि दोनों काल का विषय (यह और वह शब्दों से प्रतिपाद्य) एक ही है वैसे ही ईश्वर में भी वैषम्य दोष नहीं जा सकता ।

न च क्लिष्टः परः स्यादन्तरं विशेषात् । ३३ ।

पर (परमात्मा) की कभी इस वैषम्य से क्लेश नहीं होता क्योंकि (ज्ञान के) अनन्तर विशेष होता है ॥ ३३ ॥ अर्थात् जीव और ईश्वर में जो विशेषता है वह ज्ञान से प्रतीत होती है ।

ऐश्वर्य्यं तथेति चेन्न स्वाभाव्यात् ॥ ३४ ॥

ऐश्वर्य्य भी क्लिष्ट नहीं हो सकता क्योंकि यह स्वाभाविक है ॥ ३४ ॥ ईश्वर

ईश्वर का ऐश्वर्य्य कुछ उपाधि भूत वा उपाधिग्रन्थ नहीं किन्तु नैसर्गिक है
दसो हेतु इन में भी लेश नहीं होसक्ता ।

अप्रतिपिद्धं परैश्वर्य्यं तद्वावाञ्जनैवमितरेषाम् ॥ ३५ ॥

(ईश्वर का) परमैश्वर्य्यं कहीं भी प्रतिपिद्ध नहीं होता वरंच उसका
नैसर्गिक पन प्रगट होता है, इतरों का (जीवों का) ऐसा नहीं ॥ ३५ ॥ यह
शंका न हो कि ईश्वर का जब ऐश्वर्य्य ऐसा है तो जीवों का भी ऐसाही होगा
ईश्वर का यह सर्व स्वाभाविक है और जीवों का नहीं ।

सर्वान्तेकिमिचिन्नेवं बुद्धानन्तात् ॥ ३६ ॥

सब के बिना (उस का) क्या प्रयोजन है ? ऐसा नहीं क्योंकि बुद्धि का अ-
नन्तर है ॥ ३६ ॥ अर्थात् यदि सब जीव क्रमशः मुक्त होंगे तो ईश्वर का क्या
प्रयोजन है तो उसका भी क्यों नहीं लय मानाँ ऐसा ब-होगे तो यह असंभव
है क्योंकि बुद्धि का अन्त नहीं हो सक्ता इन हेतु यह कल्पना मात्र है और
ऐसा कालही नहीं कि जिसमें सब जीव एक बार मुक्त होजाय और महा-
प्रलय में जो जीव मुक्त होते है वे वासना सञ्चित होते है ।

प्रकृत्यन्तरात्त्वाद्वैकार्यं चित्सत्त्वेनानुवर्तमानत्वात् ॥ ३७ ॥

प्रकृत्यन्तरात् वे और चित्सत्त्व के अनुवर्तमान होने से (ईश्वर को)
अविकारिता है ॥ ३७ ॥ यदि ईश्वर में उत्पत्ति कर्तृत्वादि ऐश्वर्य्य साहजिक है
तो यह भी एक प्रकार का विकार हुआ उसका निवारण करते है कि प्रकृति
को ईश्वर विकृत करके उत्पत्ति आदि करता है जैसे मायावी अपनी माया से
अन्य वस्तुओं में विकार कर देता है परन्तु चाप नहीं विकार पाता अर्थात्
ईश्वर दुग्ध के कार्य की भांति विकृत नहीं होता वरंच सुवर्ण के विकार की
भांति और उसमें जीव सत्व जो वर्तमान रहता है वह माया से पर है ।

तत्प्रतिष्ठा गृहपीठवत् ॥ ३८ ॥

उसकी प्रतिष्ठा का व्यवहार घर में पीठे पर प्रतिष्ठा की भांति है ॥ ३८ ॥
अर्थात् प्रकृति के विकार से जगत् माया में प्रतिष्ठित है ? यह शंका न हो
जैसे किसी के घर में पीठे पर कोई बैठा है तो ऐसा कहने में आवेगो कि
असुक पीठे पर बैठा है पर वास्तव में वह पीढ़ा और मनुष्य दोनों घर में
है ; वैसेही माया और संसार दोनों ईश्वर में है ।

मिथोपेक्षणादुभयं ॥ ३८ ॥

परस्पर की अपेक्षा से दोनो कारण हैं ॥ ३८ ॥ अर्थात् संसार की उत्पत्ति में माया और ईश्वर दोनोही आवश्यक हैं ।

चेत्वाचितोर्नष्टतीयं ॥ ४० ॥

प्रकृति और ब्रह्म में भेद नहीं है ॥ ४० ॥ अर्थात् इनमें द्वितीय भाव नहीं है दोनो एक हैं इस से प्रकृति स्वतंत्र कोई अलग है इसका निषेध किया ।

युक्तौ च संपरायात् ॥ ४१ ॥

वियोग के पूर्व दोनो एक हैं ॥ ४१ ॥ अर्थात् सृष्टि होने के समय ब्रह्म और प्रकृति अलग-ही होती हैं परन्तु जड़ाजड़ के भेद से नित्य में इनका अनन्य संबंध है ।

शक्तित्वाद्भ्रान्तं दिव्यं ॥ ४२ ॥

शक्ति के कार्य होने से यह यगत् मिथ्या नहीं है ॥ ४२ ॥ अर्थात् जगत् माया का कार्य है इस से उसको झूठा नहीं मानना क्योंकि ब्रह्म सत्य है तो उसकी शक्ति भी सत्य है प्रकृति केवल जड़मात्र तो है पर मिथ्या नहीं ।

तत्परिशुद्धिश्चगस्यासौकावर्द्धिर्गोचरः ॥ ४३ ॥

उस (भक्ति) की परिशुद्धि लोक के (प्रेम के) चिह्नों से जानना ॥ ४३ ॥ अर्थात् अशु, रोमांच, गद्गद इत्यादि स्थायी भावों से किस की कितना प्रेम है यह प्रगट होता है ।

सख्यान बहुमान प्रीति विरहेतरविचिकित्सा महिमस्याति

तदर्थप्राणस्थान तदीयतासर्वतद्भावाप्रातिकूल्यादीनि च

स्मरणोभ्यो बाहुल्यात् ॥ ४४ ॥

सख्यान, बहुमान, प्रीति, विरह, इतरविचिकित्सा अर्थात् आग्रह पूर्वक दूसरे की अनपेक्षा, महिमा का कथन, प्रियतमही के हेतु प्राण रक्षण, तदीयता, सब उस के भावों से देखना, अप्रातिकूल्य अर्थात् अनुकूलता, इत्यादि, प्रीति के लक्षण हैं ॥ ४४ ॥

सख्यान जैसा अर्जुन का, बहुमान इप्साङ्क का कि भगवान के नाम वा वर्णों से जिन वस्तुओं में संबंध था उन का भी आदर करता था, प्रीति विदुर की, विरह श्रीगोपीजन का, इतरविचिकित्सा उपमन्युकी और श्वेतद्वीपवासी

को तथा चित्रकेतु को, महिम्न्याति यम भीम और व्यास को, तदर्थं प्राण-
स्त्रिति व्रज-के लीग तथा हनुमानको, तदीयता बलि को और उपरिधर
वद को, तद्भाव श्रीपद्मादको का, अपातिकूल्यभीष्म तथा धर्मराज का,
आदि शब्द से नासद् उद्वादि भक्तों को प्रीति की चेष्टा और लक्षण जानना ।

होषाद्यास्तु नैर्व ॥ ४५ ॥

होषादिक से ऐसी नहीं होगी ॥ ४५ ॥ शिशुपान्म इत्यादि के प्रकरण में
भक्ति से उन को मुक्ति नहीं हुई किन्तु भगवान की महिमा वक्त से, भक्तों को
तो होषादिक होते ही नहीं ।

तद्वाक्यशेषात् प्रादुर्भाविष्वपिसा ॥ ४६ ॥

उम के वाक्य शेष से अवतारों में भी दृष्ट है ॥ ४६ ॥ मत्स्यादिक अवतारों
में शिशुपान्म गुण स्वरूपों में संकर्मणादि व्यूहों में तथा आचार्यादि प्रादुर्भावों
में भी परा भक्ति योग्य है ।

जन्मकर्मविदश्चाजन्मशब्दात् ॥ ४७ ॥

जन्मकर्मों के जानने की मिहि भी अजन्म शब्द से है ॥ ४७ ॥ अर्थात् जो
उम के जन्म कर्मों को जानता है वह फिर जन्म नहीं पाता किन्तु उसको
पाता है । यह श्री गीता के ४ अध्याय के ८ श्लोक में कहा है ।

तच्च दिव्यं स्वशक्तिमात्रोद्भवात् । ४८ ॥

उम के जन्म कर्मादिक दिव्य है क्योंकि केवल उस की शक्तिमात्र से
अनेक प्रकार के दिव्यार्थ पड़े हैं ॥ ४८ ॥ यह ८ श्लोक और उसी अध्याय के
छठे श्लोक से सिद्ध है ।

मुख्यं तस्य हि कारुण्यं ॥ ४९ ॥

उम के जन्मादिकों में उसी को कारुण्य मुख्य है ॥ ४९ ॥ अर्थात् ईश्वर वा-
धित हो के नहीं जन्म लेता केवल अपनी अपार कृपा से जीवों के उद्धार के हेतु
अनेक प्रकार के रूप धारण करता है ।

प्राणित्वान्नविभूतिषु ॥ ५० ॥

प्राणी होने से ब्राह्मण राजादि भगवद्भिभूति में भक्ति सिद्ध देने वाली
नहीं होती ॥ ५० ॥

द्यूतराजसिंघोः प्रतिषेधात् ॥ ५१ ॥

द्यूत और राजसेवा को निषेध से ॥ ५१ ॥ क्योंकि गीता जो मैं आप ने ओसुख से राजा और जूए को विभूति कहा है और शास्त्र में उस का निषेध है । इस से विभूतियों में भक्ति नहीं करनी ।

वासुदेवपीतिचेन्न आकारमात्रत्वात् ॥ ५२ ॥

ओवासुदेव में भी विभूति को शंका नहीं करनी क्योंकि वहां तो चीनो की पुतली को भांति कर पाद सुख उदर आदि सब आकार ध्यानन्दमय हैं ॥ ५२ ॥

प्रत्यभिज्ञानाच्च ॥ ५३ ॥

(ओगोपाक्षतापनी, साहाभारत, श्रीभागवत आदि पुराण तथा वैष्णव-निबंधों में) भगवान की परब्रह्मता ज्ञापित है ॥ ५३ ॥

दृष्टिषुश्रेष्ठे नैतत् ॥ ५४ ॥

विभूति में ओवासुदेव का कथन केवल यादवों में श्रेयता के हेतु है ॥ ५४ ॥

एवं प्रसिद्धेषु ॥ ५५ ॥

इसो प्रकार ओरानादि प्रसिद्ध भगवदवतारों का भी विभूति में कथन केवल उस प्रकार की विभूति में श्रेयता दिखाने के हेतु है । अर्थात् जो प्रसिद्ध भगवत्स्वरूप हैं उन में विभूति बुद्धि न करनी ॥ ५५ ॥

दूसरे अध्याय का पहिला आन्धिक समाप्त हुआ ।

भक्त्या भूज्जुनोपसंहाराद्गौण्यापरायैतद्धेतुत्वात् ॥ ५६ ॥

भक्ति से यहां गौण भक्ति लेनी क्योंकि उस का अर्थ भजन अर्थात् सेवा है और यह भक्ति पर में हेतु है ॥ ५६ ॥ क्योंकि गौण भक्ति से सुख भक्ति के साधन के बाधक दूर होते हैं और परा भक्ति सिद्ध होती है ।

रागार्थप्रकीर्तिसाहचर्याच्चतरेषाम् ॥ ५७ ॥

गीता अ० ८, श्लोक १४ में कीर्तन के साथ कहे हुए नमस्कारादि कर्मों का फल केवल राग अर्थात् परा भक्ति है क्योंकि "स्थाने हृषीकेश" इस श्लोक में कीर्तन का फल अतुराग कहा है और पूर्वोक्त १४ श्लोक में कीर्तन के साथ नमनादिक का कथन है इस से नमनादिक का भी वही फल है ॥ ५७ ॥

अन्तराले तु शेषाः स्वरूपास्यादौ च काण्डत्वात् ॥ ५८ ॥

गीता जो के ८ अध्याय में १३ वें श्लोक से २८ श्लोक तक और जितनी

भक्तियों कहीं हैं वह बोच की है क्योंकि उपासनादि परा भक्ति की साधक हैं ॥ ५८ ॥

ताभ्यः पावित्र्यसुपक्रमत् ॥ ५९ ॥

इन गौणी भक्तिओं से पवित्रता अर्थात् मन की शुद्धता होती है क्योंकि उन्नी अध्याय के दूसरे श्लोक में इन को पवित्र कहा है ॥ ५९ ॥

तासु प्रधानयोगात् फलाधिक्यमेकै ॥ ६० ॥

कोई कोई आचार्य कहते हैं कि इन गौण भक्तियों ही में प्रधानता के कारण फल अधिक है ॥ ६० ॥

नास्मिंति जैमिनिः सम्भवात् ॥ ६१ ॥

जैमिनि आचार्य का मत है कि उन को मुख्यता नहीं है यहाँ उन का नाम मात्र कथन है ॥ ६१ ॥ अर्थात् पूर्वोक्त श्रीगीता जो के श्लोकों में उन का मुख्यता करके नहीं कथन है वरंच गिनती मात्र गिनायी है ।

अत्राङ्गप्रयोगानां यथाकालसम्भवा रूपादिवत् ॥ ६२ ॥

यहाँ अंग के प्रयोगों का घर के अंगों को भाँति यथा काल सम्भव है ॥ ६२ ॥ अर्थात् जैसे घर में पहिले निव तब द्वार तब छत इत्यादि अंगों का प्रयोग एक के बनने पर यथा काल होता है वैसे ही परा भक्तियों को साधन अंग भक्ति का यथा समय प्रयोग होता है क्योंकि पहिले गुण श्रवण करैगा तब श्रद्धा होगी तब भजैगा सेवैगा इत्यादि अनेक भक्तियों को पीछे परा भक्ति पावेगा ।

ईश्वरतुष्टैरेकीपि वली ॥ ६३ ॥

ईश्वर को तुष्टि के हेतु एक साधन करने वास्तु भी वली है ॥ ६३ ॥ अर्थात् भजन वा कीर्तन कोई एक साधन भी दृढ़ करके जो करैगा तो उसको उस एक साधन पर दृढ़ता ईश्वर के तुष्टि की कारण होगी अर्थात् परा भक्ति की कारण होगी क्योंकि परा भक्ति स्वसाध्या नहीं है केवल ईश्वर के प्रसन्न होने से मिलती है ।

अवन्वोऽर्पणस्यसुखम् ॥ ६४ ॥

अर्पण का सुख अवंध है ॥ ६४ ॥ भगवान में शुभाशुभ कर्मों का अर्पण अवंध का द्वार है यह किर्तनादिक गौणी भक्तियों के अतिरिक्त परा भक्ति सिद्धि का उपायांतर कहते हैं क्योंकि यज्ञादिक में से बहुत कास में अनेक

लोक प्राप्ति द्वारा क्रमशः ईश्वर लोक प्राप्ति के कष्ट निवारण के हेतु सब कर्मों का समर्पण सयज्ञ उपाय है ।

ध्याननियमस्तु दृष्टसौकर्यात् ॥ ६५ ॥

जिस का दर्शन अपने नेत्रों को जंचे उभी भाव से चिंतन करना यही ध्यान का नियम है ॥ ६५ ॥ भक्ति यदि स्वभाविक होती है तो उत्तमा होती है क्योंकि दृष्ट से की हुई भक्ति चिरकालमें सिद्ध होती है इसी हेतु कहते हैं कि भगवान के स्वरूप के ध्यान में दृष्ट कर के कोई नियम न मानना जो स्वरूप अपने नेत्रों को स्वभावतः जंचे उभी का ध्यान करना ।

तद्यज्ञिः पूजायामितरेषां नैवम् ॥ ६६ ॥

‘यान्तिमद्याजिनोपि मां’ इस वाक्य में यजन शब्द भगवत्पूजन के अर्थ है इतरयागादिकों के लिये नहीं ॥ ६६ ॥

अर्थात् यज्ञादिक में कामना और हिंसादि अनैक दोष हैं इस से भगवान को यजन किमी और कर्म मार्ग के उपायों से न करना किन्तु केवल भगवत्स्वरूप की सेवा करनी ।

पादोदकं तु पादप्रमव्याप्ते ॥ ७ ॥

भगवन्मूर्तियों के ज्ञान का जल ही पादोदक है अव्याप्ति से ॥ ६७ ॥ अर्थात् साक्षाद्भगवान् वा अन्य किसी अवतार के चरण का जल ही चरणाश्रित है यह दृष्ट न करना क्योंकि इस समय उस की प्राप्ति कहां और पादोदक में चरण ही को सुख्यता न माननी क्योंकि श्रीशालग्राम का ज्ञान जल भी पादोदक कहावेगा ।

स्वयमर्पितं ग्राह्यमविशेषात् ॥ ६८ ॥

अपनी समर्पण की हुई वस्तु को आप लेना क्योंकि विशेषता नहीं है ॥ ६८ ॥ अपनी समर्पण की हुई वस्तु है इस ध्वंस से प्रसाद लेने में संकोच न करना क्योंकि वैष्णवों को भगवत्प्रसाद लेने की आज्ञा है और उस समर्पण करने वाले में कोई विशेष नहीं अर्थात् वह भी वैष्णवान्तः पातो है ॥

निमित्तगुणव्यदपेक्षणादंपराधेषु व्यवस्था ॥ ६९ ॥

निमित्त, गुण और अनपेक्षा से अपराधों की व्यवस्था है ॥ ६९ ॥ भगवत्सेवा में जो ३२ अपराध कहे हैं वे तीन भाँति के हैं एक तो वे कि जैसे

किसी कारण से हो जाय दूसरे वे जिनके करने का नित्य स्वभाव है और तीसरे वे जो भूल से हों इन तीनों की व्यवस्था अलग है जैसे अनिच्छाप्रराध से निमित्तापराध और निमित्तापराध से नित्यापराध बढ़कर है ॥

पचादेर्दानमन्यथाहि वैशिष्ट्यम् ॥ ७० ॥

पत्रपुष्पादि का दान सर्व समान (समान फल रूप) है ॥ ७० ॥ क्योंकि भगवान को पत्र का दान और स्वर्ण कोटि का दान दोनों समान संतोष करने वाला है ॥

सूक्ततत्त्वात्परहेतुश्च भावाच्च क्रियाभुश्रेयस्यः ॥ ७१ ॥

वे भक्तियां पराभक्ति की कारण और पुण्यरूप हैं इससे सब क्रियाओं में हेतुस्वरूप हैं ॥ ७१ ॥

गौर्ध्रैविध्यमितरेण स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् ॥ ७२ ॥

(गोताजी के, अ० श्लो० ६ में आर्त, जिज्ञास, आर्थाधी और ज्ञानी चारों प्रकार के भक्त कहे हैं उन चारों की समता नहीं) गौधी भक्ति उसमें तीव्र ही है और स्तुति के अर्थ इनको ज्ञानी की भक्ति के साथ लिखा है ॥ ७२ ॥ क्योंकि आर्त की भक्ति अपनी विपत्ति मिटाने के हेतु है, जिज्ञास की जानने के हेतु और आर्थाधी की भक्ति अपने काम के हेतु है और ज्ञानी की भक्ति केवल प्रेम से है ।

वहिरन्तरस्थमुभयमवेष्टिसववत् ॥ ७३ ॥

(यद्यपि कीर्तनादिक भक्तियां परा भक्ति की अंग हैं परन्तु यदि कीर्तनादि किसी में विशेष बलि होय तो उस भक्ति में उस भक्ति की मुख्यता होगी क्योंकि) पराभक्ति के भीतर की भक्ति भी कहीं कहीं बाहर अर्थात् स्वतंत्र गिनी जाती है जैसे यज्ञ की अवेष्टि यज्ञ के अन्तर्गत और वहिर्गत भी है जैसे वाजपेय यज्ञ के अंग में वृहस्पतिसव आजाता है परन्तु वृहस्पतिसव को विशेष महिमा-वेद में अलग भी लिखी है ॥ ७३ ॥

स्मृतिस्वीर्त्वीः कथादिस्वार्ती प्रायश्चित्तभावात् ॥ ७४ ॥

कथादिज्ञों का स्मरण और कीर्तन आर्त भजन में प्रायश्चित्त भाव से है ॥ ७४ ॥ अर्थात् आर्तयोग अपने पाप वा अपात्ति मिटाने के हेतु कीर्तनादि करते हैं इससे यहां कीर्तनादि में विशेषता नहीं है ॥

भूयमात्मननुष्ठितिरितिचेदाप्रयाणसुपमंङ्गारान्यइरस्वपि॥ ७५ ॥

जो कहो कि भक्ति करने वाले बहुत कर्मों का अनुष्ठान नहीं करते सो नहीं क्योंकि बहुत कर्म करने वालों को भी अंत समय इसी का विधान है ॥ ७५ ॥ अर्थात् चाहे कितना ही कर्म करो जब भगवान की भक्ति बिना गति नहीं तो उस भक्ति बिना के बहुत विधिपूर्वक किए हुए भी अनेक कर्म व्यर्थ ही है ॥

लघुपि भक्ताधिकारी महत्त्वेपक्रमपरसर्वहानात् ॥ ७६ ॥

(क्योंकि) थोड़ा भी भक्ताधिकार बड़े पापों का नाशक होता है क्योंकि भगवान को अपने शरणागतों को वा नामस्मरण करने वालों के सर्व पापहानि की प्रतिज्ञा है ॥ ७६ ॥

तदस्थानत्वादनन्यधर्मः स्वस्ति वालीवत् ॥ ७ ॥

(क्योंकि) भगवदाश्रय होने से (छोटे भी) भगवद्धर्म अनन्य धर्म ही हैं (और उन से सब बड़े पापों का क्षय हो जाता है) जैसा श्रीरामको में वालों का (अर्थात् श्रीरामकी में कितनी भी बाध पड़े सब कुट पिप लायंगी वैसे ही भगवद्धर्म से जैसे भी पाप हों सब नाश हो जाते हैं)

आनिन्द्योन्यधिक्रियते पारम्पर्यात्सामान्यवत् ॥ ७८ ॥

चांडालयोनि ही भी भगवद्भक्ति का अधिकार है क्योंकि परम्परा से भक्तों को समानता है ॥ ७८ ॥ और गज शृङ्ग बानर इत्यादि मनुष्य छोड़ कर और योनि के जीवों को भी भक्ति से विहि मिली है तथा एक विशेषता यह भी है कि भारतखंड छोड़ कर खंडांतर-वासियों को तो केवल भक्ति ही का आश्रय है क्योंकि वे कर्म भूमि नहीं हैं कि वहाँके लोग कर्म से सिद्ध हों।

अतोह्यविपन्नभादानामपि तल्लोकी ॥ ७९ ॥

इसी हेतु परा भक्ति में जो पक्ष नहीं हैं वे भी भगवत्भक्तों में वास करते हैं ॥ ७९ अर्थात् ब्राह्मण, शूद्र, चण्डाल इत्यादि संज्ञा से अपने-२ जाति की पूर्ण क्रिया करो तो भी सिद्धि नहीं कितना भी पुण्य करो अन्त में क्षीण होने पर शून्यभक्तों में आना पड़ता है और भक्ति करने वालों का नाश नहीं। जो पक्ष नहीं हैं वे श्वेतद्वीप में रह कर भगवद्भक्ति में पक्ष होकर अन्त में

भगवत्पद पाते हैं और भक्तों की कर्मवश से उपजी हुई कामनाओं की भी भक्ति अंत में भस्म कर देती है इसमें जड़भरत जी का उपाख्यान प्रमाण है।

क्रमैकगल्पपपत्तेस्तु ॥ ८० ॥

केवल क्रममात्र से गति तो क्रिया की है ॥ ८० ॥ अर्थात् “बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते” “अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिं” इत्यादि वाक्य में क्रम से जो सिद्धि पानी काढ़ी है वह सुकर्म करने वालों को है भक्तों को तो एक भक्ति ही से सद्यः गति होती है।

उत्क्रान्तिस्मृतिवाक्यश्रेषात् ॥ ८१ ॥

क्योंकि भगवद्वाक्य में भक्तों की एक साथ सब क्रमों का उल्लंघन करके सिद्धि सिद्धना कहा है ॥ ८१ ॥ अर्थात् “सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज” इस वाक्य से भगवान् ने अपने भक्त के अन्य धर्मों की और क्रम प्राप्त उनके गतियों को त्रीमुख से आप ही उपेक्षा की है और ८ अध्याय में अनेक प्रकार के सत्वमं इत्यादि कह कर भी ३० । ३१ । ३२ । ३३ । ३४ श्लोकों में “हमारा भक्त कौसा भी दुराचारी हो उस को साधु ही समझना” कहा है और अनेक जन्म तथा कर्मादिकों को उल्लंघन करके उस की सद्यः गति को और उस गति के फिर कभी न नाश होने को “चिप, शश्वत्, ” इत्यादि शब्द कथनपूर्वक प्रतिज्ञा की हैं।

महापातकिनानां त्वार्ती ॥ ८२ ॥

(जो कहो कि बड़े २ पापी लोग हैं वे भी क्रम को उल्लंघन करके परम पद पावेंगे इस पर कहते हैं कि) महापातकियों की भक्ति तो आर्ती की भक्ति में है ॥ ८२ ॥ अर्थात् पापी लोग अपने पाप को निवृत्ति के हेतु भक्ति करते हैं उन की भक्ति सद्गजा नहीं जिन की भक्ति सद्गज है उन की पापों के हेतु तो ‘अपिचेत्सुदुराचारी’ इत्यादि वाक्य जागरूक ही हैं।

सैकान्तभावो गीतार्थप्रत्यभिज्ञानात् ॥ ८३ ॥

परा भक्ति ही का नाम एकान्त भाव है क्योंकि गीता में ऐसा कहा है ८३ ॥ यथा “अनन्यासिन्तयन्तो मां” “यो मांपश्यति सर्वत्र” “मन्मना-भवमद्भक्तो” “सत्वमंस्तत्परमोसद्भक्तः” “ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्वस्य सत्पराः” “तमेव शरणं गच्छ” “सर्वधर्मान्परित्यज्य” इत्यादि वाक्यों से और उनके उपक्रमोपसंहार से सिद्ध है।

परं क्लृप्तैव सर्वेषां तथाह्याह ॥ ८४ ॥

(जो कहो की गोता जो की वाक्यों की प्रवृत्ति तो ज्ञान, योग, सत्कर्म कीर्तनादि गौणी भक्ति इत्यादि अनेक विषयों पर है इस पर कहते हैं) कि श्रीमद्भगवद्गीता के वाक्यों की प्रवृत्ति तो परा भक्ति ही की मुख्य कारक के है ऐसा ही आप ने कहा भी है ॥ ८४ ॥ क्योंकि जब आप ने “मन्मथनाभ्रवद्भक्तो मद्याजीमानसस्कुव ॥ मामैवैष्यसि कौन्तेय प्रतिजाने प्रियोसि मे ॥ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥ अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि साशुचः” ये दो वाक्य साधन, सिद्धा परा भक्ति ही की मुख्यता के हेतु कहे तो उस की अट्रता के हेतु पहिले आग्रह पूर्वक “ सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः” इससे अगले दोनों वाक्यों की सडिमा कही और लोक में भी प्रसिद्ध है कि मसुथ किमो की सौ उपदेश करे परन्तु अन्त में जो निचोड़ कर कहे वही बात सुख्य होती है परंच गीता जी के कहने का तो फल परा भक्ति ही है यह आप ने “यद्दं परमं गुह्यं सङ्गोन्मभिषास्यति ॥ भक्तिं मयि परां क्त्वा मामैष्यत्यसंशयः” इस वाक्य में कहा है इस से और “अहं” “त्वां” इन दो पदों के अलग होने से श्रीमद्गीता की प्रवृत्ति केवल भक्ति ही के हेतु है न ज्ञानकर्मादिकों के यही सिद्ध हुआ ।

॥ द्वितीयाध्याय का द्वितीयाहिक समाप्त हुआ ॥

अजनीयेनाद्वितीयमिदं क्लृप्तस्वस्त्य तत्स्वरूपत्वात् ॥ ८५ ॥

(भक्ति को उत्कर्षता और जोवों के साधन कह कर अब सच्चिदानन्द-स्य परमेश्वर और उस के सदंश से जगत् और चिदंश से जीव और आनन्द-स्य श्री विग्रह इन का परस्पर संबंध दिखाते हैं) यह सब ईश्वर स्वरूप ही है इस से अजनीय अर्थात् भगवान से यह अलग नहीं है ॥ ८५ ॥ इस सूत्र से सिध्वावाद निरस्त करते हैं क्योंकि सिध्वावादियों के मत से संसार असत्य है परन्तु यहां पर सूत्रकार भगवान् शाखिल्य सुक्त कण्ठ से जगत् की सतता प्रतिपादन करते हैं और इस जगत् का विस्तार इस प्रकार से है कि सच्चिदानन्दमय ईश्वर को जब संसार की इच्छा हुई तो अपने सदंश से जड़ प्रपंच किया और चिदंश से चैतन्य प्रपंच (जीव सृष्टि) किया जीव में आनन्द-स्य का तिरोभाव है क्योंकि बहुत काल से आनन्दराशि भगवान से इन का वियोग है उस वियोग का न इन को स्मरण है न वियोगजन्य दुःख

हे छो भगवान की कृपा से वा उस के भक्तों की कृपा से उस के वियोग का स्वरण जाना ही मानो उस के आनन्दान्श के आविर्भाव का कारण है और इसी से उस के एक अंग में स्थित यह सब नित्य सत्य है ।

तच्छक्तिर्माया जडसामान्यात् ॥ ८६ ॥

(मिथ्यावादिक निराकरण कर के अब मायावादी का निराकरण करते हैं) कि माया स्वतंत्र कोई वस्त्वंतर नहीं है किन्तु भगवान के शक्ति ही का नाम माया है और वह भी जड़ अर्थात् अपनी सृजन चेतन्यता शून्य अन्य चिदंश के समान है ॥ ८६ ॥ इस से मायावादियों का ईश्वर का माया के फंद में फसना और शाक्तों का स्वतंत्र शक्तिवाद निरस्त हुआ ।

व्यापकत्वाद्ब्राह्म्यानाम् ॥ ८७ ॥

(सदंश में चिदंश और चिदंश में आनन्दान्श व्याप्त है इस से परस्पर इन में व्याप्य व्यापक भाव हुए तो प्रथम संसार की व्याप्य और ईश्वर को व्यापक संज्ञा हुई तो फिर से उस की सत्यता और शुद्धाद्वैतता दिखाने के हेतु कहते हैं) कि व्यापक के सत्य होने से उस का व्याप्य भी सत्य ही है ॥ ८७ ॥

न प्राणिवुद्धिभ्योऽसंभवात् ॥ ८८ ॥

(मायावाद निराकरण करके उस के समान ही नास्तिकवाद का भी निराकरण करते हैं) यह किसी प्राणी की बुद्धि से नहीं बना है, क्योंकि इस की सूक्ष्मता प्राणियों की बुद्धि के बाहर है इस से यह प्राणियों की बुद्धि से बना है यह बात असंभव है ॥ ८८ ॥

निर्मायोच्चावचं श्रुतीश्च निर्मिमीति पितृवत् ॥ ८९ ॥

यह सब भूत समूह बना कर वेदों को बनाता है पिता की भांति ॥ ८९ ॥ जैसे पिता पुत्रों को उत्पन्न करके फिर उन को शिक्षा देता है वैसे ही भगवान अपने एकांश से जीवों को प्रगट करके फिर उन की शिक्षा के हेतु वेद कहता है ।

मिश्रोपदेशान्नेति चेन्न स्वल्पत्वात् ॥ ९० ॥

जो कहो कि वेद के उपदेश मिश्र हैं अर्थात् अग्निष्टोमादिक यज्ञ में हिंसा का विधान है इस से ये वेद ईश्वर के बनाये नहीं ऐसा नहीं क्योंकि वह भाग उस में बहुत ही थोड़ा अर्थात् उपेक्षित है ॥ ९० ॥

फलमस्माद्वाद्रायणो दृष्टत्वात् ॥ ६१ ॥

(अब कर्मवादियों का मत निराकरण करते हैं) कि ये कर्म स्वतः फलदाता नहीं फल देनेवाला ईश्वर ही है यह व्यास जी कहते हैं क्योंकि ऐसा ही देखा भी जाता है ॥ ६१ ॥ जैसे राजा के तोष के हेतु अनेक कर्म करो परन्तु उसका प्रतिफल देना राजा ही के अधिकार में है और बिना कुछ सेवा किये भी राजा फल दे सकता है वैसे ही ईश्वर का प्रसन्न होना कर्म के आधीन नहीं कर्म केवल साधक है ।

व्युत्क्रमादप्ययस्तथादृष्टम् ॥ ६२ ॥

जय उल्टी चाल से होता है ऐसा ही देखा गया है ॥६२॥ जैसे गोरखध्वजे कीड़ुडिवियों की फैलाने जाओ तो कई डिवियां ही जाती है और जब बंदकरो तब सब से छोटी अपने से बड़ी डिवियां में और वह अपने से बड़ी में इसी प्रकार अन्त वाली बड़ी डिविया में सब डिविया छिप जाती हैं, वैसे ही जिस क्रम से उत्पत्ति होती है (अर्थात् ब्रह्म से प्रकृति, प्रकृति से महत्तत्त्व इत्यादि एक से एक उत्पन्न होते हैं) वैसे ही जय होने के समय सब भगवान में जय पाते हैं, इस से फिर भी संसार की नित्यता सिद्ध किया ।

तीसरे अध्याय का प्रथमाह्निक समाप्त हुआ ।

तद्वैद्यं नानात्वैकत्वसुपाधियोगहानादादित्यवत् ॥ ६३ ॥

उसकी एकता है क्योंकि उपाधि के योगों के मिटने से नानात्व का एकत्व ही जाता है आदित्य की भांति ॥ ६३ ॥ जैसे “ ध्येय सदा सबिद्वमंडल मध्यवर्ती” इत्यादि वाक्यों से भगवान का स्वरूप और आदित्य मंडल यह दो पृथक् प्रतिष्ठित होते हैं नहीं क्योंकि जब मंडलरूपी उपाधि को भगवान् अपने में लय कर लेता है तब केवल नारायण संज्ञा रह जाती है वैसे ही जब संसारको अपने में लय कर के उस को संयोग वियोगात्मक “ संसार ” इस नाम को भी अपने में लय कर लेता है तब केवल आपही रह जाता है ।

पृथगितिचेन्न परेषास्वन्धात्प्रकाशानां ॥ ६४ ॥

अलग वाही सो नहीं ऐसा कहने से पर अर्थात् भगवान से अस्वन्ध जोग जैसे प्रकाशों का ॥ ६४ ॥ प्रकाशों का अर्थात् सूर्य मंडल की और नारायण

को जैसी एकता है वैसे ही भगवान से इस से एकता है इन दोनों का सम्बन्ध नहीं हो सकता ।

नविकारिणस्तु कारणा विकारात् ॥ ६५ ॥

ये आत्मा विकारी नहीं हैं क्योंकि ऐसा मानने से उनके कारण अर्थात् भगवान को भी विकार मानना पड़ेगा ।

अनन्यभक्त्या तद्ब्रह्मवृद्धिलयादत्यन्तं ॥ ६६ ॥

(भजनीय का और भजन करने वाली का स्वरूप दिष्टा कर उनके वियोग स्मृति का स्मारक फिर से कहते हैं) कि उस परमानन्दमय भगवान में अनन्य भक्ति करते करते भृंगी कीट की भांति तद्ब्रह्म हो जाती है और उस बुद्धि को भी लय होने से अर्थात् वियोग जन्य असह्य दुःख से सब सुख बुध छूट जाने में अत्यन्त अर्थात् सब वासनाओं को मोच होने से परमानन्द अर्थात् आनन्द मात्र कर पाद सुखोदरादि भगवान श्रीकृष्णचन्द्र से नित्य लीला में संयोग होता है ॥ ६६ ॥

आयुश्चिरमितरेषांतुहानिरनास्पदत्वात् ॥ ६७ ॥

(जो कहो कि संचित प्रारब्ध का भोग तो हुआ ही नहीं आनन्द प्राप्ति केमे हुई इस पर कहते हैं) कि साधारण जीवों की आयु ही प्रारब्ध की भोग कराने वाली है परन्तु भगवद्भक्तों को तो उन संचित प्रारब्धों की आप हो हानि हो जाती है क्योंकि उसकी आयु का भोग नहीं रहता ॥ ६७ ॥ अर्थात् जिनको भगवद्वियोग स्मरण में एक एक क्षण कोटि कोटि कल्प तुल्य असह्य यंत्रणा सहते हुए बीतते हैं वा संयोगलीला स्मरण से एक एक क्षण लाख लाख वरस तक स्वर्ग के सुख भोग के समान बीतते हैं उनके सब भले बुरे प्रारब्ध इस वियोग संयोग के अनुभव में भस्म ही जाते हैं ।

संस्तुतिरेषामभक्तिः स्यान्नाज्ञानात्कारणासिद्धेः ॥ ६८ ॥

श्रीर जीवों को संसार की कारण अभक्ति है, अज्ञान नहीं, कारण की असिद्ध से ॥ ६८ ॥ अर्थात् संसार के कारण भगवान् में अभक्ति ही बंधन की हेतु होती है क्योंकि बंध मोक्ष का दाता ही जिस से रूठा रहैया उसे मोक्ष कदा ।

त्रींशं नैत्राणि शब्दलिङ्गाच्चिभेदाद्द्रवत् ॥ ८८ ॥

(जो कहने कि जीव कैसे जाने इस पर कहते हैं) कि इन जीवों की श्रीमहादेव जी की भांति तीन नेत्र हैं अर्थात् तीन प्रकार से ये जानें कुछ तो शब्द अर्थात् वेदादिकों से, कुछ लिङ्ग अर्थात् अनुमान से और कुछ पञ्च अर्थात् प्रत्यक्ष से जानें ॥ ८८ ॥

आविस्तिरोभावाविकाराः स्युः क्रियाफलसंयोगात् ॥ १०० ॥

जय श्रीर उत्पति क्रियाफल को संयोग से विकार है ॥ १०० ॥ अर्थात् वास्तविक निर्विकार भावों में क्रिया फल की संयोग से विकार प्रतीत होता है भगवत्स्वरूप ज्ञानानन्तर भक्ति पाने से मनुष्य वास्तविक स्वरूप जानैगा इस से भक्ति ही मुख्य है । इति ।।

व्याकुल लखि सब जीवगन , ज्ञान करअ बहु मानि ।

कियो मूच श्रांडिल्य ऋषि , परम भक्ति की खानि ॥ २ ॥

सुमिरि राधिका प्रानपति , ब्रज जुवती मन फन्द ।

यह ताको भाषा तिलक , किय तदोय हरिचन्द ॥ ३ ॥

श्रांडिल्य मूच और उस का भाषा भाष्य समाप्त हुआ ।

अथ पाठान्तर ।।

१५ सूत्र. अभिज्ञायाः साहाय्यात् इति श्री उपासना सर्वस्व तथा श्री काष्ठजिह्वस्वामि धृत पाठ ।

२६ सूत्र. तस्यानुज्ञानाय सामर्थ्यात् इति पूर्वीक्त पाठ ।

३० सूत्र. आत्मैकपरां इति पूर्वीक्त पाठ ।

३१ सूत्र. उभयपरां इति पूर्वीक्त पाठ ।

३२ सूत्र. प्रत्यभिज्ञानवत् इति तूर्वीक्त पाठ ।

३४ सूत्र. यहां से स्वप्नेश्वर के पाठ से पूर्वीक्त अर्थों के पाठ से बड़ा भेद है । यथा जन्मकर्मविद्व्याजन्मने शब्दात् ३४ तच्च दिव्य स्वशक्ति

साद्रोक्षावात् ३५ मुख्यं तस्य हि कारण्यं ३६ प्राणित्वाच्चविभूतिषु ३७ द्यूत राजसेवयोः प्रतिषेधाच्च ३८ वासुदेवोपतिचेन्नाकारमात्रत्वात् ३९ प्रत्यभिज्ञानाच्च ४० दृष्टिषु श्लेष्टे नतत् ४१ एवं सिद्धेषु च ४२ भक्त्या भक्तनोपसंहारात् परार्थे हेतुत्वात् ४३ रागाद्यैक्यकीर्तितसाहचर्याच्चैतरेषाम् ४४ अन्त-

रानि च शेषाः स्युःपाखादी च कांडत्वात् ४५ ताभ्यः पावित्थ्य सुपक्रमात् ४६
 तासुप्रधानयोगात् फलाधिक्यमेकी ४७ नाञ्जेति जैमिनिः सम्भावात् ४८ अंश
 प्रयोगायां यथा कालं मन्त्रयो गृह्णादिवत् ४९ ईश्वरतुष्टेरेकोपिबन्धो ५० अथन्वोऽ-
 र्पणस्य मुह्यम् ५१ ध्याननियमस्तु दृष्टि सौकर्यात् ५२ उद्यद्भिः पूजायामिव प्र-
 युक्तः ५३ पादोदकं तु पाद्यमव्यामैः ५४ स्वयमर्घ्यर्पितं ग्राह्यमविशेषात् ५५
 निमित्तगुणव्यपेक्षणादपराधिषु व्यवस्था ५६ पत्रादेदीनमन्त्रथाहि वैशिष्ट्यम् ५७
 रुक्ततत्रत्वात् परहेतु भावाच्च क्रियासु श्रेयस्यः ५८ गौणत्रैविध्यमितरेण
 स्तुत्यर्थत्वात् साहचर्यम् ५९ विचिरंतःस्वसुभयमेविष्ट संबंधयत् ६० प्रमादस-
 त्त्वामलाभ्यां विशेषात् ६१ स्मृतिकीर्त्त्याः कथादेशार्त्तौ प्रायश्चित्त भावात् ६२
 भूयमानननुष्ठितिरिति चेदाप्रायणसुपसंहारान्महत्सुपि ६३ ऋषुपि मन्त्रा-
 धिकारे महत् ज्ञेयकसपरसर्वहारात् ६४ तत्स्थानत्वदन्यधर्माः स्वस्ते बाकीवत्
 ६५ आनिन्द्र्योनिधिः क्रियते पारम्ययात् मामान्यवत् ६६ अतोह्यविपक्षभावा
 नामपितृज्ञोके ६७ क्रमैकगल्पपत्तेस्तु ६८ उल्कान्ति वाक्यशेषात् ६९ मह-
 पातकिनं त्वार्त्तौ ७० सैकांत भावो गीतार्थं प्रत्यभिज्ञानात् ७१ परां कृतयेव
 सर्वेषां तथा ह्याह ७२ भजनोपमद्वितीय मिदम् कृतस्य तत्स्वरूपत्वात् ७३
 तच्छक्तिर्मायाजडसामान्यात् ७४ व्यापकत्वात् व्याप्यानां ७५ नपाणिबुद्धिभ्योऽसम्भ-
 वात् ७६ निर्मायोच्चावचं श्रुतीचनिर्मिमीनेपिष्टवत् ७७ मिश्रोपदेशान्त्रितिचित्र स्त-
 त्वात् ७८ फलमस्माद् वादरायणो दृष्टत्वात् ७९ व्युत्क्रमादप्यस्तथा दृष्टं ८०
 तदैक्यं नानात्वमुपाधितः ८१ पृथगेव चित्र परेनासंबंधात् ८२ अविकारिणस्तु
 कारण विकारात् ८३ अनन्य भक्त्या तद्बुद्धिजयादत्यंतं ८४ ग्रामादिवत् विशिष्ट-
 तथा पुमर्थत्वात् ८५ आयुश्चिरमित्यरेषां तु हानिरनास्यदत्वात् ८६ संवर्तित रेषा-
 मभक्तेः स्थानाज्ञामात् कारणासिद्धेः ८७ चीन्धेषां नेत्राणि शब्दालंकाराच्चभेदा
 द्वाद्वत् ८८ आविस्त्रोभावा विकाराः क्रियाफलसंयोगात् क्रिया फल संयोगात्
 ८९ इत्थं क्रम से सूत्रों के पाठ अन्य समाप्ति तक है । इति ।

अथ उपसंहारः ।

इमं लोको के आर्य शास्त्रों में श्रुतियों के पीछे मूल सूत्रों का बड़ा आदर
 है । ये सूत्र भिन्न २ ऋषियों ने भिन्न २ शास्त्रों के प्रतिपादन की बनाए हैं
 और पीछे उन्ही पर भाष्य व्याख्या टिपनो टीका बना बना कर लोको ने उन
 शास्त्रोंको चौड़ाया है । यथा जैमिनि ने पूर्व मिमांसा, व्यासने उत्तरमिमांसा,

गौतम ने न्याय, काणाद ने वैशेषिक, कपिल ने सांख्य और पतंजलि ने योग सूत्र बनाए हैं। इन्हीं छ शास्त्रों की संख्या पङ्क दर्शन है। इन में पूर्व भोसांसा सब से प्राचीन बोध होता है। इन सूत्रों की छोड़ कर और भी अनेक सूत्र हैं यथा पाणिनि के व्याकरण सूत्र, धात्वायन के काम सूत्र, वामन और भरत के अलंकार शास्त्र पर सूत्र, पिंगल के छन्दःशास्त्र पर और दूसरे दूसरे ऋषियों के अन्य अन्य शास्त्रों पर। वैसे ही भक्ति शास्त्र पर शांडिल्य ऋषि के और नारद जी के सूत्र हैं। कहते हैं कि संकर्षण सूत्र और उस का प्राचीन भाष्य उपासना पर आगे प्रचलित था किंतु अब उस की पुस्तक स्मरण शेष रह गई है।

इस शांडिल्य सूत्र के भाष्यकारों ने सूत्रों के आरम्भ करने की पूर्व उपासना रहस्य नामक अथर्व वेद की श्रुति का एक प्रकरण लिखा है। उस का आशय यह है कि ब्रह्मा ने श्री शिवजी से भक्ति का भेद पूछा है उस पर योड़े से मैं शिवजी ने ब्रह्मा से भक्ति स्वरूप कथन किया है। ब्रह्माजी ने वह रहस्य नारद वशिष्ठ अस्मित देवल और शांडिल्य से कहा है।

इस प्रकार इस आर्य लोगों का मूल शास्त्र वेद त्रिकांड कहलाता है अर्थात् कर्म ज्ञान और उपासना। पहले शास्त्र जीवों की कर्म का उपदेश करता है, उन कर्मों से शुद्ध अधिकारी जीव को ब्रह्मज्ञान करता है, फिर जब ज्ञान ही होता है तो उसकी उपासना का उपदेश देता हुआ परम सिद्धि की पहुँचता है।

आज काल काल के प्रभाव से उपासनाकांड का प्रचार विरत हो गया है इसी हेतु इस मूल का भाषा में अर्थ प्रचार किया गया इस से जगत् का पर-सोपास्य तुष्ट हो। इति।

अथ दैन्यप्रस्ताप।

जग में काकी कीजे तोस। जासों तनकहु विरत कीजिए सोई धारत रोस। इन्द्रिय सब अपुनी दिसि खीचत चाडि चाडि निज भोग। मन अल्प-भ्य वस्तुन हू भोगत मानत तनिक न भोग ॥ कहति प्रतिष्ठा हमहि बड़ाभो चहति कामना काम। ईर्षा कहति तुमहि एक जीअहु करि औरन विकाम ॥ जागत सपन काय वाचा सों मन सों भोगत धाय। घिसि गईं इन्द्री प्रान सिद्धि भै तौहू नाहिं अघाय ॥ जीन सिद्धत कै तन बल नहिं तौ दूरहि सों ललचाय। जिसि सट्ण है लखत मिठान प्वान लार टपकाय ॥ सबसों

धकिके करत स्वर्ग के अमृतादिके में चाह । धिक धिक धिक हरिचन्द
सतत धिक यह जग काम अघाह ॥ १ ॥

पूरबी २

तन पौरुष सब थाका रान नहिं थाका झी माधी ।
केस पके तन पख्यौ रोग सौं मनुआ तवहु न पाका ॥
अर्जुन भीम सरिस चाहत यह करन विषय रन साका ।
वीती रैन तबी मतवारा घोर नौंद मैं छाका ॥
हारि गयो पै भूठङ्ग गाड़े अबहुं विजय पताका ।
हरीचन्द तुम विनु को रीकी ऐते ठग को नाका ॥ १ ॥

३

नर तन सब अवगुन को खान । सहज कुटिल गति जीवहु तामें यामें
श्रुति परमान ॥ स्वारथपन अग्रह मलिनता लोभ काम अरु क्रोध ॥ कामादि-
का सब नित्य धरम हैं तन मन के निरबोध ॥ तापें सह धरमिन सौं पूख्यौ
भो संसार सहाय । अन्ध आसरे चख्यौ अन्ध के कष्टो कष्टा लौं जाय ॥ करि
करुना करुना निधि केसव जोपे पकरो जाय । तो सब विधि हरिचन्द वचे
नतु डूवतं होइ अनाथ ॥ १ ॥

४

नर तन कष्टो सुहता कौसी । कितनहुं धोथो पीछी बाहर भीतर सब
छिन पैसी । कारन जाको मूत रह्यो मल झी में लिपटि अनैसी । ताको जन
सौं सुह करत तिनकी ऐसी को तैसी ॥ दैहिक करमन सौं न वने कष्ट ता
गति सहज मलै सी । हरीचन्द हरि नाम भजन विनु सब वैसी की
वैसी ॥ १ ॥

५

विरट सब कहां भुलाए नाथ । पावन पतित दीन जन रच्छन जो गाई
श्रुति गाय ॥ जानहु सब कष्ट अन्तरजामी धाड़ गह्यौ अब हाथ । हरीचन्द
सेटहु निज जन को विधिहु लिखी जौं साथ ॥ १ ॥

६

तुम सौं कष्टा किपी करुनानिधि जानहु सब अन्तर गति । सहज मलिन

या देह जीव की सहजहि नीच गामिनी जो मति । तन सन सपनहुं सो
सोभी को दीन विपतं गन मैं रति । निरलज जितनी होत पराजित तितनी
ही लपटत अति ॥ तापैं जी तुमहूं विसराओ तजि निज सहज विरद तति ।
तौ हरिचन्द बचे किमि बोलहु अहो दीन जन के पति ॥ १ ॥

७

देखहु निज करनी की ओर । लखहु न करनी जीवन की कहु ऐही नन्द-
किशोर । अपनाए की आज करहु प्रभु लखहु न जन के दोस । निज बानि
को विरद निबाहो तजहु हीन पर रोस ॥ दीना नाथ दयाल जगत पति
पतित उधारन नाथ । सब विधि हीन अधम हरिचन्दहि देहु आपुनी
हाथ ॥ १ ॥

८

करहु उन बातन की प्रभु याद । जो अरजुन में भारत रन मैं कही
थापि मरजाद । कौसहु होय दुराचारी पै सेवै मोहि अनन्य । ताही कहैं तुम
साधु गुनहु या जग मैं सोई धन्य । सोन धरममति शान्ति पाइहैं जो राखत
ममआस । अरजुन मस परतिज्ञा जानहु नहि मस भक्त विनाम ॥ काहि धरम
सब लोक वेद के मस सरनहिं एक आउ । सब पापन सों तोहि छुड़ैहैं क-
हुन सोच जिय लाठ । कही विभोषन सरन समय मैं सोऊ सुरिरहु गाय ।
लक्ष्मिन हनुमान आदिक सब याके साखी नाथ ॥ इस तुमरे हैं कहै एक-
हु वार सरन जो आइ । ताहि जगत में अभय करत हम सबहि भांति
अपनाइ । यहुं कह्यो मस जानहि वासना उपजै और न हीय । जिस कूटे
चुरए धानन मैं उपजै नाहीं वीय । यहुं कह्यो तुम मोकहं प्यारे निहकिंचन
अर दीन । यहुं कह्यो तुम इमहिं जीव के प्रेरक अंतर लीन ॥ कहैं लौं कहैं
सुनौ इतनी अब सतप्रसंध सहाराज । हरीचन्द की वार भुकाईं क्यों वे
बातें आज ॥

तिनको रोग सोग नहिं व्यापै जे हरिचरन उपासी ।
सपनहुं मनिन न होइ सदा जे कल्प तरोवत बासी ॥
हरि के प्रबल प्रताप सासुहें जगत् दीनता नासी ।
हरीचंद निरभय विहरहिं नित कृष्णदास अरु दासी ॥

अथ सर्वोत्तमस्तोत्र भाषा ।

श्रीकृष्णायनमः ।
अथश्रीसर्वोत्तमस्तोत्र (भाषा) ।

जयति आनंदरूप परमानंद कृष्णमुख कृपानिधि
दैविउद्धारकारी । स्मृतिमात्रसकलआरतिहरन
गूढगुन भागवतअर्थ लीनो विचारी ॥ १ ॥

एकसाकारपरब्रह्मस्थापनकरन चारहू वेद के
पारगामी । हरनमायावाद बहुवाद नाशकरि भक्ति
पथ कमल को दिवसस्वामी ॥ २ ॥

शूद्रललनालोकउद्धारन सामर्थ गोपिकाधीश
कृत अंगिकारी । वल्लभीकृतमनुजअंगीकृतजननं
पै धरनमर्याद बहुकरुणधारी ॥ ३ ॥

जगतव्यापक दानकरत सब वस्तु को चरित जाके
सकल अतिउदारा । आसुरीजननमोहनकरनहेत
यह व्याज सों प्रकृति इव रूप धारां ॥ ४ ॥

अग्निअवतारवल्लभनाम शभरूप सदा सजन-
न हितकरत जानी । लोकशिक्षाकरन कृष्ण की भक्ति
करि निखिलजग इष्ट के आपु दानी ॥ ५ ॥

सर्वलक्षणनिसस्पन्नश्रीकृष्णको ज्ञान प्रभु देत गुरु-
रूपधारी । सदा स्वानंदतुंदिल पद्मदलसरिसनयन
जुग जगतसंतापहारी ॥ ६ ॥

कृपाकृति दृष्टि क्री दृष्टि वर्धिताकिए दासिकादासपति परमप्यारे । शेषदृग्करणमुरछितभक्तिद्वेषिगन भक्त जनचरनसेवितदुलारे ॥ ७ ॥

भक्तजनसुखसेव्य अतिदुराराध्य दुरलभकंजपद उग्रतेजधारी । वाक्य सकरन पूरनसकलजननमन भाग तपयसिंघुनथनकारी ॥ ८ ॥

सारताके जानि रासवतितान के भाव सों सकल पूरित सुभेसा । होत सनमुख देत प्रेम श्रीकृष्ण को आविमुक्ति देत लखि बहतदेसा ॥ ९ ॥

रासलीलैकतात्पर्यमयरूपमुनि देत करि कृपा बहु कथा ताकी त्यागि सब एक अनुभव करहु विरह को यहै उपदेसवानी सु जाकी ॥ १० ॥

भक्तिआचारउपदेस नित करत पुनि कर्ममारग-प्रवर्त्तन सु कीनो । सदा यागादि में भक्तिमारग एक करहु साधनहि उपदेसदीनो ॥ ११ ॥

पूर्णआनंदमय सदापूरनकाम वाक्यपति निखिल-जगविबुधभूषा । कृष्ण के सहस शुभनाम निजमुख कहे भक्तिपर एक जाको सुरूपा ॥ १२ ॥

भक्तिआचारउपदेसहित शास्त्र के वाक्यनानानिरू-

पन सु कीने । भक्तजन सदा घेरेरहत जिनन निज
प्रेम हित प्रानप्रन त्यागिदीने ॥ १३ ॥

निजदासअर्थसाधन अनेकनकिए जदपि प्रभु
आपसबशक्तिकारी । एक भुवलोकप्रचलितकरन
भक्ति पथ कियो निजवंश पितुरूपधारी ॥ १४ ॥

निजविमलवंसमें परममाहात्म्यप्रभु धव्यो सबज-
गतसंदेहहारी । पतिव्रतापतिपारलौकिकौहिकदान
करत अधिकार जन को विचारी ॥ १५ ॥

गूढमति हृदयनिज अन्य अनभक्त कों सकलआ-
शय आपु कहत प्यारे । जगउपासनआदिमारगा
दीनमेंमुग्धजन मोह के हरनवारे ॥ १६ ॥

सकलमारगन सों भक्तिमारगबीच अतिविलक्षण सु
अनुभवहि मानै । पृथककहि शरण को मार्गउपदेस
करि कृष्ण के हृदय की बात जानै ॥ १७ ॥

प्रतिक्षणगुप्तलीला नवनिकुंज की भरिही चित्तमें
सदा जाके । सोई कथा स्मरणकरि चित्तआक्षिप्तवत
भूलिगई सकल सुधिआए ताके ॥ १८ ॥

ब्रजप्रिय ब्रजवास अतिहिप्रियपुष्टिलीलांकरन सदा
एकांतचारी । भक्तजनसकलइच्छासुपूरनकरन
अतिहिअज्ञातलीलाविहारी ॥ १९ ॥

अतिहिमोहन निरासक्तजग भक्तमात्रा सक्त पतित
पावन कहाई । जसगान करत जे भक्त तिनके हृदय
कमल में वास जाको सदाई ॥ २० ॥

स्वच्छपीयूषलहरीसदृश निजजसनि तुच्छकरिअ-
न्यरस दिये वहाई । पररूपकृष्णलीलाअमृतरस
अखिलजन सीचि प्रेममें दिये भिँजाई ॥ २१ ॥

सदाउत्साह गिरिराज के वास में सोई लीला प्रेम-
पूरगाता । यज्ञहवि हरत पुनि यज्ञआपुहि करत
अतिविसद चारहूफल के दाता ॥ २२ ॥

शुभप्रतिज्ञा सत्य जगतउच्चार की प्रकृति सों दूरि
बहु नीतिज्ञाता । कीर्तिवर्द्धन करी सूत्र को भाष्य
करिकृष्ण इकतत्व के ज्ञानदाता ॥ २३ ॥

तूलमायावाददहनहित अग्निवपु ब्रह्म को वादजग
प्रगटकीनो । निखिलप्राकृतरहित गुननभूषित सदा
संदमुसुकानि मन चोरिलीनो ॥ २४ ॥

तीनहूलोकभूषनभूमिभाग्यवर सहजसुंदररूप-
वेदसारं । सदा सबभक्तप्रार्थितचरनकमलरज धन
रूप नौमि लक्ष्मणकुमारं ॥ २५ ॥

एकसतआठ ए नाम अभिराम नित प्रेमसों जे

[५]

जगत मां हि गावें । परमदुलरभ कृष्णार्धरामृत
पानस्वाद करिसुलभ ते सदापावें ॥ २६ ॥

नामआनंदनिधि वल्लभाधीश को विठ्ठलेश्वर प्रगट
करि दिखायो । छोडि साधन सकल एक यह गाइकै
परम संतोष हरिचंद पायो ॥ २७ ॥

इति श्रीमद्विठ्ठलनाथचरणपंकजपरागलेपनापसा-
रितनिखिलकल्मषहरिश्रन्द्रकृतभाषान्तरितकीर्तन
स्वरूपश्रीसर्वोत्तमस्तोत्रं समाप्तिमगमत् ॥

उत्तरार्द्ध-भक्तमाल ।

अर्थात्

नाभा जी के भक्तमाल के लिखे पश्चाद् जो जो भक्त हुए हैं,
उन के जीवन चरित ।

—◆—
श्री हरिश्चन्द्र लिखित ।
~~~~~



## उत्तरार्द्ध भक्तमाल ।

### दोहा ।

राधा वल्लभ वल्लभी , वल्लभ वल्लभ ताइ ।  
 चार नास वपु एक पद , वन्दत सीस नवाइ ॥ १ ॥  
 छै प्रतच्छ वसि गृह निवाट , दियो प्रेम को दान ।  
 जय जय जय हरि मधुर वपु , गुरु रस रीति निधान ॥ २ ॥  
 जग के विषय छुड़ाइ सब , सुद प्रेम दिखराइ ।  
 वसे दूर छै सहज पुनि , जै जै जादवराइ ॥ ३ ॥  
 धन जन हरि निहचिन्त करि , फिर छाखौ भव जात ।  
 सोचि जुगति कछु मोहिं जिन , जै जै सो नंदनाल ॥ ४ ॥  
 कछु गीता मैं भाखि कै , शुक छै कवना धारि ।  
 कही भागवत मैं प्रगट , प्रेम रीति निरुवारि ॥ ५ ॥  
 पुनिवल्लभ छै सो कही , कवहुं कही जु नाहिं ।  
 शुद्ध प्रेम रस रीति सब , निज श्रवण के सांहिं ॥ ६ ॥  
 वंश रूप करि कै द्विविध , घापि पुनि जग सोय ।  
 श्रव लौं जाके लेश सी , पासर प्रेमी होय ॥ ७ ॥  
 व्यास कृष्ण चैतन्य हरि , दास सु हित हरिवंश ।  
 विविध गुप्त रस पुनि कहे , धरि वपु परम प्रसंस ॥ ८ ॥  
 भांति भांति श्रुतभव सरस , जिन दिखरायो भाप ।  
 अधमहुं को सो नित जयति , ससन समन पुर दाप ॥ ९ ॥  
 श्रतिहि श्रुति श्रति हीन निज , अपराधी लखि दीन ।  
 जदपि छमा के जोग नहिं , तऊ दया श्रति कोन ॥ १० ॥  
 छवानो सों यों कछौ , या कहं जानहु सन्त ।  
 शही कृपाल कृपालुता , तुमरोको नहिं श्रन्त ॥ ११ ॥  
 ज्वर तापित हिय मैं प्रगट , जुगल हंसत आसीन ।  
 स्वर्ण सिंहासन पर लिए , कर जुगं कंज नवीन ॥ १२ ॥  
 अग्नि बरत चारहुं दिशा , पै मधि सीतल नीर ।



ताहि उच्चारत चरन सी , दैत दाम कहं धीर ॥ १३ ॥  
 बडु नट बपु ह्यै आपुही , कसरत करत अनेक ।  
 कबहुं पौढ़े मइल मै , तानि भौन घट एक ॥ १४ ॥  
 कबहुं सैत पांखान की , कीच जुगलकविधाम ।  
 बैठे बाग बहार मै , गल भुज दिए लनाम ॥ १५ ॥  
 सांभ ससै पारति करत , सब मिली गोपी ग्वाल ।  
 कबहुं अकेलेही मिलत , पिय नन्दलाल दयाल ॥ १६ ॥  
 कबहुं गौर दुति बाल बपु , रजत अभूपन अंग ।  
 पंच नदी पीसाक तन , धरे किए सोइ ढंग ॥ १७ ॥  
 कबहुं जुगल आवत चले , सांभ समय बरसात ।  
 कै बसन्त जहं हरित धर , चारहु और दिखात ॥ १८ ॥  
 देखि दीन भुव मै लुठत , फूल छरी सिर मारि ।  
 हंसत परसपर रस भरे , जिय अति दया विचारि ॥ १९ ॥  
 कबहुं प्रगट कबहुं सुपन , कबहुं अचेतन माहिं ।  
 निज जन दृढ़ता हेत जो , बारखबार दिखाहिं ॥ २० ॥  
 होत बिसुख रोकत तुरत , कारत विविध उपदेस ।  
 जै जै जै हरि राधिका , वितरन नेह विसैस ॥ २१ ॥  
 सायावाद सतंग मद , हरत गरजि हरि नाम ।  
 जयति कोऊ सो कौसरी , हन्दावन वन धाम ॥ २२ ॥  
 तम पाखण्डहिं हरत करि , जन मनजन्मज विकास ।  
 जयति अलौकिक रवि कोऊ , स्तुतिपथकारन प्रकास ॥ २२ ॥  
 अथ परम्यरा ।  
 तन्त्रसामि निज परमगुरु , कृष्ण कामल दल नैन ।  
 जाको सत श्री राधिका , नाम जपन दिन रैन ॥ २४ ॥  
 श्री गोपीजन पद जुगल , वंदत करि पुनि नेम ।  
 जिन जग मै प्रगटित कियो , परस गुप्त रस प्रेम ॥ २५ ॥  
 श्रीशिव पद निज जानि गुरु , बन्दत प्रेम प्रमान ।  
 परस गुप्त निज प्रगट किय , भक्तिपन्थ अभिधान ॥ २६ ॥  
 बन्दी श्री नारद चरन , भव पारद अभि राम ।  
 परस बिसारद कृष्ण गुन , गान सदा गत कास ॥ २७ ॥

पुनि वंदत श्री व्यास पद , वेद भाग जिन कीन ।-  
 क्षण तत्व की ज्ञान सब , भूत्र विरचि कहि दीन ॥ २८ ॥  
 बन्त श्री शुकदेव जिन , सीध प्रेम की पत्न्य ।  
 हम से कनिमल ग्रसितहित , कछौ भागवत ग्रन्थ ॥ २९ ॥  
 विश्णुस्वामि पद जुगल पुनि , पुनवत वारंवार ।  
 जिन प्रगटायो प्रेसु पथ , बहत जानि संसार ॥ ३० ॥  
 गोपीनाथ अरंभि जे , देवादिक मध धामि ।  
 विल्वमंगल लौं सगसत , युक्त अवली पुनसामि ॥ ३१ ॥  
 नमो विल्वमङ्गल चरन , भक्ति वीज उल्कार्य ।  
 सूक्ष्म रूप सीं तर्क रहै , जो अनिक सत बर्य ॥ ३२ ॥  
 यह मारग डूबत निरखि , जिन प्रगटायो रूप ।  
 नमो नमो गुरुवर चरन , श्री वल्लभ हृज भूप ॥ ३३ ॥  
 सुगल सुअन तिनके तनय , जिनहिं आठ निरधारि ।  
 भक्ति रूप दसधा प्रगट , वंदत तिनहिं विचारि ॥ ३४ ॥  
 एक भक्ति के दान हित , थापित परम प्रसंग ।  
 भयो अहे अरु हाइया , जे श्री गुरुवर वंस ॥ ३५ ॥  
 प्रगटन प्रेम प्रभाव नित , नासन सीग कुरोग ।  
 जे जे जग आरति हरन , विदित वल्लभी लीग ॥ ३६ ॥  
 जे प्रेमी जन कीउ पथ , हरि पद नित असुरक्त ।  
 वंदत तिनके चरन हम , करहु कृपा सब भक्त ॥ ३७ ॥

अथ उपक्रम ।

नाभाजी महाराज ने , भक्तमाल रस जाल ।  
 बाल बाल हरि प्रेम की , विरचि होइ दयाल ॥ ३८ ॥  
 ता पाछे अवलौ भए , जे हरि पद रत सन्त ।  
 तिनके जस वरनन करत , सीइ हरि कहि अति कंत ॥ ३९ ॥  
 कबहुँ कबहुँ प्रसङ्ग बस , फिर सीं प्रेमी नाम ।  
 ऐहें या नवग्रन्थ में , पूरव कतिथ ललाम ॥ ४० ॥  
 भक्त माल जो ग्रन्थ है , नाभा रचित विचित्र ।  
 ताही को एहि जानियो , उत्तर भाग पवित्र ॥ ४१ ॥  
 भक्तमाल उत्तर अरध ; याही सीं सुभ नाम ।

गुधी प्रेम की डोर में ; सन्त रतन अभिराम ॥ ४२ ॥  
 नव माता हरिगल दई , नाभाजी रवि जीन ।  
 दुगुन आलु करि लक्षण की , पहिरावत हीं तीन ॥ ४३ ॥  
 लिखे लक्षण द्विय में सदा , जदपि नवल कीड नाहिं ।  
 नाम धाम हरि भक्त के , आदि समय हू मांदि ॥ ४४ ॥  
 तदपि सदा निज प्रेम पथ , दीपक प्रगटन काज  
 समय समय पठवत आवनि , निज भक्तन ब्रजराज ॥ ४५ ॥  
 ताही सौं जब आवहीं , भुव-तव जानहिं लोग ।  
 भक्त नाम गुन आदि सब , नासन भव भय रोग ॥ ४६ ॥  
 तिनहीं भक्त दयाल की , परस दया बरू पाइ ।  
 तिनको चरित पवित्र यह , कहत अछौं कहु नाइ ॥ ४७ ॥  
 वैश्य अग्र कुल में प्रगट , वाल लक्षण कुल पाल ।  
 तासुत गिरिधर चरन रत , दर गिरधारी लाल ॥ ४८ ॥  
 अक्षीचंद तिनकी तनय , फते चंद ता नंद ।  
 हरखचंद जिन के भए , जिन हुल सागर चंद ॥ ४९ ॥  
 श्री गिरिधर सुन्दर के , धर सेवा पधराइ ।  
 तारे निज कुल जीव सब , हरि पद भक्ति दृढ़ाइ ॥ ५० ॥  
 तिन के सुत गोपाल ससि , प्रगटित गिरिधरदास ।  
 कठिनकरम गति सेठि जिन , कीनो भक्ति प्रकास ॥ ५१ ॥  
 सेठि देव देवी सकल , छोड़ि कठिनकुल सीति ।  
 थाप्यौ गृह में प्रेम जिन , प्रगटि लख पद प्रीति ॥ ५२ ॥  
 पारवती की कूख सौं , तिनसौं प्रगट अमन्द ।  
 गोकुलचन्द्राग्रज भयो , भक्त दास हरिचन्द ॥ ५३ ॥  
 तिन श्री वल्लभ बरू कपा , विरची मान बनारइ ।  
 रही जीन हरिकांठ सैं , गित नव छै लपटाइ ॥ ५४ ॥  
 लहिहैं भक्त अनन्द अति , छै हैं पतित पवित्र ।  
 पढ़ि पढ़ि कै हरिभक्त की , चित्र विचित्र चरित्र ॥ ५५ ॥

श्री विष्णुस्वामि संसार में प्रगट राजसेवा करी ।  
 जोशक सौं लहि ज्ञान आम्नु भुव पावन कीनी ॥

नृप प्रधानता जगत जान्ता गुनि कै तजि दीनी ।  
 छठ करि हरि की अपुने कर नित भोग चगायो ॥  
 भक्ति प्रचारन द्विविध बंश भुव माहिं चलायो ।  
 जग में अनेक सतधरस बसि नाम दान भुव उररी ॥ श्रीविष्णु स्वामि—

श्रीनिम्बादित्य सरूप धरि आपु तुङ्ग विद्या भई ।  
 द्वावडि भुव में अरुण गेह द्विज छै प्रगटाए ॥  
 तस पखण्ड दन्तमनन सुदर्सन वपु कहवाए ।  
 सकल वेद की सार काह्यो दसही छन्दन सई ॥  
 सुक सुख सौं भागवत सुनी नृप देवरात जहं ।  
 बनि भरक वृच्छ चढ़ि दरस दै प्रतिथि संक सय हरिलई ॥ श्रीनिम्बादित्य—

मायावादी घननाद मद्र रामानुज मईन कियो ।  
 अगिनित तम पाखण्ड प्रगट छै धूरि मिलायो ॥  
 धीर बनक सौं सुदृढ़ भक्ति की पंथ चलायो ।  
 वादी गनन प्रतच्छ सेम बनि दरसन दीनी ॥  
 शुक् को चार मनोरथ पन करि पूरन कीनी ।  
 जा सरन जाइनिरदुन्द छै जीवनरक भय तजिजियो ॥ मायावादीघन—

दृढ़ मेद भगति जग में करन मध्व अचारज भुव प्रगट ।  
 प्रथम शास्त्र पढ़ि सकल परंभन खंडन ठान्यौ ॥  
 हितवाद प्रगटाइ दासभावहि दृढ़ मान्यौ ।  
 थापि देव गोपाल धरनि निज विजय प्रचाख्यौ ॥  
 मति मण्डित पण्डित गन बल खण्डित करि डाय्यौ ।  
 दै सङ्ग चक्र की छाप सुज दई सुक्ति सारूप्य भट ॥ दृढ़मेद भक्ति—

श्री विष्णुस्वामि पथ उररन जै जै वल्लभ राजवर ।  
 तिलंगवंश द्विजराज उदित पावन वसुधा तन ॥  
 भारद्वाज सुगोत्र यलुर साखा तैत्तिर कल ।  
 यज्ञनरायन कुलमनि लक्ष्मनभट तनूभव ॥  
 इक्ष्मणराज गभं रत्नसम श्री लक्ष्मी धव ।  
 गोश्रीपनाथि विठ्ठल पिता भाष्यादिक बडु अन्वकार ॥ श्रीविष्णुस्वामि—

निज प्रेम पंथसिद्धान्त हरि विठ्ठल वपु धरि कै कछ्ही ।  
 श्री श्री वल्लभ सुअन विप्रकुल तिलक जगत वर ॥  
 मायामत तमतोम विमर्हन श्रीषदिवाकर ।  
 जन चकोर हित चन्द भक्ति पथ भुव प्रगटावन ॥  
 अंतरंग सखि भाव खामिनी दास्य हृदावन ।  
 देवीजनभक्तिअवन्तस्वहितइकजापद हृदकरिगछ्ही । निजप्रेमपंथसिद्धान्तहरि—

निज फलित प्रफुल्लित जगत में जय वल्लभ कुल कलपतर ।  
 गुरुवर गोपीनाथ प्रगट पुरुपोत्तम प्यारे ॥  
 श्रीगिरिधर गोविन्दराय क्विनी दुनारे ।  
 बालकृष्ण श्रीवल्लभ साक्षा विजय प्रकासन ॥  
 श्री रघुपति जदुनाथ स्याम घन भव भय नासन ।  
 सुरलीधर दामोदर सुकल्यानराय आदिक कुंवर ॥ नितफलित—

जग कठिन सृष्टता सिथिल कर प्रगट प्रेम चैतन्य को ।  
 श्री गीर्जासम हरि हित सब सों सुख मोखी ॥  
 लोकनाज भवनाल कसल तिनुका सो तोखी ।  
 वेदसार हरिनाम दान करि प्रगट चलायो ॥  
 अनुदिन हरि रस निरतत जुग हग नीर बहायो ।  
 नित मत्त कृष्ण मधुपान करिसपनेहु ध्यान न अन्यको । जग कठिन सृष्टला—

ये मध्व संप्रदा के परम प्रेमी पण्डित जग विदित ।  
 विजयध्वज अति निपुन बहुत वादी जिन जीते ।  
 साधवेन्द्र नरसिंह भारती हरि पद प्रीते ॥  
 ईश्वरपुरी प्रकाश भट्ट रघुनाथ अचारज ।  
 त्रिपुर गङ्गा श्रीजीव प्रबोधानन्द सु आरज ॥  
 अद्वैत सु नित्यानन्द प्रभु प्रेम मूर ससि से उदित ॥ ये मध्व संप्रदा के परम—

जान्ही हन्दावन रूप हरिदास व्यास हरिवंस मिलि ।  
 निश्चारक मत विदित प्रेम को सारहि जान्ही ।  
 जुगल केलि रस रीति भलें करि इन पहिचान्ही ॥  
 सखी भाव अति चाव महल के नित अधिकारी ।

पिय हूं सीं बढि हेत कारत जिन पै निज प्यारी ॥

जग दान चलायो भक्ति को ब्रज सरवर जल जलन खिलि ॥ जान्यो हन्दावन—

ये हन्दावन के सन्त सब जुगल भाव के रंग रंगी ।

मोनीदास गुविन्ददास निस्वार्क सरन जू ।

ललित मोहनी चतुर मोहनी आसकरन जू ॥

सखीचरन राधामसाद गोवर्द्धन देवा ।

कंबलकनित गरीबदास भीमा सखि सेवा ॥

श्री वल्लभदास अनन्य लघु विठ्ठल मोहन रस पनी ॥ ये हन्दावन के सन्त सब—

रघुनाथ सुधन पंडित रतन श्रीदेवकिनन्दन प्रगट ।

किय रसाखि नव काव्य कृष्ण रस रास मनोहर ।

श्रीगोकुलससि सेइ लहे अनुभव बहु सुन्दर ॥

पिता पितामह प्रपितामह को पंडितताई ।

भक्ति रीति हरि प्रीति भलें करि पापु निभाई ॥

जानको उदर अंतुधि रतन पितुगुन जिन में विदित खट ॥ रघुनाथ सुधन—

पीताम्बर सुत विद्या निपुन पुरुषोत्तम वादीन्द्र जित ।

श्रीवल्लभ पाछें बुधिवल आचार्य कड़ाए ।

निरनय वाद विवाद अनेकन ग्रन्थ बनाए ॥

गाड़ा पै धुज रोपि जयति वल्लभ लिखि तापर ।

ग्रन्थ साथ सब लिए फिरि जीतत चहुं दिसि धर ॥

श्रीबालकृष्ण सेवा निरत निज बल प्रगटायो अमित ॥ पीताम्बरसुत—

श्रीहारकेश ब्रजपति ब्रजाधीश भए निज कुल कमल ।

सेवा भाव अनेक गुप्त इन प्रगट दिखाए ।

श्री युगल नित्य रसरास कीरतन बहुत बनाए ॥

शब्द पुष्टि अनुभव लच्छलित रस हिय मांझी ।

सपनेहु जिन को हृत्ति कबहुं लौकिक मय नांझी ॥

श्रीवल्लभ को सिद्धांत सब धित जिन की चित नित विमल ॥ श्रीहारकेश—

श्री श्री हरिराय स्वभक्ति बल नाथहि फिरि बोलवाइयो ।

रक्षिक नाम सौं अथ्य रचि भाषा की भारे ।  
 नाम राखि हरिदास तथा संस्कृत की न्यारि ॥  
 परम गुप्त रस प्रगट विरह अनुभव जिन कीनो ।  
 सेवा महं सब त्यागि सदा हरि की चित दीनो ॥  
 हरि हृच्छा लखि विनु समयंडू मन्दिर इन खुलवाइयो ॥ श्रीश्री हरिराय—

जो अनुभव श्रीविह्वल कियो सोइ दाऊ जी में उघट ।  
 सात सरूपहि फिर श्री जी पासहिं पधराये ।  
 पहिले ही की भांति अन्नकुट भोग लगाये ॥  
 सब रित उच्छव प्रगट एक रितु माहिं दिखाये ।  
 दून परस करि सो कर फिर नहिं प्रभुहिं कुवाये ॥  
 करि लाखन व्यय सेवा करी किय गोकुल मेवाइ अट ॥ जो अनुभव—

लखि कठिन काल फिर प्रापुंही आचारज गिरिधर भए ।  
 बालकपन खेलत ही में पाखान तरायो ।  
 वादी दक्षिण जीति पंथ निज सुदृढ़ दृढ़ायो ॥  
 श्रीसुकुन्द भव दुन्द हरन काशी पधराये ।  
 थापि कुल सरजादा अनुभाव प्रगट दिखाये ।  
 पूरे करि अथ्य अनेक पुनि आपहु बहुविरचे नए ॥ लखि कठिनकाल—

बारानसि प्रगट प्रभाव श्रीस्वामा वैठी की भयो ।  
 श्री गिरिधर की सुता सतीगुन मय सब अंग ।  
 हरि सेवा में चतुर पतित पावनि जिमि गंगा ॥  
 षट ऋतु रूपन भोग मनोरथ करि मन भायो ॥  
 हन्दावन को अनुभव कासी प्रगटि दिखायो ।  
 थिर थापी करि सब रीति निज सुजस दसहु दिसि में कयो ॥ बारानसि में—

ये बल्लभ कुल के रत्न सनि बाबका सब श्रुव मैं भए ।  
 सोमचिरैया रचि कै श्री रनछोर उड़ाई ।  
 पुरुषोत्त प्रभु पद रचि लीला लखित सुनाई ॥  
 विह्वलनाथ दयाल सतीगुन मय बपु धारे ।

तैमैहि गोविंदनाथ गोकुलाधीश पियारे ॥  
जीवन जी जन जीवन करन विविध पद्य विरचे नए । ये बल्लभ कृत के—

अध निवार मूर कर मूर पद्य मूर-मूर जग में उयी ।  
बल्लभ भागर बिहुन जाहि जहाज वखाय्यौ ॥  
जग काधि कुल मद इखौ प्रेम नीकें पहिचाय्यौ ।  
एक वृत्ति नित बवानाथ हरि पद रचि गाए ॥  
श्रीबल्लभ बल्लभ भभेद करि प्रगट जनाए ।  
आपद बल्ल भवसौं नर सकल गाइ गाइ हरि गुनि जियो ॥ अध निवार—

श्री कुंभनदास कृपात अति मूरति धरि प्रेम मनु ।  
राधा भाषव विनु कोउ पद जिन कवहुं न गायो ॥  
विरह प्रीति हरि प्रति पंथ करि प्रगट दिखायो ।  
सुनत कृष्ण को नाम सवन द्वियरो भरि आवत ॥  
प्रेम मगन नित नव पद रचि हरि सनसुख गावल ।  
श्रीबल्लभ गुरुपद जुग पदुम प्रगट सरम मकरन्द जनु ॥ श्रीकुंभनदास—

परमानंद दास उदार अति परमानंद ब्रज बसि लख्यौ ।  
द्विय हरि रस उच्छ्वसित निरखि गुरु कर धरि रोख्यौ ।  
जिन के दृग जुग जुगल रूप रसिकान अवलोक्यौ ॥  
काकन पद रचि कहे विरह व्यापी अनुच्छिन गति ।  
सखी सखा वास्यस्य महतम भाव सिद्ध श्रुति ॥  
श्रीबल्लभ प्रभु पद प्रेम सौं जागरुक जग जस लख्यौ ॥ परमानंद दास—

श्रीकृष्णदास अधिकार करि कृष्णदास अधिकार लह ।  
अन्तरंग हरि सखा स्वामिनी के एकंगी ।  
बासु गान सुनि नचत सुदित है कसित दभंगी ॥  
जगत प्रीति अभिमान द्वेष हरि को अपनावन ।  
इन के गुन श्रीगुन प्रगटे तनहू तजि पावन ॥  
नव-बार बधू हरि भेंट करि बल्लभ पद कर घुट्टु गह ॥ श्रीकृष्णदास—  
गोविंदस्वामी श्रीदाम बपु सखा अंतरंगी भए ।  
हरि संग खिलत फिरत तुरग बनि कवहुं धावन ॥



भूख जगत बन छाकें खीन तब इनहिं पठावत ।  
अनुच्छिन साधहि रहत केलि परतच्छ गिहारत ॥  
गाइ रिभावत हरिहि प्रेम जग में बिस्तारत ॥  
हैसै बावन पद जुगल रम केलि मए बिरचे नए ॥ गोविंद स्वामी—

श्रीनन्ददास रस रास रत प्रान तज्यौ सुधि सो करत ।  
तुलसिदास के अनुज सदा बिद्वल पद चारी ।  
अन्तरंग हरि सखा नित्य जेहि प्रिय गिरिधारी ॥  
भगवा मै भागवत रची पति संरस सुझाई ।  
गुरु आगे हिज कथन सुनत जल मांझि जुझाई ।  
पंचाध्यायी छठ करि रखी तब गुरुवर द्विज भय हरत ॥ श्रीनंददास—

श्री दास चतुर्भुज तोक बपु सख्य दास्य दोक निरत ।  
निज सुख कुम्भनदास पुत्र पूरो जेहि भाख्यौ ॥  
गाइ गाइ पद नवन क्षणारस नित जिन चाख्यौ ।  
बिहुरि बिरह अनुभयो संग रहि जुगल केलि रसं ॥  
सब छिन सोइ रंग रंगे बल्लभी जन के सरवस ।  
सेयो श्रीबिद्वल भाव करि जगत बासना सो बिरत ॥ श्री दास चतुर्भुज—

श्री छेत स्वामि हरि और गुरु प्रगट एक करि कै कखे ।  
गुरुहि परिच्छन हेत प्रथम सनमुख जब आए ॥  
पोन्नो नरियर खीटो रूपया भेंट चढ़ाए ।  
श्रीबिद्वल तेहि सांचो किय कशि अचरज धारो ।  
शरन गए कहि कमहु नाथ यह चूक हमारी ।  
पद बिरचि सेइ श्रीनाथ कहं विविध गुप्त अनुभव चखे ॥ श्रीछेत स्वामि—  
चौरासी परसङ्ग मै मम आयसु धरि सीस ।  
छंद रचे ब्रजचंद कहु सुमरि गोकुलाधीस ॥

अथ चौरासी वैष्णव प्रसंग ।

दामोदरदास दयान्त मै मूत्र रूप यह मान के ।  
जिन कहं श्रीप्रभु \* कछ्ही कियो तेरे हित मारग ॥

\* चौरासी वार्ता प्रसंग में प्रभु शब्द से श्रीमहाप्रभु श्रीबल्लभाचार्यजी का नाम जानना ॥

एक माच ये रहे रहस्यन के नित पारग ।  
 बल्लभ पथ के खन्ध समर्पन प्रथम किये जिन ।  
 अतुदिन ढाया सरिस संग रहि भेद लहे इन ॥  
 रहि है जवनी भुव पंथ यह अन्तरङ्ग नंदलान के । दासोदरदास—

दृढ़ दास्य परम विश्वास के क्लृपादास मेघन भये ॥  
 जब गुरु बल्लभ धेदव्यास टिग मिनन पधारे ।  
 तोनि दिवस चौं जल धिनु ठाढ़े रहे दुधारे ।  
 निसि में गंगा तरि गुरु के हित चूड़ा लाये ।  
 करि प्रमन्न श्रीप्रभुहि परम उत्तम वर पाये ॥  
 गिरि सिना हाथ रोकी गिरत भूमि परिक्रम संग गये । दृढ़दास्य—

दासोदरदास कानौज के संभलवार खत्री रहे ।  
 हरि सेयो तजि लाज सबै भय नीक मिटाई ॥  
 नारी सिर घट धारि प्रगट गागरी भराई ।  
 हन सम धन के मोह तजे सेवा हित धारी ।  
 अन्याय्य को त्याग सदा भक्तन हितकारी ।  
 नित सेवत मथुरानाथ को प्रकट संपदा फल लहे ॥ दासोदरदास—

पद्मनाभदास कानौज की श्री मथुरानाथ न तजे ।  
 नाम दान नै व्यास हत्त प्रभु रूप लै त्यागी ॥  
 भीषी अनुचित जानि पुष्टि सारग अनुरागी ।  
 कौड़ो लकड़ो वैचि भागवत कृत निरवाहे ॥  
 छोला ही तें तोषि इष्ट ऐश्वर्ज न चाहे ।  
 सर्वज्ञ भक्त अरु दीन हित जानि एक क्लृपहि भजे ॥ पद्मनाभदास—

तनया पद्मनाभदास को तुलसा वैष्णव रुचि रपी ।  
 सपड़ी महाप्रसाद जाति भय भगत न लीगी ।  
 जिय में यही विचारि वैष्णवी पूरी कीनी ॥  
 पै दोउन को श्री मथुरापति कड़ी सपन में ।  
 सपड़िहि महाप्रसाद जाति भय करी न मन में ॥  
 श्री गोस्वामी हूँ सुदित मे सानुभावता अति लपी ॥ तनया—

पद्मनाभदास की बहू की ग्लानि गई सब जीय की ।  
 शिखी कुष्ट विरतांत महाप्रभु निष्कट पठायी ।  
 सेवक दुःख सुनि कै प्रभु हूँ कष्टु जिय दुःख पायो ॥  
 दृढ़ विश्वास सुहेत दर्ई अज्ञा प्रभु सेवहु ।  
 वर पुरुषोत्तम दास कथा को समझी भेवहु ॥  
 सेवतही चारहि आस के भई पूव्य गति पीय को । पद्मनाभदास के—

जाती पद्मनाभ दास के रघुनाथ दास साखी रहै ।  
 श्री गोखामो चरन कमल बन्दे गोकुल मैं ॥  
 पाई सुगम सुराज तिगुनसय या दुप कुल मैं ।  
 श्री मधुरापति प्रगट भाव बस विहरत भूले ॥  
 या कुल की सरजाद जान जापै अनुकूले ।  
 परमानन्द सीनी सङ्गते परम भागवत पद कहै ॥ नाती पद्मनाभ—

छत्रानौ रजो अलक को परम भागवत रूपही ।  
 आइ लचमन भट्ट सरपि कष्टु थोरी हो तहं ॥  
 महाप्रभुन छत हित पठाए सेवक तैहि पड़ं ।  
 दिए नहीं बहु भाँति माँगि थकि पारपि सीने ॥  
 इन टाकुर घी देनो अति अनुचित दृढ़ कीने ।  
 साधहु दिन प्रभुहि जिवाँडकै लोकमेठि हरि गतिकही । छत्रानौरजो—

पुरुषोत्तमदास सुमेठवर छतो श्री काशी रहै ।  
 नाम दान सनसान जासु गिरजापति कीने ॥  
 निसिदिन भेरी द्वारपाल सिवसासन दीने ।  
 अत्याश्रय गत विरज मदन मोहन अनुरागी ॥  
 महाप्रभुन की कृपापादता जिन सिर जाभी ।  
 जिन घर नंदादिक कूप सों प्रगटि जनम उल्लव लहै ॥ सेठ पुरुषोत्तम—

जाई पुरुषोत्तमदास की बक्सिन मोहन मदन रत ।  
 गंगास्नानहु सों बढि जिन सेवा गुनि सीनी ॥  
 श्री गोखामी श्री सुख जासु बड़ाई कीनी ।  
 गहन नहानी एक बार चौबीस वरप ॥

सेठी सुनि भे मगन भजन सुख मिसु डरप में ।  
सेवक स्वामी एकै अहे याते नित एकते रहत ॥ जाई पुरुषीत्तम दासकी—

गोपालदास तिन तनय की सुमिरत श्री मोहनमदन ।  
भगवद नाम स्मरन हुंकारी प्रगट आप भर ॥  
श्री गोस्वामी श्री सुख जिनहिं सराहत निरभर ।  
भगवद लोना मदा नित नव अनुभव करते ॥  
तिलक सुबोधनि पाठ कीरतन चित हित धरते ।  
पुरुषोत्तम दाम सर्वम में अति अनुपम अवतंस मन ॥ गोपालदास—

सारस्वत ब्राह्मण रामदास ठाकुर हित चाकर भये ।  
देनी दियो चुआइ जामु नवनील पियारे ।  
श्री आचारज महामुन धनि धन्य उचारे ॥  
दान भाव निज इष्टहि सेवत वाकल पाये ।  
सेवा में वसुजाम लीन तन धन विसराये ॥  
नित सकल काम पूरन परम दृढ़ विश्वास सरूप ये ॥ सारस्वतब्राह्मण—

गदाधरदास द्विज सारस्वत अतिहि कठिन पन चित धरे ।  
लजमानाश्रय भोग मदनमोहन के रापे ॥  
जो आवै सो सकल तुरत अपने अभिज्ञापे ।  
जादिन नहिं कछु मिलै छानि जल अर्पन करते ॥  
भूषेही रहि आप वैष्णवनि हित अनुसरते ।  
सागी स्वादित अति जासु घर भक्त भाव सो नहिं टरे ॥ गदाधरदास—

वेनदास माधवदास दीउ श्री नवनीत प्रिया निरत ।  
वेनिदास महान भागवत बड़े भात हे ॥  
विषई माधवदास अनुज पै नहि रिसात हे ।  
बांठि सकल धन भए बिलग कामिनि अनुकूल ॥  
सुक्तमान लिय मोल इष्ट हित आपुहि भूले ।  
प्रगटे ठाकुर वीरन लगी भये विषयते तब बिरत ॥ वेनीदास—

हरबंस पाठक सारस्वत ब्राह्मण श्री काशी निवस ।  
हे दिन पठने रहे तहां हाकिम चित ऐसी ॥

अनुसरिहैं हम तुरत करैं ये आज्ञा जैसी ।  
सपने ठाकुर कही डोल भूलन हम चाहत ॥  
हाकिम तें छै बिदा तयारी करी बचन रत ।  
ओ काशी में आये तुरत डोल भुनाए प्रेम बस ॥ हरिवंमपाठक—

गोविन्ददास भङ्गा तज्यौ प्रानहु प्रिय निज इष्ट हित ।  
चारि भाग निज द्रव्य प्रभुन आज्ञा तें कीने ।  
एक भाग ओ नाथै एक निज गुरु कहं दीने ॥  
एक भाग दे तज्यौ नारि एक आपुहि कीने ।  
सोक बैष्णवनि हित कियो सब व्यय भय हीने ॥  
तजि देख अंस गुरु अंस लहि सेवा केसवराय नित । गोविन्ददास—

अम्मा पै नित पतुकूल श्रीबालकृष्ण ठाकुर प्रगट ।  
अम्मा बालक दौय ताहि करि प्यार पुकारैं ॥  
सरे एक के ता रोवत हरि दुख जिय धारैं ।  
रोवत रोवत सरो सोक सुत बहु बिनाप कर ॥  
श्रीगोखामो मसुभावन हित आये तिहि घर ।  
मंदिर को टेरा खोलि कै देषे पय पीवत निकट ॥ अम्मा पै—

गञ्जन धावन छत्री हुते श्री नवनीत प्रिया सपद ।  
जिन बिन ठाकुर महाप्रभू धरहु नहि रहते ।  
जे ठाकुर बिन अतिहि दुसह दुष सहत न कहते ॥  
छन बिचुरत इन देह दहत जर वे न अरीगत ।  
इन दोउन की प्रीति परसपर कौन कहि सकत ॥  
सब भावहि बस नित ही रहे दिये जिनहिं निज परसपद ॥ गञ्जन—

ब्रह्मचारि नरायनदास जू बसत महावन भजनरत ।  
धन कहं गुन्यौ बिगार देखि निज सेज चहुंकित ॥  
दिय बोहारि फेकवाइ बहुरि लिपवायो हंसि हित ।  
श्री गोकुल चन्दमा पीर खाई जिन के घर ।  
आरोगाई प्रभुन कही मति डरी जाति डर ॥  
तबहीं तै सपड़ी खीर नहिं यहै रीति या पुष्टि मत ॥ नरायन दास—

छत्रानी एक महावनहि सेवत नित नवनीत प्रिय ।  
 पृथी परिक्रम करत महाप्रभु तहां पधारि ।  
 पाये न्युति सरवस्त्र आपने प्राण अधारि ॥  
 चार वेद के मार चार हरि विश्वरूपर ।  
 आस पास ही बसन मनोरथ निज जन पूरे ॥  
 तिन में यह प्रेम सुरंग रंगि रही धरे अति भक्ति हिय ॥ छत्रानी—

जियदास भजन रत जाम चहुं श्रीलाङ्गले सुजान की ।  
 उभय तनय पुरुषोत्तम दास छवील दास जिन ।  
 सेवा कोनो ककुक दिवस इन पै संतति बिन ॥  
 तिन के मामा जियदास पुनि सेवा कोनो ।  
 तिन पीछे तिन मित्र सोई सेवा सिर लीनी ॥  
 तहं डेढ़ वरस रहि पुनि गये मन्दिर निज प्रिय प्रान के ॥ जियदास—

श्री ललित त्रिभङ्गी लाल की सेवा देवा सिर रही ।  
 देवा पत्नी सहित सरस सेवा चित दोही ।  
 तिनहीं लौ तहं रहे ठाकुरा भावहि चीही ॥  
 रहे तनय तिन चारि नई नहिं तिनतें सेवा ।  
 भाव बख्य भगवान जासु कर्मादि कलेवा ॥  
 अंतरध्यान में सु भौन तें निज इच्छा विचरन मही ॥ श्रीललितत्रिभङ्गी—

रसिकाई दिनकरदास की कथा सुननि में अकथ ही ।  
 तुरतहि धायत सुनत महाप्रभु कथा कहत अब ।  
 काचिहि लीटी पाइ लेत सुधि रहति न तन तव ॥  
 जानि कही प्रभु अति अनुचित तुम करी कथा हित ।  
 भोग लगाइ प्रसाद पाइ अब तें ऐही नित ॥  
 वेई श्रोता अब आजुतें श्रीमुख यह आपै कही ॥ रसिकाई—

सुकुन्ददास कायस्थ है जिन सुकुन्द सागर किये ।  
 श्री आचारज महाप्रभुन पद प्रीति जिनहिं अति ।  
 याही तें प्रभु तिलक सुबोधनि भै तिन की मति ॥  
 निज सुख श्रीभागवत कहै नहिं सुनैसु अपर सुष ।

कर्म सुभासुभ जनित पण्डितनि सुनभन वज सुष ।  
वरनाश्रम धर्मनि बंचकनि सङ्गजहि में इन ठगि किये । सुकुन्ददास—

छत्री प्रभुदास जन्तोठिया टका सुक्ति दे दधि लई ।  
यह मारग अति विषम कृष्ण चइतन्य सुनत ही ॥  
सुकिंत ह्ये ह्ये जाहिं सु जिन कहं सुनभ सुषट ही ।  
हृन्दावन प्रति हृच्छ पत व्रज प्रगट दिखाये ।  
अवगाहन नहिं टीन प्रभुन परमाद पवाये ॥  
सेवा श्री भोहन मदन की जिनहिं सावधानी दई । जन्तोटा छत्री—

प्रभुदास भाट सिंहनन्द के तीर्थ प्रथोदिक निन्दियो ।  
सेवत नीकी भांति ठाकुरहिं हृष भये अति ।  
तीर्थ प्रथोदिक पहुंचाये सब अन्यायित मति ॥  
अन्याय लपि सावधान आये निज घर कहं ।  
करि सेवा निज सेव्य नानन की तजी देइ तहं ॥  
निन्दा करि कीरति चौधरी मार पाइ पद बंदियो । प्रभुदास—

पुरुषोत्तमदाम जु आगरे राजघाट पै रहत है ।  
श्री भोखामी एक ममै आये तिन के घर ।  
भई रसोई भोग समर्थी किये अनौसर ॥  
पुनि सादर निज सैव्य ठाकुरे के भाजन में ।  
आरोगाये जम आरोगी मन्द भवन में ॥  
श्री ठाकुर ही की सेज पै पौढ़ाये सेवत रहै ॥ पुरुषोत्तमदास—

घर तिपुर दास की सरगढ़ हुते सुकायथ जात के ।  
श्री हरि के रंग रंगे प्रभुन पद पदुम प्रीति अति ॥  
सही वैद दई जिनहिं तुक्क बहुमार मन्दमति ।  
बिन चरनोदक महाप्रसाद किये न पियत जल ॥  
इन कहं खेदित जानि ठाकुरहु परत न कल कल ।  
गळी की फरगुल इनहिं की हरे सीत श्रीनाथ के ॥ घर तिपुरदास—

पूरनमल छत्री प्रभुन की कृपापात्र अतिही रहै ।  
आयसु लहि श्रीनाथ हेतु मन्दिर संसरये ।

सुभ सुदूर्त में जहँ श्रीनाथहि प्रभु पधराये ॥  
 अति सुगन्ध अरगजा समपै जिन भंपने कर ।  
 दिय श्रीद्वाय आपने उपरना गोस्वामी वर ॥  
 गहन परसादी नाथ के वरम वरस पायत रहै । पूरनसम क्यो—

यादवेन्द्र दास कुम्हार श्री गोस्वामी आयसु निरत ॥  
 श्री गोस्वामी संग कहुँ परदेस चहत जब ।  
 एक दिवस को सासयो के भार चहत सब ॥  
 सेवा करहिँ रमोई निमि में पड़रो देते ।  
 मास दिवस के काम एकही दिन करि लेते ॥  
 जे कूप खोदि निजकर कमल खारो जन मीठी करत । यादवेन्द्रदास—

गोसाईंदास साखत देह तजी बदरी वनै ॥  
 ठाकुर सेवा महाप्रभुन इन सिर पधराये ।  
 सेये नोको भांति ठाकुरहिँ अतिहिँ रिभाये ॥  
 ठाकुर आयसु पाइ बदरिकासमहिँ पधारे ।  
 ठाकुर सेवा काहुँ भागवत माये धारे ॥  
 जिन यह इनसीं निरधार किय ठाकुर देवन इहिँ तनें । गोसाईंदास—

माधवभट कसमीर के मरे बालकहिँ ज्वाइयो ॥  
 अतिहिँ दीन छै लिषी सुबीधनि महाप्रभुन पै ।  
 सेवा में अपराध पखौ अनजाने उनपै ॥  
 लघु बाधा में तजी देह चोरनि सर लागि ।  
 श्री आचारज महाप्रभुन पद रति रस पागे ॥  
 श्री नाथी जिनकी कानिनें निज पासहिँ पधराइयो । माधव—

गोपालदास पै सदन बडुँ पथिकनि के विसास छित ॥  
 आवत श्रीहारिका पञ्चरावत निवसे जहँ ।  
 सुनिगोपालदास सेवा सो पडुँचि गये तहँ ।  
 पूछि कुसल लपि द्वारिकेस दरसन अभिलाषी ।  
 कही प्रगट रनखोर अडेल लघी निज आपी ॥  
 सुनि विरजो माव पटेल लै आइ दरस लहिँ भी सुदित । गोपालदास—



दुज सांचोरे रावळ पदुम श्रीरनळोर कही करी ॥  
 परमारथी गुपालदास सिपये ये आये ।  
 सहाप्रभुन दरसन करि निज अभिमत फल पाये ॥  
 लै प्रभु पद चन्दन चरनास्यत भे विद्याधर ।  
 श्री ठाकुर आयसु तें गये कोळ सेवक घर ।  
 पद्य बहु रोटी अरपन करी घी चुपरी न रूपी घरी ॥ दुज सांचोरे—

पुरुषोत्तम जोसी दुज हुते कृष्ण भट्टपें अति सुदित ।  
 आये ये उज्जेन पञ्चरावळ के सुत घर ॥  
 रहे तहां पै तिन सब इन को कीन आनादर ।  
 बडें पुत्र तिन कृष्ण भट्ट निज घर पधराये ॥  
 शपे तहं दिन चारि प्रभादहु भले लिवाये ।  
 सुनि सत संगी हरिवंस के गोखामो सुष भगत हित । पुरुषोत्तमजोसी—

ऐसे भुले रजपूत कीं जगन्नाथ कीने सरन ॥  
 श्रीठाकुर अर्पित असुद्ध गुनि अति दुख पाये ।  
 वाती पीर समर्पि सिपे वो प्रभुन सिपाये ॥  
 ज्वार भोग अनकुट पै पेट कुपीर लपाई ।  
 इरपा सों दुरजन इन पै तरवारि चलाई ॥  
 तेहि श्रीकर सों गहि कै कही सारै मति ये महत जन । ऐसी—

जननी नरहर जगनाथ की महा प्रभुन कवि कंकिरहीं ॥  
 इक एक सुहर सेंट हित दै पठये दोड भाइन ।  
 नाम निवेदन हेतु प्रभुन पै अति चित चाइन ।  
 मिले कृपां करि दियो दरस पुरुषोत्तम नगरी ॥  
 भई स्वरूपासक्ति तुरत भूकी सुधि सगरी ।  
 पुनि मांगि भेट की सुहर प्रभु लिये सखन दोउन तहीं ॥ जननी नरहर—

नरहर जोसी जगनाथ के भाई बडे महान हे ।  
 भोग अरोगन आये सिसु ह्ये अपन विसारी ॥  
 पै इन प्रभु कीं कानि रंचे की चितन विचारी ।  
 सावधान भे मुनत अनुज सों प्रभु की करनी ॥

गोखामो के सरन किये जजमान सघरनी ।  
तेहि जरत बचाये आगि तें ऐसे ये सुपदानहे । नरहर जोसी—

सांचीरा राना व्यास दुज सिद्ध पूर निवसत रहे ॥  
जगन्नाथ जोसी गर सुदगर तपित लाइके ।  
हाकिम पै अविकारी इनकीं किये जाइके ॥  
जिनकी मति लहि राजपुतानी सती भई नहिं ।  
सुह जोइ भाई ताकीं तिन दिये नाम तहिं ॥  
पुनि सरनागत करि प्रभुन के पर उपकारी पद लहे । सांचीरा राना—

धनि राज नगर वासी हुते रामदास दुज सारखत ॥  
श्रीनटवर गोपाल पादुका गुरु सेयी इन ।  
श्रीरनछोर सु कहे ग्रहन किय निज नारिहु जिन ।  
ठाकुरही आयमु तें तिय की नामहु दीने ॥  
तव ताके कर मझाप्रसाद सुदित मन लीने ।  
पुनि नाम निवेदन प्रभुन पै करवाये कहि कानि सत ॥ धनि-

गोबिंद दूवे सांचीर दिज नव रजहि नित पाठ किय ।  
श्रीगोखामो पच पाइ भीरहि दुत त्यागी ॥  
श्रीठाकुर रनछोर वारता रस अनुरागी ।  
प्रभुन थार के मझा प्रसाद दिये नहिं इक दिन ॥  
सकल वैष्णवनि सहित उपास किये तिहि दिन तिन ।  
सुनि भूषे श्रीरनछोर सो थार मझा परसाद दिय । गोबिंद दूवे—

राजा माधो दूवे हुते दोड भाई सांचीर दुज ।  
राम कण्ठ हरि कण्ठ बड़े छोटे दोड भाई ॥  
बड़े पढ़े बहु कथा कहे सु मूढ़ सदाई ।  
भावज की कट्ट सुनि दूवे के सरनहिं भाये ॥  
अष्टोत्तर सत नाम बार है जपि सब पाये ।  
पुनि पाइ नाम श्रीप्रभुन पै मे निज कुल के कलस धुज ॥ राजा माधो—

जननी लोकोत्तम दास की नाथ सेवकनि मिलि कछी ।  
करै रसोई प्रीति समेत परोसि सिवावै ।

याही तें श्रीनाथ सेवकानि कीं प्रति भावें ।  
 श्रीगोश्वामी रीक्षि रहै क्षपि सुख प्रेम पन ।  
 रसवात्सल्य अलौकिक जानि सिद्धाहिं मनहिं मन ॥  
 मन सुसाहैत सरूप मति क्षण भक्ति तजि तन लह्यौ ॥ जननी—

ईश्वर दूबे सांचोर के सुखिया से श्रीनाथ के ।  
 श्लोकोत्तम जन नाम धन्य येज पुनि पाये ।  
 नाथ सेवकानि अधिक घीय है सातु कहाये ॥  
 अतिरत्न भक्ति विरुड गुसाईं सीं इन कीन्ही ।  
 महाप्रभुन पथ प्रीति रीति इन दृढ़ करि चीन्ही ॥  
 पाई सेवा श्री अङ्ग की सरन अनाथनि नाथ के ॥ ईश्वर दूबे—

वासुदेव जन जन्मखलो काजी मद मरदन किये ।  
 श्रीगोपीपति सुहर गुसाईं पै पहुंचाई ।  
 करी दण्डवत साइ पहुंच पत्रिका सुहाई ॥  
 मथुरा तें आगरे गये आये जुग जासैं ।  
 सीहनन्द वैष्णवनि उद्याहनि में अभिरामैं ॥  
 मन डेढ़ नित्त ये खात है टाल गुरज एक वार किये ॥ वासुदेव जन—

बाबा वेनू के अनुजवर कृष्णदास घघरी रहै ।  
 श्रीकेशव के कीर्तनिया ये अब जादव जन ।  
 कृष्णदास तहं गिरिवरधर ध्यावत त्यागे तन ॥  
 नाथ दरस करि गिरि नीचे वेनू तन त्यागे ।  
 जादव दासी सर रचि नाथ धुजा के आगे ॥  
 कहि नाथ देह तजि आगि धरि वायु वहै तिन तन दहे ॥ बाबा वेनू के—

जगतानन्द दुज सारस्वत थानिसर निवसत रहै ।  
 एक श्लोक के अर्थ प्रभुन त्रैनाम विताये ।  
 कही सास है तोनि बीति है सुनि खर नाये ॥  
 देहु नाम इन बिनय करी तव प्रभु अपनाये ।  
 पुनि श्रीमहाप्रभुन कीं तिन निज घर पधराये ॥  
 तहं नित सेवा बिधि तिनहिं कहि सावधान सेवन कहे ॥ जगतानन्द दुज—

दोऊ भाई छानी हुते महाप्रभुन रस रंग रये ।  
 आनंददास बड़े भाई नित वैठि अनुज संग ।  
 महाप्रभुन के चरित कृष्ण गुन कहत पुनकि अंग ॥  
 सोइ जात जब दास विसम्भर भरत हुंकारी ।  
 भरत आप तब श्रीहरिजु निज जन हितकारी ॥  
 कहि कथा पूंकि अनुजहि मुदित जानि ठाकुरहि ठगि गये ॥ दोऊभाई—

इक निपट अकिंचन ब्राह्मनी जिन हरि कहं निज कर नहे ।  
 माटी के सब पाव सदन मांकारी सुझायो ।  
 हृदि भई निज ठाकुर रत अपरम विसरायो ।  
 लखि वैष्णव श्री महाप्रभुन पधराये तिहि घर ।  
 प्रीति भाव लखि भे प्रसन्न अतिही जिय प्रभुवर ॥  
 शिवकन कछी मरजाद तजि इन प्रभु पद हृद करि गहे ॥ इक निपट—

छत्रानी इक हरि नेह रत वखलता की खानि हो ।  
 दिन दस के लडुआ इकही दिन करि कै राखे ।  
 सो प्रभु आपु छठाइ अरु लै तुरतहि चाखे ॥  
 यह मरजादा भंग देखि रोई भय छोई ।  
 आरति के हित कियो कछी तब प्रभु दुख जोई ।  
 तब नित सामथो नव करति ऐसी चतुर सुजानि हो ॥ छत्रानी इकहरि ।

समराई हठ करि प्रभुन कीं निज कर भोग लगाइयो ।  
 सास गोरजा महा प्रभुन के दरस पधारी ॥  
 तब यह हरि सनमुख लाई रचि रुचि कै धारी ।  
 जब न अरोगे तब इन कहु आपुह नहिं खायो ॥  
 ऐसैही हठ करि जल बिनु दिन कहुक बितायो ।  
 तब आपु प्रगट है प्रेम सीं जल लै याहि पिवाइयो ॥ समराई हठकरि—

दासी कृष्णा मति रुचि भरी गुरु सेवा में अति निरत ।  
 जब गोखामी कहं चतुर्थ बालक प्रगटाए ॥  
 तब श्री बल्लभ गोखामी बर नाम धराए ।  
 कृष्णा भाख्यी इन कीं गोकुल नाथ पुकारो ॥

ता था जग में यहै नाम सब छैत हंकारी ।  
 गोखामी हू जा कानि सीं यहै नाम भाखि तुरंत ॥ दासी अनि-  
 श्रीबृहन्नामिथ उदार अति बिनु रितुहू बालक दियो ।  
 जिजमानहि हरिवंम एकही छन्द सुनाई ॥  
 कारम लिखीहू उल्लटन पतनी गोद भराई ॥  
 छत्री को इन सकल मनोरथ पूरन कीनी ।  
 करुना चित में धारि दान बालक को दीनी ॥  
 हरि गुरु बल जो सुख सो कछी सोई उठ करि कै कियो । श्री बृहन्नामिथ—  
 सीरा बाई की प्रीहितो रास दाम जू तजि दई ।  
 हरि गुरु परम अभेद भाव हिय रहत सदाई ॥  
 याही तें गुरु कीरति इन हरि मनसुख गाई ।  
 सीरा भाख्यौ हरि चरित्र गाओ द्विजराई ॥  
 सुनि अति कोपे इन जानें नहिं बल्लभराई ।  
 लखि हेध भाव तजि गांव सो दूर वसे सति गुण मई ॥ सीरा बाई की—  
 सेवक गोवर्द्धननाथ के रामदाम चौहान हे ।  
 जब प्रगटे प्रभु प्रथम गोवरधन गिरि के ऊपर ॥  
 नाम नवल गोपाललाल ब्रय दमन मनोहर ।  
 तव श्रीबल्लभ इनकी सेवा हरि को दीनी ॥  
 रहे महुैया छाइ परस रति मैं सति भीनी ॥  
 नित ब्रज को गोरस अरपि कै सेवत हरि सुख खान हे ॥ सेवक गोवर्द्धन—  
 द्विज रामानन्द विक्रिस अनि जगहि सिखाई प्रेम विधि ।  
 गुरु रिसि करि कै तज्यौ तजु हरि जेहि नहिं त्याग्यौ ।  
 दरसायो सिद्धान्त यहै पथ को अनुराग्यौ ॥  
 निकल पथहि पथ फिरत खात तन की सुधि नाहौ ।  
 निरखि जल्लेवी हरिहि समर्पी अति चित चाही ॥  
 ताको रस हरि के बसन मैं देख्यौ गुरुवर भाव निधि ॥ द्विज रामानन्द—  
 छीपा कुल पावन भे प्रगट दिष्णु दासवादीन्द्र जित ।  
 हरि सेवक दिन छैत न जल्लहू प्रेम बढावन ।

भट्टनरू के परम सैत नहिं जानि अपावन ॥  
 श्रीगोखामी चरन कमल सधुकर ये ऐसे ।  
 स्वाती सखर की चातक चाइत है जैसे ॥  
 धनि धनि जिन के प्रेम पन अन्याय्य गत धीर चित ॥ क्षीपाकल पावन—

जन जीवन प्रभु की आनि दे मेघनि नहिं बरसन दये ।  
 एक समे श्रीमहाप्रभू दरसन करिबे छित ।  
 आवत है सब सीहनन्द के वैष्णव एक चित ॥  
 नागि करन रमोई भगमें घन घिरि आये ।  
 निहचै जानि अकाज अनन्यनि अति प्रकुलाये ॥  
 चढ़ि आई गुर की कानि चित सघवा सद जिन हरि लये ॥ जन जीवन—

भगवानदाम सारस्वतै दर्श प्रभुन श्रीपांवरी ।  
 श्रीआचारज जाइ बिराजि इन के घर जहं ।  
 नित उठि प्रातहि करहिं दण्डवत ये सादर तहं ॥  
 तातें कोउ नहिं धरत पाव तेहि पूजित ठीरहि ।  
 ठाकुर जिन सौं सानुभाव कहिये का औरहि ॥  
 सेये जिन अपन विसारि कै भरी निरन्तर भांवरी ॥ भगवानदास—

भगवानदास श्रीनाथ के छुते भितरिया सुखद अति ।  
 कहु सामथी दासि गई एक दिन अनजाने ।  
 गोखामी सेवा तें बाहिर किये रिसाने ॥  
 सुनि जन अच्युत गोखामी सौं रौइ विनय की ।  
 नाथ हाथ गति प्रभु सखन्धी जीव निचय की ॥  
 सुनि कर गहि कै गिरिराज पै कही सेइ अबतें सुमति ॥ भगवानदास—

दुज अच्युतदास सनोडिया चक्रतीर्थ पै रहत है ।  
 आवैं नित सिंगार समे श्रीनाथ दरस हित ।  
 पुनि निज थल की जात हुते ऐसी साइस चित ॥  
 नाथ परिक्रम दण्डवती इन तीन करी जब ।  
 श्रीगोखामी श्रीमुख करी बढ़ाई बहु तब ॥  
 है गुनातीत ये भगवदी प्रभुन भगति रस बहत है ॥ दज अच्युतदास—

दुज गौड़दासपञ्चुत तहीं प्रभु विरहानन तन दहे ।  
 लेवा पधराई श्रीमोहन मदन क्षान्त की ।  
 षापछु बैठे पाट प्रगटि तन छवि रसान्त की ॥  
 खेये नीकी भांति मदनमोहन रिभवारि ।  
 श्रीगोखामी जिनहिं नमत लखि अपन विसारि ॥  
 प्रभु असुर विमोहन चरित लखि बद्रिनाथ दरसन कहे ॥ दुज गौड़ दास—

श्रीप्रभुन सरूप सजान सुभ अच्युत अच्युत दास द्विज ।  
 प्रभु संग पृथी परिक्रम करि पद पांवरि पूजत ।  
 प्रभु के लौकिक करम धरम तिन कहं नहिं सूभत ॥  
 जिय लखि नर सुर असुर विमोहि परत भवसागर ।  
 गुनातीत प्रभु चरित मगन मन जन नय नागर ॥  
 मोहित जन लखि प्रभु दरस दै कहे सगुन प्रागखनिज ॥ श्रीप्रभुन सरूप—

नरायनदास प्रभु पद निरत अस्त्राक्षय में वसत हे ।  
 नृप नौकर असुर न पावत प्रभु दरसन की ।  
 उत्थासिहत दिन राति धन्य धनि जिनके मन को ॥  
 कष जैजो भैया श्रीवल्लभ के दरसन हित ।  
 चाकर राषि मुरति देन को यों कन कन नित ।  
 बहू भेंट पठावत हे प्रभुहि एसे ये भागवत हे ॥ नरायनदास—

नरायनदास भाट जाति मथुरा में निवसत रहे ।  
 जिनकीं आयसु दई मदनमोहन गुनि प्रभुजन ॥  
 बाहिर सुहि पधराड काढ़िही गुप्त एतै बन ।  
 अथुरा तें निकसाइ तुरत बाहिर पधराये ॥  
 पुनि श्री गोपीनाथ सिंहासन पै बैठाये ।  
 तातें दरसन करि सबै के सहजहि अभिमत फललहे ॥ नारायन दास—

नरिया, नारायनदास से सरन प्रभुन के अनुसरि ।  
 पातसाह ठहा के ये दीवान हित हे ॥  
 दुसह दखु में परि नित पांच हजार दैत हे ।  
 रूप लाख पचास भरन को कौद किये तिन ॥

इका दिनके है गुर भाइन को देइ दिये जिन ।  
हुटि पातमाहसों सांच कछि सङ्गम सुहर प्रभु पद धरे ॥ नरिया नारायण—

कृत्वानी एक अकेलिये मोहनन्द में बसतही ।  
श्री नवनीत प्रिया की करति अकिंचन सेवा ॥  
तरकारी हित सिमुलौं भगरत जासों देवा ।  
माया विद्या अनसपड़ी सपड़ी लौं त्यागी ॥  
भावहि भूषे घी चुपरी रोटिहि अनुरागी ।  
माया विमिष्ट प्रगटत सदां प्रेमहितें प्रभु तुरतही ॥ कृत्वानी एक—

कायथ दामोदरदास जिन श्री कपूर रायहि भण्यौ ।  
जिनकी खुबती हुती वीरवाई प्रभूतिका ॥  
श्री ठाकुर सेवा की सोई सुचि विभूतिका ।  
लई सूतकी में सेवा जासों प्रभु पावन ॥  
सेवक प्रभुन सरूप हीत नहि कसहुं अपावन ।  
नहि आतम सुहासुह कहुं सोइ प्रभु सोइ सेवक सख्यो ॥ कायथदामोदर—

कृत्री दीऊ लो पुरुष हे रहे आई सिहनन्द में ।  
निपटै लघु घर हुती मेड़ ठाकुर पोढ़ाए ॥  
जिनके डर सों सोवत निधि आंगन सचुपाए ।  
पावसरितु में भीजत जानि पुकारि कही सुनि ॥  
घर में सोबहु भोजी मति न करौं ऐसी पुनि ।  
तौऊ सांसन पावै वजन सोये या आनन्द में ॥ कृत्री दीऊ—

श्री मझाप्रभु सूतार घर अम पिहानि पधारे ।  
प्रभुन दरस बिन किये रहे नहिं जे एकौ दिन ॥  
हुटे सकल गृह काज भये घर के सब सुप बिन ।  
याहीतें प्रभु आपै आवत हुते सदन जिन ॥  
बहुत बारता करत हुते धनि जिनसों अनुदिन ।  
पै दिन चौथे पचयें न कहु जननी रिस जिय धारते ॥ श्रीमहा प्रभुन—

अन्यमारगी मित्र इक कृत्री सेवक अति विमल ।  
अन्यमारगी भवन नेह बस गए एक दिन ॥



किये पीक तेहि ठाकुर आगे नाथ अरपि तिन ।  
भोगसराये ताहि लिवये लिय आवी पुनि ॥  
भूषे ठाकुर ताहि जगाए कही सब सो सुनि ।  
परभाव जानि या पंथ को भयो सरन सोऊ बिलक ॥ अन्धमारगी—

चित लघु पुरुषोत्तमदास के गुच ठाकुर सैं भेद नहिं ।  
श्री आचारज सहामभुन पद रति रस भीने ॥  
आपै के गुन अवन कीरतन सुमिरन कीने ।  
आपै कहैं आतस अरपे सेये पूजे जन ॥  
सपा दास आपहि के बन्दे आपहि कीं इन ।  
आपहु जिनकीं अतिही चहे भक्ति भावधरि जीय नहिं ॥ चित लघु पुरुषो—

कविराज भाट श्रीनाथ कीं नित नव कवित सुनावते ।  
तोनौ भाई नाम पाइकें किये निवेदन ॥  
नाथ निकट बहु कवित पढ़े प्रभु भये सुदित मन ॥  
धनि धनि धनि वे कवित धन्य वे धन्य भगति जिन ।  
धनि धनि धनि श्री प्रभुन नाम उधारन अगतिन ॥  
किय कवित अनेकनि प्रभुन के सदा प्रभुन मन भावते । कविराज भाट—

गोपाल दास टोरा हुते अति आसक्त प्रभुन पै ।  
साकंछे पूजत हे प्रभु निज ॥ जन्मोत्सव ॥ दिन ॥  
इक दिन आगे आये हे गये पद तेहि छिन ॥  
सुनि साधव सैं बज्रभ हरि अवतरे दास सुष ।  
क्षण भगति सुद सगन भये तजि ज्ञानादिक सुष ॥  
बहु छन्द प्रबंध प्रवीन ये वारे रसिक दुहुन पै । गोपाल दास—

जनार्दन दास छवी भये सरन पूर्न बिखासते ॥  
दरसन करत प्रभुन पूरन पुरुषोत्तम जाने ।  
करी विनय कर जोरि सरन सोहि लीहु सुजाने ॥  
आपौ आज्ञा दई न्हाइ आवी ते आये ।  
पाइ नाम पुनि किये ससर्पन अति चित चाये ॥  
ये सन्निधान श्रीनाथ के न्यारि है भव पास ते । जनार्दन दास—

गडुस्वामीब्रह्म सनोडिया प्रभुन सरन मे प्रभु कह्ये ॥  
 गये प्रभुन पै न्हाइ दण्डवत करी विनय कै ।  
 कह्यो सरन मोहि लेहु नाथ अब देहु अभय कै ॥  
 कह्यो आप सुधिकाय कह्यो स्वामी किमि सेवक ।  
 पुनि तिन वन्दन करी कह्यो आज्ञा सुधि देवक ॥  
 लहि नाम सेवकनि सङ्घित निज किये निवेदनसुदलहि । गडुस्वामीब्रह्म—

कह्ये या साल छत्री जिन्हें प्रभुन पढ़ाये ग्रन्थ निज ।  
 श्रीमहोस्वामी जू जिन सीं पढ़े ग्रन्थ बहु ॥  
 इनकी कहा बड़ाई करिये सुख अतिही लहु ।  
 प्रेमदास्य विस्वास रूप ये नीके जानत ॥  
 श्रीहरियुग की भगति भाव करि कै पहिचानत ।  
 निज गमन समय राख्यो इन्हें थापन काँ भुष पन्थ निज ॥ कहे या साल—

गौडिया सु नरहर दास जू प्रभुन कृपा पाये सुषद ।  
 जिन घर बैठे पाठ मटनमोहन पिये प्यारे ॥  
 सोये सङ्घित सनेह जानि प्रेमहिं पर वारे ।  
 पुनि पधराये श्रीगोस्वामी पै यह गुनि जिय ॥  
 ये सुष पे हैं यहीं जाल हैं इनहीं के प्रिय ।  
 पुनि गोस्वामी पधराइयो श्रीरघुनाथ सदन सुषद ॥ गौडियां सु नर—

वादा श्रीप्रभु की कृपा तें दास वादरायन भये ।  
 आछि भंट तें सुते भागवत नाम पाइ कै ।  
 जाते श्रीनर कीर प्रभुन तहं टिके आइ कै ॥  
 पाये प्रभु पै नाम समर्पन किये गये संग ।  
 दरसन करि पुनि आई मोरबी रंगी प्रभुन रंग ।  
 पुनि रहै तहैं आयस प्रभुन आपुन श्रीगोकुल गये ॥ वादा श्रीप्रभु—

नरी सुता तिय आदि सब सहू भागिकचंद्र की ।  
 देवदमन जिन सदन पियत पय नरी पियावति ॥  
 जाल कटोरी भूलि ताहि सुषियहि दे आवति ।  
 भांगि, प्रभुन सीं गाय नाम गोपाल धराये ।

निजप्रगल्भ जनाइ प्रभुन तिन गृह पधराये ।  
प्रभु कृपा पात्र मुचि भगवदी मूरति ब्रह्मानन्द को ॥ नरी सुता तिय—

सन्धासी नरहर दास पै मुगुरु कृपा अतिसय हुती ।  
एक समे श्रीमहाप्रभु द्वारिका पधारे ॥  
वेना कोठारिहू लैएऊ संग सिधारे ।  
तहां दिनय करि किये सुखेवक सरन प्रभुन के ॥  
जिनके सरनागत पै बस नहिं चक्षत तिगुन के ।  
सेवा अपराधी तिगुन सिर भेद भगति यह दृढ़ मती ॥ सन्धासी नर—

शीपान दास जटाधारी नाथ पवासी करत हे ।  
श्रीप्रस भोग अरोगि जामिनी जग मोहन में ॥  
पौदत जहू श्रीनाथ स्वामिनी के गोहन में ।  
आंघि सीधे खडुं लाभ करत बीजन तहं ठाढ़े ॥  
प्रभु आयनु तें आरसगत अति आनंद वाढ़े ।  
ठाकुर सेवक कचं दण्ड दे वादि विरह में तग दहे ॥ गोपाल दास—

सति धर्म मूल तिय बनि क शृङ्खला दास पहुं चाइयो ।  
वैष्णव धर्म अकिंचनता तेहि प्रगटि दिपाई ॥  
जिनकी तिय करि कौल बनि क सीं सीधो लाई ।  
करो रसींई भोग अरपि पुनि भोग सराये ॥  
बहुरि अनौसर करिकें सब वैष्णवनि जिंवाये ।  
लखि ज्ञान चन्द पै प्रभु कृपा आपुछि कौल चिताइयो ॥ सतिधर्म मूल—

श्रीगोस्वामी के प्रानप्रिय सन्तदास कृती रहै ।  
श्रीहरि पद अरविंद मरन्द मते मिलिन्द ये ॥  
गावन में हरिचरित मीन में अति अमन्द ये ।  
अनआश्रय अह वैष्णव धन विष जिनहिं विषहु तें ॥  
याही तें ये हुते नियारे हन्द दुषहु तें ।  
कौड़ी बेचत हे टाइये पैसनि हित अधिक न चहे ॥ श्री गोस्वामीके—

सन्दरदास हि के सङ्ग तें वैष्णव माधवदास मे ।  
माधवदास कृष्ण चैतन्य सुखेवक दृढ़मति ॥

काकी भोग समर्पित पावत प्रेत दुष्ट अति ।  
 ये तिष्ठि दृढ़ विस्वास क्षु श्रीठाकुरै अरोगत ।  
 श्री पाचारज प्रभुन निन्दि नो लक्ष्मी दण्ड द्रुत ॥  
 अथराध अपनो जानिकैं सदा प्रभुन की आम मे । सुन्दरदासहि की—  
 बिस्त्रो मावजी पटेन दोड वैष्णवकी हित अवतरे ॥  
 श्रीगोकुल है धर नाम मे मटा पावते ।  
 गाड़ा गाड़ा गुड़ छत मौजगि महित जावते ॥  
 एक पाप श्रीगोकुल इक श्रीनाथ हार रज ।  
 छिन्नक निवाचन भोग समर्पित सब स्वामिनि कचं ॥  
 पुरुपोन्नम पेतहि वैष्णवनि मवै निवाये मुट भरि । विरजो मावजी—  
 गोपाल दाम रोड़ा दिये नाम दान प्रभु के कहि ।  
 एक नमि गोपाल दाम श्रीनाथहिं पाये ॥  
 आयो वर है चारि भये लंघन दुप पाये ।  
 लागे प्याम कही निधक भी खोइ गयी सो ॥  
 आपुहिं झारि ले प्याये जस दुप बिधरो भो ।  
 श्रीगोखामो को सीप सीं प्रभुता सद रंच न रजे ॥ गोपाल दास—  
 काका हरिवंस प्रमंस मति धरम परम के हंस मे ।  
 श्रीविठ्ठल सुत जेहि काका सम आदर करहीं ॥  
 वैष्णव पर पति नेह सुपन सम नित अनुसरहीं ।  
 नाम दान दे जगत जीव फिरि फिरि कै तारे ।  
 ठौर ठौर हरि सुजस भक्ति हित बहु विस्तारे ॥  
 प्रिय कंसधंस के छोड़ कै क्विहु बल्लभ बंस मे । काका हरिवंस—  
 गंगावाई श्रीनाथ की अतिहि अन्तरङ्गिनि भई ॥  
 जवन उपद्रव जव श्रीप्रभु निवाड़ पधारे ।  
 भारग से यह साध रहीं दिये भगति विचारे ॥  
 जव रथ कहुं अड़िजात तवै सब इनहिं सुनावै ।  
 श्री जी के टिगि मीजि नाथ इच्छा पुकवावै ॥  
 श्रीविठ्ठल गिरिधर नाम सीं पट रचि हरि लीला गई । गंगावाई श्री—  
 श्रीतुलसीदास प्रताप ते नीच जंच सब हरि भजे ॥

नन्ददास अयज द्विज कृष्ण मति गुन गन संछित ॥  
 कवि हरिजस गायक प्रेमी परमारथ पंडित ।  
 रामायन रचि राम भक्ति जग धर करि राखी ॥  
 धीरे में बहु कछ्ही जगत सब याको साखी ।  
 जग कीन दीनहूँ जा छपावल्लन राम चरितहि तजे ॥ श्रीतुलसीदास—  
 गोस्वामी विद्वन् नाथ के ये सेवक जग में प्रगट ।  
 भट्टनागजी कृष्णभट्ट पद्मारावन्सुत ॥  
 भाषीदास हिसारवास कायथ निज पितु जुत ।  
 विद्वन्दास निहानचन्द्र श्रीरूपसुरारी ।  
 रूपचन्द्र नन्दाखत्री भाइजाकुठारी ॥  
 राजा लाला हरिदास भाई जलौट हरि नाम रट । गोस्वामीविद्वन्—  
 श्रीस्वामी विद्वन् नाथ के ये सेवक हरि चरन रत ।  
 कृष्णदास कायस्थ नरायन दास निहाना ॥  
 ज्ञानचन्द्र ब्राह्मणी सद्धारनपुर की लाला ।  
 जनश्रद्धनपरसाद गोपाल दास पाथी गनि ।  
 मानिकचन्द्र मधुसूदनदास गनेस व्यास पुनि ॥  
 जटुनाथदास कान्ही अजब गोपीनाथ गुचान्त सत । गोस्वामीविद्वन्—  
 हित राम राय भगवान बलि हठी अली जगनाथ जन ॥  
 कही जुगल रसकेनि साधुरीदास मनोहर ।  
 विद्वन्विपुलविनोदविहारीनि तिमि अति सुन्दर ॥  
 रसिकविहारी लौंडी पद बहु सरस बनाए ।  
 तिमि श्रीभट्ट कृष्ण चरित गुसहूँ बहु गाए ।  
 कल्याण देव हित कामकष्टग नरवाहन आनन्दघन । हित रामराय—  
 श्रीकलित किशोरी भाव सीं नित नव गायो कृष्ण जस ॥  
 भट्टगदाधर मिस्र गदाधर गंग गुआला ।  
 कृष्ण जिवन हरि लखी राम पद रचत रसाना ।  
 जन हरिया धनस्यास गौविन्दा प्रभु कल्याणा ।  
 विचित्र विहारी प्रेमसखी हरि सुजस बखाना ॥  
 रस रसिक विहारी गिरिधरन प्रभु मुकुन्द साधव सरम । श्रीकलित —

श्रीवल्लभ आचारज अनुज रामकृष्ण कवि सुकुट मनि ।  
 वसत अजुध्या नगर कृष्ण सों नह बड़ावत ॥  
 कृष्ण कुतूहल कहि गुपाल लीला नित गावत ।  
 दीऊ कुल की वृत्ति तिनका सी तजि दीनी ॥  
 व्याह कियो नहिं जानि दुखद हरि पद मति भीनी ।  
 करि वाद पन्थ थापन कियो ग्रन्थ रचे नव तोन गनि ॥ श्रीवल्लभ—  
 हरि प्रेममान रसजान के नागरिदास सुमेर मे ।  
 वल्लभ पयहिं दृढ़ा कृष्ण गढ़ राजहिं छोड़्यौ ॥  
 धन जन मान कुटुम्बहिं बाधक लखि सुख मोड़्यौ ।  
 केवल अनुभव सिद्ध गुप्त रस चरित बखानि ।  
 द्विय संजोग उच्छलित धीर सपनेहु नहिं जाने ॥  
 करि कुटी रमन रीती वस्तुत संपद भक्ति कुवेर मे । हरि प्रेममान—  
 द्विय गुप्त वियोगहिं अनुभवत बड़े नागरीदास हे ॥  
 वारवधू टिग वसत सबै कहु पीयो खायो ।  
 पै छनहुं द्विय सों नहिं सो अनुभव बिसरायो ॥  
 सुनतहिं विद्वत नाम भक्त सुख अवन मभारी ।  
 प्रान तज्यो कहि अहो तिनहिं सुधि अजहुं जमाती ॥  
 दरसन ही दे हरिभक्त अपराध कुष्ट जन दुख दहे । द्वियगुप्तवियोग—  
 श्रीवृन्दावन के मूर ससि उभय नागरीदास जन ॥  
 निज युक्त हित हरिवंस कृष्ण चैतन्य चरनरत ।  
 हरि सेवा में सुदृढ़ काम क्रोधादि दीपगत ॥  
 अद्भुत पद बहु किये दीन जन दै रक्ष पोषे ।  
 प्रभु पद रति विस्तारि भक्तजन मन सन्तोषे ॥  
 दृढ़ सखीभाव जिय में वसत सपनेहुं नहिं कहुं और मन । श्रीवृन्दावन के—  
 इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिन्दुन वारिये ॥  
 अलीखान पाठान सुता सह ब्रज रखवारे ।  
 शैख नबी रसखान मीर अहमद हरि प्यारे ॥  
 निरमलदास कबीर ताजखी वेगम वारी ।  
 तानधेन कृष्णदास बिजापुर नृपति दुकारी ॥

पिरजादि बीबीराखी पद रत्न नित सिर धारिये । इन सुसक्तमान—

बाबा नानक हरिनाम है पंचनदहि उद्धार किये ॥

बार बार निज सौंज साधुजन लखत चुटाई ।

वेदी बंस प्रसंस प्रगटि रस रीति हृदाई ॥

गुप्त भाव हरि पियतम को निज द्विये दुरायो ।

गाइ गाइ प्रभु सुजस जगत अघ दूरि बहायो ॥

जग ऊंच नीच जन करि कृपा एक भाव अपनाइ क्षिय । बाबा नानक—

कविकरनपूर हरि गुरु चरित करनपूर सब को कियो ॥

सेन बंस श्रीशिवानंद सुत बंग उजागर ॥

सुर बानी सै निपुन सकल रस के मनु सागर ।

अति छोटे तन गुरु महिमा करि छंद बखानी ॥

जननि गोद सौं किलकि हंसे निज गुरु पहिचानी ।

परमानंद सौं चैतन्यसचि नाम पन्कटि दूजो दियो ॥ कवि करनपूर—

बन साक्षी के साक्षी भए नाभा जो गुन गन गथित ।

नाम नरायन दास विदित हनुमत क्लृप्त लायो ॥

अग्र कीलह गुरु कृपा नयन खीयोहू पायो ।

गुरु आयसु धरि सीस भक्त कीरति जिन भाई ।

भक्तसाक्ष रस जान प्रेम सौं गूथि बनाई ॥

नितही नवरूप सुबोसपरम सुमनमन्त करनी काथित । बनसाक्षी—

ये भक्तसाक्ष रस जाक्ष के टीकाकार उदार मत ॥

कृष्णदास ब्रह्माक्ष कृष्ण पद पदुस परम रत ।

प्रियादास सुखरास प्रिया जुग चरन क्लसुद नत ।

ललित कान्तजीदास एक औरहू कोउ खाला ।

साक्ष गुमानी तुलसिराम पुनि अग्ररवाला ।

परतापसिंह सिधुआपती भूपति जेहि हरि चरन रति ॥ ये भक्तसाक्षरस—

खाला बाबू ब्रह्माक्ष के हृन्दावन निवसत रहै ॥

छोड़ि सकल धन धाम बांस ब्रज को जिन कीनी ।

सांगि सांगि भधुकरो उदर पूरन नित कीनी ।

हरि मन्दिर अति शचिर बहूत धन है बनवायो ।

माधु मन्त के हित अन्न की मधु चनायी ।  
 जिन की मृत देहहु सब नखत ब्रज रजनीटन फल लहे ॥ साक्षां शाबू—  
 कुल अथवाक पावन करन कुन्दननाक प्रगट भए ॥  
 प्रथम लखनऊ बसि श्री बन सीं नेह बढीयो ।  
 तहं श्री युगल सरूप थापि मन्दिर बनवायो ।  
 हापर की सुखराम राम कलियुग में कीनी ।  
 मोद भजन आनन्द भाव अहपरि रंग भीनी ।  
 लाखन पद कलितकिशोरिका नाम प्रगटि बिरचे नए ॥ कुल अथवाक—  
 गिरिधरनदास कविकुलकमल वैश्रवणभूपन प्रगट ॥  
 रामायन भागवत गरगसंज्ञिता कथासूत ।  
 भाषा करि करि रचे बहुत हरि चरित सुभाषित ।  
 दान मान करि माधु भक्त मन मोद बढायी ।  
 सब कुलदेवन मेटि एक हरि पंथ हढायी ।  
 लचावधि ग्रन्थन निरमयी श्री वल्लभ विश्वास अट ॥ गिरिधरनदास—  
 यह चार भक्त पंजाब में चार वेद पावन मए ॥  
 श्रीरामानुज वृत्त हरि चरन धिनु सब त्वागी ।  
 भाईसिंह दयाल भजन में अति अनुरागी ।  
 कविधर दास अमीर छाण पद में मति पागी ।  
 मयाराम रसराम कलित प्रेमी बैरागी ।  
 श्रीहरि के प्रेम पुचार हित जिन उपदेश बहुत दये ॥ यह चार भक्त—  
 श्रीभक्त रत्न हरि दास जू पावन अस्तसर कियो ॥  
 अत्रिय बंश गुलाब सिंह सुत मत रामानुज ।  
 राम कुमारी गर्भ रत्न त्वागी मंडल पुज ।  
 सुवसु वेद वसुचंद आठ कातिक प्रगटाए ।  
 श्रीहरि महिमा ग्रन्थ कलित बसीम \* बनाए ।  
 रणजीत सिंह नए बहू कछौं तदपि नाहिं दरसन दियो ॥ श्रीभक्त रत्न—

\* श्रीरघुनाथ के परमभक्त अति रसिक विद्वान् मान्य संज्ञानुभाषी श्री  
 रत्नहरिदास जो ने ३२ ग्रन्थ नवीन बनाये हैं । तिन ग्रन्थों में प्रतिपद-जमक-  
 अनुपासादि अलंकार भरे हैं और वर्षभयित्री की तौ प्रतिज्ञा है कि एक पद



वेता में जो लक्ष्मिन करी सो इनकलियुग माहि किय ।  
 अग्रज कुन्दन लाल सदा दैवत सम सान्धौ ॥  
 परम गुप्त हरि विरह अस्तुत सो द्वियरीं सान्धौ ।  
 अन्तरंग सखि भाव कबहु काङ्क्षू न लखायो ॥  
 करम जाल विध्वंसि प्रेम पथ सुदृढ़ चलायो ।  
 श्रीकुन्दन लालउदार मतिवन्धु, भगतिप्रतिधारि द्विय ॥ चैता में—  
 नित श्यामसखी समनेहनव श्यामसखाहरिसुजस कवि ।

- वर्णमयित्री विना नहीं होगी। तथा उन के पढ़ने से अख्यानन्द प्रकट होता है कि कथन में नहीं आता। जो पुरुष सुनते हैं वही मोहित हो जाते हैं।
- १ रामरहस्य। चौपाई दोहादि छंदोंमें वाल्मीकी रघुनाथजीकी श्लोक ५०००।
  - २ प्रणोतरी। दोहा ४० शुकप्रोक्त प्रणोतरी कि भाषा है।
  - ३ रामलक्ष्मण। ललित पद छंदोंमें रामायण है श्लोक ६००० रामकलीवा ग्रन्थवत्।
  - ४ सारसंगीत। उक्त छंदों में श्लोक ६००० भागवत की कथा।
  - ५ नानकचंद्रचंद्रिका। चौपाई दोहादि छंदोंमें श्रीनानकशाह का चरित्र वर्णन।
  - ६ दाशरथी दोहावली। दोहा ११०० रामायण है अति चमत्कारयुक्त।
  - ७ जमक टमक दोहावली। दोहा १२५ प्रति दोहा में ४ जमक हैं।
  - ८ गूढगूढार्थ दोहावली। दोहा १०० फुटकर हैं।
  - ९ एकादशस्कंध। भागवत का चौपाई दोहा में।
  - १० कौशलेशकवितावली। कवित्त १०८ रामायण क्रम से।
  - ११ गुरु कीरति कवितावली। १०८ नानकशाह का चरित्र है।
  - १२ कुसुमकवारी। कवित्त ३६ दशमस्कंध का समास से।
  - १३ दशमस्कन्ध कवितावली। कवित्त १६७ अति विचित्र है।
  - १४ सहस्र कवितावली। कवित्त २०।
  - १५ नानक नवक। कवित्त ८ नानकशाह की स्तुती है।
  - १६ रास पंचाध्यायी। कवित्त ६०-।
  - १७ ब्रजयात्रा। कवित्त १५० ब्रज के यात्रा का वर्णन है।
  - १८ कवित्त कादंबिनी। भागवत क्रम से कवित्त १५०।
  - १९ रघूत्तम सङ्खनाम। श्लोकी २५ वाल्मीकि रामायण की कथा भीक्रम से।
  - २० पदरत्नावली। विष्णुपदों में रामायण। इसी प्रकार और भी उत्तमग्रंथ हैं।

नित्य पांच पद विरचि कृष्ण अरचन तव ठानत ॥  
 गान तान बन्सान बांधि हरि सुजस वखानत ।  
 देन देस प्रति घूमि घूमि नर पावन कीनी ॥  
 निज नयनन की प्रेमवारि हियरो नित भीनी ।  
 घर त्यागिफ़ात इतउत अमृतभक्त वनजवन प्रगट रवि ॥ नित—  
 दक्षिण की ये सब भक्त वर सन्त मामलीदार मङ्ग ।  
 तुकाराम चोखामहार सावन्ता मामी ॥  
 नामदेव गीरा कुन्हार पंढरी सुचाली ।  
 रामदाम पुनि एकनाथ माथूर कन्हारै ॥  
 कृष्ण मावू भीर कृष्ण अर्पन रत वाई ।  
 दामा जी दत्तवधूत ज्ञानेश्वर असृतराव काह । दक्षिण की ये—  
 नारायण शालग्राम हरिभक्त प्रगट एहि काल की ।  
 मट्टू जी महाराज काठजिभ कृष्णदास धरि ॥  
 तुकाराम रघुनाथ दास विष्णुनाथ सिंह हरि ।  
 युगुत्तानन्ध सुप्रियादास राधिकादास कहि ॥  
 हरिविन्नास नव नीत गोप जै श्रीकृष्णा लहि ।  
 मथुरा समिहरण अजीतहरि रामगुलाम गुपान्त की ॥ नारायण शाल—  
 द्विज ब्रह्मदत्तसह प्रगट एहि समय भक्त हरि की भए ।  
 राममन्दा हरिहर प्रसाद लकमी नारायण ॥  
 अवध दाम चौपई उमादत जन रामायण ।  
 रामचरन सुक लोटा गट्टू रामप्रसादा ॥  
 शिवक भीताराम पौहरी गङ्गू दादा ।  
 वलि रामनिरंजन जुगल जुगराज परम हंसादिरे ॥ द्विज ब्रह्मदत्त—  
 ये चार भक्त एहि काल की औरहु हरि पद वंज रत ।  
 राम नाम रत रामदाम हापड़ की बासी ॥  
 त्यागि सम्पदा भए सुनत ससाह उदासी ।  
 जागो भट्ट प्रसिद्ध भजन प्रिय शिवत कांसी ॥  
 राम नाम रत माजी नागर वंस प्रकासी ।  
 श्री हरि भाज हरि भाव रत शूलटंक शिव ढिग वसत ॥ ये चार भक्त—

खनडम सै तैगीस वर , सखत भादीं मास ।  
 पूनो सुभ सभि दिन कियो , भक्त चरित्र प्रकाश ॥  
 जे या सखत सौं भए , जिन को सुन्धौ चरित्र ।  
 ते राखे या शब्द भैं , हरि जन परम पवित्र ॥  
 प्राण नाथ आरति हरन , सुमिरि पिया नंद नन्द ।  
 भक्तमान्तर उत्तर अरध , निखी दास हरिचंद ॥  
 जो जग नर-ल्लै अक्षतखौ , प्रेम प्रगट जिन कोन ।  
 तिनहीं उत्तर अरध यह , भक्तमान्तर रचि दीन ॥  
 जय वल्लभ विद्वान् जयति , जे जे पिय नंदमान्तर ।  
 जिन विरचौ यह प्रेम गुन , गुथी भक्ति की मान्तर ॥  
 नहिं तो समरथ यह कहैं , हरि जन गुन सक गाय ।  
 ताहू में हरिचन्द सो , पामर है कैहि भाय ॥  
 जगत ज्ञान में नित बंध्यो , पखौ नारि के फंद ।  
 मिथ्या अभिमानी पतित , झूठो कवि हरिचंद ।  
 धोबी बच सौं मिय तजन , नज्र तजि मयुरागौन ।  
 यह है संका जा हिचे , वारत सदाहैं भौन ॥  
 दुखी जगत गति नरन कहैं , देखि कुर अन्याय ।  
 हरि दयालता में उठत , संका जा जिय आय ॥  
 ऐने संकित जीअ सौं , हरि हरिभक्त चरित्र ।  
 कबहुं गायो जाइ नहिं , यह बिनु संक पवित्र ॥  
 हरि चरित्र हरिही कह्यो , हरिहि सुनत चित जाय ।  
 हरिहि बड़ाई करत हरि , ही समुभक्त मन भाय ॥  
 हम तो ओवल्लभ कृपा , इतनी जान्यौ सार ।  
 सख एक नंदनंद है , झूठो सब संसार ॥  
 तासों सब सौं विनय करि , कहत पुकार पुकार ।  
 कान शक्ति सबही सुनौ , जी चाही निस्तार ॥  
 मोरीं सुष्ट घर और सौं , तीरी भव के जास ।  
 छोरीं जग साधन सबै , भजी एका नंदमान्तर ॥  
 हरिचन्द्रोमान्तर हरिपदगतानां सुमनसां सदाऽप्लानां भक्तिप्रकटतरंगंधांच सुगुणां ।  
 अगुं फलान्नां कुरुत हृदयस्थारसपदा यतोन्वेषां खलु मण सुखदात्रीयमतुक्षा ॥

श्रीहरिः  
उत्सवावली

अर्थात्

चर्म भर के उत्सवों का सङ्ग्रह

और

संक्षेप सेवा युद्धार वर्णन ।

श्री हरिश्चन्द्र लिखित ।

“तत्कर्म हरितोषं यत्”

“कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा”

“छुण्णसेवा सदा कार्या”

---



# उत्सवावली ।

## चैत्रशुक्ल ।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा—नवरात्रारम्भ, अमङ्ग, शृङ्गारभारी, हो सके तो सुनाव की फूल मंडली ।

चैत्र शुक्ल ५—श्रीरामानुजस्वामी का जन्मोत्सव ।

चैत्र शुक्ल ६—श्रीयदुनाथजी का जन्मोत्सव ।

चैत्र शुक्ल ८—श्रीरामनवमी, केशरियावस्त्र, उदाव का शृङ्गार पंचामृत ( दो पहर को ) ।

चैत्र शुक्ल ११—नकुल का शृङ्गार ।

चैत्र शुक्ल १२—दमनक ( दौना ) समर्पण करना ।

चैत्र शुक्ल १५—मङ्गारास की समाप्ति का उत्सव, सुकुल का शृङ्गार ।

किसी के मत से चैत्र शुक्ल द्वितीया को श्री जानकी जन्म । जिस दिन मेघ संक्रान्ति पड़े उस दिन सतू के लड्डू भोग धरना ।

## वैशाख कृष्ण पक्ष ।

वैशाख कृष्ण ११—श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु का जन्म केशरी बाग ।

## वैशाख शुक्ल पक्ष ।

वैशाख शुक्ल ३—अचयद्वितीया (गिक्कुंज में प्रथम खेड का उत्सव) केशरी किनारा रंगा हलका वस्त्र भोती पीत के आभरण । गरमी की सेवा चाक से चखी । खसखाना पंखा, मट्ट की भारी, छिरवाव, फुंदारा जो बन जाय । परशुराम अवतार ।

वैशाख शुक्ला ७—श्री रामराज्य ।

वैशाख शुक्ला ८—श्रीजानकी जन्म दिन । श्रीस्वामिनी जो से त्रिंशो-त्सव सेहर का शृङ्गार ।

वैशाख शुक्ला ११—श्रीहरिबंध जी का जन्म ।

वैशाख शुक्ला १४—शुद्धजयन्ती गरमी की जो सेवा बाकी हो खी सब और भी इस दिन से चकै, केशरिया वस्त्र । सन्ध्या की पंचामृत-स्नान ।

वैशाखशुक्ल पूर्णिमा—श्रीराधारमण जी का प्राकट्य ।

## जेष्ठकृष्ण पक्ष \* ।

जेष्ठकृष्ण पक्ष ५—कूर्सावतार ।

## ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष ।

ज्येष्ठ शुक्ला १०—दशहरा । जसुनाजी गंगाजी का पूजन ।†

ज्येष्ठ शुक्ला ११—जन्म बिहार । पानी भरकर उस में सिंहासन रखकर  
श्रीठाकुरजी को पधरावना ‡ ।

\* वृषसंक्रान्ति की पहिले की सोचइ घड़ी पुण्य काल है पर जो रातको लगे तो सांभके पहिले हो पुण्यकाल मानना ।

† ज्येष्ठ शुक्ल १० दशहरा—इस में दशयोग होय तो बहुत नहीं तो जितने अधिक योग हों उतनाही पुण्य विशेष है । जेठ का सहोना शुक्लपक्ष, दशमी १० बुध ( वा संगल ) हस्त, व्यतीपात, गरानन्द, कन्याके चन्द्रमा और वृष के सूर्य यही दशयोग है । इसमें गङ्गा यमुना में स्नान और तर्पणादि का महाफल है गङ्गा यमुना न मिलें तो नदी में नहाना । जेठ सुदी प्रतिपदा से स्नान आरंभ करना पहिले दिन एक एक पूजा की सामग्री से पूजा करना एक बेर गीता लगाना ऐसैही क्रम से एक एक नित्य बढ़ाना । काशी पयाग और मथुरा में इस दिन दशाश्वमेध घाट पर नहाना दशमी के दिन गङ्गा स्नान करके दशफल दस सत्तू के लख्खू दस गुड़ और दस तिलपात्र दान करना । गङ्गाजी के तटपर सोनेकी वा चांदी की वा मृत्तिका की गङ्गाजी की मूर्ति बनाना और उसकी विधि पूर्वक पूजा करना । दश दश सुद्धो जब तिल इत्यादि अन्न ब्रह्मणों को गङ्गा मीत्यर्थ दान देना । सोना वा चांदी वा आटे के दश जलकर मछली कछुवा इत्यादि बनाकर उनको पूजा करके गङ्गा में छोड़ देना । गङ्गा किनारे दीया बालना दीया के कमल गङ्गा में बहाना ।  
‡ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै नमोनमः इसी मंत्र से पूजन करना । इस मंत्रका पांच हजार उप्त दिन जप करे तो सब पाप से कूट जाय गङ्गा स्तोत्र का इस दिन पाठ करना स्तोत्र पाठ भी प्रतिपदा से क्रम से बढ़ाना । यह दशहरा गङ्गा यमुना के संगम की तिथि है और कहते हैं कि रामेश्वर की स्थापना भी इसी दिन हुई है । इस दिन विष्णु शिव ब्रह्मा सूर्य भगीरथ और हिमालय की भी पूजा करना ।

‡ ज्येष्ठ शुक्ला ११ निर्जला—इसीका नासात्तर भी सदादशी है इस

ज्येष्ठ शुक्ल १४—ज्ञान यात्रा के हेतु जल ले आना। जल में फूल की कधी चन्दन कपूर इत्यादि ठंडी वस्तु मिलाकर थोस में ढाँकावार रखना। वा विधि पूर्वक मंत्र से अधिवासन करना।

ज्येष्ठ शुक्ल १५—ज्ञान यात्रा ज्येष्ठा नक्षत्र में पड़के दिन के साए पानी में सवेरे खीटाकुरजी को ज्ञान कराना। मूँग भींगी फल इत्यादि ठंडी वस्तु भोग लगानी।

### आषाढ शुक्ल पक्ष ।

द्वितीया—पुष्य नक्षत्र में रथ यात्रा। सफेद गीटे का वागा। जड़ाज याभरण लुनह चन्द्रिका।

तृतीया—खीटाकुरजी का गौना।

पछी—पाँडरंग पछी श्रीविठ्ठलनाथजी ( टक्षिण वाले ) का पाटोसब है पौर इसी दिन से रंगीन वस्त्र धारण करना आरम्भ होता है।

पक्षादशी—हरि शयनी।

पूर्णिमा—असाढ़ीभोग। चुनरी का वागा मुकुट मोर की पिच्छवाई।

### श्रावण कृष्ण पक्ष ।

प्रतिपदा वा द्वितीया—जिस दिन चन्द्रमा अच्छा हो छिण्डीका आरम्भ, लाल वागा, पाग मोरशिखा।

दिन निकल ब्रत करना और जल पूर्ण कुण्ठ दान करना। भीमसेन ने इसी दिन ब्रत किया था। इस दिन भगवान का सिंहासन जलमें रख कर जल शयन कराना। ज्येष्ठ शुक्ल १५ बटसावित्री यह ब्रत समावास्या और पूर्णिमा दोनों दिन होता है। इसमें बट के नीचे बांसके पात्रमें बालूकी सावित्री और सत्ववानकी मूर्ति बना कर पूजा करना। रोकीसेंदूर केसर हरदी नाडा इत्यादि सीमाखड्डश्च चढ़ाना। प्रतिमा सीने चांदी वा मिट्टी की बनाना दूसरे दिन फिर पूजन करके “ सावित्रीयंम यादत्ता सच्चिरण्णा महासती। ब्रह्मणः ब्री-  
णनार्थंय ब्राह्मणप्रतिगृह्यतां ॥ ” इस मंत्रसे मूर्ति ब्राह्मण की दान देना। यह ब्रत प्रायः स्त्रियों का है। जेठकी पुनवासी के तिथि दान करना। इस दिन ज्येष्ठा नक्षत्र होय तो पर्व विशेष है उसमें छाता और जूता दान करना। यह पौर्णमासी मन्वादि भी है।

जेठ में प्रति दिन जलदान का माहात्म्य है।



पंचमी—भाटवासा का उत्सव ।

आवथ शुद्ध पक्ष ।

द्वितीया—श्रीठाकुरानी तीज । चुनरी का बागा श्रीस्वामिनी जी का शृङ्गार भारी । चिड़ोले का मुख्य उत्सव ।

पंचमी—श्याम बागा सुकुट का शृङ्गार ।

अष्टमी—चाल बागा सुकुट का शृङ्गार, बगीचे में चिड़ोला ।

एकादशी—पवित्रा श्री ठाकुरजी को पवित्रा यथा शक्ति समर्पण करना ।

द्वादशी—ग्रह को और श्री ठाकुरजी को पवित्रा समर्पण करना ।

त्रयोदशी—चतुरा नाम का उत्सव ।

पूर्णिमा—रक्षा बन्धन ।

पूर्णिमा पीछे चिड़ोला विसर्जन अच्छे सुदूर्त में करना ।

भाद्र पद द्वाष्य ।

सप्तमी—श्रीविष्णुखामी का जन्मोत्सव, किसी २ मत से पूतना बध की कारण छठे दिन छठी नहीं हुई थी इसी कारण इस सप्तमी को हुई ।

अष्टमी—महामहोत्सव जन्माष्टमी । पहले दिन से सब तयारी कर रखना । उत्सव के दिन बड़े सवेरे उठना । घर में जितने स्वरूप ठाकुरजी के छोटे बड़े हों सब को पंचाशत ज्ञान कराकर अभ्यंग करा के उत्तम केसरिया बस्त्र शृङ्गार भारी कुसुम चन्द्रिका आदिक । जहाँ तक हो सके भारी तयारी करना । शृङ्गार करके तिलक करना भेंट करना । बन्दनवार थापा केली का खरसा लगाना । अष्टमी के दिन को श्रीठाकुरजी के जनम गाँठ के उत्सव की भावना करना और रात को जन्मोत्सव की भावना । सन्ध्या से रौशनो करना । अर्धरात्रि को एक छोटे स्वरूप को पंचाशत ज्ञान कराना । घंटा शंख नौवतखाना बजाना । नन भयो महर के पूत, यह पद गाना जन्म पीछे श्रीठाकुरजी को नई फूल की साजा तिलक पीतांबर समर्पण करना फिर यथा शक्ति महाभोग धरना । पंजीरी भी । सवेरे नवमी को श्रीठाकुरजी को पालने पर भुलाना । दही से नन्द महोत्सव करना, पालना के भोग में मेंवा मिठाई मक्खन रखना, भेंट प्रारती करना ।

भाद्र पद शुक्ल ।

द्वितीया—दंमूठन का उत्सव ।

पंचमी—श्रीवत्सदेवजी का जन्म श्रीचन्द्रावतीजी का जन्म जहां दी स्वामिनी जी विराजती हैं वहां दक्षिण भाग की स्वामिनी जी की दूध का ज्ञान तिष्ठक ।

षष्ठमी—श्रीराधाष्टमी, शृङ्गार जन्माष्टमी का, श्रीस्वामिनो जी की दूध से ज्ञान कराना, तिष्ठक भोग भारती तौरण आदि जन्माष्टमी की भांति सब करना ।

एकादशी—दानएकादशी, सङ्कट काङ्कनी का शृङ्गार वस्त्र बाल, दही दूध छोटी २ कुक्षिया में भीग रखना, ब्रज भक्त ( सखी ) हैं तो उनकी चिरः पर दही दूध रखकर सामने खुड़ी करना ।

द्वादशी—वामनजयन्ती, केशरिया वस्त्र धोती उपरना कुल्लू, दीपहर को पंचाच्यत ।

पूर्णिमा—सांझी के उत्सव का आरम्भ, सांझ को ठाकुर जी के सामने फूल की वा रंग की सांझी बनाना ।

आश्विन वृष्य ।

अष्टमी—सहीना का चौक ।

द्वादशी—प्रभु श्रीगोस्वामि गोपीनध्र जी का उत्सव ।

तेरस—श्रीवासुदेव जी का उत्सव ।

चौदस—कोट को आरती ।

पूर्णिमा—सांझी की समाप्ति ।

आश्विन शुक्ल पक्ष ।

प्रतिपदा—नवराचारम्भ, कुल्लू चन्द्रिका ।

नवमी—नवरात्र की समाप्ति, कुल्लू चंद्रिका सफेद छापे का बागा, सामग्री ।

दशमी—विजयदशमी, सफेद जरी का बागा, पाग चन्द्रिका सन्ध्या की जवारे की कलगी धराना, तिष्ठक, खंजर कमर में धराना, रावण वध की कीर्त्तन गाना ।

एकादशी—सुङ्कट ।

पूर्णिमा—सहारास, सफेद ताश का बागा, सुङ्कट, आभरण सफेद, रात की चांदनी में श्रीठाकुर जी विराजें, सफेद वस्तु भीग लगाना, रास की कीर्त्तन गाना ।

### कार्तिक कृष्ण ।

दशमी वा एकादशी से-इटरी दीपमालिका आरम्भ ।

त्रयोदशी—धन तेरस, जरी जरी का बागा ।

चतुर्दशी—रूपचतुर्दशी, बागा लाल जरी का ।

अमावास्या—दीपावली सफेद ताश का बागा, कुल्लू चन्द्रिका, रात को इटरी में बैठाना, सामने दीपावली चौपड़, भंडेहर, खिलौना आदि रखना ।

### कार्तिक शुक्ल ।

प्रतिपदा—अन्नकूट, शृङ्गार दीवाली का रङ्गिगा, गोवर्धन की पूजा करके अन्नकूट का भोग रखना, जहाँ तक वन पड़े सामग्री समर्पण करना ।

द्वितीया—भाई दुइज, तिलक ।

अष्टमी—गोपाष्टमी ।

नवमी—अक्षयनवमी गोविन्दाभिषेकोत्सव, परिक्रमा करना ।

एकादशी—प्रशोधनी अच्छे समय में ऊख के संडप में पधराय कर जगाना, नया जाड़े का कपड़ा समर्पण करना, अंगीठी आदि जाड़े का उपचार रखना ।

द्वादशी—श्रीगिरिधर जी का श्रीरघुनाथ जी का उत्सव ।

त्रयोदशी—श्रीराधावल्लभ जी का पाटोत्सव ।

पूर्णिमा—यज्ञपत्नी अंगीकार ।

कार्तिक में अगस्त्य के फूल की माला, दीपदान, रंग से खस्तिकादि लिखना, तुलसी समर्पण, श्रीर सामग्री भोग रखना ।

### मार्गशीर्ष कृष्ण ।

अगहन कृष्ण ३—बुध अतवार ।

अगहन कृष्ण ६—श्रीगोविन्दराय जी का उत्सव ।

अगहन कृष्ण १३—श्रीधनश्याम जी का उत्सव ।

### मार्गशीर्ष शुक्ल ।

द्वितीया—कूख में पधारे ।

पंचमी—श्रीकृष्ण जी तथा श्रीभीमा जी का विवाहीत्सव ।

सप्तमी—श्रीगोकुलनाथ जी का उत्सव ।

**पौष कृष्ण ।**

नवमी—प्रभु श्रीगोखामि विङ्कननाथ जी का उत्सव ।

**पौष शुक्ल ।**

षष्ठमी—अन्नप्राशन इसी दिन श्रीनन्दराय जी का जन्म ।

**माघ कृष्ण पक्ष ।**

षष्ठी—श्रीठाकुर जी का नाम करण ।

मकर संक्रान्ति जिन दिन हो उग्र दिन छोट के नए रुई के बागा ।  
घोर तीन था लड्डू भोग धरना ।

**माघ शुक्ल पक्ष ।**

पंचमी—वसन्तीत्सव, खिल आरवा, सपेद बागा, इसी दिन से अवीर तुका  
केमर चोधा से नित्य खिलाना, सामने वसन्त रखना, वसन्त राग माघ की  
पूरणिमा तक गाना श्री अहैत प्रभु का उत्सव ।

प्रैठी—श्रीयशोदा जी का जन्म ।

षष्ठमी—श्रीमध्वाचार्योत्सव ।

द्वयोदशी—श्रीनित्यानन्द प्रभु का उत्सव ।

पूर्णिमा—होची डांड़ा ।

**फाल्गुण कृष्ण ।**

चप्तमी—श्रीनाथ जी का पाटोत्सव ।

**फाल्गुण शुक्ल ।**

एकादशी—कुंज एकादशी, फूल का सुकट धरावना कुंज में खिलाना ।

पूर्णिमा—होलिकोत्सव, सपेद बागा, पाग मोर चन्द्रिका, खिल । श्री  
चेतन्य प्रभु का उत्सव ।

**चैत्र कृष्ण ।**

प्रतिपदा—दोस्रोत्सव, सपेद बागा, पाग मोर चन्द्रिका भाम के मोर की  
डोल बांध कर ठाकुर जी की भुजाना, चार भोग चार खिल होंथ ।

चैत्र कृष्ण ५—मस्तावतार ।

चैत्र कृष्ण १३—वारहावतार ।

**संचौस नित्य सेवा पद्धति ।**

सेवा का मूल यह है कि जो ह पूर्वक जैसे निज देह वा बालक वा स्त्री  
की गरमी घरदी आदि ऋतु के अनुसार भोजन वस्त्र से रक्षा की जाती है

वैसेही सर्वस्वामी परिपूर्ण परमेश्वर की मूर्ति की भी सेवा करना, नित्य सबैरे प्रातःकाल्य से निष्ठत होकर तिलक सख्या करके मन्दिर में जाकर पङ्क्ति दण्डवत करके मार्जनी करना, रात के वरतन धी कर वस्त्रादिक जो बदलना हो सब ठीक करके घण्टानाद पूर्वक ठाकुर जी को जगाना और मंगल भोग रखकर मंगला आर्ती करना, फिर स्नान करा कर यथाशक्ति शृङ्गार करना, फूल की माला पहराना चरण पर तुलसी समर्पण करके खड़ी मूर्ति हो तो वेणु धराकर दर्पण दिखलाना, श्रद्धा लीकर्य हो तो शृङ्गार भोग रख कर फिर दूध भोग लगा कर तब राज भोग धरना, न लीकर्य हो तो शृङ्गार पीछे एकही भोग रखना, आचमन सुख वस्त्र करके बीड़ी समर्पण करके चौपड़ खिलौना आदि सामने धर के आरती करना, फिर सज्जा साज करके किवाड़ बन्द कर देना, सख्या को फिर घण्टानाद करके जगा कर दिन का पानी आदि बदल कर यथा शक्ति फल भोग रखना, लीकर्य हो तो सांभ की भी दो भोग और रखना नहीं तो एकही वर सही, फल भोग के पीछे शृङ्गार उतार कर शयनभोग रखना, और दूध रखना, फिर आरती करके शयन कराना, गरमी हो तो पतली चहर जाड़ा हो तो रजाई उढ़ाना, खासिनी जी को साड़ी और खड़े सरूप हों तो तनियां रात को भी रहै, बाल खरूप ही तो नंगी पौढ़ै, मण्डियग्रह हों तो नित्य स्नान नहीं कराना, व्रत के दिन भी ठाकुर जी को नित्य की भांति अन्न आदि समर्पण करना, गरमी सरदी का सेवा में बहुत ध्यान रखना ।

### अथ संक्षिप्त निर्णय ।

एकादशी के व्रत का मोटा निर्णय यह है कि पङ्क्ति दिन पचपन घड़ी से पल भर भी दशमी विशेष हो तो व्रत नहीं करना द्वादशी को व्रत करना, किन्तु निर्वाक सम्रदाय वाले ४५ घड़ी से अधिक दशमी हो तो व्रत नहीं करते । द्वादशी दो हों तो पङ्क्ति द्वादशी को व्रत करना दो एकादशी हों तो दूसरी एकादशी को व्रत करना । पला न मिले और दशमी के समय में कुछ भी सन्देह हो तो द्वादशी को व्रत करना, जन्माष्टमी राम नवमी और नृसिंहजयन्तो उदयात् लेना और वामन द्वादशी मध्याह्न व्यापिनी विजयदशमी सायंकाल व्यापिनी । और उत्सव सब संसार में जिस दिन तिथि मानी जाय उस दिन । रास पूर्णिमा जिस दिन चन्द्रमा को कला विशेष मिले उस दिन करना ।

# वैष्णवता और भारतवर्ष ।

## VAISNAVISM AND INDIA.

एक बेर मन लगकर आचोपान्त पक्षपात छोड़ कर पढ़िए फिर  
चाहे प्रसन्न हूजिए चाहे हंसिए चाहे गान्धी दीजिए ।

‘इदंविष्णुर्विचक्रमे’ से ‘कथ ऐहो शंभाम बंसीवाला’ तक ।  
वेदे रामायणे चैत्र पुराणे भारते तथा,  
आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गोयते ।



## वैष्णवता और भारतवर्ष ।

यदि विचार करके देखा जायगा तो स्पष्ट एकट होगा कि भारतवर्ष का सब से प्राचीन मत वैष्णव है। हमारे आर्य लोगों ने सब से प्राचीन काल में सभ्यता का प्रबलस्वन किया और इसी हेतु क्या धर्म क्या नीति सब विषय के संसार सात्र के ये दोलागुस्त हैं। आर्यों ने प्रादि काल में सूर्यही को अपने जगत् का सब से उपकारी और प्राणदाता समझ कर ब्रह्म माना और इन का मूल मंत्र गायत्री इसी से इन्ही सूर्य नारायण को उपासना में कहा गया है। सूर्य की किरणें 'आपो नारा इति प्रोक्ता आपोवै नर मूनवः' जलों में और सन्तुषीं में व्याप्त रहती है और इस द्वारा ही जीवन प्राप्त होता है इसी से सूर्य का नाम नारायण है। इस लोगों के जगत् के यह मान जो सब प्रत्येक ब्रह्माण्ड है इन्ही की आकार्पण शक्ति से स्थिर है इसी से नारायण का नाम अनन्त कीटि ब्रह्माण्ड नायक है। इसी सूर्य का वेद में नाम विष्णु है क्योंकि इन्ही की व्यापकता से जगत् स्थित है। इसी से आर्यों में सब से प्राचीन एकाही देवता थी और इसी से उभ काल के भी आर्य वैष्णव थे। काशान्तर में सूर्य में चतुर्भुज देव की कल्पना हुई। 'ध्वेयः सदा सविल मंडल सध्ववर्ती नारायणः सरसिजासन संनिविष्टः'। 'तद्विष्णोः परमं पदम्' 'विष्णोः कर्माणि पश्यत' 'यत्र गावो भूरिशृगाः' 'इदंविष्णुर्विचक्रमे' इत्यादि श्रुति जो सूर्यनारायण के आधि भौतिक ऐश्वर्य की प्रतिपादक थीं आधिदैविक सूर्य की विद्ममूर्ति के वर्णन में व्याख्यात हुईं। चाहे जिस रूप से ही वेदों ने प्राचीन काल में विष्णु सज्जिमा गाईं। उसकी पीछे उस सूर्य की एक प्रति मूर्ति घुखी पर मानी गई अर्थात् अग्नि। आर्यों का दूसरा देवता अग्नि है। अग्नि यज्ञ है और 'यज्ञो वै विष्णुः'। यज्ञही से रुद्र देवता माने गए। आर्यों के एक छोड़कर दो देवता हुए। फिर तीन और तीन से चारों को लविधि करने से तैत्तिस और इसी तैत्तिस से तैत्तिस करोड़ देवता हुए। इस विषय का विशेष वर्णन अन्य प्रसंग में करेंगे। यहाँ केवल इस बात को दिखलाते हैं कि वर्तमान समय में भी भारतवर्ष से और वैष्णवता से कितना घनिष्ट सम्बन्ध है। किन्तु योरप के पूर्वी विद्या जानने वाले विद्वानों का मत है कि रुद्र प्रादि



आर्यों के देवता नहीं हैं (१) वह अनार्यों (Non Aryan or Tamalian) के देवता हैं। इसके वे लोग आठ कारण देते हैं। प्रथम वेदों में लिंग-पूजा का निषेध है। यथा 'वशिष्ठ इन्द्र से चिन्तिते करते हैं कि हमारी वस्तुओं को 'शिशुदेवा' ( लिंग पूजक ) से बचाओ' इत्यादि। (२) ऋग वेद और अथर्ववेद ऋचाओं में भी शिशुदेवा लोगों को असुर दस्यु इत्यादि कहा है और रुद्रों में भी रुद्र की स्तुति भयंकर भाव से की है। दूसरी युक्ति यह है कि स्मृतियों में लिंग पूजा का निषेध है। [३] प्रोफेसर मैक्समूलर ने वशिष्ठ सृष्टि की अनुवाद के खल में यह विषय बहुत स्पष्ट लिखा है। तीसरी युक्ति वे यह कहते हैं कि लिंग पूजक और दुर्गा शैरवादिकों के पूजक ब्राह्मण को पति से बाहर करना लिखा है। [ सितान्तराहत ब्रह्मांड पुराण के वाक्य, चतुर्विंशतिमत् पराशर व्याख्या में साधव श्लोक ३८, आपस्तम्ब, भागवत चतुर्विंशत्यध्याय २८ श्लोक, और धर्मोत्तिसार के तीसरे परिच्छेद का पर्व ६ देखो। ] चौथी युक्ति यह कहते हैं कि लिंग का तथा दुर्गा शैरवाद का निर्मात्य खाने में पाप लिखा है। कामलाकारणिक, निर्णयसिन्धु आचार्यसाधवादि ग्रंथों में सैकड़ों वाक्य हैं देख लो। ] पंचवें श्राद्धों में शिव मंदिर और शैरवादिकों के मंदिर को नगर के बाहर बनाना लिखा है। [४] कठवे वे लोग कहते हैं कि शिव बीज मंत्र से दीक्षित और शिव को छोड़कर

[१] ऐं टिक्कटो च उडीसा १ जिल्द १३६ पेज देखो।

[२] Rigveda, IV., P. 6. and Dr. Wilson's Vedic Comments.

[३] Professor Max Muller's Ancient Sanskrit Literature p: 55.

[४] भागवत के पड़ले स्कन्ध के दूसरे अध्याय का २५ श्लोक। 'व्यवहाराध्याय दिव्य प्रकरण कोष विधान १८ श्लोक, वशिष्ठ सृष्टि, गीता सप्तमाध्याय २० श्लोक, गीतम कृताचारसूत्र १२ खंड, आचार प्रकाश में मख पुराण का वाक्य और काशीखंड का वाक्य देखो। इस विषय को पुष्टता के हेतु प्रोफेसर मैक्समूलर लिखते हैं कि जिस कृता के वशिष्ठ कृति हैं उसी में शिशु देवा लोगों को निन्दा है अतएव इस विषय में वशिष्ठ की स्मृति भी प्रमाण के योग्य है। बहुत लोग यह भी कहते हैं कि शाक्त मत नास्तिकों की प्रकृति ही से जगत् मानने वालों की (Naturlists) नेचरियों की शाखा है क्रम पाकर उसी प्रकृति को वे लोग देवी की आकार में मानने लगे।

श्रीर देवता को न मानने वाले ऐसे ऋद्ध श्रेव भारतवर्ष में बहुत ही थोड़े हैं। या तो शिवोपासक स्मार्त हैं या शाक्त हैं। शाक्त भी शिव को पार्वती के पति समझकर विशेष भादर देते हैं कुछ सर्वेश्वर समझकर नहीं। जंगमादिक दक्षिण में जो दीक्षित शैव हैं वे बहुत ही थोड़े हैं। शाक्त तो जो टीक्षित होते हैं वे प्रायः कौलही ही जाते हैं। सौर गणपतय को तो कुछ गिनतो ही नहीं। किन्तु वैष्णवीं में मध्व और रामानुज को छोड़कर और इन में भी जो निर घ्रायही हैं वेही तो साधारण स्मार्तीं से कुछ भिन्न हैं नहीं तो दीक्षित वैष्णव भी साधारण जन समाज से कुछ भिन्न नहीं और एक प्रकार के अटीक्षित वैष्णव तो सभी हैं। मातवीं युक्ति इन लोगों को यह है कि जो अनार्य लोग प्राचीन काल में भारतवर्ष में रहने थे और जिनको आर्य लोगों ने जीता था वही शिल्प विद्या नहीं जानते थे और इसी हेतु लिंग डोंका या निरूपोठ इत्यादि पूजा उन्ही लोगों की हैं जो अनार्य हैं। आठवें शिव का जो भैरव इत्यादि के वस्त्र निवास आभूषण आदिक सभी आर्यों से भिन्न हैं। स्मरान में वाच अग्नि को माला आदि जैसी इन लोगों की वेपभूपा शास्त्रीं में लिखी है वह आर्योंचित नहीं है। इसी कारण शास्त्रीं में शिव का अंगु और दक्ष आदि का विवाद कई स्थान पर लिखा है और चन्द्र भाग इसी हेतु यज्ञ के वाहर है। यद्यपि वे पूर्वोक्त युक्तियां योरोपीय विद्वानों की हैं हम लोगों ने कोई सन्देह नहीं किन्तु इस विषय में वाहर याले क्या कहते हैं केवल यह दिखलाने की यहाँ लिखी गई है।

पाश्चिमात्य विद्वानों का मत है कि आर्य लोग (Aryans) जब मध्य एशिया में (Central Asia) थे तभी से वे लोग विष्णु का नाम जानते हैं। झारोस्ट्रियन (Zoroastrian) ग्रन्थ जो ईरानी और आर्य शाखाओं के भिन्न होने के पूर्व के लिखे हैं उन में भी विष्णु का वर्णन है। वेदों के आरम्भ काल से पुराणों की समय तक तो विष्णु महिमा आर्य ग्रन्थों में पूर्ण है वरन् तत्र और आधुनिक भाषा ग्रन्थों में उसी भांति एक छत्र विष्णु महिमा का राज्य है।

पण्डितवर बाबू राजेन्द्रलाल मिश्र ने वैष्णवता के काल को पांच भाग में विभक्त किया है। यथा वेदों के आदि समय की वैष्णवता २ ब्राह्मण के समय की वैष्णवता ३ पाणिनी के और इतिहासों के समय की वैष्णवता ४ पुराणों के समय की वैष्णवता ५ आधुनिक समय की वैष्णवता।

वेदों के आदि समय में विष्णु की ईश्वरता कही गई है। ऋग्वेद संहिता में विष्णु की बहुत सी स्तुति है। विष्णु को किसी विशेष स्थान का नायक या किसी विशेष तत्व वा कर्म का स्वामी नहीं कहा है वरंच सर्वेश्वर की भांति स्तुति किया है। यथा विष्णु पृथ्वी के सातों तर्हों पर फैला है। विष्णु विष्णु ने जगत् को अपने तीन पैर के भीतर किया। जगत् उसी के रज में लिपटा है। विष्णु के कर्माँ को देखो जो कि इन्द्र का सखा है। ऋषियों विष्णु के ऊँचे पद को देखो जो एक आँख की भांति आकाश में स्थिर है। पंडितों स्तुति गाकर विष्णु के ऊँचे पद को खोजो। इत्यादि। ब्राह्मणों में इन्ही मंत्रों का बड़ा विस्तार किया है और अब तक यज्ञ होम आदि आदि सभी कर्मों में ये मंत्र पढ़े जाते हैं। ऐसेही और स्थानों में विष्णु को जगत् का रक्षक स्वर्ग और पृथ्वी का बनाने वाला सूर्य और अन्धेरे का उत्पन्न करने वाला इत्यादि लिखा है। इन मंत्रों में विष्णु के विषय में रूप का परिचय इतनाही मिलता है कि अपने अपने तीन पदों से जगत् को व्याप्त कर रहा है। यास्क ने निरुक्त में अपने से पूर्व के दो ऋषियों का मत इसके अर्थ में लिखा है। यथा शाकपुषि लिखते हैं कि ईश्वर का पृथ्वी पर रूप अग्नि है घन में विद्युत है और आकाश में सूर्य है। [ सूर्य की पूजा किसी समय समस्त पृथ्वी में होती थी यह अनुमान होता है। सब भाषाओं में अद्यापि यह कहा वत प्रसिद्ध है कि 'उठते हुए सूर्यको सब पूजता है'। [ अरुणवाभ सूर्य के उदय मध्य और अस्त की अवस्था को तीन पद मानते हैं। दुर्गाचार्य अपनी टीका में उसी मत को पुष्ट करते हैं। सायनाचार्य विष्णु के वाचन अवतार पर इस मंत्र को लगाते हैं। किन्तु यज्ञ और आदित्य ही विष्णु है इस बात को बहुत लोगों ने एक मत होकर माना है। अस्तु विष्णु उस समय आदित्य ही को नामांतर से पुकारा है कि स्वयं विष्णु देवता आदित्य से भिन्न थे इस का झगड़ा हम यहाँ नहीं करते। यहाँ यह सब लिखने से हमारा निबंन यह आशय है कि अति प्राचीन काल से विष्णु हमारे देवता हैं। अग्नि वायु और सूर्य यह तीनों रूप विष्णु के हैं इन्हीं से ब्रह्मा शिव और विष्णु यह तीन मूर्तिमान देव हुए हैं।

ब्राह्मणों के समय में विष्णु को महिमा सूर्य से भिन्न कह कर विस्तार रूप से बर्णित है और शतपथ ऐतरेय और तैत्तरेय ब्राह्मण में देवताओं का दारपाल देवताओं के हेतु जगत् का राज्य बचाने वाला इत्यादि कहकर लिखा है।

इतिहासों में 'रामायण' और भारत में विष्णु की महिमा स्पष्ट है वरंच इतिहासों के समय में विष्णु के अवतारों का पृथ्वी पर माना जाना भी प्रकट है। पाणिनि के समय के बहुत पूर्व कृष्णावतार कृष्ण पूजा और कृष्ण भक्ति प्रचलित थी यह उनके सूत्रही से स्पष्ट है [ यथा जीविकार्ये चापश्ये वासुदे-  
वं: ॥५३॥८८॥० कृष्णं नमिञ्चेत् सुखं यायात् ॥३३॥१५ ई० वासुदेव भक्तिरस्य वासुदेवकः ॥३३॥८८॥० ] और प्रद्युम्न अनिरुप और सुभद्रा नाम इत्यादि के पाणिनि के निखने ही से सिद्ध है कि उस समय के अति पूर्व कृष्णावतार की कथा भारतवर्ष में फैल गई थी। यूनानियों के उदय के पूर्व पाणिनि का समय सभी मानते हैं। विद्वानों का मत है कि क्रम से पूजा के नियम भी बदलियेया पूर्व में यज्ञाहुति फिर बलि और अष्टांग पूजा आदि हुई और देव विषयक ज्ञान की हृदि के अन्त में सब पूजन आदि से उसकी भक्ति श्रेष्ठ मानी गई।

पुराणों के समय में तो विधि पूर्वक वैष्णव मत फैला हुआ था यह सब पर विदित ही है। वैष्णव पुराणों की कौन कहे शाक्त और शैव पुराणों में भी उन देवताओं की स्तुति उनकी विष्णु से सम्युक्त भिन्न करके नहीं कर सके हैं। अब जैसा वैष्णव मत माना जाता है उसके बहुत से नियम पुराणों के समय से और फिर तन्नों के समय से चले हैं। दो हजार वर्ष की पुरानी मूर्तियों वाराह राम लक्ष्मण और वासुदेव की मिली हैं और उन पर भी खुदा हुआ है कि उन मूर्तियों को स्थापना करने वालों का वंश भागवत अर्थात् वैष्णव था। राजतरंगिणी ही के देखने से राम केशव आदि मूर्तियों की पूजा यहां बहुत दिन से प्रचलित है यह स्पष्ट हो जाता है इससे इसकी नवीनता या प्राचीनता का भगड़ा न करके यहां थोड़ासा इस अदल बदलका कारण निरूपण करते हैं।

मनुष्य को स्वभावही में यह बात है कि जब वह किसी बात पर प्रवृत्त होता है तो क्रमशः उस को उन्नति करता जाता है और उस विषय की जब तक वह एक अन्त तक नहीं पहुँचा लेता सन्तुष्ट नहीं होता। सूर्य के मानने की ओर जब मनुष्यों को प्रवृत्ति हुई तो इस विषय को भी वे लोग ऐसी ही सूझ दृष्टि से देखते गए।

प्रथमतः कर्म मार्ग में फँस कर लोग अनेक देवी देवों को पूजते हैं किन्तु बुद्धि का यह प्रकाश धर्म है कि यह ज्यों ज्यों समुज्वल होती है अपने विषय

मान की उज्वल करती जाती है। थोड़ी बुद्धि बढ़ने ही से यह विचार चित्त में उत्पन्न होता है कि इतने देवो देव इस अनन्त सृष्टि के नियामक नहीं हो सकते इस का कर्ता स्वतंत्र कोई विशेष शक्ति सम्पन्न ईश्वर है। तब उस का स्वरूप जानने की इच्छा होती है अर्थात् मनुष्य कर्म काण्ड से ज्ञान काण्ड में आता है। ज्ञान काण्ड में सीधे सीधे संगति और रुचि के अनुसार यों तो मनुष्य फिर निरीश्वरवादी हो जाता है या उपासना में प्रवर्त होता है। उन उपासना को भी विचित्र गति है। यद्यपि ज्ञान वृद्धि के कारण प्रथम मनुष्य साकार उपासना छोड़ कर निराकार की ओर रुचि करता है किन्तु उपासना करते करते जहाँ भक्ति का प्राबल्य हुआ वहीं अपने उस निराकार उपास को भक्त फिर साकार कहने लगता है। बड़े बड़े निराकार वादियों ने भी " प्रभो दर्श दो ! अपने चरण कमलों को हमारे सिर पर स्थान दो, अपनी सुधामयी वाणी श्रवण कराओ " इत्यादि प्रयोग किये हैं। वैसे ही प्रथम सूर्य पृथ्वी वासियों को सब से विशेष आश्चर्य और गुणकारी वस्तु बोध हुई उस से फिर उन में देव बुद्धि हुई। देव बुद्धि होने से आधिभौतिक सूर्य मंडल के भीतर एक आधिदेविक नारायण माने गये। फिर अन्त में यह कहा गया कि नारायण एक सूर्य ही में नहीं सर्वत्र है और अनन्त कोटि सूर्य चन्द्र तारा उन्ही के प्रकाश से प्रकाशित हैं। अर्थात् आध्यात्मिक नारायण की उपासना में लोगों की प्रवृत्ति हुई।

इन्ही कारणों से वैष्णव मत की प्रवृत्ति भारतवर्ष में स्वाभाविकी है। जगत में उपासन मार्ग ही मुख्य धर्म मार्ग समझा जाता है। कस्तान सुसलमान ब्राह्मण बौद्ध उपासना सब के यहाँ मुख्य है। किन्तु बीहों में अनेक सिद्धों की उपासना और तप आदि शुभ कर्मों की प्राधान्य से वह मत इस लोगों को स्मार्त्त मत के सदृश है और कस्तान ब्राह्मण सुसलमान आदि के धर्म में भक्ति की प्रधानता से यह सब वैष्णवों के सदृश है। इन्ही में वैष्णवों के ग्रन्थों से बहुत सा विषय लिया है और ईसा के चरित्र में श्री कृष्ण के चरित्र का सादृश्य बहुत है यह विषय सविस्तर भिन्न प्रबन्ध में लिखा गया है। तो जब ईसाइयों के मत को ही हम वैष्णवों का अनुगामी सिद्ध कर सके हैं फिर सुसलमान जो कस्तानों के अनुगामी हैं वे हमारे अन्वनुगामी ही चुके।

यद्यपि यह निर्णय करना अब अति कठिन है कि अति प्राचीन काल के

ध्रुव प्रज्ञादा आदि सध्यावस्था के लक्ष्य आरुणि परीक्षितादिक और नथोन काल-के वैष्णवाचार्यों के खान पान रचन सहन उपासना रीति बाह्यचिन्ह आदि में कितना अंतर पड़ा है किन्तु इतनाही कहा जा सकता है कि विष्णु उपासना का मूलमूव अति प्राचीन काल में अनर्वाच्छन्न चला आता है। ध्रुव प्रज्ञादादि वैष्णव तो थे किन्तु अब के वैष्णवों की भांति कंठी तिलक सुद्रा लगाते थे और मांस आदि नहीं खाते थे इन बातों का विश्वस्त प्रमाण नहीं मिलता। ऐसे ही भारत वर्ष में जैमी धर्म रूचि अब है उससे स्पष्ट होता है कि आगे चल कर वैष्णव मत में खाने पीने का विचार छूट कर बहुत सा अदृश बदन अवश्य होगा। यद्यपि अनेक आचार्यों ने इसी आशा से मत प्रवृत्त किया कि इस में सब मनुष्य सामानता लाभ करें और परस्पर खानपानादि से लोगों में ऐक्य बढे और किसी जाति वर्णदेश का मनुष्य क्यों न हो वैष्णवपंक्ति में आ सके किन्तु उन लोगों को यह उदार इच्छा भली भांति पूरी नहीं हुई क्योंकि स्मार्त मत की और ब्राह्मणों की विशेष ज्ञानि के कारणे इस मत के लोगों ने उंच समुद्रत भाव से उन्नति को रोक दिया। जिससे अब वैष्णवों में कुछा छूत सब से बढ गया बहुदेवोपासकों की घृणा देने के अर्थ वैष्णवातिरिक्त और किसी का स्पर्श बचाते वहाँ तक एक बात थी किन्तु अब तो वैष्णवी ही में ऐसा उपद्रव फैला है कि एक सम्प्रदाय के वैष्णव दूसरे सम्प्रदायवाले को अपने मन्दिर में और अपने खान पान में नहीं लेते और सात कनीजिया नौ चुल्हे वाली मसल ही गई है। किन्तु काल की वर्तमान गति के अनुसार यह लक्षण उनको अबनति के हैं। इस काल में तो इसकी तभी उन्नति होगी जब इस के बाह्य व्यवहार और आडंबर में न्यूनता होगी और एकता बढाई जायगी और आन्तरिक उपासना की उन्नति की जायगी। यह काल ऐसा है कि लोग उसी मत की विशेष मानेंगे जिसमें बाह्य देह कष्ट न्यून हो। यद्यपि वैष्णवधर्म भारतवर्ष का प्रकृत धर्म है इस हेतु उस की और लोगों की रूचि होगी किन्तु उसमें अनेक संस्कारों की अतिशय आवश्यकता है। प्रथम तो गोखामो गण अपना रजो गुणी तमोगुणी स्वभाव छोड़ेंगे तब काम चलेगा। गुरु लोगों में एक तो विद्या ही नहीं होती जिस की नहीने से शील नस्वता आदि उनमें कुछ नहीं होते। दूसरे या तो वे अति रुखे क्रीधी होते हैं या अति बिलास लालस ही हो कर स्त्रियों की भांति सदा दर्पण ही देखा करते हैं। अब वह सब स्वभाव

उनको छोड़ देना चाहिए क्यों कि इस उन्नीसवीं शताब्दी में वह यदा जाय्य अब नहीं बाकी है। अब कुकर्मी गुरुका भी चरणास्त लिया जाय वह दिन छप्पर पर गए। जितने बूढ़े लोग अभी तक जीते हैं उन्हीं के ग्रीन संकीच से प्राचीन धर्म इतना भी चला रहा है बीसपचीस वरस पीछे फिर कुछ नहीं है। अब तो गुरु गोसाईं का चरित्र ऐसा होना चाहिए कि जिस को देख सुन कर लोगों में थडा से स्वयं चित आकट हो। स्त्रीजनों का मन्दिरों से सहवास निवृत्त किया जाय। केवल इतना ही नहीं भगवान श्री कचन्द्र की केलि कथा जो अति रहस्य होने पर भी बहुत परिमाण से जगत् में प्रचलित है वह केवल शैतन्य उपासकों पर छोड़ दीजाय। उनके माहात्म्य मत विशद चरित्र का महत्व यथार्थ रूप से व्याख्या कर के सब को समझायाजाय। राम क्या है गोपी कौन है यह सब रूपक अलंकार स्पष्ट करके युतिघटत उनका ज्ञान वैराग्य भक्ति बोधक अर्थ कियाजाय। यह भी दबो जीभ से हम डरते कहते हैं कि व्रत ज्ञान आदि भी वहीं तक रहें जहां तक शरीर को अति कष्ट न हो। जिस उत्तम उदाहरण के द्वारा स्थापक आचार्य गणने आत्मसुख विसर्जन करके भक्तिमुधा से लोगों को प्रभावित कर दिया था उसी उदाहरण से अब भी गुरु लोग धर्म प्रचार करें। शाल्य आग्रहों को छोड़ कर केवल आन्तरिक उन्नत प्रेम मयी भक्ति का प्रचार करें देखें कि दिग्दिगन्त से हरिनाम को कौसी ध्वनि उठती है और विधर्मी गण भी इस को सिर झुकारते हैं कि नहीं। और सिक्क कबीर पन्थी आदि अनेक दल के हिन्दू गण भी सब आप से आप बैर छोड़ कर इस उन्नत समाज में मिल जाते हैं कि नहीं।

जो कोई कहे कि यह तुम कैसे कहते हो कि वैष्णव मत ही भारत वर्ष का प्रकृत मत है तो उस के उत्तर में हम स्पष्ट कहेंगे कि वैष्णव मत ही भारतवर्ष का मत है और वह भारत वर्ष की हड्डी लहू में मिल गया है। इस के अनेक प्रमाण हैं क्रम से सुनिए। पहले तो कबीरदादू सिक्क बाउल आदि जितने पंथ हैं सब वैष्णवी की शाखा प्रशाख हैं और सारा भारतवर्ष इन पंथों से छाया हुआ है। [ २ ] अवतार और किसी देव का नहीं क्योंकि इतना उपकार ही [ दस्यु, दलन आदि ] और किसी से नहीं साधित हुआ है। [ ३ ] नामों को लीजिए तो क्या स्त्री पुरुष आधे नाम भारतवर्ष के विष्णु संबन्धी है और आधे में जनत् है; कृष्णभट रामसिंह गोपालदास हरिदास रामगोपाल राधा लक्ष्मी कृकमिन गोपी जानकी आदि। विश्वास

न ही कलैक्टरी के दफतर से मर्दुमशुमारी के कागज़ निकाल कर देख ली-  
जिए या एक दिन डांकघर में बैठ कर चिट्ठियों के लिफाफों की सैर कीजिए  
[ ४ ] ग्रंथ काव्य नाटक आदि के संस्कृत या भाषा के जो प्रचलित हैं उनको  
देखिए, रघुवंश माघ रामायण आदि ग्रन्थ विष्णुचरित्र की ही बहुत हैं। [ ५ ]  
पुराण में भारत भागवत वाल्मीकि रामायण यज्ञी बहुत प्रसिद्ध हैं और यह  
तीनों वैष्णव ग्रन्थ हैं। [ ६ ] व्रतों में सब से मुख्य एकादशी है वह वैष्णव  
व्रत है और भी जितने व्रत हैं उन में आधि वैष्णव हैं [ ७ ] भारतवर्ष में जि-  
तने मन्त्रे हैं उन में आधि से विशेष विष्णु लीला विष्णु पर्व या विष्णु तीर्थों  
के कारण हैं। [ ८ ] तिहवारों को भी यज्ञी दशा है। वरंच जोनी आदि  
नाधारण तिहवारों में भी विष्णु चरित्र ही गाया जाता है। [ ९ ] गीत  
कंद चौदह आना विष्णु परत्व हैं दो आना और देवताओं के। किमी का  
ब्याह हो रामजानकी के ब्याह के गीत सुन लीजिए। किसी के बेटा ही नंद  
बधाई गाई जायगी। [ १० ] तीर्थों में भी विष्णु सम्बन्धी ही बहुत है।  
अयोध्या हरिद्वार मथुरा वृन्दावन जगन्नाथ रामनाथ रंगनाथ द्वारका बदरी-  
नाथ आदि भली भांति याद करके देख लीजिए। [ ११ ] नदियों में गंगा  
यमुना मुख्य हैं सो इन का माहात्मा केवल विष्णु संबंध से है। (१२) गया में  
हिन्दू मात्र की पिण्ड दान करना होता है वहाँ भी विष्णु पद है ० (१३)  
मरने के पीछे रामरामसत्य है इसी की पुकार होती है और अन्त में शब्दाब्ज  
तकप्रितसुक्ति प्रदीभव' आदि वाक्य से केवल जनार्दनही पूजे जाते हैं। यहाँ  
तक कि पितृरूपो जनार्दन ही कहलाते हैं। [ १४ ] नाटकों और तमाशों में  
रामलीला रास ही अति प्रचलित हैं। [ १५ ] सब वेद पुस्तकों के आदि और  
अन्त में लिखारहता है। हरिः क' । [ १६ ] संकल्प कीजिए तो विष्णुः विष्णुः।  
[ १७ ] आचमन में विष्णु विष्णु। [ १८ ] शब्द होना ही तो यः स्मरेत् पुंडरी कांक्षं  
[ १९ ] सुन्ये को भी राम ही राम पढ़ाते हैं। [ २० ] जो कोई वृत्तान्त  
कहै तो उभ को रामकहानी कहते हैं। [ २१ ] लड़कों को बालगोपाल कह-  
ते हैं। [ २२ ] छपने में जितने भागवत रामायण प्रेमसागर ब्रजविलास छपी  
जाती है और देवताओं के चरित्र उतने नहीं छपते। [ २३ ] आर्य लोगों के  
ग्रिष्टाचार में रामराम जय श्री कृष्ण जय गोपाल ही प्रचलित हैं। [ २४ ]  
ब्राह्मणों के पीछे वैष्णव वैरागी ही को हाथ जोड़ते हैं और भोजन कराते हैं।  
[ २५ ] विष्णु के साला होने के कारण चन्द्रमा को सभी चन्द्रा मामा कहते



हैं। [२६] गृहस्थ के घर घर तुलसी का घांटा ठाकुर की मूर्ति रखी भोग-  
लगाने को रहती ही हैं। [२७] कथा घाट वाट में भागवत ही रामायण की  
होती है। [२८] नगरों के नाम में भी रामपुर गोविन्दगढ़ गोपालपुर आदि  
ही विशेष हैं [२९] मिठाई में गोविन्द बड़ो सोहन भोग आदि नाम हैं अन्य  
देवता का यहाँ कुछ नाम नहीं है। [३०] सूर्य चन्द्र वंशीचर्ची लोच श्री राम  
हृष्य के बंश में होने का अब तक अभिमान करते हैं। [३१] ब्राह्मण गण  
ब्रह्मण्य देव कह कर अबतक कहते हैं ' ब्राह्मणो मामकीतनुः '। [३२] शौ-  
पधियों में भी रामबाण नारायण चूर्ण आदि नाम मिलते हैं। [३३] कार्तिक  
ज्ञान राधा दामोदर को पूजा देखिए भारतवर्ष में कैसी है। [३४] तारक  
मंत्र लोच श्री रामनाम ही को कहते हैं। [३५] किसी हौस में चले जाइए  
तून के थान निकाहवा कर देखिए उसपर जितने चित्र विष्णु लीला नखन्धी  
मिलेंगे अन्य नहीं [३६] वारहों महीने के देवता विष्णु हैं। ऐसी ही अनेक  
अनेक बातें हैं। विष्णु सखन्धी नाम बहुत बस्तुओं के हैं कहां तक किछे-  
जायें। विष्णु पद [आकाश], त्रिपुरात [परीक्षित], राम दाना, रामधनु,  
राम जो की गैया! रामधनु [आकाश धनु], रामफल, सीता फल, रामतरोई,  
श्रीफल, हरिगीती, रामकली, राम कपूर, रामगिरी, रामचंदन, राम गंगा,  
हरिचंदन, हरि सिंगार, हरिकेला, हरि नेत्र (कमल), हरि केली (वंगला  
देश), हरिप्रिय (सफेद चंदन), हरिवाघर (एकादशी), हरि बीज (वदानीचू),  
हरि वर्षखंड, हृष्यकली, हृष्यकन्द, हृष्यकान्ता, विष्णुकान्ता (फूल),  
सीतामऊ, सीता बलदी, सीताकुंड, सीतामही, सीता की रसीई, हरिपर्वत  
हरि का पतन, रामगढ़, रामबाण, राम-शिला, रामकी की घोड़ी, हरिपदी  
[ आकाश गंगा ], राम गंगा, नारायणी, कन्हैया आदि नगर नद नदी पर्वत  
फलफूल के सैकड़ों नाम हैं। जले विष्णु: खले विष्णु: सब स्थान पर विष्णु के  
नाम ही का संबंध विशेष है। पाण्डु छोड़ कर तनिक ध्यान देकर देखिए  
कि विष्णु से भारतवर्ष से क्या संबंध है फिर हमारी बात स्वयं प्रसाधित  
होती है कि नहीं कि भारतवर्ष का प्रकृत सत वैष्णव ही हैं।

अब वैष्णवों से यह निवेदन है कि आप लोगों का सत वीसे हड़ भक्ति  
पर स्थापित है और वीसे सार्व जनीन उदार भाव से परिपूर्ण हैं यह कुछ  
कुछ हम आप लोगों को समझा चुके। हमारे भाव से आप रसिक भी बन में  
स्थिर रहिये यही कहना है। जिस भाव से हिन्दू मत अब चलता है उस

भाव से आगे नहीं चलेगा। अब हम लोगों के शरीर का बल न्यून हो गया विदेशी शिक्षार्थी ने समीचीन वदल गई, जीविका और धन उपाजन की हेतु अब हम लोगों को पांच पांच छः छः पहर पसीना सुआना पड़ेगा, रेल पर इधर से उधर कानकाले से लाहौर और बम्बई से शिमला दीडना पड़ेगा, सिविल सर्विस का वैरिस्त्री का इंजनीयरी का इमतिहान देने को विलायत जाना होगा, दिना यह सब किए काम नहीं चलेगा, क्योंकि देखिए कस्तान सुमल्लान पारसी यज्ञो जाकिम हुए जाते हैं, इस लोगों को दशा दिन दिन फ्रीन हुई जाते हैं, जब पेट भर खाने ही को न मिलेगा तो धर्म काहा बाकी रहैगा, इनसे जीवन्मात्र के सहज धर्म उदर पूरण पर अब ध्यान दीजिए। परस्पर का वैर छोड़िए। शैवशाक्त सिक्ख जो हो सब से मिलो। उपासना एका हृदय की रत्न वस्तु है उस को आर्य क्षेत्र में फैलाने की कोई आवश्यकता नहीं वैपणव शैव ब्राह्म आर्यसमाजी सब अलग अलग पतली पतली डोरी हो रहे हैं इसी से ऐश्वर्य नृपी मस्तहाथी उनसे नहीं बंधता। इन सब डोरी को एक में बांध कर मोटा रस्सा बनाओ तब यह हाथी दिग्दिगंत भागने से रुकैगा। अर्थात् अब बहू काल नहीं है कि हम लोग भिन्न २ अपनी अपनी खिचड़ी अलग पकाया करें। अब महाघोर काल उपस्थित है। चारी और आस लगो हुई है। दरिद्रता के सारे देश कला जाता है। अङ्गरेजों से जो नौकरी बच जाते हैं उन पर सुसल्लान आदि विधर्मी भरती होते जाते हैं। आसदनी वाणिज्य को धो ही नहीं केवल नौकरो को धो धो भी धीरे धीरे खसकी। ती अब कैसे काम चलेगा। कदाचित् ब्राह्मण और शोशाई लोग कहें कि हम को तो सुफ्त का मिलता है हम को क्या। इस पर हम कहते हैं कि विशेष उन्हीं का रोना है। जो काराल काल चला आता है उसको आंख खोल कर देखो। कुछ दिन पीछे आपसोगी की मानाने वाले बहुत ही थोड़े रहेंगे। अब सब लोग एकत्र हो। हिन्दू नाम धारी बेइ से लेकर तंत्र वरंच भापा गून्ध सानने वाले तक सब एक हो कर अब अपना परम धर्म यह रक्खो कि आर्य जाति में एका हो। इसी में धर्म की रक्षा है। भीतर तुम्हारे चाहे जो भाव और जैसी उपासना हो ऊपर से सब आर्य भाव एक रहो। धर्म सख्त्यो उपाधियों को छोड़ कर प्रकृत धर्म की उन्नति करो।



श्रीः

षष्ठादश

## पुराणीपत्रसंग्रहा ।

जिस में सर्व पुराणों की संख्या तथा अध्यायानुसार  
विषयों का विवरण है ।



अष्टादशपुराण  
की  
**उपक्रमणिका ।**

---

ध्यान की वनाग अठारह पुराण लोक में प्रसिद्ध हैं। काव्य वाक्सीकीय रामायण, इतिहास-महाभारत, अठारह पुराण, अठारह उपपुराण, पांच-महागण और पांच संहिता इन की समष्टि की मंज्रा पुराण है। अठारह उपपुराण, यथा १ आदि पुराण (मनतकुमारोक्त) २ नरसिंह पुराण ३ स्कन्द-पुराण ४ शिवसम्भे (मन्दीशपोक्त) ५ आद्यर्ष्य पुराण (दुर्वासा का कथा) ६ नन्द पुराण ७ कपिल पुराण ८ वामन पुराण ९ वरुण पुराण १० शास्त्र पुराण ११ और पुराण १२ परागर पुराण १३ भार्गव पुराण १४ मारीच पुराण १५ कान्तिका पुराण १६ टेकी पुराण १७ माहेश्वर पुराण १८ पद्म पुराण भास्कर, नन्दिकेश्वर, वरुण, उग्रना और ब्रह्माण्ड ये पांच नाम उपपुराणों के और भी सिद्ध हैं ॥

१ वसिष्ठ पञ्चरात्र २ नारदीय पञ्चरात्र ३ कपिल पञ्चरात्र ४ गीतमीय पञ्चरात्र और ५ मनतकुमारोय पञ्चरात्र ये पांच पञ्चरात्र और ब्रह्म शिव गीतम पल्लवाद् और मनतकुमार ये पांच संहिता हैं, बहुत से लोगों की इच्छा होगी किं परियम भी न करें और जान भी लें कि अठारहो पुराणों क्या है, इस उन की इच्छा पूर्ण करने की पुराणों की यह उपक्रमणिका प्रकाश करती है जिसे से बहुत सहज में लोग जान जायगी कि चार बाह्य श्लोक समूह की अठारह टुकड़ों में क्या क्या विषय सन्निवेशित हैं।

**हरिशन्द्र**



## अष्टादशपुराणोपक्रमणिका ।

### प्रथम ब्रह्मपुराण ।

यह पुराण पूर्व एवं उत्तर २ भाग में विभक्त है । अथर्व सूक्त संख्या १००० दश लक्ष । सृष्टि काल संवाद में नाना प्रसङ्ग एवं विविध इतिहास वर्णित है ।

पूर्वभाग ।—१ देवता एवं असुर वर्णन की उत्पत्ति वर्णन २ द्वादि प्रजापति की उत्पत्ति वर्णन ३ सूर्यवंश वर्णन एवं तन्मध्य में श्रीराम का चतुर्व्यूह कथन ४ सोमवंश वर्णन तत् प्रसङ्ग से श्रीकृष्ण चरित्र कथन ५ द्वीपकथन ६ वृद्धकथन ७ पातालकथन ८ स्वर्गकथन ९ नरककथन १० सूर्यस्तुति ११ पार्वती कर्म एवं विवाह कथन १२ दक्षप्रस्थान १३ एकाग्र जैत्रकथन ॥

उत्तरभाग ।—१ पुरुषोत्तमवर्णन २ तीर्थ यात्राविस्तार कथन ४ यमकीक कथन ५ पित्रश्राद्धविधि ६ वर्णाश्रमाचार धर्मनिरूपण ७ विष्णुधर्म कथन ८ शुभाशुभान्तर ९ प्रणयकथन १० योगकथन ११ सांख्यकथन १२ ब्रह्मशादकथन १३ पुराणांशकथन ।

फलश्रुति ।—यह पुराण लिखा कर वैशाखमास में स्वर्ण युक्त लक्ष्मण सहित पौनिक ब्राह्मण को भर्चना पूर्वक दान करने एवं ब्राह्मण भोजन कराने से चंद्र सूर्य स्थिति काल पर्यन्त ब्रह्मलोक में स्थिति होती है एवं संयत होकर यह पुराण अर्घ्य वा पाठ करने से सकल धर्मफल लभ्य होता है ।

### द्वितीयपद्मपुराण ।

पंचखण्ड में ५५००० सहस्र सूक्त । पंचखण्ड यथा १ ऋष्टिखण्ड २ भूमिखण्ड ३ स्वर्गखण्ड ४ पातालखण्ड ५ उत्तरखण्ड ।

प्रथमऋष्टिखण्ड ।—युक्तस्य भीम संवाद से सृष्ट्यादि का उपक्रम एवं नाना धर्म आख्यान और इतिहास कथन इस खण्ड में १ पुत्रर माहात्म्य विस्तार २ ब्रह्मयज्ञ विधि ३ वेदपाठादि लक्षण ४ दान विवरण ५ प्रथक् प्रथक व्रत कथन ६ शैल जाया विवरण ७ तारकाख्यान ८ गोमाहात्म्य ९ कालकीयादि दैत्य वध १० प्रहरी की पूजा एवं दान विवरण है ।

द्वितीयभूमि खण्ड ।—सूतशीलकसंवाद । १ पित्रसाह पूजाकथन ३ शिव-



शर्माकथा ३ सुव्रतचरित्र ४ वृद्धासुरवध ५ पृथक्वर्ण भाष्यान ६ धर्मकथा ७  
द्विदशयूषणकथन ८ नहुषकथा ९ ययातिचरित्र १० गुरुतीर्थ निरूपण ११  
राजा के सहित जैमिनि के संवाद में बहूत सी भाष्यकथा १२ अशोकसुन्दरी  
की कथा १३ वृष्टदेववध १४ कामदाख्यान १५ विष्णुवध १६ अवनकुञ्जक  
का संवाद १७ सिद्धाख्यान १८ ग्रन्थ की फल श्रुति ।

द्वितीयस्वर्गखण्ड ।—ऋषि लोगों में सौति का कथा प्रसङ्ग १ ब्रह्माण्डोत्पत्ति  
कथन २ भूमि लोक संख्यान ३ तीर्थ भाष्यान ४ नर्मदा की उत्पत्ति ५ नर्मदा  
दाख्य तीर्थ उपाख्यान ६ कुरुक्षेत्रादि तीर्थकथन ७ कानिन्दी की पुण्यकथा ८  
काशीमाहात्म्य ९ गवामाहात्म्य १० प्रयागमाहात्म्य ११ वर्षाश्रम धर्म एवं  
योग निरूपण १२ व्यास जैमिनिसंवाद की पुण्य कथा १३ समुद्रमन्थन १४  
व्रतकथन १५ श्रीमहात्म्यस्तोत्र ।

चतुर्थपातान्तखण्ड ।—श्रीराम का अश्वमेध एवं राज्यभिक्षेक कथन २  
अगस्त्यादि का आगमन ३ पौनस्ति का उपाख्यान ४ अश्वमेध करणादेश ५  
अश्वमेधीय घोटकगमन ६ नानाराज कथन ७ जगन्नाथ देव का व्रतान्त ८ वृ-  
न्दावन का माहात्म्य ९ लोकावतारी की नित्यकीर्तानुक्तकथन १० वैशाख ज्ञान  
दान एवं अर्चनमाहात्म्य ११ धरावराहसंवाद १२ यमएवं ब्राह्मण की कथा  
१३ राजा का आचरण १४ श्रीकृष्ण का स्तोत्र १५ शिवशंभुमिजन १६ द-  
धीचि का भाष्यान १७ भस्मधारण मन्त्रात्म्य १८ शिवमन्त्रात्म्य १९ इंद्रपुत्र का  
भाष्यान २० पुराणवितृजन की प्रशंसा २१ गीतम का भाष्यान २२ गीता २२  
भारद्वाज के आश्रम में श्रीरामचन्द्र का कल्यान्तरीय इतिहासकथन ।

पञ्चमउत्तरखण्ड ।—शिव पार्वती संवाद १ पर्वत का आख्यान २ जालन्धर  
की कथा ३ श्री शैलादि का विवरण ४ सगर का उपाख्यान ५ गङ्गा प्रयाग  
काशी एवं गया की पुण्यकथा ६ शालादि दानमाहात्म्य ७ साहाहादशीव्र-  
तकथन ८ द्वापदिपति एकादशी माहात्म्य ९ विष्णुधर्मकथन १० विष्णुसहस्र-  
नाम ११ कार्तिकव्रतफल १२ साध्वानफल १३ अश्वहोप की तीर्थ सफल का  
माहात्म्य १४ सार्धमती महिमा १५ नृसिंहोत्पत्तिकथन १६ देवशर्मा का  
आख्यान १७ गीतामाहात्म्य १८ भक्ति का माहात्म्य १९ श्रीभागवत मा-  
हात्म्य २० इंद्रपुत्र की महिमा २१ नाना तीर्थकथा २२ मन्वरत्न की  
कथा २३ त्रिपाद विभूति का कथन २४ मल्ल्यादि अवतार कथन २५ श्री  
राम का व्रतनाम एवं तन्माहात्म्य २६ शृगु की त्रिष्णुविभद पदवी ।

फलश्रुति ।—यज्ञपुराण लिखाकर स्वर्णयुक्त पुराणवित् ब्राह्मण को दान करने से अथवा अथर्वण करने से वैष्णव धाम को प्राप्ति होती है एवं इस को अनुब्रामिणिका अथर्वण करने से समुदाय पुराण अथर्वण का फल लाभ होता है ।

### द्वितीय विष्णुपुराण । \*

आदि एवं अन्त २ भाग में २३००० नवत्य श्लोक उस में आदि भाग ६ अंश

० विष्णुपुराण २३ हजार श्लोक है परन्तु भूलकार सुखमागर के बारहवें स्कंध में ३००० तीसहजार लिखदिया । यज्ञो नहीं बरंच चन्द कवि ने भी रायसा में २३ हजार चारसौ लिखदिया परन्तु रायसा के कई एक पुस्तकों में ३४०० श्रीर रामरत्न भीता में अन्तो हरजार लिखदिया परन्तु तुलसी सदाथ में तीसह हजार लिखा मेरी राय से जिन जिन पुस्तकों में अंतर है उन सब को यज्ञ लिखदेता हूं पाठक गण स्वयं विचार करलें ।

सुखमागर में मखनकाक ने लिखा है । ब्रह्मपुराण दशहजार वो पद्मपुराण पंचपनहजार वो विष्णुपुराण तीसहजार वो शिवपुराण चौबीसहजार वो श्री मङ्गावत पुराण अठारहहजार वो नारदपुराण पञ्चोसहजार वो मार्कण्डेयपुराण नौहजार वो अग्निपुराण पन्द्रह हजार चारसौ वो भविष्यपुराण चौदह हजार पांच सौ वो ब्रह्मवैवत्ते पुराण अठारह हजार वो लिङ्गपुराण न्यारह हजार वो बाराहपुराण चौबीसहजार वो स्कन्दपुराण इक्वामी हजार एकसौ वो वामनपुराण दशहजार वो कूर्मपुराण सत्रह हजार वो मत्स्यपुराण चौदह हजार वो गरुडपुराण उन्नीसहजार वो ब्रह्माण्डपुराण बारह हजार श्लोक है ।

पृथ्वी राज रसौ में लिखा है ।

पदो—ब्रह्मन्देव सम वासुदेव । अष्टादस पुरान तिन कहै समै ॥  
तिन कहौ नाम परिमान ब्रह्मि । जिन सुनत सुच भव हो तन्नत्रि ॥  
ब्रह्मह पुरान दस सहस्र लुटि । जिहि पठत सुनत तम तप्य लुटि ॥  
पंचास पंचह हजार गति । पद्मह पुरान तिन कहौ ब्रह्मि ॥  
तीस सहस्र सैं चारि जानि । विष्णु पुराण विष्णु समानि ॥  
चौबीस सहस्र कहि शिवपुरान । तिहिपठतसुनत सम अभियपान ॥  
अठार सहस्र भागवत मै । करि पार परिथत सुकदेव ॥  
नारद पुरान कहि पाव जाख । तहाँ मुक्ति मोट आनन्द भाख ॥  
भारकंड नाम तीसह हजार । पौरान प्रवित्र सो दुख जार ॥

में विभक्त । सेत्रिय पराशर सखाद वराह कल्पीपाख्यान प्रथमभाग प्रथम अध्याय

पंद्रह हजार संख्या सपूर । अग्नि पुरान पठि पाप दूर ॥  
 चवद्वै हजार सैं पांच पठि । अक्षयित पुरान सो पाप जडि ॥  
 ब्रह्मवैवत सहस्र अठार । केवल गिनान कथि भक्ति सार ॥  
 बद्रह हजार लिंगह पुरान । आनन्द अर्थ आगम गुरान ॥  
 चौबीस सहस्र वाराह भक्ति । पौरुख पुरान तिन अमित सक्ति ॥  
 हजार इक्कासी कडि विवेक । स्कंद पुरान भव भक्ति एक ॥  
 इग्यारह सहस्र बावन सु अक्ष । पौरान सुनत सुधि अक्ष पक्ष ॥  
 सत्रह हजार कूर्म पुरान । भाषा विनीद प्राक्तम गुरान ॥  
 विद्या हजार मित सख देव । विधि संख उषरे सेव सेव ॥  
 गुनईस सहस्र गरुडह पुरान । अतान वक्त भक्ति उरान ॥  
 ब्रह्मांड पुरान वारह सहस्र । करि व्यास भक्ति प्रभु कंस नंस ॥  
 पंद्रह हजार अक्ष अरि लाख । सम ब्रह्म व्यास कडि चंद भाख ॥

तुलसी शब्दार्थ में लिखा है । अष्टादश पुराण—

दोहा—ब्रह्म ब्रह्माण्ड बावन सरस , ब्रह्मवैवर्त सुजान ।  
 मार्कण्ड अक्ष भविष्य ये , राजस कहैं पुरान ॥ १ ॥  
 नारद विष्णु वराह अक्ष , गरुड पद्म सुखसार ॥  
 भगवत रूपी भागवत , ये सार्त्त्विक निरधार ॥ २ ॥  
 मोन कूर्म अक्ष लिंग सिव , स्कान्ध अग्नि विचार ।  
 तामस सिव की अंग ए , सुनतहि मिटै खमार ॥ ३ ॥  
 बावन ब्रह्म दस दस सहस्र , हादस है ब्रह्माण्ड ।  
 ब्रह्मवैवर्त दस सहस्र पुनि , पचपन पद्म अखण्ड ॥ ४ ॥  
 पन्द्रह सहस्र सुचारिसत , मार्कण्ड सु पुरान ।  
 साढ़े चौदह भविष्य है , तेइस विष्णु बखान ॥ ५ ॥  
 पंचविंस नारद काहत , सूक्त चौबिस जान ।  
 उनइस गरुड बखानिय , अठारह भगवत मान ॥ ६ ॥  
 मत्स्य सु चौदह सहस्र है , कूर्म सत्रह होइ ।  
 लिंग इकादस काहत है , चौबिस रुद्र जु सोइ ॥ ७ ॥  
 पावक पन्द्रह सहस्र पुनि , चारि सैकरा आन ।

१ सृष्टि का आदि कारण एवं सृष्टिवर्णन २ देवादि की उत्पत्ति ३ समुद्रमंथन

स्कन्ध एक्यासी सहस्र अक्षर , एकसत करत बखान ॥ ८ ॥  
 तीन लाख अष्टानवे , सहस्र वेद सत आदि ।  
 सब पुरान ऽज्ञोक को , काही व्यास मयादि ॥ ९ ॥  
 रूपपुराण नाम—सनतकुमारहिजानपुनि , नारसिंह अस्कन्ध ।  
 दुर्वासा आचर्यगनि , नारद कपिल प्रबन्ध ॥ १० ॥  
 मानव अक्ष ब्रह्माण्ड कहि , शार्ङ्गव गरुड बखान ।  
 माहेश्वर पुनि कालिका , सर्वाक्ष सूर्य पुरान ॥ ११ ॥  
 विष्णुपुरान परासरी पुनि , संचय सर्वार्थ ।  
 देवि भागवत मिलि भये , अष्टादस सब सार्ध ॥ १२ ॥  
 श्रीभागवत के १२ वें स्कंध के १३ वें अध्याय में लिखा है :

शालंदेशसहस्राणिपादमंपंचोनपाष्टिच श्रीवैष्णवंत्रयोविशच्चतुर्विंशतिसौवकम् ॥ ४ ॥

दशाष्टीश्रीभागवतं नारदंपंचविंशति मारकंडेयंनववाहर्नतुदशपंचचतुःशतम् ॥ ५ ॥

चतुर्दशभविष्यस्यात्तथापंचशतानिच दशाष्टीत्रसवैवर्तिलिंगमेकादशैवतु ॥ ६ ॥

चतुर्विंशतिवाराहमेकाशीतिसहस्रकम् स्कादेशततथाचैक्रंनमनंदशकीर्तितम् ॥ ७ ॥

कौर्मैसतदशाख्यांतमात्स्यंततुचतुर्दश एकोनविंशत्सौपर्णब्रह्मांडंद्वादशैवतु ॥ ८ ॥

एवंपुराणसंदोहश्चतुर्लक्षउदाहृतः तत्राष्टादशसाहस्रंश्रीभागवतमिष्टाते ॥ ९ ॥

पुराणों के नामों में भी कई एक लोगों ने पृथक् पृथक् लिखा है । यद्यपि शब्द कोष में लिखा है ।—पुराण । ( ; पुरा पुराना ( पुर आगे जाना )—अर्थात् जिसमें पुराने समय की बातें हों, अथवा जो पुराने समय में बने हों ) पुराण जिन में सं बहुती की व्यास जी ने बनाये अथवा एकट्टे किये । पुराण सब पथ में लिखे हुए हैं और उन को हिंदू पवित्र मानते हैं । हर एक पुराण में विशेष कर के इन पांच बातों का वर्णन है जैसे । सर्गव प्रति सर्गव वंशोमनवंत्तराणि च वंशानु चरितं चैव पुराणं पंच लक्षणम् ।

अर्थात् १ संसार को उत्पत्ति ; २ प्रलय और प्रलय के पीछे फिर संसार की उत्पत्ति ; ३ देवता और शूर वीरों की वंशावली ; ४ मनुष्यों का राज ; और ५ उन के वंश के लोगों का व्यवहार और चलन ; पुराण अठारह हैं १ ब्रह्म पुराण, २ पद्मपुराण, ३ ब्रह्माण्डपुराण, ४ अग्निपुराण, ५ विष्णुपुराण ६

४ दक्षादि वर्णन ५ भुवचरित्र ६ पृथुचरित्र ७ प्रचेता आख्यान ८ प्रह्लाद उपाख्यान ९ प्रह्लाद राज्य का पृथक आख्यान ।

मरुतपुराण, ७ ब्रह्मवैवर्तपुराण, ८ शिवपुराण, ९ लिङ्गपुराण, १० नारद पुराण, ११ स्कन्दपुराण, १२ मार्कण्डेयपुराण, १३ भविष्यत पुराण, १४ मत्स्यपुराण, १५ वराहपुराण, १६ कूर्मपुराण, १७ वाल्मन पुराण, श्री महाभारत पुराण । इन सब पुराणों में चार नामों श्लोक गिने गये हैं और अठारह उपपुराण भी हैं—गु० पुराणा; पद्मले का; सबसे पहला ।

संस्कृत कोष में लिखा है—पुराण पुं० पण अर्थात् व्यवहार दांव सूत्र धन अतुतव्यवहार अर्थात् जुए का खेल विष्णु चिरंजीवी दीर्घायुः प्राणःजीव ईश्वर दा० त्रि० प्रद प्रचीन पुराणा इद जीर्ण न० पंचलक्षण अर्थात् व्यास के वनाश्रम अठारह पुराण तथा च प्रमाणम् ॥ श्लोक महर्षे भद्रर्षे चैव ब्रह्मर्षे चतुष्टयम् ॥ अनापलिंगकृत्कानि पुराणानि पृथक् पृथक् ॥ १ ॥

मार्कण्डेय पुराण १ मत्स्यपुराण २ भविष्योत्तरपुराण ३ भागवतपुराण ४ ब्रह्मांडपुराण ५ ब्रह्मवैवर्तपुराण ६ ब्रह्मोत्तर पुराण ७ वाराहपुराण ८ वामनपुराण ९ वायुपुराण १० विष्णुपुराण ११ अग्निपुराण नारद पुराण १२ पद्मपुराण १३ लिंगपुराण १४ मरुतपुराण १५ कूर्मपुराण १६ स्कंदपुराण ।

शिवपुराण के उल्लेख में शिवसिंह ने यों लिखा है ।

पुराण १८ हैं और उप पुराण भी अठारह है जिनके नाम यह हैं पद्म १ स्कंद २ मरुत ३ मत्स्य ४ वायु ५ ब्रह्माण्ड ६ लिंग ७ अग्नि ८ कूर्म ९ वामन १० नारदीय ११ विष्णु १२ भविष्योत्तर १३ मार्कण्डेय १४ वाराह १५ भारत १६ ब्रह्मवैवर्तक १७ भागवत १८ । उपपुराण । काली १ शास्त्र २ सनत्कुमार ३ वरुण ४ मारोच ५ नन्दी ६ शिव ७ दुर्वासा ८ मुनि ९ नारदीय १० कपिल ११ सौरि १२ महाेश्वरी १३ शुक १४ भार्गव १५ नृसिंह १६ धर्म १७ पाराशर १८ ॥

अथ श्लोक अष्टादशपुराणि ॥

पद्मस्कन्दविङ्गममत्स्यपवनं ब्रह्माण्डलिंगानथः ।

कूर्मोवांसननारदीयसहितं विष्णु भविष्योत्तरं ॥

मार्कण्डेय वराह भारतयुतः श्रीब्रह्मस वैवर्तकः ।

श्रीमहाभारतदिशंतुपरमं श्रेयः पुराणा निवै ॥ १ ॥

प्रथमभाग द्वितीयअंग ।—१ प्रियव्रत उपाख्यान २ द्वीप और वर्ष निरूपण ३ पातालकथन ४ नरककथन ५ सप्तसर्ग निरूपण ६ सूर्यादिसंचार ७ भरतचरित्र ८ सुक्लिसर्ग निरूपण ९ निदाघादि ऋतुसंवाद ।

प्रथमभाग तृतीयअंग ।—१ मन्वन्तर कथा २ वेदव्यास अवतार ३ नरक उद्धार और कर्म ४ सगर एवं औष संवाद में सर्व धर्म निरूपण ५ चर्णाश्रम निरूपण ६ आहकल्प ७ सदाचारकथन ८ मायामोह की कथा ।

प्रथमभाग चतुर्थअंग ।—१ सूर्यवंशकथा २ सोमवंशकथा ।

प्रथमभाग पञ्चमअंग ।—१ नाना राजा लीलों की कथा २ त्र्योक्त्यावतार प्रश्न ३ गोकुल कथा ४ त्र्योक्त्या वाल्मीकीना पतनादिवध ५ कौमार अघासुरादिवध ६ केशोरकंसवधादि मथुरालीला ७ यौवन हारवतीलीला दैत्य वध एवं विवाह ८ भृगुभारहरण ९ अष्टावक्र उपाख्यान ।

प्रथमभाग षष्ठअंग ।—१ कलिजात चरित्र २ चतुर्विध लय कथा ३ ब्रह्मज्ञान कथा ४ केशिध्वज कर्तृक खाण्डिव्य निरूपण ।

द्वितीयभाग—मृतशौनका सखाद—१ विष्णु धर्म कथन २ नाना धर्म कथन ३ पुण्य व्रत नियम एवं यम कथन ४ धर्मशास्त्र ५ अर्थशास्त्र ६ वेदान्तशास्त्र ७ ऋषिःशास्त्र ८ वंश आख्यान ९ स्तवकथन १० मनु सकल की कथा ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर अषाढमास में छत धेनु के साथ पौरानिक ब्राह्मण को टान करने से, सूर्यके रथ पर आरोहण करके विष्णुधाम में गमन एवं भक्तियुक्त पाठ किखा अबण करने से विष्णुलोक में वास श्री दिव्य भोग प्राप्ति होती है इस की अनुक्रमणिका पाठ वा अबण करने से समुदाय पुराण अबण फल होता है ।

चतुर्थ वायुपुराण ।

पूर्व और उत्तर दो खण्ड २४००० सङ्ख्ये लोका वायु ने श्वेत कल्प प्रसङ्ग से सकल धर्म कहा है ।

यथा अष्टादश उपपुराणे ॥

कालीसांवसनल्लुसारवरुणं सारीचनंदीशिवं ।  
दुर्वासांमनुनारदीयकपिलं श्रीरचसाहेश्वरी ॥  
शुक्रं भार्गवं कान्ठसिंहसपर धर्माचपराशरं ।  
शुर्वन्तु पपुराणकानिसततेसस्मीलितेऽष्टादश ॥ २ ॥

पूर्वभाग—१ स्वर्गादि लक्षण विस्तार कथन २ सकल सन्वन्तर की राजयण का वंश कथन ३ गयासुरवध ४ मास गणों की सङ्घिमा एवं साधमास की विशेष सङ्घिमा ५ दान धर्म एवं राज धर्म विस्तार कथन ६ भूचर पतालचर दिक्चर एवं आकाश चर विवरण ७ व्रत विवरण ।

उत्तरभाग—१ नर्मदा तीर्थ कथन २ शिवसंहिता कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर गुड धेतु की माथ दृष्टस्व ब्राह्मण को श्रावण मास में दान करने से चतुर्दश इंद्र परिमित काल रुद्रलोक में वासनियम एवं हविष्य से पुराण श्रवण करने से वा श्रवण कराने से रुद्र तुल्यता प्राप्ति पुराण की अनुकम्पिका सुनने से समुदाय पुराण श्रवण फल लाभ होता है ।

पञ्चम श्रीभागवत ।

हादशस्कन्ध १८०० सहस्र श्लोक सारस्वत कल्पोप कथा ।

प्रथमस्कन्ध ।—१ सत श्रीर ऋषियों का मिलन २ व्यासदेव का मुख्य चरित्र ३ पाण्डव का चरित्र ४ परीक्षित का उपाख्यान ।

द्वितीयस्कन्ध ।—१ परीक्षित शुकसम्वादसे सृष्टिद्वयनिरूपण २ ब्रह्मानन्दसम्वाद से श्रवतार कथन ३ पुराण लक्षण ४ सृष्टि प्रकरण कथन ।

तृतीयस्कन्ध ।—१ विदुरचरित्र एवं मैत्रेय मिलन २ ब्रह्मा सृष्टि प्रकरण ३ कपिल सांख्य कथन ।

चतुर्थस्कन्ध ।—१ सतीचरित्र २ ध्रुवचरित्र ३ पृथुचरित्र ४ प्राचीन वरुण आख्यान ।

पञ्चमस्कन्ध ।—१ प्रियव्रतचरित्र एवं उनका वंशकथन २ ब्रह्माण्डान्तर्गत लोक सकल का वृत्तान्त ३ नरकस्थिति कथन ।

षष्ठस्कन्ध ।—१ अजामिल चरित्र २ दक्षसृष्टि निरूपण ३ हत्तासुर आख्यान ४ सक्त जन्म कथन ।

सप्तमस्कन्ध ।—१ ब्रह्मादचरित्र २ वर्णाश्रम निरूपण ३ वासना कर्म इत्यादि कीर्तन ।

अष्टमस्कन्ध ।—१ गजन्द्र सीचण २ सन्वन्तर निरूपण ३ समुद्रमथन ४ बलि वैभव एवं बन्धन ५ मत्स्यावतार चरित्र ।

नवमस्कन्ध ।—१ सूर्यवंश कथन २ रामायण ३ सोमवंश निरूपण ।

दशमस्कन्ध ।—१ श्रीकृष्ण बालचरित्र २ कौमार चरित्र ३ व्रजस्थिति ४ कौशेर लीला ५ मथुरावास ६ यौवन ७ द्वारकास्थिति ८ भूभारहरण ।

एकादशस्कन्ध—१ वसुदेव नारद संवाद २ यदु दत्तात्रेय सम्वाद ३ श्री  
लक्ष्मण उदव संवाद ४ यादव सुक्ति कथन ।

द्वादशस्कन्ध—१ भविष्य एवं कलि कथा २ परीक्षित- मोक्ष ३ वेदशाखा  
कथन ४ मार्कण्डेय तपस्या ५ सौरि विभूति कथन ६ पुराण संख्या कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण हेम सिंहासनस्थ करके भाद्री पूर्णिमा को प्रीति-  
पूर्वक ब्राह्मण को वस्त्र एवं स्वर्ण सहित दान करने से भगवद्भक्ति लाभ होता  
है और श्रवण करने से श्रथवा श्रवण कराने से भक्ति और सुक्ति लाभ होता  
है और इस की अनुक्रमणिका श्रवण करने किस्वा कराने से सम्पूर्ण भागवत  
श्रवण फल लभ्य होता है ।

### षष्ठ नारदपुराण ।-

पूर्व एवं उत्तर दो भाग में २५०० सहस्र श्लोक पूर्व भाग चार पाँद में विभक्त ।

पूर्वभाग का प्रथमपाद ।

सूत शौनक सम्वाद—१ सृष्टि संक्षेपवर्णन एवं नाना धर्म कथा ॥ पूर्वभाग  
द्वितीयपाद । १ मोक्ष धर्म कथन मोक्षोपाय निरूपण २ वेदाङ्गकथन ३  
सनन्दन कर्तृ नारद प्रति शुकोत्पत्ति कथन ४ महातन्त्र से पशुपाश विमोचन  
५ मन्त्रशोधन ६ दीक्षा ७ मन्त्रोद्धार पूजाप्रयोग कवच विष्णुसहस्रनाम एवं  
स्तोत्र ८ गणेश सूर्य विष्णु शिव एवं शक्ति का क्रम से उपाख्यान कथन ।

पूर्वभाग तृतीयपाद—१ नारद और सनत्कुमार सम्वाद २ पुराण लक्षण  
प्रमाण एवं दान काल कथन ३ चैत्रादि मास की प्रतिपदादि तिथिव्रत  
विस्तार कथन ।

पूर्वभाग चतुर्थपाद—१ सनातन कर्तृक नारद प्रति बृहदाख्यान कथन ।

उत्तरभाग—१ एकादशी व्रत विषयक प्रश्न २ वशिष्ठ एवं मांधाता का  
सम्वाद ३ स्कन्धाङ्गद की कथा ४ मोहिनी की उत्पत्ति एवं सम्वाद ५ मोहिनी  
प्रतिवसु का श्राप एवं उद्धार ६ गङ्गा की पुण्यकथा ७ गया यात्रा ८ काशी  
माहात्म्य ९ पुरुषोत्तमवर्णन १० क्षेत्रयात्रा एवं अस्थान्य बहुकथा ११ प्रयाग-  
माहात्म्य १२ कुशचेत्रमाहात्म्य १३ हरिहारमाहात्म्य १४ कामोदा आख्यान  
१५ वदरी तीर्थ माहात्म्य १६ कामाख्या माहात्म्य १७ प्रभासमाहात्म्य  
१८ पुराण आख्यान १९ गौतमाख्यान २० वेदपाद स्तव २१ गोकर्णक्षेत्र  
माहात्म्य २२ लक्ष्मण आख्यान २३ सेतुमाहात्म्य २४ नर्मदामाहात्म्य २५ अव-



स्तीमाहात्म्य २६ मथुरामाहात्म्य २७ हुन्दावनमाहात्म्य २८ ब्रह्मा के निकट वसु का गमन २९ सोहिनीचरित्र कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण करने किस्वा श्रवण कराने से ब्रह्मधाम प्राप्ति होती है और अनुक्रमणिका श्रवण करने से किस्वा श्रवण कराने से स्वर्ग लाभ होता है और यह पुराण आश्विनी पूर्णिमा की सप्त धेनु युक्त उत्तम ब्राह्मण को दान करने से मोक्ष प्राप्ति होती है ।

### सप्तम मार्कण्डेयपुराण ।

९००० सहस्र श्लोक ।

१ मार्कण्डेय कर्तृक जैमिनि का पचिर्यो के निकट प्रेरण २ धर्म्य पञ्च सकल का जन्म निरूपण ३ इन की पूर्वजन्म कथा ४ सूर्य क्रिया कथन ५ वसुदेव तीर्थ यात्रा ६ द्वीपदेय कथा ७ हरिश्चन्द्र मुख्यकथा ८ आडीवक नामक युद्ध कथा ९ पिता पुत्र कथा १० दत्तात्रेयकथा ११ वैश्व चरित्र एवं माहात्म्य १२ मदानसा कथा १३ अलर्कचरित्र १४ षष्ठी संकीर्तन १५ नव प्रकार पुण्यकथा १६ कतिपय अन्तकाल निर्देश १७ पञ्चसृष्टि निरूपण १८ रुद्रादि सृष्टि १९ हीप एवं वर्ष कथा २० मनु कथा और अष्टम मन्वन्तर में देवी-माहात्म्य कथा २१ प्रणवीत्पत्ति कथा वेद एवं तेज जन्म २२ मार्कण्डेय जन्म और माहात्म्य २३ वैवस्वत चरित्र सहित वत्समीर चरित्र २४ खनित पुण्य-कथा २५ श्रवचत चरित्र २६ किमिच्छन्नत २७ अविनाश चरित्र २८ इच्छालु चरित्र २९ तुलसाचरित्र ३० रामचन्द्रकथा ३१ क्लृप्त वंश आख्यान ३२ सोम-वंश की कथा ३३ नहुष की अज्ञतकथा ३४ ययाति चरित्र ३५ यदुवंशकीर्तन ३६ श्रीहृण्य बालचरित्र ३७ मथुरा में श्रीहृण्य चरित्र ३८ हारका चरित्र ३९ सकल अवतार-कथा ४० सांख्ययोग उद्देश्य ४१ प्रपञ्च एवं असत्य कीर्तन ४२ मार्कण्डेय चरित्र ४३ पुराण श्रवण फल ।

फलश्रुति—यह पुराण लिखा कर सुवर्ण संयुक्त ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मपद मिलता है एवं भक्तिपूर्वक श्रवण करने से किस्वा श्रवण कराने से मार्कण्डेय तुल्य गति प्राप्ति और वाञ्छित फल लाभ होता है ।

### अष्टम अग्निपुराण ।

१५००० सहस्र श्लोक ईशानकल्प कथा वशिष्ठ नल उपाख्यान ।

१ पुराणपत्र २ सर्वअवतार कथा ३ सृष्टिप्रकरण कथन ४ विष्णुपूजादि

विधि ५ अग्निपूजा मंत्र और सुद्रादि लक्षण ६ दीक्षाविधान ७ अभिषेक कथन ८ मण्डल करण लक्षण ९ कुशमार्जन १० पवित्रारोपण विधि ११ देवा-लयकरण विधि १२ शालग्राम पूजा एवं लक्षण कथन १३ प्रतिष्ठाकरण १४ न्यासादि विधि १५ विनायक दीक्षाविधि १६ अन्यान्यकथन १७ देवप्र-तिष्ठाविधि १८ ब्रह्माण्ड निरूपण १९ गङ्गादि तीर्थ साहाय्य २० ह्रीपवर्णन २१ उर्ध्व एवं अधोलोक रचना २२ ज्योतिषवक्र निरूपण २३ ज्योतिष शास्त्र वर्णन २४ युद्धजयकरण शास्त्र २५ पट्ट कर्म कथा २६ मन्त्रयन्त्र औपध प्रकरण २७ कुलिहाडिकथन २८ कृ प्रकार के व्यास की विधि २९ कोटि होम विधान एवं विस्तार निरूपण ३० ब्रह्मचर्य धर्म ३१ आहकल्पविधि ३२ यज्ञयज्ञ ३३ वेदोक्त एवं मन्त्र्युक्तकर्म ३४ मायक्षिप्त कथन ३५ तिथिघ्नतादि कथन ३६ वारव्रत ३७ नक्षत्रव्रत ३८ मासव्रत ३९ दीपदान विधि ४० नूतन ब्यूहाञ्जन प्रकरण ४१ नरक निरूपण ४२ व्रत एवं दान निरूपण ४३ नाडो चक्रवर्णन ४४ संध्या-विधि ४५ गायत्री अर्थ ४६ शिवलिङ्गस्तोत्र ४७ राजाभिषेक यन्त्र ४८ राज-धर्म एवं राजकार्य ४९ राजा का अध्ययन ५० शकुन्वादि शुभाशुभ दृष्टि नि-रूपण ५१ मण्डलादि निर्देश ५२ रणदीक्षा विधि ५३ श्रीरामोक्तानोति ५४ रत्नलक्षण ५५ धनु विद्या ५६ व्यवहार निरूपण ५७ देवासुर विवर्धन आख्या-न ५८ आयुर्वेद निरूपण ५९ गजादि की रोग चिकित्सा एवं आरोग्य कथन ६० गो अग्नादि की चिकित्सा ६१ नाना पूजा प्रकरण ६२ विविधशान्ति ६३ छन्दःशास्त्र ६४ साहित्यशास्त्र ६५ एकार्णवादि शास्त्र समाख्यान ६६ प्रसिद्ध शिष्टानुशासन ६७ धनागार एवं सृष्ट्यादिवर्ग ६८ प्रलय लक्षण ६९ शरीरक निरूपण ७० नरकवर्णन ७१ योगशास्त्र ७२ ब्रह्मज्ञान ७३ पुराण अथवा साहाय्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर प्रपञ्चायण मास में सुवर्ण कमल स-हित अथवा तिल धेनु सहित पुराण वित्प्राप्त्यर्थ को दान करने से स्वर्गलाभ होता है एवं यह पुराण श्रद्धा करके श्रवण करने किम्बा श्रवण कराने से सकल पाप नश्व होता है । और भक्ति युक्त होकर इस पुराण को श्रुतकस-णिका पाठ करने से सकल पुराण पाठ का फल लभ्य होता है ।

### नवम अविध्यपुराण ।

पञ्चमर्ष १४००० सहस्र श्लोक । अधोरकल्प वृत्तान्त । नाना आश्चर्य कथा । प्रथमपर्व ब्राह्मणपर्व और द्वितीय तृतीय चतुर्थ एवं पञ्चमपर्व एकत्र हैं ।

प्रथमपर्व सूक्त शौनका सखाद—१ पुराण प्रश्न २ नाना आख्यान युक्त सूर्य चरित्र वर्णन ३ सृष्ट्यादि लक्षण ४ पुस्तक लेखक एवं लिखने का लक्षण ५ सवात्र प्रकार संख्यान लक्षण ६ प्रतिपदादि तिथि एवं सप्तकल्प कथन ७ विष्णु विषय अष्टस्यादि शेषकल्प कथा ८ शिव विषय इच्छाधीन भिन्न भिन्न कल्प कथन ९ शैव विषय शेषकथा १० नाना आख्यान युक्त प्रति सृष्टि नाम वर्णन ११ पुराण उपसंहार एवं पञ्चपर्व कथन दस पर्व में धर्म विषय में ब्रह्मा की महिमा का आधिक्य कथन है ।

द्वितीयपर्व—भोग विषय में शिवमाहात्म्य कथन ।

तृतीयपर्व—सोचविषय में विष्णु का माहात्म्य कथन ।

चतुर्थपर्व—चतुर्थगं विषय में सूर्यमाहात्म्य कथन ।

पञ्चमपर्व—सर्व कथा युक्त प्रतिसर्ग वर्णन इस पुराण में अद्वितीय ब्रह्म का गुण तारतम्य रूप भेद से सकल देव की समता वर्णित है ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर पौषी पौर्णिमा की गुड़ धेनुस्नान वस्त्र साख्य सहित पुराण पाठक ब्राह्मण को दान करने से एवं श्रवण किस्वा पाठ करने से सकल घोर पाप से विसुक्ति एवं ब्रह्मपद प्राप्ति होती है और पुराण की अनुकामणिका पाठ किस्वा श्रवण करने से भक्ति सुक्ति मिलती है ।

दशम ब्रह्मवैवर्तपुराण ।

चारखण्ड १८०० सप्तस श्लोक प्रथम ब्रह्मखण्ड द्वितीय प्रकृति खण्ड तृतीय गणेशखण्ड चतुर्थ श्रीकृष्ण जन्म खण्ड ।

सूक्त ऋषिसखाद प्रथम ब्रह्मखण्ड—१ सृष्टिप्रकरण २ नारद और ब्रह्मा विवाद एवं श्यापान्त ३ नारद का शिवलोक गमन एवं गान शिल्पा ४ शिवादेश से सरोचि के सहित नारद का सावर्णि प्रबोधार्थ सिद्धाश्रम में गमन ।

द्वितीय प्रकृतिखण्ड—१ सावर्णि नारद सखाद २ श्रीकृष्ण माहात्म्य युक्त नानाख्यान ३ प्रकृति की अंश और कलाओं का माहात्म्य वर्णन ४ उनका गङ्गादि विस्तार और माहात्म्य वर्णन ।

तृतीय गणेश खण्ड—१ गणेश जन्म प्रश्न २ पुण्यव्रत कथन ३ पार्वती कार्तिक एवं गणेश जन्म ४ कार्तवीर्य चरित्र ५ परशुराम विवरण ६ जमदग्नि एवं गणेश का आसुर्य विवाद ।

चतुर्थ श्रीकृष्णजन्म खण्ड—१ श्रीकृष्णजन्म प्रश्न एवं जन्म कथा २ गोकुल-गमन ३ पूतनादि बध ४ बाल्य कौमार विविध लीला वर्णन ५ शरत्काल में

गोपीसहित रास क्रीड़ा ६ श्रीराधिका सहित निर्जन क्रीड़ा विस्तार वर्णन  
७ अक्षर सहित हरि मयुरा गमन ८ कंस वध ९ हिजसंस्कार १० सांदीपनी  
शुरू निकट विद्योपार्जन ११ कान्तयवनवध १२ द्वारकागमन १३ नरकादि  
वध वर्णन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर माघ मास में धेतु सहित ब्राह्मण की  
दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है एवं अज्ञान बन्धन से मुक्ति होती है  
और पाठ किस्वा श्रवण करने से संसार बंधन छद्य होता है तथा इस पुराण  
की अनुकर्मणिका पाठ करने श्रीकृष्ण की प्रसाद से बांछित फल लाभ होता है ।

### एकादश लिङ्गपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर दो भाग ११००० सहस्र श्लोक । शिवमाहात्म्य प्रकाशक  
अभिनवकथ्य कथा ।

पूर्वभाग—१ पुराणान्त में सृष्टि विषयक संक्षेप प्रश्न २ योगाख्यान ३  
कल्पाख्यान ४ लिङ्गउद्भव एवं पूजा ५ सनत्कुमार और शैलादि का सम्वाद ६  
दक्षीचि चरित्र ७ युग धर्म निरूपण ८ कौपकथन ९ सूर्यवंश एवं सोमवंश  
वर्णन १० सृष्टिवर्णन एवं त्रिपुर आख्यान ११ लिङ्गप्रतिष्ठा कथन १२ पद्मपाश  
विमोक्षण १३ शिवव्रत १४ सदाचार निरूपण १५ प्रायश्चित्त कथन १६  
श्रीशैल वर्णन १७ अन्धक आख्यान १८ वाराह चरित्र १९ नृसिंह चरित्र  
२० जलन्धर वध २१ शिवसहस्रनाम २२ दक्षयज्ञ विनाय २३ कामदेव  
दहन २४ गिरिजा सह शिव विवाह २५ विनायक आख्यान २६ शिवनृत्य  
२७ उपमन्युकथा ।

उत्तरभाग—१ विष्णुमाहात्म्य २ अम्बरोष कथा ३ सनत्कुमार नन्द  
सम्वाद ४ शिवमाहात्म्य ५ स्नान यागादिक वर्णन ६ सूर्य पूजा विधि ७ शिव  
पूजा ८ बहुविध दानादि विधि ९ आहुतप्रकरण १० मूर्ति प्रतिष्ठा प्रकरण ११  
घोरतम कथा १२ ब्रह्मेश्वरी महाविद्या गायत्री महिमा वर्णन १३ त्र्यम्बक-  
माहात्म्य १४ पुराण श्रवण माहात्म्य ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर फाल्गुनी पूर्णिमा की तिल धेतु सहित  
भक्तिपूर्वक ब्राह्मण की दान करने से जरा मरण वर्जित होकर शिव सायुज्य  
प्राप्ति होती है और पुराण पाठ वा श्रवण करने से नाना भोग करके भक्त में  
शिवलोक में गमन होता है और अनुकर्मणिका श्रवण किस्वा पाठ करने से

श्रोता एवं पाठक उभय शिवभक्त होते हैं एवं बहुकाल स्वर्ग भोग करते हैं ।

### द्वादश वराहपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर भाग २४००० सहस्र श्लोक विष्णुमाहात्म्य वर्णन भूमि वराह संवाद मानवकल्प प्रसंग ।

पूर्वभाग—१ आदि क्षत वृत्तान्त रश्मा चरित्र कथन २ दुर्जय प्रतिश्राव कल्प कथा ३ महा तपस्या आख्यान ४ गौरी उत्पत्ति कथन ५ विनायक कथा ६ नागकथा ७ सेनानी एवं आदित्यकथा ८ देवगण कथा ९ कुबेर गण सकल कथा १० वृषकथा ११ सत्यतप कथा १२ व्रत आख्यान १३ अगस्त्यगीता १४ रुद्रगीता १५ मन्दिषासुर बध में ब्रह्मा विष्णु एवं शिव की शक्ति एवं माहात्म्य कथन १६ पर्वीध्याय १७ खेत उपाख्यान १८ गोदान कथा १९ भगवद्भूमि २० व्रत एवं तीर्थ कथा २१ अग्नि अपराध कथा २२ शारीरिक प्रायश्चित २३ सकल तीर्थ महिमा २४ मथुरा माहात्म्य विशेष वर्णन २५ ऋषिपुत्र प्रसङ्गाधीन यमलोक वर्णन २६ कर्म विपाक २७ विष्णु व्रत निरूपण २७ गोकर्ण माहात्म्य ।

उत्तरभाग—पुलस्त्य कुरु राज संवाद सकल तीर्थ माहात्म्य पृथक् पृथक् विस्तारित रूप वर्णन २ अशेष धर्माख्यान ३ पौष्कर पुण्य कथा ।

फलश्रुति—यह पुस्तक लिखकर चेत्री पूर्णिमा को काञ्चन गरुड़ एवं तिल धेनु समन्वित भक्ति पूर्वक ब्राह्मण को दान करने से वैष्णव धाम प्राप्ति एवं देवता और ऋषि गण द्वारा बन्धित होता है और पुराण पाठ करने किस्वा अवगण करने से भगवान की भक्ति होती है । और अनुक्रमणिका पाठ किस्वा अवगण करने से संसार नाशिनी विष्णुभक्ति लभ्य होती है ।

### तयोद्गम स्कन्दपुराण ।

सप्तखण्ड ८१००० सहस्र श्लोक—१ महाेश्वरखण्ड २ वैष्णवखण्ड ३ ब्रह्मखण्ड ४ काशीखण्ड ५ अवन्तोखण्ड ६ नागरखण्ड ७ प्रभासखण्ड । इस पुराण में कार्तिकेय ने महाेश्वर धर्म काड़ा है ।

### प्रथम महाेश्वरखण्ड ।

प्राय १२००० सहस्र श्लोक—१ कीदारमाहात्म्य २ दत्त यज्ञ कथा ३ शिव लिंग अर्चन फल ४ समुद्रमन्थन ५ देवेन्द्र चरित्र ६ पार्वती उपाख्यान एवं विवाह ७ कार्तिकेय उत्पत्ति ८ तारकासुर युद्ध ९ पाशुपतशाख्यान १० चण्डा-

ख्यान ११ दूत प्रव्रत्तन १२ नारद समागम १३ कुमार माहात्म्य १४ पञ्च तीर्थ कथा १५ धर्म नृपाख्यान १६ नदी एवं सागर कीर्तन १७ इन्द्रद्युम्न कथा १८ नाङ्गी लङ्ग कथा १९ पृथिवी प्रादुर्भाव २० दमनक कथा २१ सही सागर संयोग २२ कुमार कथा २३ नाना आख्यान युक्त तारक युद्ध २४ तारक वध २५ पञ्च निङ्ग निवेश २६ द्वीपाख्यान २७ ऊर्ध्वलोक स्थिति २८ ब्रह्मांड स्थिति एवं परिमाण २९ वक्रोद्य कथा ३० महाकाल समुद्रव एवं अद्भुत कथा ३१ वासुदेव माहात्म्य ३२ करितीर्थ वर्णन ३३ नाना तीर्थ कथा ३४ गुप्तचेष्ट कथा ३५ पाण्डुपुत्रों की पुण्य कथा ३६ महाविद्या प्रसाधन ३७ तीर्थ यात्रा समाप्ति ३८ अरुणाचल माहात्म्य ३९ सनक एवं ब्रह्मा की कथा ४० गौरी तपस्या एवं तीर्थ निरूपण ४१ महिषासुर के पुत्र का आख्यान एवं उस का अद्भुत वध ४२ शोनांचल में भगवती का नित्य अवस्थान कथन !

द्वितीय वैष्णवखण्ड—१ भूमि बराह आख्यान रोचक ऋषमहात्म्य २ कामला कथा ३ श्री निवास स्थिति ४ कुलाल आख्यान ५ सुवर्ण सुख कथा ६ नाना श्वरान युक्त भारद्वाज कथा ७ सतह्नाञ्जन सम्वाद ८ उल्लाल में पुरुषोत्तम माहात्म्य ९ मार्कण्डेय कथा १० अश्वरीप कथा ११ इन्द्रद्युम्न आख्यान १२ विद्युन्वति कथा १३ जैमिनि कथा १४ नारद कथा १५ नीलकण्ठ आख्यान १६ नृसिंह वर्णन १७ राजा की अश्वमेध कथा एवं ब्रह्मलोक गति १८ रथयात्रा विधि एवं जन्म और ज्ञान यात्रा विधि १९ दक्षिणा मूर्ति आख्यान २० गुण्डिका आख्यान २१ रथ रक्षा विधान २२ शयनोत्सव वर्णन २३ संचीक श्वेतोपाख्यान २४ शक्रोत्सव २५ दीलोत्सव २६ भगवान का सावत्सरिकव्रत कथन २७ विष्णु पूजा २८ सोचसाधन मन्त्रोक्त नाना योग निरूपण २९ दश्रावतार कथा ३० ज्ञानादि कीर्तन ३१ बदरिका माहात्म्य ३२ वैतथ्य शिक्षा ज्ञात अग्न्यादि तीर्थ माहात्म्य ३३ भगवान की वास का कारण कपाल मोचन तीर्थ कथा ३४ पञ्चधारा तीर्थ कथा ३५ मेरु संस्थापन ३६ कार्तिक माहात्म्य में सदाशिव माहात्म्य ३७ धूम्र कोप आख्यान ३८ कार्तिक मास का दिन काल ३९ भीष्मपञ्चक व्रत आख्यान ४० तीर्थ माहात्म्य प्रसङ्ग से ज्ञान विधान ४१ पुत्रादि कीर्तन एवं मालाधार कथा और पञ्चासूते ज्ञान एवं घण्टा वादनादि फल ४२ नाना पुण्य द्वारा अर्चन फल ४३ तुलसीदल से अर्चन फल ४४ नैवेद्य माहात्म्य ४५ इतिहास वर्णन ४६ एकादशी एवं जागरण माहात्म्य ४७ मत्स्योत्सव विधान ४८ नाम माहात्म्य ४९ ध्यानादिखण्ड

कथा ५० मथुरा तीर्थ माहात्म्य ५१ द्वादश वन माहात्म्य ५२ श्रीमद्भागवत  
माहात्म्य ५३ वज्र शाण्डिल्य सत्याद ५४ अन्तर्लोक कथन और श्रीनाथ की-  
शवदेवादि विग्रह स्थापन ५५ साधे में ज्ञान दान जप माहात्म्य और नाना-  
ख्यान ५६ वैशाख माहात्म्य ५७ श्या दान फल ५८ जल दान फल ५९  
कामाख्या वर्णन ६० श्रुतदेवचरित्र ६१ व्याध उपाख्यान ६२ अक्षय तृतीयादि  
विशेष मुख्य कीर्तन ६३ अयोध्या माहात्म्य चक्र ब्रह्मतीर्थ प्रसङ्ग ऋण प्रति  
विमोक्ष कथा आधार सङ्ग्रह एवं स्वर्गद्वार चंद्रहरि और धर्महरि वर्णन ६४  
स्वर्ण वृष्टि आख्यान ६५ तिलद्वार सङ्घित सरयू मिलन कथा ६६ सीताकुंड  
कथा ६७ गुप्त हरि कथा ६८ सरयू और घर्षरा आख्यान ६९ गोप्रभाव ७०  
दुग्धोद कथा ७१ गुप्त कुण्डादि पञ्चतीर्थ कथा ७२ घौषाकार्कादि त्रयोदश तीर्थ  
वर्णन ७३ गयाकूप माहात्म्य ७४ साण्डव्य आश्रम और पूर्व तीर्थ वर्णन ७५  
अजितादि मानसादि असंख्य तीर्थ वर्णन ।

तृतीय ब्रह्मखण्ड—१ सेतुमाहात्म्य प्रसङ्ग से ज्ञान एवं दर्शन जन्य फल  
कथन २ गालव तपस्या ३ राक्षसाख्यान ४ चक्र तीर्थ माहात्म्य ५ देवीपतन  
कथा ६ वेताल तीर्थ माहात्म्य ७ पाप नाश्यादि तीर्थकथन ८ मङ्गलादि  
तीर्थ माहात्म्य ९ ब्रह्मकुण्ड वर्णन १० हनुमत् कुण्ड महिमा ११ अगस्त्य  
तीर्थ फल १२ राम तीर्थ कथन १३ लक्ष्मी तीर्थ निरूपण १४ शंखादि तीर्थ  
महिमा १५ साध्यत् तीर्थ महिमा १६ धनुष्योद्यादि तीर्थ महिमा १७  
श्रीकुण्डादि माहात्म्य १८ गायत्र्यादि तीर्थ साहात्म्य १९ रामनाथ महिमा  
एवं तत्वज्ञानोपदेश २० सेतु यात्राभिधान २१ धर्मारण्य माहात्म्य एवं तत्-  
स्थान सन्धूति और मुख्य कथा २२ कर्मसिद्धि आख्यान २३ ऋषिवंश २४  
अम्बरातीर्थ माहात्म्य २५ वर्ण एवं आश्रम धर्म और तत्व निरूपण २६ देव-  
स्थान विभाग २७ बकुलार्क कथा २८ कुत्रा नन्दा शान्ता श्रीमाता एवं मत-  
ङ्गिनी देवी की अवस्थिति २९ इन्द्रेश्वरादि माहात्म्य ३० द्वारकादि निरूपण  
३१ लोहासुर आख्यान ३२ गङ्गाकूप निरूपण ३३ श्रीरामचरित्र ३४ सत्य  
मन्दिर वर्णन ३५ जीर्ण मन्दिरादि उद्धार कथा ३६ शासन प्रतिपादन ३७  
जातिभेद कथन ३८ स्मृतिधर्म निरूपण ३९ नानाख्यान से वैष्णवधर्म नि-  
रूपण ४० चातुर्मास्य सकल धर्म निरूपण ४१ दान व्रत महिमा ४२ तपस्या  
पूजा एवं सञ्चल कथन ४३ प्रकृति आख्यान ४४ शालग्राम निरूपण ४५  
तारकासुर बध उपाय ४६ लक्ष्मी अर्चन एवं महिमा ४७ विष्णु की शाप से

इच्छल प्राप्ति एवं पार्वती का अनुनय ४८ सद्गादेव का ताण्डव नृत्य राम नाम निरूपण ४९ हरलिङ्ग पतन ५० जवन कथा ५१ पार्वती जन्म और चरित ५२ तारकवध ५३ मणव ऐश्वर्य कथन ५४ तारक चरित्र ५५ दक्ष यज्ञ समाप्ति ५६ द्वादश अक्षर निरूपण ५७ ज्ञान योग आख्यान ५८ द्वादश आदित्य सङ्घिमा ५९ आवणादि पुण्य कथा ।

तृतीय ब्रह्मखण्ड उत्तरभाग—१ शिव का अद्भुत माहात्म्य २ पञ्चाक्ष सङ्घिमा ३ गोकर्ण सङ्घिमा ४ शिवरात्रि सङ्घिमा ५ प्रदोष व्रत कीर्तन ६ सीमवार व्रत ७ सीमन्तनी कथा ८ भद्रायु उत्पत्ति कथन ९ सदाचार १० शिव धर्म कथा ११ भद्रायु विवाह एवं सङ्घिमा १२ भद्र माहात्म्य १३ शवरास्त्रा न १४ उमा माहेश्वर व्रत १५ रुद्राक्ष माहात्म्य १६ रुद्राध्याय माहात्म्य थव णादि पुण्य कथन ।

चतुर्थे काशीखंड । विन्ध्यनारद सभाद—१ सत्यलोक प्रभाव २ अगस्त्या-ग्रम में देवता सत्त्व का आगमन ३ पतिव्रता चरित्र ४ तीर्थयात्रा प्रशंसा ५ सप्तपुरी आख्यान ६ यमपुरी निरूपण ७ शिवशर्मा की ध्रुवलोक इन्द्रलोक अग्निलोक प्राप्ति ८ अग्नि उद्भव ९ क्रव्याद वरुण सन्धय १० गन्धर्वती अन्नका-पुरी एवं ईश्वरी का उद्भव और चंद्र मङ्गल बुध एवं रवि आदि लोक का उद्भव ११ सप्तऋषि एवं ध्रुवलोक का वर्णन १२ ध्रुवलोक की पुण्यकथा १३ मत्स्यलोक निरूपण १४ स्कन्ध और अगस्त्य का आलाप १५ सणिकर्णिका का उद्भव १६ गङ्गा का प्रभाव एवं सहस्रनाम १७ वारानसी प्रशंसा १८ भैरव आविर्भाव १९ दण्डपाणि एवं ज्ञानरवि का उद्भव २० कलावती आख्यान २१ सदाचार निरूपण २२ ब्रह्मचारि कथा २३ स्त्रीलक्षण कथन २४ काला-लव्य निर्देश २५ अविमुक्तेश्वर वर्णन २६ शृङ्खल एवं योगि धर्म २७ काननज्ञान २८ दिवोदास कथा २९ काशीवर्णन ३० योगि चर्या लोलाकुं ३१ शास्वार्क कथा ३२ खुपदाक एवं तार्क तीर्थ कथा ३३ अरुणाक का उदय ३४ दशांश-सेध आख्यान ३५ मन्दराचल से गणपति की माया प्रकाश ३६ पित्राच द्यो-चन आख्यान ३७ गणेश प्रेषण ३८ गणपति ज्ञा आगमन और माया प्रकाश ३९ पृथिवी से माया का प्रादुर्भाव ४० विष्णुमाया का विस्तार ४१ दिवो-दास विमोचन ४२ पञ्च नदीत्यत्ति ४३ विन्दुमाधव सन्धव ४४ वैष्णव तीर्थ आख्यान ४५ महादेव का काशी में आगमन ४६ जैगायव्य की संहित मङ्गेश का आख्यान ४७ शिवलेख आख्यान ४८ बान्दुकीश्वर एवं व्याघ्रेश्वर का उद्भव



४६ शैलेश्वर एवं कृत्तिवास का उद्भव ५० देवता सकल का अधिष्टान ५१ दुर्गासुर का पराक्रम ५२ दुर्गाविजय ५३ जकारेश्वर वर्णन ५४ ऊर्ध्वारु महात्म्य ५५ त्रिलोचन समुद्भव ५६ कीदार आख्यान ५७ धर्मेश्वर कथा ५८ वीरेश्वर आख्यान ५९ गङ्गा महात्म्य कीर्तन ६० विश्वकर्माेश्वर महिमा ६१ दक्ष यज्ञोद्भव ६२ सतीश्वर एवं अमृतेश्वर उपाख्यान ६३ पराशर भुजस्तम्भ ६४ जैलतीर्थ समूह वर्णन ६५ मुक्ति मण्डप कथा ६६ विश्वेश्वर विभव ६७ यात्रा परिक्रम ।

पञ्चम अवन्तीश्वर—१ मङ्गलाक्षय वचन का आख्यान २ मङ्गशीर्षच्छेद ३ प्रायश्चित्त विधि ४ अग्नि उत्पत्ति एवं आगमन ५ देवदक्ष ६ नाना पाप नाशन शिवस्तोत्र ७ कपाल सीचन आख्यान एवं महाकाल वन स्थिति ८ कर्णखलेश तीर्थ आख्यान ९ अप्सराकुण्ड कथा १० स्वर्ग में रुद्रकुंड उपाख्यान ११ क्लृप्तुवेष एवं सर्कटेश्वर तीर्थ वर्णन १२ स्वर्गद्वार चतुःसिंधु शंकरांक गन्धवती एवं दशाश्वमेध कालांश तीर्थ वर्णन १३ पिशाचकादि यात्रा १४ हनुमान एवं यमेश्वर वर्णन १५ महाकालेश्वर यात्रा १६ वाल्मीकेश्वर तीर्थ १७ भेषजाश्वर शक्र तीर्थ क्षुद्रस्थली प्रदक्षिण १८ अन्नूर मन्दाकिनी कपाल चन्द्राकं वैभव कारभेश लड्डुकेशादि तीर्थ वर्णन १९ मार्कण्डेश्वर २० यज्ञवापी २१ सोमेश २२ नरकान्तक २३ कीदारेश्वर २४ रामेश्वर २५ सीमान्देश्वर २६ नरार्क २७ केशार्क २८ शक्तिभेद २९ स्वर्णाक्षर सुख ३० षोडशेश्वरादि तीर्थ वर्णन ३१ अन्यका स्तुति कीर्तन ३२ कालारण्यलिङ्गसंख्या ३३ स्वर्णशृङ्ग ३४ क्षुद्रस्थली ३५ अवन्तेश्वर ३६ उज्जयिनी ३७ पद्मावती ३८ कूर्महती ३९ रमावती नामक तीर्थ उपाख्यान ४० विशाला एवं प्रतिकल्प ४१ ज्वरशान्तिक तीर्थ कथन ४२ शिवाज्ञानादि फल ४३ नाग क्षत शिव स्तुति ४४ हिरण्णाक्ष त्रिआख्यान ४५ सुन्दर कुंड ४६ नीलगङ्गा ४७ पुष्कर ४८ विश्ववासनी ४९ पुष्पोत्तम ५० अविनास ५१ अघनाशन ५२ गोमती ५३ वासन एवं कुंडतीर्थ वर्णन ५४ विष्णुसहस्रनाम ५५ कालभैरव तीर्थ वीरेश्वर सरोवर आख्यान ५६ नागपञ्चमी में नृसिंह महिमा वर्णन ५७ जयन्तिका कुठारेश्वर यात्रा ५८ देवसाधका और ५९ कर्कराज ६० विघ्नेशादि सुरोक्षण तीर्थ विवरण ६१ रुद्रकुंडादि बहु तीर्थ निरूपण ६२ अष्टतीर्थ निरूपण ६३ रिवामाहात्म्य ६४ धर्मपुत्र का वैराग्य व्रतः मार्कण्डेय संगम ६५ प्रागलय उपाख्यान ६६ असृता कीर्तन ६७ प्रतिकल्प में नर्मदा वर्णन ६८ आर्यस्तव ६९ नर्मदास्तव ७०

कालरात्रि कथा ७१ महादेव स्तुति ७२ पृथक् २ कल्प की अद्भुत कथा  
 ७३ विश्वशास्त्रान ७४ जालेश्वर कथा ७५ गौरीनत ७६ विपुर दहन कथा  
 ७७ देहपात विधान ७८ कावेरी संगम ७९ दासुतीर्थ ब्रह्माभिन्न ईश्वर कथा  
 ८० अग्नि ८१ रवि ८२ मेघनाद ८३ हिदारुका ८४ देव ८५ नर्मदेश्वर ८६ क-  
 पिताश्वर ८७ करञ्जक ८८ कुंडलेश्वर ८९ पिप्लनाद और ९० विमलेश्वरादि  
 तीर्थ कथन ९१ शचीहरण आख्यान ९२ मन्दक कथ ९३ शूलसेद उद्भव ९४  
 पृथक् दान धर्म कथन ९५ दीर्घ तापस आख्यान ९६ ऋष्यशृङ्ग कथा ९७  
 चित्रसेन कथा ९८ काशीराज भोजन ९९ देवशिखा आख्यान १०० श्वरी  
 चरित्र १०१ व्याधाख्यान १०२ पुष्करिण्यर्क १०३ तापितेश्वर १०४ श्रद्ध १०५  
 करोटीक १०६ कुमारेश १०७ अगस्त्येश १०८ साहज १०९ खोजेश ११०  
 घनदेश १११ मङ्गलेश ११२ कामज ११३ नागेश ११४ गोपार ११५ गौतम  
 ११६ शंख चूड़ज ११७ नारदेश ११८ मन्दिक्वेश ११९ वरुणेश्वर १२० दधिस्र-  
 न्य १२१ हनुमन्तेश्वर १२२ रामेश्वर १२३ सोमेश १२४ पिङ्गलेश्वर १२५ ऋ-  
 णमोच १२६ कपिलेश्वर १२७ प्रतिकेश्वर १२८ जलेश्वर १२९ चंडार्क १३०  
 यम १३१ कलहड्येश १३२ नादिक १३३ नारायण १३४ फोटोश्वर १३५  
 व्यास १३६ प्रभासिका १३७ नागेश्वर १३८ संकर्षण १३९ मन्मथेश्वर १४०  
 एरंडी संगम १४१ सुवर्णशील १४२ कारञ्ज १४३ कामज १४४ भांडीर १४५  
 वाह्निभव १४६ चक्र १४७ घीतपाप १४८ स्कान्द १४९ आंगिरस १५०  
 कोटि १५१ अयोनि १५२ अंगार १५३ त्रिकोचन १५४ इन्द्रेण १५५ जम्बुकेश  
 १५६ सोमेश १५७ कोहनाशक १५८ नार्मद १५९ आर्क १६० आग्नेय १६१  
 भार्गवेश्वर १६२ ब्राह्म १६३ देव १६४ भागेश १६५ आदिवाराह १६६ रामेश  
 १६७ सिद्धेश १६८ आह्वय १६९ कङ्कटेश्वर १७० ब्राह्म १७१ सौम्य १७२ ना-  
 न्देश १७३ तापेश १७४ कृष्णणी भव १७५ खोजनेश १७६ वराहेश १७७  
 हृद्देशीतीर्थ १७८ शिव १७९ सिद्धेश १८० मङ्गलेश्वर १८१ सिद्ध वराह  
 १८२ कुंडेश १८३ श्वेतवाराह १८४ भार्गवेश १८५ रवीश्वर १८६ श्रुतादि  
 १८७ हुङ्कारस्वामि १८८ संगमेश १८९ नरकेश १९० मोच १९१ सार्प १९२  
 गोपक १९३ नाग १९४ शर्व १९५ सिद्धेश १९६ मार्कंड १९७ अन्नर १९८  
 कामोद १९९ शूलारोप २०० मांडव्य २०१ गोपकेश्वर २०२ कपिलेश २०३  
 पिङ्गलेश २०४ भूतेश २०५ गांग २०६ गौतम २०७ आश्वमेध २०८ सुदुकाच्छ  
 २०९ कीदारेश्वर २१० कण्ठलेश २११ जालेश्वर २१२ शाखग्राम २१३

वराह २१४. चन्द्रप्रभास २१५ आदित्य २१६ श्रीपति २१७ हंमक २१८  
 मूल खान २१९ शूलेश २२० आग्नेय एवं चित्तदैवक २२१ शिखीश्वर ३०२  
 कीटि २२३ दशकन्य २२४ सुवर्णक २२५ ऋणमोक्ष २२६ भारभूति २२७ पुंङ्ग  
 २२८ सुखिडम २२९ ग्रामलेश्वर २३० कपालेश्वर २३१ शृङ्गेरगडोभव २३२  
 कीटी २३३ लीटनेश्वर तीर्थ विवरण २३४ फलश्रुति कथन २३५ दमि जङ्गल  
 भाङ्गात्म्य रोहिताश्व कथा २३६ धुन्सुमार उपाख्यान २३७ धुन्सुमार वधोपाय  
 २३८ धुन्सुमार वध कथन २३९ चित्रवङ्ग उद्भव एवं २४० महिमा कथन २४१  
 चंडीश प्रभाव २४२ रतीश्वर वर्णन श्रीर कीदारेश्वर वर्णन २४३ लक्ष तीर्थ  
 कथन २४४ विष्णु पदी उद्भव २४५ सुम्भार २४६ च्यवान् २४७ ब्रह्मा सरोवर  
 २४८ चक्र २४९ ललिता २५० बडु गोमख २५१ कद्रावर्त्त २५२ मार्कंड-२५३  
 रावणेश्वर २५४ शुद्धपट २५५ देवान्यु २५६ प्रेत २५७ जिहोद २५८ सन्नूति  
 श्रीर १५९ शिवोद भेद तीर्थ वर्णन २६० फलश्रुति ।

षष्टनागरखंड—१ लिंगोत्पत्ति आख्यान २ हरिश्चन्द्र कथा ३ विश्वामित्र  
 भाङ्गात्म्य ४ त्रिशंकु स्वर्ग गति ५ चाटकेश्वर भाङ्गात्म्य ६ हत्तासुर वध ७  
 नागविल्व श्रीर ८ शंख तीर्थ कथा ९ अचलेश्वर वर्णन १० चमत्कार पुराख्यान-  
 न ११ गयश्रीर्ष १२ बालसफर १३ बालमंड १४ ऋगाह्वय १५ विष्णुपाद १६  
 गोकर्ण १७ युगरूप १८ समाश्रय १९ सिद्धेश्वर २० नाग सरोवर २१ सप्तार्षय  
 २२ अगस्त्य २३ भ्रमणगर्तनेश २४ भैष्म श्री इन्दुवैर श्रीर अर्क २५ सार्मिष्ट २६  
 शोभनार्थ श्री २७ दौर्गर्भमान अर्जकेश्वर तीर्थ वर्णन २८ जमदग्नि उपाख्यान  
 २९ नैः चित्रिय कथा ३० राम ऋद ३१ नागपुर ३२ षड्लिङ्ग ३३ यज्ञभू ३४  
 मुंडिरादि ३५ त्रिकार्क ३६ सती परियामेश ३७ यागेश बालिश्विल्य श्रीर  
 ३८ गाडुर तीर्थ कथन ३९ लक्ष्मी सप्तविंशति शापकथन ४० सीमप्रसाद कथन  
 ४१ अम्बा हृद ४२ पादुकाश्वर ४३ आग्नेय ४४ ब्रह्मकुंड ४५ गोमुख ४६  
 लीहपट्टाश्वरा ४७ आजवालेश्वरी ४८ शालेश्वरी ४९ राजवापी ५० रामेश्वर  
 ५१ लक्ष्मणेश्वर ५२ कुशेश्वर श्री ५३ लवेश्वर तीर्थ वर्णन ५४ लिङ्ग उपाख्यान  
 ५५ अष्टपट्टि समाख्यान ५६ दसन्ती एवं विजातक उपाख्यान ५७ रीवती ५८  
 भट्टिका तीर्थ ५९ जेमङ्गरी ६० कीदार ६१ शुक्ल ६२ सुखारक श्री ६३ सत्य-  
 सत्येश्वर तीर्थ आख्यान ६४ कर्णोत्पत्ता नदी कथा ६५ अटेश्वर ६६ याज्ञवल्क्य  
 ६७ गौरी श्रीर ६८ गणेश तीर्थ कथा ६९ वास्तुपदा आख्यान ७० अजा अह  
 कथा ७१ सौभाग्यादि कथा ७२ शूलेश्वर कथा ७३ धर्मराज कथा ७४ मिष्टा-

सू.देखर आख्यान ७५ गाणपत्य त्रय कथा ७६ नावान्ति चरित्र ७७ मकर-  
 श्वर कथा ७८ कालेश्वरी एवं ७९ अन्वकीपाख्यान ८० अम्बराकुंड उपा-  
 ख्यान ८१ पुष्यादित्य उपाख्यान ८२ रोहिताश्व उपाख्यान ८३ नागरीतृप-  
 त्ति कीर्तन ८४ भागवचरित्र ८५ विश्वामित्र चरित्र ८६ सारस्वत चरित्र ८७  
 पैप्यलाद ८८ कंसारीश एवं ८९ पौण्ड तीर्थ वर्णन ९० सावित्राख्यान संहित  
 ब्रह्मा यज्ञ चरित्र एवं रैवत भर्तृ यज्ञाख्यान कथा ९१ सुख तीर्थ निरीक्षण ९२  
 कौरवं क्षेत्र ०३ हाटकेश क्षेत्र ९४ एवं प्रभास क्षेत्र उपाख्यान ९५ पौष्कर  
 क्षेत्र ९६ नैमिष क्षेत्र एवं ९७ घर्म अरख क्षेत्र ९८ वारानसी ९९ द्वारका  
 एवं १०० अचन्ती पुरी कथन १०१ इन्द्रावन १०२ खाण्डवारख एवं १०३  
 अहोताख्य पुरी कथन १०४ कल्प १०५ शालग्राम एवं १०६ नन्दग्राम का  
 उपाख्यान १०७ असि १०८ शुक्ल एवं १०९ पिष्टसंज्ञ तीन तीर्थ का वर्णन ११०  
 अग्रदुद १११ रैवत एवं ११२ श्रैव इन तीन पर्वती का उपाख्यान ११३ गंगा  
 ११४ नर्मदा एवं ११५ सरस्वती इन तीन नदियों का उपाख्यान ११६ कुपि-  
 का श्री शङ्ख ११७ अमरक एवं बालमखडन इन चार तीर्थ का हाटकेश्वर तीर्थ  
 क्षेत्र के समान फल कथन ११८ साम्वादित्य ११९ आहकल्प १२० युधिष्ठिर  
 १२१ आन्धक १२२ जलशायि १२३ चातुर्मास्य एवं १२४ अशून्य शयन व्रत  
 कथन १२५ मङ्गलेश १२६ शिवरात्रि १२७ तुला पुरुष दान १२८ पृथ्वी दान  
 कथन १२९ बालकेश्वर १३० कपाल सोचनेश्वर १३१ पाप पीड १३२ सप्तलिंग  
 वर्णन १३३ युगपरिमाणादि कथन १३४ निवेशशाक १३५ भार्याश्राया क-  
 थ १३६ एकादश रुद्र कथन १३७ दान माहात्म्य १३८ द्वादश आदित्य  
 उपाख्यान ।

सप्तम प्रभास खण्ड—१ सोमेश वर्णन २ विश्वेश वर्णन ३ अर्कस्थल वर्णन  
 ४ सिद्धेश्वरादि का पृथक उपाख्यान ५ अग्नितीर्थ ६ कपर्दीश तीर्थ वर्णन ७  
 भीम ८ भैरव ९ चण्डीश १० भास्कर ११ अंगारकेश्वर १२ वृष इहस्यति म-  
 ङ्गल चन्द्र शनि १३ राहु कर्तु एवं १४ शिव स्वरूप मूर्ति वर्णन १५ सिद्धेश्व-  
 रादि पञ्चरुद्र अवस्थिति वर्णन १६ घरारोहा १७ अजापाला १८ मङ्गला १९  
 ललिता एवं ईश्वरी २० लक्ष्मीश २१ वाहवेश २२ अर्घीश २३ कामेश्वर  
 २४ गौरीश्वर २५ वरुणेश्वर २६ उशीष २७ गणेश्वर २८ कुमारेश २९  
 शाकल्य ३० शकल एवं उत्तक ३१ गीतम ३२ दैत्यघ्नेश और ३३ चक्रतीर्थ सं-  
 निहितार्थ कथन ३४ भूतेशादि सिद्ध कथन ३५ आदि नारायण कथन ३६

चक्र राश्वरान ३७ मास्वादित्य कथा ३८ कण्टक शोधिनी कथा ३९ सहिषणी  
 कथा ४० कपालेश्वर कथा ४१ कीटोशकथा ४२ बान्धवज्ञ कथा ४३ नरकीश  
 ४४ सखतीश ४५ एवं निधीश्वर कथा ४६ वनभद्र कथा ४७ गङ्गा कथा एवं ग-  
 षेश कथा ४८ जास्वती कथा ४९ पाण्डुकूप सखी कथा ५० शतमेध लक्ष्मेध  
 एवं कीटिमेध कथा ५१ दुर्वाकार्क ५२ यदुस्थान एवं ५३ हिरण्यारंगम कथा  
 ५४ नगरार्क ५५ श्रीलक्ष्म ५६ संकर्षण एवं समुद्रकथा ५७ कुमारी चित्र पान्न  
 एवं ५८ ब्रह्मेश की पृथ्व कथा ५९ पिङ्गला ६० संगमेश्वर ६१ शंकारार्क एवं  
 ६२ घटेश की कथा ६३ ऋषितीर्थ ६४ नन्दार्क तीर्थ ६५ क्षितयकूप कीर्तन  
 ६६ शशपाल ६७ पर्णार्क और ६८ अंगुमती की अङ्गुत कथा ६९ वाराह ७०  
 स्वामि हस्तान्त ७१ छाया निङ्गास्त्र एवं ७२ गुल्फ कथा कानकानन्द ७४ कु-  
 न्ती एवं ७५ गंगेश कथा ७६ चममोद्भेद ७७ विदुर एवं ७८ त्रिकोकेश कथा  
 ७९ सञ्जनेश ८० त्रैपुरेश और ८१ पण्ड तीर्थ कथा ८२ सूर्यार्क प्राची ८३ चा-  
 चण एवं ८४ उमानाथ कथा ८५ भृङ्गार ८६ मूनाखल एवं ८७ अवनकोश  
 कथा ८८ अजपालेश ८९ वानार्क एवं ९० कुबेरखल कथा ९१ ऋषितीर्षा  
 कथा ९२ संगमेश्वर कीर्तन ९३ नारदादित्य कथन ९४ नारायण निरूपण  
 ९५ तमकुंड साहाय्य ९६ मूनाचण्डोश वर्णन ९७ चतुर्वक्त्र गणाध्यक्ष एवं ९८  
 कान्तेश्वर कथा ९९ गोपाल स्वामि १०० वङ्गल स्वामि एवं १०१ सावती  
 कथा १०२ जैमार्क १०३ उन्नत १०४ विघ्नेश एवं १०५ जल स्वामि कथा १०६  
 कान्तमेध १०७ कविमयो १०८ उर्व्वेश्वर एवं १०९ भद्रा कथा ११० शङ्खावर्त  
 १११ इक्षुतीर्थ ११२ गोप्यद एवं अच्युत गृह कथा ११३ जालेश्वर ११४ हुङ्गार  
 कूप एवं ११५ चण्डोश कथा ११६ आश्रापुर विघ्नेश एवं ११७ कानाङ्गुल कथा  
 ११८ कपिलेश्वर कथा ११९ नरहव शिव कथा १२० नल १२१ कर्कट और  
 १२२ हाटकेश्वर कथा १२३ नारदेश १२४ यन्त्रभूषा एवं दुर्गकूट एवं गणेश  
 कथा १२५ सुपर्णनाम्न १२६ भैरवी एवं १२७ भक्ततीर्थ कथा १२८ कर्दमान  
 कीर्तन १२९ युग सोमेश्वर कीर्तन १३० बह्नु स्वर्णेश १३१ शृङ्गेश एवं १३२  
 कीटोश्वर कथा १३३ मार्कार्केश्वर १३४ कीटोश्वर एवं १३५ दामोदर गृह  
 कथा १३६ स्वर्णरेखा १३७ ब्रह्मकुण्ड १३८ कुम्भीश्वर १३९ भीमेश्वर १४० ब्र-  
 ह्मायर्थ चेत शृगाङ्गुल एवं १४१ चर्वस्त्र कथा १४२ विघ्नेश १४३ गंगेश एवं  
 १४४ रैवत कथा १४५ अर्बुदेश्वर कथा १४६ अचलेश्वर कथा १४७ नागतीर्थ  
 कथा १४८ वशिष्ठाश्रम वर्ण १८९ भद्रार्क साहाय्य १९० त्रिनैत साहाय्य

१५१ किदारमाहात्म्य १५२ तीर्थागमन कीर्तन १५३ कोटीश्वर १५४ रूपतीर्थ एवं १५५ हृद्योक्तेषु कथा १५६ सिद्धेश १५७ शुक्लेश्वर एवं १५८ मणिकर्षिकेश कीर्तन १५९ पंगु १६० यमएवं १६१ वाराह तीर्थ वर्णन १६२ चन्द्रप्रभास १६३ पिण्डोद १६४ श्रीमाता १६५ शुक्र १६६ एवंकात्यायनी तीर्थ साहात्म्य १६७ पिंडारक माहात्म्य १६८ कनखल १६९ चक्र एवं १७० मानुपतीर्थ साहात्म्य १७१ कपिलान्नि और १७२ रत्नानुदन्ध तीर्थ कथा १७३ गणेश १७४ पार्थेश्वरयात्रा १७५ सुहृन्यात्रा कथन १७६ चण्डीस्थान १७७ नागोद्भव शिव कुण्ड एवं १७८ सङ्गेश कथा १७९ कामेश्वर एवं १८० मार्कण्डेय उत्पत्तिकथा १८१ उद्दानकेश एवं १८२ सिद्धेश गत तीर्थ कथा १८३ श्री देवमाता उत्पत्ति १८४ व्यास एवं १८५ गौतम तीर्थ कथा १८६ कुल सान्ता साहात्म्य १८७ राम एवं कोटि तीर्थ कथा १८८ चन्द्रोद्भव १८९ ईशानशृङ्ग १९० ब्रह्मस्थानोद्भव १९१ त्रिपुष्कर १९२ बद्ध हृद् एवं १९३ गुह्येश्वर कथा १९४ अविमुक्त साहात्म्य १९५ उमा साहेश्वर साहात्म्य १९६ मञ्जुत्रय प्रभास १९७ जम्बु तीर्थ वर्णन १९८ गङ्गाधर एवं मिय कथा १९९ फलश्रुति २०० इभ्रका साहात्म्य प्रसंग चन्द्र शर्म कथा २०१ एकादशी जागरणादि त्रत २०२ मङ्गा द्वादशी कथा २०३ प्रह्लादाद एवं ऋषि ससामस २०४ दुर्वासा उपाख्यान २०५ याचा उपक्रम कीर्तन २०६ गोमती उत्पत्ति कथन २०७ गोमती स्नादि फल २०८ चक्रतीर्थ साहात्म्य २०९ गोमती समुद्र सङ्गम २१० दुःसनकादि हृदाख्यान २११ ऋग तीर्थ कथा २१२ गो प्रचार कथा १२३ गोपी द्वारका गमन २१४ गोपीनरोवर आख्यान १२५ ब्रह्मतीर्थादि कीर्तन २१६ नानाख्यान युक्त पञ्च नदी आख्यान २१७ शिवलिङ्ग २१८ मङ्गातीर्थ एवं २१९ लण्य पूजादि कीर्तन २२० त्रिविक्रम मूर्त्ति कथा २२१ दुर्वासा एवं श्री लण्य कथन २२२ कुशदैत्य बधोपाख्यान २२३ एवं प्रतिमा आख्यान एवं २२४ विशेष पूजा फल २२५ गोमती एवं द्वारका में तीर्थ आगमन कीर्तन २२६ लण्य मन्दिर दर्शन फल २२७ द्वारावती अभिषेक २२८ द्वारका तीर्थ वास कथा २२९ द्वारका पुर कीर्तन ।

फलश्रुति—यद्य पुराण लिख कर हेमशूल युक्त नाहण्य को दान करने से शिव लोक प्राप्ति होती है ।

चतुर्दश वामन पुराण ।

पूर्व उत्तर २ भाग १००० सहस्र श्लोक । उत्तर भाग दृष्टत्वात्मन संज्ञक

इस पुराण में त्रिविक्रम चरित बहुविध वर्णित है कूर्म कल्प का आख्यान ।

प्रथम पूर्व भाग—१ पुराणप्रश्न २ ब्रह्मा शिरच्छेद कथा ३ कपाल मोचन आख्यान ४ दक्ष यज्ञ विनाश ५ महादेव का काल रूप धारण ६ कामदेव दहन ७ पल्लवाद् नारायण का युद्ध एवं देवता असुर का युद्ध एवं सूर्य की कथा ८ भुवनकोश वर्णन ९ काम्य व्रत आख्यान ११ दुर्गाचरित्र १२ तपती चरित्र १३ कृत्वेव वर्णन १४ सरोवर माहात्म्य १५ पार्वती जन्म तपस्या एवं विवाह कथन १६ गौरी उपाख्यान १७ कौशिकी उपाख्यान १८ कुमार चरित्र १९ अन्धक बध उपाख्यान २० साध्य उपाख्यान २१ जावालि चरित्र २२ अरजा कथा २३ अन्धक युद्ध एवं गण कथन २४ मरुत जन्म कथा २५ बलिचरित्र २६ लक्ष्मी चरित २७ त्रिविक्रम चरित २८ पल्लव की पूर्व में तीर्थ यात्रा २९ धृष्ट्युचरित ३० प्रेत उपाख्यान ३१ नक्षत्र पुरुष आख्यान ३२ श्रीदाम चरित ३३ त्रिविक्रम चरित २४ ब्रह्म उक्तस्त्व ३५ पल्लव एवं बलि सम्वाद ३६ सुतल में सरि प्रशंसा कथन ॥

द्वितीय उत्तरभाग—१ माण्डिसरी संहिता श्रीकृष्ण की भक्ति का कीर्तन २ भागवती संहिता अवतार कथा ३ सौरी संहिता सूर्य संहिता कथन ४ गाणेश्वरी संहिता गणेश संहितादि कथन । यह संहिता चतुष्टय के प्रत्येक संहिता में एक सहस्र श्लोक ॥

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर कार्तिकी संक्रान्ति की छत धेतु के साथ वेदज्ञ ब्राह्मण की दान करने से नरक भोग से मुक्ति और स्वर्ग लाभ होता है एवं भोगादिक और देहान्त में विष्णु के परम पद को प्राप्ति होती है यह पुराण पाठ किम्बा श्रवण करने से परम गति प्राप्ति होती है ॥

### पञ्चदश कूर्मपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर २ भाग १७००० सहस्रश्लोक । उत्तरभाग पञ्चपाद में विभक्त लक्ष्मी कल्पचरित । इसी कल्प में हरि ने कूर्म रूप धारण किया है एक इन्द्र युद्ध प्रसंग से धर्मार्थ काम मोच का माहात्म्य कहा है ॥

प्रथम पूर्वभाग—१ पुराण उपक्रम कथन २ लक्ष्मी इन्द्रयुद्ध सम्वाद ३ कूर्म ऋषि गण कथा ४ बर्णाश्रमाचार कथा ५ जगदुत्पत्ति कथा ६ काम संख्या एवं जयान्त में विशु स्त्व ७ सर्ग संचेप कथा ८ शंकर चरित ९ पार्वती सहस्रनाम् १० योग निरूपण ११ भृगुवंश आख्यान १२ स्वायम्भुव कथा १३ देवतादि उत्पत्ति १४ दक्ष यज्ञ नाश १५ वृक्ष सृष्टि कथा १६ कश्यप

वंश कथन १७ आत्रेय वंश कथन १८ कृष्ण चरित्र १९ मार्कण्डेय कृष्ण सम्भवाद २० व्यास पाण्डव की कथा २१ युगधर्म कथा २२ व्यास जैमिनी की कथा २३ वाराणसी माहात्म्य २४ प्रयाग माहात्म्य २५ लिखोक वर्णन २६ वेदशाखा निरूपण ।

द्वितीय उत्तरभाग—१ ऐश्वरीगीता २ नानाधर्म प्रकाशिका व्यास गीता ३ नानाविध तीर्थ का पृथक् माहात्म्य ४ ब्राह्मीसंहिता ५ भागवती संहिता इस में सकल वर्णन से पृथक् हृत्ति निरूपण है ।

उत्तरभाग में प्रथम पाद में ब्राह्मण की सदाचारात्मिका व्यवस्थिति कथन । द्वितीय पाद में चन्द्रिय की हृत्ति निरूपण । तृतीय पाद में वैश्य जाति की चार प्रकार की हृत्ति निरूपण । चतुर्थ पाद में शूद्र की हृत्ति कथन । पञ्चम पाद में वर्णसंकर की हृत्ति कथन ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक हेम कुम्भ युक्त ब्राह्मण को दान करने से परमागति होती है और श्रवण किम्बदा पाठ करने से सर्वोत्कृष्ट गति मिलती है ॥

### षोडश मत्स्यपुराण ।

१४००० सङ्गसङ्गीत सत्य कल्प कथा—१ व्यास कर्तृका नरसिंह वर्णन २ मत्तु एवं मत्स्यसम्वाद ३ ब्रह्मांड वर्णन ४ ब्रह्मदेव एवं असुर उत्पत्तिकथन ५ मासत उत्पत्ति ६ मदन द्वादशी कथा ७ लोकपाल पूजा ८ मन्वन्तर कथन ९ वैश्य राज्याभि वर्णन १० सूर्य एवं वैवस्वत की उत्पत्ति ११ बुध का संगम १२ पितृ वंशानु कथन १३ आहकान्त निरूपण १४ पितृतीर्थ प्रचार १५ सीसोत्पत्ति १६ सोमवंश कीर्तन १७ ययाति चरित्र १८ कार्तवीर्यचरित्र १९ ऋष्टवंश कीर्तन २० ऋगुशाप २१ विष्णु का दश मूर्ति धारण २२ पुरुवंश कथा २३ हुताशन वंश कथन २४ क्रिया योग कथन २५ पुराण कीर्तन २६ नक्षत्र पुरुष कथन एवं व्रत २७ मार्कण्डेय श्रयण २८ कृष्णाष्टमी व्रत २९ तडाग विधि माहात्म्य ३० पाटुकोत्सर्ग ३१ सौभाग्य श्रयण वर्णन ३२ अगस्त्य व्रत कथन ३३ अनन्त तृतीया ३४ रस कल्पानो व्रत कथा ३५ आनन्दकर व्रत सारस्वत व्रत ३७ उपराग अभिषेक ३८ सप्तमास स्वपन व्रत कथा ३९ भीम द्वादशी व्रत ४० अनङ्ग श्रयण व्रत ४१ अशून्य श्रयण व्रत ४२ अंगारक व्रत ४३ सप्तमी सप्तक व्रत ४४ विशोक द्वादशी व्रत ४५ दशधा मेरुप्रदान व्रत ४६ अहशान्ति ४७ अह स्वरूप कथन ४८ शिव चतुर्दशी व्रत ४९ सर्वफल त्याग



व्रत ५० मूर्त्येदार व्रत ५१ संक्रान्ति स्नान ५२ विभूति द्वादशी व्रत ५३ क्षत्रि  
 व्रत साहात्म्य ५४ स्नानविधि क्रम ५५ प्रयाग साहात्म्य ५६ होप एवं लोका-  
 नुवर्णन ५७ अन्तरोक्त और दिशा कथन ५८ भुव साहात्म्य ५९ इन्द्र भवन वर्-  
 णन ६० त्रिपुर घातन ६१ पितृ प्रवर साहात्म्य ६२ सन्वन्तर निर्णय ६३ चतु-  
 र्युग सम्भूति युगधर्म निरूपण ६४ वज्राङ्ग सम्भूति ६५ तारकासुरोत्पत्ति एवं  
 साहात्म्य ६६ ब्रह्मा देव अतुकीर्तन ६७ पार्वती सम्भव कथा ६८ शिव तपो-  
 वन वर्णन ६९ अनङ्ग देह दाह ७० रतिविलाप ७१ गीरी तपोवन ७२ शिव  
 प्रसादन ७३ पार्वती ऋषि सखाट एवं विवाह ७४ कार्तिकेय जन्म औ विजय  
 ७५ तारक वध ७६ नरसिंह वर्णन ७७ पद्मकल्प कथा ७८ अश्वकासुर घातन  
 ७९ बारानसी साहात्म्य ८० नर्मदा साहात्म्य ८१ प्रवरातुक्रम ८२ पितृ  
 श्राधा कीर्तन ८३ उभयसुखी दान ८४ क्षणाजिनदान ८५ साविद्वयु पाख्यान  
 ८६ राजधर्म ८७ विविधोत्पात कथन ८८ शङ्ख शान्ति कथन ८९ यात्रा नि-  
 मित्त कथन ९० स्वप्नमङ्गल कीर्तन ९१ वामन साहात्म्य ९२ बराह  
 साहात्म्य ९३ समुद्र मन्थन ९४ कालकट अभिशान्तन ९५ देवासुर विमर्दन  
 ९६ वास्तुविद्या ९७ प्रतिमा लक्षण ९८ देवता स्थापन ९९ प्रासाद लक्षण १००  
 देवमंडप लक्षण १०१ भविष्य राजा का उद्देश कथन १०२ महादान कथन  
 १०३ कल्प कथा ।

फलश्रुति—यह पुराण लिख कर भक्ति पूर्वक विषुव संक्रान्ति को ब्राह्मण  
 को दान करने से परम प्रद मिन्नता है और इस पुराण के पाठ किन्वा श्रवण  
 करने से आधुः कीर्ति कल्याण की वृद्धि एवं हरि भवन प्राप्ति होती है ।

### सप्तदशगरुडपुराण ।

पूर्व एवं उत्तर २ खण्ड में १६००० श्लोक गरुड प्रति भगवाने ने कहा है  
 • इस पुराण में तार्क कल्प की कथा है ।

प्रथम पूर्वखण्ड—१ पुराण उपक्रम वर्णन २ संक्षेप स्वर्ग वर्णन ३ मूर्त्यादि  
 पूजा विधि ४ दीक्षा विधि ५ सखी पूजा प्रकरण ६ नव व्यूह अर्चन ७ विष्णु  
 पूजा विधान ८ वैष्णव पञ्जर ९ योगाध्याय १० विष्णु सखि नाम ११ विष्णु-  
 ध्यान १२ सूर्य पूजा १३ श्रुत्युच्चयार्चन १४ नानामंत्र १५ शिवपूजा १६ गण-  
 पूजा १७ गोपालपूजा १८ त्रैलोक्य भीहन श्रीरामार्चन १९ विष्णुपूजा एवं  
 पञ्चतत्वपूजा २० चक्रार्चन २१ देवपूजा २२ न्यासादि कथन २३ सन्त्यादि

उपासना २४ दुर्गाचर्चन २५ सुरार्चन २६ साङ्गेश्वर पूजा २७ पवित्रा रोपणा-  
 चर्चन २८ मूर्तिध्यान २९ वास्तु प्रमाण ३० प्रासाद कचण ३१ सकल देवता प्र-  
 तिष्ठा ३२ सकल देवता पृथक् पूजा ३३ अष्टांग योग ३४ दानधर्म ३५ प्राय-  
 चित्त विधि क्रम ३६ द्वीप ईश्वर और नरक वर्णन ३७ मुख्य व्यूह कथन ३८  
 ज्योतिष आह वर्णन ३९ मासुद्रिक स्वर ज्ञान ४० नवरत्न परीक्षा ४१ तीर्थ  
 माहात्म्य ४२ गयासहात्म्य ४३ मन्वन्तर पृथक् २ आख्यान ४४ पित्राख्यान  
 ४५ वर्णाधर्म ४६ द्रव्यगुण ४७ द्रव्य समर्पण ४८ आहकथा ४९ विनायक  
 पूजा ५० अद्भ्यज्ञ ५१ आचम कथा ५२ मननाख्यान एवं प्रशौच ५३ नीति-  
 सार ५४ व्रतानि ५५ मूर्ध्वग ५६ सोमवंग ५७ हरि अवतार कथन ५८ रामो-  
 यण ५९ हरिवंग ६० भारताख्यान ६१ आयुर्वेद ६२ निदान ६३ चिकित्सा  
 ६४ द्रव्यगुण ६५ रोग विष्णु कवच ६६ गरुड़ कवच ६७ त्रिपुर आख्यान ६८  
 प्रश्न चूडात्मनि ६९ अशुभयुर्वेद ७० ओषधी नाम कथन ७१ व्याकरण शास्त्र ७२  
 कल्याणशास्त्र ७३ सदाचार ७४ ज्ञानविधि ७५ वैश्वदेव तर्पण ७६ सन्ध्या ७७  
 पार्वण कर्म ७८ नित्यश्राद्ध ७९ सपिण्डश्राद्ध ८० धर्मसार निष्कृति ८१ प्र-  
 तिसंक्रम ८२ युगधर्म ज्ञतफल ८३ योगशास्त्र ८४ विष्णुभक्ति ८५ भगवत्प्रणाम  
 फल ८६ वेणुव महात्म्य ८७ नरसिंह स्तव ८८ ज्ञानाश्चर्य ८९ गुह्याष्टक  
 स्तव ९० विष्णु अर्चना ९१ वेदान्त सार सांख्य और सिद्धान्तशास्त्र ९२  
 ब्रह्मज्ञान ९३ आत्मज्ञान ९४ गीतासार एवं फल कथन ।

द्वितीय उत्तरखण्ड प्रेत कल्प कथा—१ धर्म प्रकटित कारण २ पूर्वयोनि  
 गति कारण ३ दानादिफल ४ और्ध्व देहिक क्रिया ५ यमलोक मार्ग वर्णन ६  
 षोडश आह फल ७ यममार्ग से निष्कृति कथन ८ धर्मराज वैभव ९ प्रेत  
 षोडश निर्णय १० प्रेत चिह्न निरूपण ११ प्रेत चरित्र १२ प्रेत कारण १३  
 प्रेतज्ञान विचार १४ सपिण्डो कारण १५ प्रेतत्व मोक्षण आख्यान १६ विमुक्ति  
 कारण दान १७ प्रेत आवश्यक दान १८ प्रारोहिक विनिर्देश १९ यमलोक  
 वर्णन २० प्रेतत्व उद्धार कथन २१ कर्मकर्ता निर्णय २२ मृत्यु की पूर्व क्रिया  
 कथन एवं पश्चात् कर्म निरूपण २३ षोडश आह कथन २४ स्वर्ग प्राप्त क्रिया  
 २५ सूतक संख्या २६ नारायण क्लिकर्म २७ वृषोत्सर्ग माहात्म्य २८ निपिह  
 त्याग २९ अष्टमृत्यु क्रिया ३० मनुष्य कर्म विपाक ३१ ज्ञतप्रज्ञतप्र विचार  
 ३२ सुक्तिकारण विष्णु ध्यान ३३ स्वर्ग गमन-विहित आख्यान ३४ स्वर्ग सुख  
 निरूपण ३५ भूर्लोक वर्णन ३६ सप्तलोक वर्णन ३७ पञ्चउर्ध्व लोक कथन ३८

ब्रह्माण्ड स्थिति कीर्तन ३९ ब्रह्माण्ड अनेक चरित्र कथन ४० . ब्रह्मजीव निरूपण ४१ आतमन्तिक लय कथन ४२ फलश्रुति निरूपण ।

फलश्रुति—यह पुराण पाठ करने किम्बा श्रवण करने से पाप शमन होता है और लिख कर विपुव संक्रान्ति को सुवर्ण हंस द्वय युक्त ब्राह्मण को पान करने से स्वर्ग लाभ होता है ।

### अष्टादश ब्रह्माण्डपुराण ।

४ पाद तीन भाग १२००० सहस्रांश्लोक प्रथम भाग में—१ प्रक्रिया पाद २ अनुपङ्ग पाद ३ उपोद्घात पाद मध्य भाग ४ उपसंहार पाद शेष भाग इस पुराण में भाविकल्प की कथा है ।

प्रथम भाग प्रक्रिया पाद आरम्भ—१ कृतत्र ससुदेश २ नैमिषाख्यान ३ हिरण्यगर्भोत्पत्ति ४ लोका कल्पना कथा ॥

द्वितीय अनुपङ्गपाद—१ कल्प मन्वन्तराख्यान कथा २ लोका ज्ञान कथन ३ मानसिक सृष्टि विवरण ४ रुद्र प्रसव विवरण ५ महादेव विभूति वर्णन ६ ऋषिसर्ग वर्णन ७ अग्नि उत्पत्ति विवरण ८ काल सङ्गाव वर्णन ९ प्रियव्रत समूह उद्देश १० पृथिवी आयास एवं विस्तार वर्णन ११ भारतवर्ष वर्णन १२ अन्यवर्ष वर्णन १३ जम्बूदि सप्तद्वीप वर्णन १४ अधः एवं ऊर्ध्वलोक विवरण १५ शहाचार १६ आदित्य ब्यूँड़ विवरण १७ देव ग्रह वर्णन १८ नीलकण्ठाख्यान १९ महादेव वैभव २० अमावस्या कथा २१ युग तत्व निरूपण २२ यज्ञ प्रवर्तन २३ मध्य एवं अन्तर युग की क्रिया एवं सतयुग की प्रजा का लक्षण २४ ऋषि प्रवर वर्णन २५ वेद आख्यान २६ स्वायम्भुव निरूपण २७ शेष मन्वन्तराख्यान २८ पृथिवी दीप्ति ।

मध्यभाग उपोद्घात पाद—१ सप्तऋषि कथा २ प्रजापति उपाख्यान ३ देवादि उद्भव ४ जय एवं क्रीड़ा ५ मरुत् उत्पत्ति कीर्तन ६ काश्यप विवरण ७ ऋषि वंश निरूपण ८ पितृकल्प कथा ९ आह कल्प कथा १० वै वसन्तोत्पत्ति ११ वैवस्वत सृष्टि विवरण १२ मनुपुत्र निर्णय १३ गर्भर्व निरूपण १४ ब्रह्माङ्गवंश विवरण १५ अश्विंश विवरण १६ अमावसु अर्चन १७ रजि चरित्र १८ ययाति चरित्र १९ यदुवंश निरूपण २० कार्तवीर्य चरित्र २१ जमदग्नि विवरण २२ हृषिणवंश विषय २३ सागर उपाख्यान २४ भार्गव चरित्र गय वध २६ समर विवरण २७ पुनर्वार भार्गव विषय २८ देवासुर

युद्ध में श्रीकृष्ण का आविर्भाव वर्णन २८ शुक्र कर्तृका इलस्तव ३० विष्णु माहात्म्य  
विवरण ३१ इलिव्य निरूपण ३२ कनियुग की भविष्य राजागण का चरित्र ॥

अन्तभाग उपसंस्कार पाद—१ वैवस्वत मन्वन्तर का संक्षेप विवरण २  
भविष्य मनु का कर्म चरित्र ३ कल्प प्रलय निर्देश ४ काश परिमाण विवरण  
५ परिमाण और लक्षण सहित चतुर्दश लोक विवरण ६ नरक एवं विकर्म  
वर्णन ७ मनोमयपुर आख्यान ८ प्राकृतिक लय विवरण ९ शैवपुर वर्णन १०  
सत्वादि गुण सखन्ध से जीव की गति विवरण ११ अनिर्देश्य ब्रह्म वर्णन ॥

फलश्रुति—यह पुराण श्रवण किस्वा पाठ करे उसका पाप मोचन होय  
एवं देवलोक में गति होय यह पुराण लिख कर \* स्वर्ण सिंहासनस्थ करके  
ब्राह्मण को दान करने से ब्रह्मलोक प्राप्ति होती है ॥

॥ इतिहास तिमिर नाशक तीसरा खण्ड में यह सिद्ध किया गया है कि  
पहले आर्यलोग लिखना न जानते थे किंतु यह भ्रम है पुराणों में प्रायः लिखने  
का अनेक स्थानों में वर्णन आया है जो इस अनुक्रमणिका से मालूम हुआ  
होगा और इस का अनेक प्रमाण मैंने कईएक स्थलों में संग्रह किया है इति-  
हास तिमिरनाशक का भ्रम मूल लेख नोचे लिखा है । अब हमलोग मेक्समू-  
लर साहब के लेखों को माने या पुराण को । यथार्थ में मेक्समूलर को भ्रम  
हुआ है और उसी को मूल मानकार राजा जो चले हैं तब यह क्यों न भूलें ।

“ इस का कुछ प्रमाण नहीं मिलता कि इनकी लिखना भी आता हो-  
वेद श्रुति स्मृति शास्त्र दर्शन मूक्त ऋच साम वर्ग अध्याय अध्यापक उपाध्याय  
शंभु पाठ पाठक पठन मनन शोषण इत्यादि सब शब्द जब उन के अर्थ पर  
ध्यान करो यही गवाही देते हैं कि वेदों के जमाने में लिखना किसी को  
नहीं आता था वेद या ब्राह्मण वा मूर्खों में इसका कहीं कुछ जिक्र नहीं है  
कोई शब्द ऐसा नहीं कि जिस से इसका इशारा पाया जाय उणादि सूत्र में  
जो अति प्राचीन व्याकरण है और जिस का जिक्र पाणिनि ने किया है  
यदि कोई शब्द ऐसा मिल भी जाता है तो वह पीछे से मिलाया हुआ  
मालूम होता है [ इसी तरह उणादिसूत्र में दीनारः जिनः तिरीटम्  
स्तूपः इत्यादि शब्द पीछे से लिख दिये हैं दीनारः (Denarius) रूमी  
शब्द है और जि धातु को जिस से जिन निकला है सायन ने जहां उणादि  
से लिखा छोड़ दिया है नृसिंह ने भी अपनी खरमंजरी में जि धातु को

छोड़ि अनैकन साधन कीं मन मान कहौं न करै चित चाही ।  
 नन्द के नाल सौं नैह करै किन भूगत दीरे वृषा जिय दाही ॥  
 आसु सौं नीचन सौं हरिचन्द से कौन नै बोलि ती प्रीत जिवाही ।  
 हैं गनिका सबरी गज गोध अजाशिल आदिक याकी गवाही ॥ १ ॥

छोड़ दिया है यह धातु किसी प्रामाणिक ग्रन्थ में नहीं मिलता है ] जैसा  
 अरबी शब्द किताब ( पुस्तक ) जिस का अर्थ हो लिखना है अथवा यूनानी  
 शब्द पेपर ( कागज़ ) जिस का अर्थ हो पेपरिस वृक्ष की छाल से बनाया  
 हुआ है कोई भी हाथ नहीं लगता संस्कृत में सूत्रों की रचना ऐसी है कि  
 जुझानी याद रखे जायं मूत्रकारों ने उन्हें लिखने के लिये कदापि नहीं रचा  
 सतुजी ने जहाँ पढ़ने पढ़ाने का बहुत विस्तार पूर्वक नियम बांधा है  
 [ ब्रह्मरश्मि वसाने च पादौघ्राह्यौगुरोस्सदा । संहत्वहस्तावध्वेयं संह ब्रह्मा-  
 क्षत्रिःस्मृतः ॥ अधोऽप्यमणन्तु गुरुर्नित्यकालमतन्द्रितः । अधोऽप्य भो इति  
 नृयाहिरामोऽस्त्विति चारमेत् ॥ ] पुस्तक कालस्य दवात कागज़ का नाम भो  
 नहीं लिखा लिखने का कहीं किसी प्रकार से कुछ चर्चा हो नहीं किया  
 और देखो अब तो लिखना पढ़ना ये दोनों ऐसे हँस हो गये हैं कि पर्यायी  
 से जान पड़ते हैं एक के स्मरण के साथ ही दूसरे का स्मरण भी हो जाता है  
 निदान लिखने की विद्या इस देश में पीछे से फैली [ यदि पहले होती  
 महाभारत में जहाँ कौरव पांडव के दूतों का हाल लिखा है उन के साथ  
 पत्र जाने का भी हाल लिखा होता । ] पत्र लेखनी मपी ये सब शब्द पीछे  
 से काम में आये उत्तर में पहले भोजपत्र पर और दक्षिण में पहले तालपत्र  
 पर लिखा होगा इसी से जिस पर लिखें उसका नाम पत्र रह गया और  
 ताल पत्र पर लोको के खोचने अर्थात् खोदने से यह काम ही लिखना ठह-  
 रा लिप लोपना है जब पत्रों पर सियाही लगाई होगी यह शब्द कास में  
 आया यदि पाणिनि के समय में भी लिखना किसी को मालूम होता वह  
 अवश्य इस के लिये कोई शब्द बनाता उसने जो वर्ण अक्षर और विराम  
 लिखा है वर्ण का अर्थ आवाज़ का रंग है अक्षर का अर्थ अविनाशी है वि-  
 राम का अर्थ आवाज़ का बंद होना है यदि वह लिखना जानता होता अ-  
 नुस्वार विसर्ग जिह्वामूलीय और उपध्मानीय का नाम बोपदेव को तरह वि-  
 न्दु द्विविन्दु ब्रह्माक्षति और गजकुंभाक्षति रखता ।”

## वैशाख माहात्म्य ।

दोहा—भरित नेह नवनीरं सों , वरसत सुरस अथोर ।  
जयति अलौकिक घन कोऊ , लखि नाचत मन मोर ॥

नित्य उमाधव जीहि नवतं, माधव अनुज सुरारि ।  
श्यामाधव माधव भजी, माधव मास विचारि ॥ १ ॥  
रमत माधवौ कुंज करि, प्रेम माधवौ पान ।  
माधव रितु संग माधवौ, लै माधव भगवान ॥ २ ॥  
वैशाषा पति नहि भजहिं, जी वैशाष भक्तार ।  
ते वै शाषा मृग अहै, वा वैशाष कुमार ॥ ३ ॥  
गुरु आयसु निज सौस धरि, सुमिरि पिया नंद नन्द ।  
माधव को ककु विधि लिखत, ग्रंथन लंखि हरि चन्द ॥ ४ ॥  
चैत्र कृष्ण एकादशी, अथवा पूनो मान ।  
मेष संक्रमन सों करै, वा अरंभ अज्ञान ॥ ५ ॥  
ब्राह्मण गन सों पूछिकै, नियम शास्त्र को मान ।  
हरिहि नौमि संकल्प करि, न्हाय समेत विधान ॥ ६ ॥  
भंच—सकल मास वैशाष में, मेष राशि रवि मान ।  
मधुमूदन प्रिय होहिं लखि, सनियम माधव न्हान ॥ ७ ॥  
मधु रिपु के परसाद सों, द्विज अनु ग्रहहि जोय ।  
नित वैशाष नहान यह, विघ्न रहित मस होय ॥ ८ ॥  
माधव मेषग भानु में, हे मधु सत्व सुरारि ।  
प्रात न्हान फल दौजिये, नाथ पाप निरुवारि ॥ ९ ॥ इति  
जा तीरथ में न्हाइये, लीजे ताको नाम ।  
जहं न जानिये नाम तहं, विश्व तीर्थ सुख धाम ॥ १० ॥

तुलसी श्यामा जज्ञरी, जो मधु रिपु की देत ।  
 भी नारायण होत है, साधव में करि हेत ॥ ११ ॥  
 तुलसी दल वैशाख में, अरपहिं तीनी काल ।  
 जन्म मरण सी सुक्त तेहि, वारत नन्द की लाल ॥ १२ ॥  
 जो सींचत पीपर तरुहि, प्रात न्हाइ हरि मानि ।  
 क्षरत प्रदक्षिण भांति बहु, सर्व देव मय जानि ॥ १३ ॥  
 तरपन करि सुर पित्र नर, सचराचर तरु मूल ।  
 भेटे अपने पित्त की, नरक कुंड की सूल ॥ १४ ॥  
 जो सोचहिं जल भक्ति सी, पीपर तरु जड़ सांहि ।  
 तिन तांसी निच अयुत कुल, यामै संशै नांहि ॥ १५ ॥  
 गज पौठ सुहराइ कै, न्हाइ तरुहि जल देइ ।  
 कृष्ण पूजि तजि दुर्गातिहि, देवन की गति खेइ ॥ १६ ॥  
 एक घेर भोजन करै, कै तारा लखि खाइ ।  
 कै बिन सांगो पाइ कै, दै निसि नींद बिहाइ ॥ १७ ॥  
 ब्रह्मचर्य धरनी शयन, अग्रन हविष्यन आन ।  
 श्री गंगादिक भै करै, विधि विधान असनान ॥ १८ ॥  
 पुन्य मास वैशाख मै, हरि सी राखि सनेह ।  
 अन भायो ताको मिलै, धामै कछुन संदेह ॥ १९ ॥  
 मधु सुदन पूजन करै, तप व्रत सह दै दान ।  
 पाप अनेकन जनसं की, दाहै तूल समान ॥ २० ॥  
 साधव धामै पीसरा, करै चटोई दान ।  
 कंच व्यजन ताता छरी, अरु सूक्ष्म परिधान ॥ २१ ॥  
 चन्दन जल घट पुष्प ग्रह, चित्र वस्तु अंगूर ।  
 देवहिं हीजे प्रीति सी, किला फल करपूर ॥ २२ ॥

साधव से जो पित्त हित, करत अंजु घट दान ।  
 सक्तु व्यजन मधुफल सहित, प्रीति करत भगवान ॥ २३ ॥  
 साधवहित जी देत घट, या साधव की मांहिं ।  
 भोजन के सह विप्र की, ते वैकुण्ठहिं जांहिं ॥ २४ ॥  
 होइ सकै नहिं भास भर, जी विधिवत असनान ।  
 करै अंत के तीन दिन, तो फल होइ समान ॥ २५ ॥

अथ अचयदतीया ।

रोहिणिमाधव शुक्लपत्र, तीज सोम बुध होय ।  
 अति पवित्रदुरलभवहुरि, पाप नसावत सोय ॥ २६ ॥  
 माघी पूनो भाद्रपद, कृष्ण चतुर्दशि जान ।  
 साधव तृतीया कारतिक, नवमी युग परमान ॥ २७ ॥  
 इन चारहु युगादि में, श्राद्ध करत जो कोय ।  
 इ सप्तस्र संवत दिनन, तृप्ति पित्त की होय ॥ २८ ॥  
 तिथि युगादि में न्हाइके, करै दान जप ध्यान ।  
 ताकीं शुभ फल देत श्री, कृष्ण चन्द भगवान ॥ २९ ॥  
 साधव शुक्ला तीज की, श्री गंगा जल न्हाय ।  
 सब्ब पाप सों कूटिकै, विष्णु लोक सो जाय ॥ ३० ॥  
 जबही को होमादि करि, हरि को जबहि चढाइ ।  
 दान देइ जब द्विजन की, पुनि आपहु जब खाइ ॥ ३१ ॥  
 दान करै जलकुण्ड की, रस अन्नादिक साथ ।  
 चना और गोधूम को, सक्तु देइ द्विज हाय ॥ ३२ ॥  
 दधि ओदन आदिक सबै, श्रीधम रितु के भोग ।  
 देइ तीज दिन विप्र की, नासै भव भय रोग ॥ ३३ ॥  
 शिवहि पूजि कै तीज दिन, शिव हित है घट दान ।



शिव पुर सी नर पावई, भाषित शिव भगवान ॥ ३४ ॥  
 मंत्र—ब्रह्म विष्णु शिव रूप यह, दियो धर्म घट दान ।  
 पिता पितामह चादि सब, तम हीहि परमान ॥ ३५ ॥  
 गन्धउदक तिल फलसहित, पितन जल घट देत ।  
 अन्नय पावै तमि सब, दान कियो एहि हेत ॥ ३६ ॥  
 ब्रह्म विष्णु शिव रूप यह, देत धर्म घट दान ।  
 या सो मेरे काम सब, पुरवौ श्री भगवान ॥ ३७ ॥  
 वायु देवता को व्यजन, नासन चातप ताप ।  
 तासों याके दान सों, प्रीति हीहि हरि आप ॥ ३८ ॥  
 सक्तु प्रजा पति देवता, सखहित किय निरमान ।  
 हीहि मनोरथ पूर्ण सब, या सतुआ के दान ॥ ३९ ॥ [इति]  
 चार युगादिक तिथिन मैं, करि समुद्र असनान ।  
 सों फल पावत मनुज जो, करि कै पृथ्वी दान ॥ ४० ॥  
 इन चारिहू युगादि मैं, कछु नहि खैये रात ।  
 रात खान सों दिवस को, पुन्य नास हू जात ॥ ४१ ॥  
 माधव शुक्ला तौज को, श्री माधव कीं जौन ।  
 चन्दन चरचहि पावहीं, महा पुन्य नर तौन ॥ ४२ ॥  
 करपूरादि सुगंध सों, सुन्दर चन्दन वासि ।  
 कृष्णहि देत जो पुन्य नर, रहत पाप सो नासि ॥ ४३ ॥  
 चन्दन तन धारन किये, कृष्णहिजो लखि लैत ।  
 तौज दिवस सो सुक्त हू, पावत कृष्ण निकैत ॥ ४४ ॥  
 शीतल जल नव घटन भरि, बालविजन बहु भाति ।  
 देत हरिहि सो पावई, पुन्य फलन की पाति ॥ ४५ ॥  
 पुष्पमाला बहुभाति अरु, श्रीसु की उपचार ।

जलयंत्रादि अनेक विधि, करै बुद्धिअनुसार ॥ ४६ ॥  
 कृष्ण हेत जो कछु करै, माधव तृतिया पाइ ।  
 सो अखंड हूँ, करै, पुन्य न कवहुं नसाइ ॥ ४७ ॥  
 परशुराम को जन्मदिन, पुनि याहीदिन जान ।  
 तिनकी हित हूँ कौजिये, दान वरत असनान ॥ ४८ ॥  
 हाता जूता आदि सब, ग्रीषम सुखकी वस्तु ।  
 हेजन देइ या तीज की, कहि कृष्णार्पण मस्तु ॥ ४९ ॥  
 मुकत जौन यामें करै, सो सब अन्नय होय ।  
 तासों अन्नय तीज यह, नाम कहैं सब कोय ॥ ५० ॥  
 चन्दन को वागो करै, चन्दन ही की माल ।  
 चन्दन ही के भीन में, वैठावे नंद लाल ॥ ५१ ॥  
 फूलन की मंदिर रचै, फूलन सेज बनाय ।  
 तामे थापैं कृष्ण की, फूल माल पहिराय ॥ ५२ ॥  
 रितुफल बहु सब भांति की, दधि ओदन सुखधाम ।  
 पना धरै सब वस्तु की, कहै लीहु घनश्याम ॥ ५३ ॥  
 दीपादिक की सुख्यता, कातिक मै निमि जान ।  
 तैसैइ माधव मास में, सीत वस्तु की मान ॥ ५४ ॥  
 चार वरन को दीजिये, माधव में जल दान ।  
 अंजल पशु पक्षीन की, नीर दान सुख खान ॥ ५५ ॥  
 जो पशु पक्षीन देत हैं, ग्रीषम में जल पान ।  
 ते नर सुर पुर जात हैं, सुन्दर बैठि विमान ॥ ५६ ॥  
 जो अति आतप सो तपे, देहु तिन्है विश्राम ।  
 छाया जल बहु भांति सो, हूँ है पूरन काम ॥ ५७ ॥  
 गरमी के हित जो करत, बापी कूप तड़ाग ।  
 तिनको पुन्य अखण्ड ते, करत न सुरपुर त्याग ॥ ५८ ॥

साधुन की अरु द्विजन गृह, नदी तीर हरि धाम ।  
जे छावत छाया तिनहै, मिलत प्र्यास अभिराम ॥ ५६ ॥

अथ श्रीगंगासप्तमी ।

साधव सुदि सप्तमि कियो, क्रुद्ध जन्ह जल पान ।  
छोड्यौ दक्षिण कर्ण तें, तातें पर्व महान ॥ ६० ॥  
ताही सो जान्हवि भई, तादिन सीं श्री गंग ।  
तिनकी उत्सव कीजिये, तादिन धारि उरंग ॥ ६१ ॥  
तामें गंगा न्हायकै, पूजन कीजे चारु ।  
गंगा नाम सहस्र जपि, लीजे पुन्य अपारु ॥ ६२ ॥

अथ वैशाखशुद्ध १२ ।

सिंह राशि गत होहिं जी, मंगल गुरु इकठौर ।  
मेष राशि गत दिवस पति, शुक्र पक्ष जुत और ॥ ६३ ॥  
द्वादशि तिथि में होइ पुनि, त्रितीपात संयोग ।  
हस्त होइ नक्षत्र तौ, होइ महा यह जोग ॥ ६४ ॥  
प्रातःज्ञान यामें करै, सहित बिबेक विधान ।  
गो सुवरन अवनी बसन, देइ द्विजन कहं दान ॥ ६५ ॥  
देव होइ सुरपति वनै, नरपतिहू जग माहिं ।  
जो मन इच्छित सो मिलै, यामें संशय नाहिं ॥ ६६ ॥

अथ नृसिंह चतुर्दशी ।

साधव शुक्र चतुर्दशी, स्वाती पुनि शनिवार ।  
बणिज करण सिधयोग में, नर हरि लिय चवतार ॥ ६७ ॥  
जो सब जोग कहूं मिले, तौ परन सीभाग ।  
बिना जोगहू व्रत करै, करि हरि सीं अनुराम ॥ ६८ ॥  
सब लोगन की व्रत उचित, औदस साधव मास ।  
पै वैष्णव जन तो करैं, निश्चय व्रत उपवास ॥ ६९ ॥

सांभ्र समै हरि की करै, पंचासृत अंसनाज ।  
 शीतल भोग लगावई, करि आनन्द विधान ॥ ७० ॥  
 वा मृदु गी भय आवलानि, करि मध्यान श्रान ।  
 पूछि द्विजन सो यह करै, सुभ संकल्प्य विधान ॥ ७१ ॥  
 मंच—देव देव नरसिंह जू, जानि जनम की जोग ।  
 आज करै उपवास हम, त्यागि सकल जग भोग ॥ ७२ ॥  
 यह पढ़ि नदी नहाई के, सांभ्र समै घर आइ ।  
 लक्ष्मी सहित नृसिंह की, सुवरन मूर्ति बनाइ ॥ ७३ ॥  
 रात पूजि जागरन करि, प्रात पूजि पुनि श्याम ।  
 पीठक विप्रहि दै करै, यह त्रिनती सुख धाम ॥ ७४ ॥  
 मंच—नरहरि अच्युत जगतपति, लक्ष्मी पति देवस ।  
 पूजौ पीठक दान सौं, मन कामना अगिस ॥ ७५ ॥  
 जे सम कुल में होयंगे, होय गए जे साथ ।  
 या भव सागर दुसह तैं, तिनहिं उधारी नाथ ॥ ७६ ॥  
 डूब्यो पातक सिंधु सैं, सहा दुःख की वारि ।  
 शिखरजानि मोहि राखिये, नर हरि भुजा पसारि ॥ ७७ ॥  
 श्री नरसिंह रमेश जू, भक्तन की भय टारि ।  
 द्वीर समुद्र निवास तुव, चक्र पाणि दनु जारि ॥ ७८ ॥  
 जय जय वृष्ण गुविन्द हरि, रामे जनार्दन नाथ ।  
 या व्रत सौं मोहि दीजिये, भक्ति मुक्ति दोउ साथ ॥ ७९ ॥  
 या विधि सौं व्रत जे करै, वृष्ण जन्म दिन जानि ।  
 ते चारहु फल पावैं, यह उर निश्चय मानि ॥ ८० ॥  
 जिमि निकसे प्रभु खंभे तैं, राख्यो जन प्रहलाद ।  
 तिमि तिनकी रक्षा करत, जे राखत व्रत खाद ॥ ८१ ॥  
 अथ पौर्णिमा—साधव कातिक साध की, पूने परम हुनील ।

ता दिन गंगा न्हाइये, करि केशव सीं प्रीति ॥ ८२ ॥  
 एक मास जो नहिं बनै, श्री गंगा असनान ।  
 ती पुनोदिन न्हाइये, अरु करियै जलदान ॥ ८३ ॥  
 व्रत समाप्त या दिन करै, देइ द्विजन कीं दान ।  
 हाथ जोड़ि कै यह कहै, लिखि कै श्री भगवान ॥ ८४ ॥  
 मंत्र—हे मधुसूदन कृष्ण हरि, राधा जीवन प्रान ।  
 तव पताप पूरन भयो, साधव विधिवत ज्ञान ॥ ८५ ॥  
 श्याम सृगा के चर्म पै, श्याम तिलहि दै दान ।  
 सुवरन सहकहि हींहिं प्रिय, मधुसूदन भगवान ॥ ८६ ॥  
 ब्राह्मण बहुत खवावई, करि अनेक पकवान ।  
 जो बहु द्विज नहिं होइं ती, बारह सहित विधान ॥ ८७ ॥  
 एहि विधि साधव में करै, प्रेम सहित असनान ।  
 ताकीं सब कछु देहिं श्री, मधुसूदन भगवान ॥ ८८ ॥  
 लिखि कै निरनय सिंधु अरु, भगवद्धक्ति विलास ।  
 साधव को यह विधि लिखी, हरीचन्द हरिदास ॥ ८९ ॥  
 एक दिवस में यह लिखी, साधव विधि अभिराम ।  
 जहि पढ़ि कै सुख पाइहै, कृष्ण भक्त सुख धाम ॥ ९० ॥  
 लीजौ चूक सुधारि कै, कविगन सहित अनन्द ।  
 हीं नहिं जानत रचन विधि, नहिं पिङ्गल नहिं छन्द ॥ ९१ ॥  
 साधव विधि साधव सुमिरि, उर अति धारि अनन्द ।  
 परम प्रेम निधि रसिक वर, विरच्यौ श्रीहरिचन्द ॥ ९२ ॥  
 प्रानु पिथारि प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्रान ।  
 तिनके पद अरपन कियो, यह वैशाख विधान ॥ ९३ ॥

इति वैशाख माहात्म्य ।

## कार्तिक कर्म विधि ।

लोकानाम्पापरूपप्रबलतमतमोनाशनायाशु शस्तं  
हन्तुं तीक्ष्णं त्रितापं पटुतरमनिशं यः परं दुःखहेतुः ॥  
दातुं धार्तं त्रिलोकैरसुखमममृतं कार्तिकं कर्म वैधं  
राकाज्योत्साहस्यं विलसतु जगति श्री हरिश्चन्द्रचन्द्रात् ॥ १ ॥



श्रीराधाकृत्याय नमः ।  
श्रीराधादास्योदराय नमः ।

## कार्तिक कर्म विधि ।

|                                         |       |
|-----------------------------------------|-------|
| जैले श्री नंद नन्द श्रीराधारसवस रसिक    | ।     |
| दामोदरननचंद गोपीनाथ चनाथ गति            | । १ ॥ |
| रासरसिक राधारमण मनमोहन चनश्याम          | ।     |
| कोटि कोटि मनमथ मधन सुंदर सब सुखधाम      | ॥ २ । |
| बन्दौ कार्तिक मास दामोदर प्रिय पुष्पपद  | ।     |
| नासंत यम की चासं द्वियं हुआस कर अतिसुखद | । ३ ॥ |

श्लोकः ।

श्रीकृष्णं करुणाकरं कविवरं कान्तापतिं कामदं  
श्रीगोपीनां नयनीत्सवं गुणनिधिं गो गीपवृन्दप्रियं ।  
राधाराधितविद्यैर्हं रतिरतं रामानुजं रासगं  
मानार्थं मधुराधिपं मनहरं मान्यं मनोज्ञं भले ॥ १ ॥

इस संसार में जन्म लेके मनुष्यों की भगवत्स्मरण, श्रीर ज्ञान दानादिक करना यज्ञो सुख्य धर्म है क्योंकि बड़े बड़े पव्वों में ज्ञान पूजा व्रत दानादिक करने से पाप नाश होते है और सुक्ति मिलती है और पव्वे श्रीर व्रत इत्यादि तो जनक है श्रीर नित्य ही ज्ञानादिक का बड़ा फल है परन्तु मार्गशीर्ष कार्तिक मास वैशाखं सब महीनों में उत्तम गिने जाते है तिस में भी कार्तिक ज्ञान का फल विशेष है यह बात सब शास्त्र में प्रसिद्ध है कि कार्तिक वै महीने में काशी में पंचगंगास्नान का बड़ा पुण्य है ।

गद्या काशीखंडे ।

कार्तिकेमासि में यात्रा येः कान्ता भक्तितत्परेः ।  
बिंदुतीर्थे कृतं स्नानं तेषाम्भुक्तिर्न दूरतः ॥ १ ॥  
शतं समाप्तपस्तभू कृते यत्प्राप्यते फलं ।



तत्कार्तिके पंचनदे सकृत्स्नानेन कथ्यते ॥ २ ॥

कार्तिके बिन्दुतीर्थे यो ब्रूहचर्य्यपरायणः ।

स्नानमधीदति मानौ भानुजातस्य भीः कुतः ॥ ३ ॥

यथा पाप्मे । भार्गवार्चनचन्द्रिकायां च ।

आश्विनस्य तु मासस्य या शुक्ला कादशी भवेत् ।

कार्तिकस्य व्रतानीह तस्यां वै प्रारभेत्सुधीः ॥ ४ ॥

यथा विष्णुरहस्ये ।

प्रारभ्यैकादशीं शुक्लामाश्विनस्य तु मानवः ।

प्रातस्नानम्प्रकुर्वीत यावत् कार्तिकभास्कर ॥ ५ ॥

तथा मदन पारिजाते विष्णुः । तथा नारदीये च ।

कार्तिकं सकलं मासं नित्यस्नानी जितेन्द्रियः ।

जपन् हविष्यभुक् शान्तः सख्यपापैः प्रमुच्यते ॥ ६ ॥ इति ॥

इन वाक्यों का सारांश अर्थ यह है कि आश्विन शुक्ल एकादशी से आरम्भ कर जो कार्तिक में जितेन्द्रिय होकर और व्रतादिक कर पंचगंगा में प्रातः स्नान करता है वह सुखिभागी होता है और उस को यमराज का भय नहीं रहता और भी इस का महा फल लिखते हैं ।

तथा पुराणसारोद्धारः । नारदीये च ।

प्रयागे माघमासितु सम्यक् स्नानस्य यत्फलं ।

तत्फलं कार्तिके काश्यां पंचनद्यां दिनेदिने ॥ ७ ॥

कृते धर्म्मनदं नाम वेतायां घृतपापकं ।

द्वापरे बिन्दुतीर्थे च कक्षी पंचनदं स्मृतं ॥ ८ ॥

अत्रतः कार्तिको येषां गतो मूढधियाभिह ।

न तेषाम्प्रुण्यलेशोपि दुष्टानां शूकरात्मनां ॥ ९ ॥ इति ॥

माघमहीने में प्रयाग नहाने का जो फल है वह कार्तिक में पंचगंगा में एक दिन स्नान से मिलता है । सव्ययुग में धर्म्मनद, वेता में घृत पापा, द्वापर में बिन्दुपर, कक्षियुग में पंचगंगातीर्थ ही मुख्य है । जो लोग

कार्तिक में ज्ञान व्रतादिक नहीं करते वे मूढ़ बुद्धि हैं उन्हें किसी पुण्य का फल नहीं होता ।

यथा पद्मपुगणैः कार्तिक माहात्म्ये । मत्स्यभासा प्रति श्रीशुककृप्य वाक्यं ।

कार्तिके मासि ये नित्यं तुलासंस्थे दिवाकरे ।

प्रातः स्नास्यन्ति ते सुक्ताः महापातकिनोपि वा ॥ १० ॥

स्नानं जागरणं दीपं तुलसीवनपाननं ।

कार्तिके ये प्रकुर्वन्ति ते नरा विष्णुभक्तयः ॥ ११ ॥

कार्तिकव्रतिनां पुंसां विष्णुवाक्यप्रणोदिताः ।

रक्षां कुर्वन्ति शत्राद्याः राजानं किंकरा यथा ॥ १२ ॥

विष्णुप्रियं सकलकल्मषनाशनं यत् ।

सर्वत्र धर्मधनधान्यविष्टविकारि ॥

ऊर्जं व्रतं मनियमं कुरुते मनुष्यः ।

किं तस्य तौर्यपरिशौचनसेवया च ॥ १३ ॥

ते धन्यास्ते सदापूज्यास्ते धां चकुलमेव च

विष्णुभक्तिपरा ये स्युः कार्तिके व्रतकादिभिः ॥ १४ इति ॥

तुला के सूर्य में कार्तिक में जो लोग प्रातस्नान करते हैं वे महापातकी हों तो भी सुक्त होते हैं । ज्ञान, जागरण, दोषदान, तुलसी पूजन इत्यादिक जो लोग करते हैं वे सब विष्णु के स्वरूप हैं । कार्तिकके व्रती लोगों को इन्द्रादिक देवता ऐसी रक्षा करते हैं जैसे राजा को सेवक रक्षा करे क्योंकि उन को श्रीविष्णुभगवान की यही आज्ञा है । विष्णु का प्यारा, कल्पव नाश करने वाला, और सब धर्म धान्य धन का बढ़ाने वाला कार्तिक व्रत जो लोग करते हैं उन को तीर्थों में घूमने से और उस की सेवा से क्या है भयार्थ वृद्ध सब कुछ कर चुके । वह और उन के कुछ धन्य हैं और पूज्य हैं जो कार्तिक में व्रतादिक से विष्णु की भक्ति करते हैं ॥ इति ॥

तथा सनत्कुमारसंहितायां कार्तिकमाहात्म्ये ।

न कार्तिकसमं धर्ममर्थं नो कार्तिकात्परं ।

न कार्त्तिकसमं कास्थं मोक्षदानं च कार्त्तिकं कात् ॥ १५ ॥  
 तस्मात्क्षीरैश्च गाणेशैः शाक्तैः शैवैश्च वैष्णवैः ।  
 कर्त्तव्यं कार्त्तिकस्नानं सर्वपापापनुत्तये ॥ १६ ॥  
 न कार्त्तिकक्षमो मामो न काशी सद्यशी पुरी ।  
 न प्रयागसमं तीर्थं न देवः केशवात् परः ॥ १७ ॥  
 प्रमंगाद्वा बलाद्वापि ज्ञात्वा ऽज्ञात्वा कृतं तु यत् ।  
 स्नानं कार्त्तिकमासस्य न पश्चिमयातनां ॥ १८ ॥  
 तावद्गर्जन्ति पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ।  
 न कृतं कार्त्तिके स्नानं यावज्जन्तुभिरादरात् ॥ १९ ॥  
 तीर्थराजादितोश्चानि प्राप्तं कार्त्तिकमासके ।  
 स्नानार्थं पंचगंगांतु समायांति न संशयः ॥ २० ॥  
 दुर्लभो मानुषोदेहो दुर्लभा काशिकापुरी ।  
 तत्रापि कार्त्तिके मासि पंचगंगं सुदुर्लभं ॥ २१ ॥

कार्त्तिक के समान न कोई घर्म है, न अर्थ है न काम है न मोक्ष है न दान है। सब एक ही हैं इस से शैव, वैष्णव, शाक्त, और गाणपत्य सब को कार्त्तिक स्नान करना चाहिए। काशी के समान कोई पुरी नहीं प्रयाग के समान कोई तीर्थ नहीं केशव के समान कोई देवता नहीं और कार्त्तिक के समान कोई महीना नहीं है। संग साथ से वा बल से जाने वा बिना जाने भी जिन्हे कार्त्तिकस्नान किया है उस को यम का भय नहीं है। ब्रह्महत्या-दिक-पाप-तभी तक गर्जना करते हैं जब तक जोव ने कार्त्तिकस्नान नहीं किया। प्रयागादिक सब तीर्थ कार्त्तिक में पंचगंगा स्नान को घाते हैं। एक तो मनुष्य का देह दुर्लभ है दूसरे काशी पुरी दुर्लभ है तिस में भी कार्त्तिक महीने में पंचगंगा तीर्थ अति दुर्लभ है। इति।

और भी इस का महिमा बहुत लिखा है।

यथा पद्मपुराणे स्वर्गखंडे तृतीयाध्याये ।

तथा नारदीयेवक्त्रमांगदीपाख्यानि ।

प्रातः स्नानं नरो यो वै कार्तिके श्री हरिप्रिये ,

करोति सर्व्वतीर्थेषु यत्स्नानत्वात् तत्फलं लभेत् ॥ २२ ॥

सब तीर्थों में स्नान करने का जो फल है वह कार्तिकमें प्रातः स्नान से  
मिळता है । इति ।

तथा तत्रैव विंशतितमोऽध्याये ।

श्रेष्ठं विष्णुव्रतं विप्र तत्तुल्या लभतमग्वाः ।

कृत्वा व्रतं ब्रजेत् स्वर्गं वैकुण्ठं कार्तिकव्रती ॥ २३ ॥

श्री विष्णु भगवान का व्रत सब व्रतों में उत्तम है सो यज्ञ भी उस  
के समान नहीं है, जो लोग इस कार्तिकमें व्रत करते हैं वे व्रती लोग वैकुण्ठ  
नामक स्वर्ग में जाते हैं ।

तथा वायुपुराणे ।

यदीच्छेद्दिपुनान्भोगान् चन्द्रं सूर्य्यग्रहोपमान ।

कार्तिकं सक्वल्सप्राप्य प्रातस्नाथो भवेत्तदा ॥

कार्तिक का माहात्म्य सब शास्त्रों में बहूत कहा है कहा तक लिखे इस  
कार्तिक में एक व्रत और भी होता है जिस का नाम मासोपवास है ।

यथा हैमाद्रो विष्णुरहंस्ते ।

व्रतमेतत्तुष्टुष्टुथोश्याद्यावत्विंशद्दिनानितु ।

थाश्विनस्यासितेपक्षे एकादश्यामुपोषितः ॥ २४ ॥

वासुदेवंससुद्दिश्य कार्तिके सक्वले नरः ।

मासं चोपवसेद्यस्तु समुक्लिफत्तभाग् भवेत् ॥ २५ ॥

कृत्वा मासोपवासं च विचार्य्यं विधिवन्सुजे ।

सुखानां शतमुद्धृत्य विष्णुकोकं ब्रजेन्नरः ॥ २६ ॥

इत्यादिक । यह कार्तिक का मासोपवास व्रत अतन्त पवित्र है इस की  
विशेष विधि व्रतार्क में लिखी है । कार्तिक का माहात्म्य सूक्तकार की श्रव  
कृष्ण उच के नियम लिखे जाते हैं जिस से विदित हो कि कार्तिक व्रत क्लम से

करना और किस किस वस्तु का त्याग करना इत्यादिक । कार्तिक ज्ञान भा-  
श्विन सुदी ११ एकादशी से प्रारम्भ करना इसकी वाक्य ऊपर लिख आए हैं ।

यथा स्कान्दे तथा ब्रह्मपुराणे च ।

वैष्णवं वैष्णवानां यद्भक्तस्वैष्णुपदप्रदं ।

आश्विनस्यासितेपक्षे एकादस्यां द्विजोत्तमैः ।

वैष्णवैः कल्पनापूर्वम्प्रारम्भोऽस्व्यं विधीयते ॥ २७ ॥

विष्णुपद का देने वाला यह वैष्णवों का परम वैष्णवव्रत कुंवार सुदी एका-  
दशी से वैष्णव लोगों को कल्पना पूर्वक प्रारम्भ करना चाहिए तथा कार्तिक  
में खाने पीने का संयम और ब्रह्मचर्य तो अवश्य ही करना चाहिए ।

प्रमाणं नारदीये ।

अन्नतेन क्षपेद्यस्तु मासं दामोदरप्रियं ।

तिथ्यग्योनिमवाप्नोति नात्र कार्याविचारणा ॥ २८ ॥

तथा काशोखंडे ।

जर्ज्वयवान्न मशूनीयाद् देवान्नमथवा पुनः ।

वृन्ताकं शूरणं चैव शूकशोवींश्च वर्जयेत् ॥ २९ ॥

स्कान्दे ।

कार्तिके वर्जयेत्तद्विदुर्लं बहुबीजकं ।

मास सुदृग ममुराश्च चणकाश्च कुन्तल्यकाः ॥ ३० ॥

कार्तिक का महीना जी लोग बिना व्रत के बिताते हैं वे पशु योनि  
प्राते हैं । कार्तिक में यव और पवित्र इविष्यान्न खाना और भंडा, मूरन और  
सेम इत्यादि नहीं खाना । कार्तिक में हिंदन बहुत पीयावासी वस्तु, उड़द,  
मोट, मसुरी, चना और कुन्तली इत्यादि नहीं खाना इति ।

तथा नारदीये स्कान्दे च ।

कार्तिके वर्जयेत्तैलं कार्तिके वर्जयेन्मधु ।

कार्तिके वर्जयेत्कांस्यं कार्तिके शुक्लसन्धितं ॥ ३१ ॥

कार्तिक में तेल, मधु, कांस्यपात्र में भोजन, वासीधन, और खारि  
शाक ये सब वर्जित हैं । इति ।

कार्तिक के व्रत में ब्रह्मचर्य और हविष्यभोजन ही मुख्य है जैसा कि ऊपर लिख आए हैं “ जपन्हविष्यभुक्तयन्तः ” अब हविष्य में कौन कौन वस्तु है सो लिखते हैं और कार्तिक में किस-किस वस्तु का त्याग है वह भी लिखते हैं ।

यथा सनत्कुमारसंहितार्या कार्तिकमाहात्म्ये ।

तथा पुराणमारोहारे च पुराणमसुद्धयेपि । भविष्योक्ते ।

हैमंतिकं मितास्त्रिंशं धान्यामुद्गास्त्रिंशताः यवाः ॥

कन्नाय कंगु नीवारा वास्तुकं द्विल्लमोचिका ।

पष्टिका कालशाकंच मूलकं केसुकीत्तरं ॥२२॥

कंदं सैधव सामुद्रो लवणो दधि सर्पिणी ।

पयोनुद्धृतसारं च पनसास्त्रीडरीतकी ॥ २३ ॥

कटनी जवली धात्री फलान्यगुडमैश्वरं ।

पिप्पली जीरकं चैव नागरंगकतितथौ ।

अतैलपक्वं मुनयो हविष्यान्नम्यचक्षते ॥ २४ ॥

तथा इमाद्री छान्दोग्यपरिशिष्टे काल्यायनः ।

हविष्येषु यवाः सुख्यास्तदनु त्रीडयः स्मृताः ।

साषकोदवगौरादौन् सर्वाभावेपि वर्जयेत् ॥ २५ ॥

तत्रैव अग्निपुराणे ।

त्रीडि षष्टिक सुद्राक्ष कन्नायाः सल्लक्ष्मण्यः ।

श्यामाकाश्चैव नीवारागोधूमाश्चान्नैहिताः ॥ २६ ॥

हविष्य में इतनी वस्तु लेना । जाड़े का सपेद चावल, धान, मूंग, तिल, यव, मटर, कंगुनी, तिनी का चावल, बजुषा का शाक, हेला का शाक, कालिका का शाक, केसुका का शाक, साठी का चावल, सेंधा नोन और स-सुद्र का नोन, दही घी, बिना घी निम्बाना दूध, कटहर, आम, हरे, केला, हारफारिवड़ी, चावल, चीनी-मिन्की ( गुड़बिना ) पीपल; जीरा, नरंगी, हम-ली, तैलमें न कियं होय ऐसे-अन्न ली सुनि-कोय हविष्य कहते हैं । हविष्य

में जब मुख्य हैं वा नहीं तो धान भी घास है परन्तु उड़द, कौदो, सपेद गेहूं तो कुछ भ्रव न मिलता होय तो भी नहीं लेना । धान, साठो का चावल, मंग, कन्नाई, जल, दूध, सांवा, तिन्नी, ज्ञान गेहूं ये व्रत में लेना । भोजन करने की वस्तु लिख के भ्रव न खाने वासो वस्तु लिखते हैं ।

यथा सनत्कमारसंहितायां कार्तिकमाहात्म्ये ।

सर्वथैव न भोक्तव्यमामिषान्नं तु कार्तिके ।

तत्सर्वदा वर्जनीयं कार्तिके तु विशेषतः ॥ ३७ ॥

दग्धमन्नं द्विपक्वं च मसूरान्नं सवस्त्रकं ।

उद्धान्नकाः पयुषितमन्नमामिष उच्यते ॥ ३८ ॥

वृन्तांकार्णिकानि पटोलानि तुम्बिका च कालिंगकं ।

द्विस्त्रीफलानि चपुमं फलशक्रेषु चामिषं ॥ ३९ ॥

दीरका तुलसी च क्ली छत्राकं पीत्र पदकं ।

चक्रवर्ती राजगिरिः पत्रशक्रेषु चामिषं ॥ ४० ॥

गंजरं रक्तमूलं च पलांडुर्लशुनं तथा ।

सर्वदैवामिषाणिस्युः कार्तिके स्मरणं त्यजेत् ॥ ४१ ॥

परमांसैःस्वमांसानि यः पुष्याति नराधमः ।

परजन्मनि तस्यैव विष्टायां जायते ह्यंसिः ॥ ४२ ॥

बाह्यान्मृगान् पक्षिणीवा तथा बालफलानि च ।

घातयन्ति दुर्गात्मानो जायन्ते मृतबालकाः ॥ ४३ ॥

सर्वाण्येकनदानानि सर्वतीर्थान्यथैकतः ।

सर्वव्रतान्येकतश्च ह्यहिंसाकलयामस ॥ ४४ ॥

एवं विचार्य्य भुञ्जीत स्वान्नं विष्णुनिवेदितं । इति

कार्तिक-में मांस और उष के समान जितनी वस्तु है वह सबसर्व-घान खाना । और यह मांस तो सर्वदा वर्जनीय है परन्तु कार्तिक में विशेष करके ग्रन्थात् मांस इतरादिक सुरी वस्तु कभी नहीं खाना और कार्तिक

में तो सर्व्वथा नहीं खाना ! जन्ता भक्ष, दो बिर किया हुआ भक्ष, मसूर, कु-  
रधी, बामो भक्ष ये सब भी मांस कहलाते हैं । भंडा, परबक, तुम्बी फल, त-  
रबूज, कुंदुरू, और ककड़ी, ये सब फल के भाक में मांस के तुल्य हैं । तुलसी,  
छाता प्राक, पोई, चकौंड, राजगोरा, ये सब पत्त के भाक में आभिष के  
तुल्य हैं । गाजर खान मूखो लहसुन गोभी प्याज इत्यादिक मांस सर्व्वदा ही  
त्याग करना और कार्तिक में तो इन का स्नान भी नहीं करना । दूसरे जीवों  
के मांस से जो पापी अपने मांस को पुष्ट करता है अर्थात् जो लोग बल पुष्टता  
वा स्वाद के लीभ से कियो पशु पक्षी का मांस खाते हैं वे मनुष्याधम दूसरे  
जन्म में उभी जीव के ( जिस का मांस खाया है ) विष्टा के कीड़े होते हैं  
छांटे पशुओं को छांटे पक्षियों को भी मारते हैं जो कच्चे फलों को तोड़ते हैं  
वे लोग दूसरे जन्म में मरे बालक होते हैं । सब द्रव्य और सब दान और सब  
तीर्थ का एकत्र फल और अहिंसा का फल बराबर है ऐसा विचार के सुंदर  
गसादो भक्ष ही भोजन करना मांसादिक सर्व्वथा नहीं खाना । इति ।

तथा-पाङ्गे कार्तिकमाहात्म्ये ।

परान्नं परश्रय्यां च परवाटं परांगनां ।

सदा च वर्ज्येत्याज्ञो कार्तिके तु विशेषतः ॥ ४५ ॥

वेद देव द्विजानां च गुह्य गो वृतिनान्मथा ।

खराजोपहतां निंदां वर्ज्येत्कार्तिकीवृत्ती ॥ ४६ ॥

दुसरो का भक्ष दूसरो को सेज दूसरो को निंदा दूसरो को स्त्री इन  
को सदा बचाना चाहिए कार्तिक में विशेष करके । वेद, देव, तीनों वर्ण  
अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रो वैश्य, गुरु, गऊ, व्रतकरनेवाली । जिन का राज्य अर्थात्  
सम्पदा नाश हो गई है इन लोगों को निन्दा नहीं करना । इस का भावार्थ  
यह है कि कार्तिक में जहां तक बनसके दूसरो का भक्ष नहीं खाना और  
दूसरो को श्रेया से बचना अर्थात् दूसरो को स्त्री से बचना दूसरो को निन्दा  
नहीं करना अब इस काल में लोग लोगों को निन्दा बहुत करते हैं और दू-  
सरो को निन्दा करना मजा पाप है क्योंकि जो लोग दूसरो को निन्दा करते  
हैं वे लोग जिन को निन्दा करते हैं उन का सब पाप भाप खिलते हैं तथा  
दूसरो को स्त्री को कुदृष्टि देखना कार्तिक में विशेष करके वर्जित है और अब  
कार्तिक में बहुत स्त्रियों के नष्टाने जाने से कितने ही पुरुष भी सवेरा भया



कि कार्तिक नहाने के बहाने उन का दर्शन करने जाया करते हैं उन लोगों को चाड़िए कि इस वाक्य को कान खोल के सुनें । इति ।

कार्तिक के व्रत और उस के नेम लिख के अब कार्तिक सनान की विधि और मन्त्रादिक लिखते हैं जिस का प्रमाण और विशेष विधि पुराण सारोद्धार, पुराण समुच्चय, निर्णयसिन्धु, स्कन्दपुराणांतर्गतकार्तिकसाहाय्य, पद्मपुराणांतर्गत कार्तिक साहाय्य, ब्रह्मपुराण आदिक ग्रन्थों में लिखा है विशेष करके इस का विस्तार पूर्वक विधान सनत्कुमार चिंता के कार्तिक साहाय्य में है जिस में से आवश्यक कर्में यहाँ पर लिखे जाते हैं । प्रातः कान्त उठ के धर्मचिन्तन करके भगवान का ध्यान करना जैसा सनत्कुमार चिंता में ध्यान लिखा है ।

प्रातस्सुराभिभवभीतिमहार्तिशान्तौ नारायणं गरुडवाहनमब्जनाभं  
ग्राहाभिभूतवरवारणमुक्तिहेतुं चक्रायुधं तरुणवारिकपञ्चनेत्रं । १७७।  
प्रातर्नाभि मनसा वचसा च मूर्ध्ना पादारविंद्युगलं परमस्यपुंसः ।  
नारायणस्य नरकार्णवतारकस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य । १८८।  
प्रातर्भजाभि भजतामभयं करंतं प्राक् सर्वजन्मकृतपापभया पृच्छ्यै ।  
योग्राहवक्त्रपतितांग्रिगजेन्द्रघोरंशोकार्तिनाशनकरोधृतशंखचक्रः १९९।

श्लोकत्रयमिदम्पुण्यं प्रातः प्रातः पठेन्नरः ।

लोकत्रयगुरुस्तस्मै दद्यादात्मपदं हरिः ॥ ५० ॥

और भी जो कुछ हो सके भगवान का स्मरण कर के अपने गुरु का ध्यान करना ।

यथा गार्था ।

ज्ञानमुद्रापरं ध्यायेत् श्रीगुरुं स्वस्तिक्वामनं ।

ध्यात्वा कृष्णं परं ध्यायेत् भक्तो एकाग्रमानसः ॥ ५१ ॥

किशोरं कोमलं श्यामं वंशीविचविभूषितं ।

एवं कृत्वा हरिर्धानं पुनर्गच्छेद्हरिस्थलं ॥ ५२ ॥

पक्ष्मी सारि बैठे ज्ञानमुद्रा से उपदेश कर रहे हैं ऐसा अपने श्री गुरु का

ध्यान कर के फिर श्री ह्याचन्द्र का ध्यान करना कौमल अंग किशोर सुरूप  
श्यामसुन्दर बंधी छड़ी धारण किए ऐसे श्री भगवान का ध्यान कर के फिर  
सहादेव प्रत्यादिक देवता, गंगादिक नदी, नारदादि ऋषि, पृथ्वी, सप्तसुद्र,  
नवग्रह इत्यादिक का ध्यान कर के वैश्वानर का ध्यान कर के अपना हाथ देख-  
ना वा दूब, ऐना, सोना, गऊ इत्यादिक मंगल वस्तुओं को देख लेना जिस  
में दृष्ट सुख दर्शन का दोष नाश हो जाय फिर यह मन्त्र पढ़ के पृथ्वी पर पैर  
रखना ।

ससुद्रनेखस्त्रिदेवि पर्वतस्तनमंडिते ।

विष्णुपत्निमस्तुत्यं पादस्पृशंक्षमस्त्रमे ॥ ५३ ॥

फिर मंदिर में जा कर के श्री भगवान को दंडवत् करना फिर नगर के  
बाहर शौच कर के पवित्र होना नदी के तलाव के वा कोई जलाशय के कि-  
नारे मल त्याग नहीं करना इस का मजा दोष है और भी अन्न के खेतखलिहान  
में देवालय में राजमार्ग में मल त्याग नहीं करना इस का माघ माहात्म्य में  
बड़ा पाप लिखा है और जहाँ मल त्याग करना बड़ा दण्ड विहाय के और  
सुख के भोग वस्त्र को आड़ कर के मुख्य चन्द्रमा की ओर से सुख फिर कर के  
मल त्याग करना ऐसे मल त्याग कर के फिर सृष्टिकाश्चर्य कर के पवित्र होना  
जिस की विधि सब स्मृतिओं और पुराणों में लिखी है । एकालिंगि गुदेपंच  
प्रत्यादि । यह वाक्य पृथक् पृथक् पुस्तकों में अनेक जगहसे मिलता है और गि-  
नतों में परस्पर विरोध पड़ता है परन्तु यहाँ हम वही वाक्य लिखते हैं जो सन-  
कुमार संहिता के कार्तिक माहात्म्य में है क्योंकि यहाँ प्रसंग कार्तिक का है ।  
यथा । एकालिंगि गुदे सप्त दश वामकरे तथा ।

उभयोः सप्तदातव्याः पादयोर्द्वैतिकाक्षर्यं ॥ ५४ ॥

लिंग में एक गुदा में सात बायें हाथ में दश फिर दोनों हाथ में सात-  
सात पैर में दो दो बेर मिट्टी लगा के घोना । बुद्धाचारी की इसकी दूनी वाग  
प्रस्य को तिगुनी और जतों को चौगुनी यह क्रम है । फिर

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुध्वरे ।

सृष्टिके हरि में पापं यन्मया दुष्कृतं कृतं ॥ ५५ ॥

इस मन्त्र से श्व सृष्टिका से हाथ पैर धो के फिर दत्तपूजन करना ।

यथा गार्ग्ये ।

कांटकी चीर कार्पास निगुंडौब्रह्मवृक्षिका ।

वटै रंड विगंधाख्यान्न कुर्व्याद्दन्तधावनं ॥ ५६ ॥

बबूल और कार्पास निगुंडी पक्षाग्र बड़ रेंड दुर्गंध के वृक्ष इस की लकड़ी से दंतुवन नहीं करना तथा दंतुवन करने के समय यह मन्त्र पढ़ना ।

तच्चैव ।

आयुर्वर्षं यशो वर्चः प्रजा पशु वसूनि च ।

ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वंनो देहि वनस्पते ॥ ५७ ॥

फिर कुक्का करना उपवास, नवमी, ऋतु आद्य के दिन, अमावस, आदित्य-वार, एतने दिन दंतुवन नहीं करना मिट्टी वा चीर किसी वस्तु से सुख शूष कर लेना और बारह कुक्का करने से सुख की शक्ति हो जाती है फिर ओ गंगा स्नान करने जाना उस समय चित्त एकाग्र कर के जाना सुख में भगवान का यश गावते जाना जो लोग ओ गंगा स्नान करते जाते हैं उनको पैर पैर पर अश्वमेध और वाजपेययज्ञ का फल होता है ।

यदुक्तं । श्रीमद्भागवते पंचमस्कन्धे

यस्यांज्ञानार्थं चागच्छतः पुंसः पदेपदेऽशुभेधराजसूय फलं दुर्लभमिति

ऐसे श्री गंगाजी के स्नान को मन अति शुद्ध करके जाना ओ जाय के पड़िले ओ गंगाजी के तट पर दीपदान करना और भी देवालय तुलसीवृक्ष के निकट दीपदान करना ।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्तिकमाहात्म्ये ।

देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः ।

निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी ॥ ५८ ॥

फिर श्री गंगाजी के निकट आय के आज्ञाधारना प्रमाण सृष्टि में ।

अशोधितेषु केशिषु स्नानं यः कुरुते नरः ।

सस्यक् पुण्यं न लभते तस्मात्केशींश्च शोधयेत् ॥ ६० ॥

फिर संकल्प करे “ कार्तिकमासे असुकपक्षे असुकतिथौ असुक वासरे असु-  
कगीतोत्पन्नो असुक शर्माहं अचिन्तरफलप्राप्तये श्री गंगा स्नानमहं कारिष्ये । ”

ऐसे संकल्प करके फिर प्रतिज्ञा करना इस मन्त्र से।

ज्ञातिं कीं हं करिष्यामि प्रातस्नानं जनार्दन ।

प्रीत्यर्थं तव देवेश दासोदर मया सह ॥ ६१ ॥

यह प्रतिज्ञा का मन्त्र पढ़ना (यह मन्त्र सब कार्तिकमाहात्म्य में लिखा है) फिर अर्घ्य इन मन्त्रों से दीजिए।

यथा स्नान्दे पाद्मे । ब्रान्धे सनत्कुमारसंहितायां च ।

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।

नमस्तेस्तु हृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोस्तुते ॥

नित्ये नैमित्तिके कृत्ये कार्तिके पाप शोधने ।

गृहाणार्घ्यं मयादत्तं राधया सहितो हरि ॥ ६२ ॥

व्रतिनः कार्तिकेसासि स्नातस्व विधिवन्धम ।

गृहाणार्घ्यं मयादत्तं दलुजिन्द्रनिष्ठुदन ॥ ६३ ॥

दासोदर जगन्नाथ शंखचक्रगदाधर ।

राधाकान्तगृहाणार्घ्यं प्रसीद परमेश्वर ॥ ६४ ॥

द्रवरूपेण देवेश वत्ततेगंगवारिषु ।

इदमर्घ्यं गृहाणत्वं खौट्वात्यकारुणांशुः ॥ ६५ ॥

ऐसे अर्घ्य प्रदान करके फिर बाक में अबना तिल और तुलसी की मही लगाना और जिस जिस दिन अबना तिल न लगाना हो उस दिन केवल तुलसी की मही लगाना। फिर श्री गंगा जी को स्तिका का तिलक (अश्व-प्रांते रथ प्रांते) इस मंत्र से करके हाथ जोड़के दंडवत् करके प्रार्थना करना।

किरणा धूतपापां च पुण्यतोयासरश्वती ।

गंगाचैवमुना चैव पंचनदाः पुनक्तुमां ॥ ६६ ॥

अयोध्या मथुरा गया काशी कांची अबन्तिका ।

पूरी हारावती चैव सप्तैता मोक्षदायकाः ॥ ६७ ॥

विष्णोराज्ञा मनुप्राप्य कार्तिक व्रतकारिणः ।

रक्षन्ति देवास्ते सर्व्वे मां पुनन्तु सवासर्वाः ॥ ८ ॥  
 वेदमन्त्रा संवीजाश्च सरहस्यामखान्विताः ।  
 काश्र्यपाद्याश्च मुनयो मां पुनन्तुसदैवते ॥ ६६ ॥  
 नमस्ते देवदेवेश शंखचक्रगदाधर ।  
 देवदेहिमसानुज्ञां युष्मत्तीर्थं निसिक्वणे ॥ ७० ॥  
 नन्दिनीत्येष ते नाम देवेषु जलिनी तिच ।  
 दक्षा पृथ्वी च विहगा विश्वनाथा शिवा सती ॥ ७१ ॥  
 विद्याधरी सुप्रसन्ना तथा लोकाप्रसादिनी ।  
 ज्ञेमावती जान्हवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी ॥ ७२ ॥  
 एतानि पुण्यनामानि भूजानकालेप्रकीर्तयेत् ।  
 भवेत्सन्निति तत्र गंगान्निपथगामिनी ॥ ७३ ॥ इति ॥

फिर हाथजोड़ के यह मन्त्र पठिए ।

स्वर्गारोहणसोपानं त्वदीयमुदकं शिवे ।

अतः स्पृशामि पादाभ्यामपराधं क्षमस्वमे ॥ ७४ ॥

ऐसे प्रार्थना कर के भीन होय के स्नान करना भगवान का नाम लेना  
 औ गंगा जी के निकट कुत्ता नहीं करना ऐसे स्नान करके सोढ़ी पर एक  
 अर्घ्य देना ।

मंत्र ।

यन्मया दूषितं तीर्थं शारीर मल सन्भवैः ।

तद्दोष परिहारार्थं यच्चाणं तर्पयाम्यहं ॥ ७५ ॥

फिर शुद्ध हो वस्त्र पहिन के सन्ध्यादिक करना । स्कन्द पुराण में लिखा है  
 कि औ गंगा जी में ये तेरह कर्म नहीं करना । शौच, कुत्ता, जूठाफिकना,  
 मलकरना, तेज लगाना, सिंदा, प्रतिग्रह, रति, दूसरे तीर्थ की इच्छा तथा  
 दूसरे तीर्थ की प्रशंसा, बस्त्र धोना, उपद्रव, ये सब कर्म औ गंगा जी में नहीं  
 करना, फिर औ गंगाजल माथे पर छिड़क कर अघमर्षण करना फिर वस्त्रांग

प्राप्त्यन करके शिखा बांधना फिर तिलक करना बिना तिलक सभ्यादिक नहीं करना ।  
यथा पाष्टे ।

यज्ञोदानं तपोहोमं स्वाध्यायपढतर्पणं ।

भस्मीभवतित्ससर्वं जर्ध्वपुंड्रं विनाकृतं ॥ ७६ ॥

यज्ञदान तप होम स्वाध्याय पढतर्पण इत्यादिक सब कर्म जर्ध्व-  
पुंड्र किए बिना जो करते हैं उन का निष्फल होता है । जर्ध्वपुंड्र ही लगाना  
और तिलक न लगाना इस का सिद्धान्त श्रीश्री गिरिधरदेव चरण ने जर्ध्व-  
पुंड्र मार्तण्ड में किया है । ऐसे ही सर्वदा तुलसी की माला धारण करना  
और जो सब दिन धारण न करते हों तो कार्तिक में अथवा धारण करना ।  
यदुक्तं निर्णय सिन्धौ । अथ माला धारणं । तत्र स्कान्दे । द्वारकामाहातम्ये ।

निवेद्य केशवे मालां तुलसी काष्ठ संभवां ।

वहते यो नरो भक्त्या तस्य नैवास्ति पातकं ॥ ७७ ॥

नजज्ञा रतुलसी मालां धात्री मालास्विशेषतः ।

सहापातकं संहन्तीं सर्वकामार्थदायिनीं ॥ ७८ ॥

विष्णुधर्म ।

स्मृश्रेतुयानि लोमानि धात्री माला कलौ नृणां ।

तावद्वर्षं सहस्राणि वैकुंठे वसतिर्भवेत् ॥ ७९ ॥

मालायुग्मं तु यो नित्यं धात्री तुलसि सम्भवां ।

वहते कांठे दिशि तु कल्प कोटि दिवं वसेत् ॥ ८० ॥

मन्त्र । तुलसी काष्ठसम्भूते माले कृष्णजनप्रिये ।

विभर्मित्वासर्हं कंठे कुरु मां कृष्णवक्त्रभं ॥ ८१ ॥

एवं सम्प्रार्थ्य विधिवन्मालां कृष्णगलीर्पितां ।

धारयेत् कार्तिके यो वै सगच्छेत् वैष्णवम्पदमिति ॥ ८२ ॥

निर्णयसिन्धुं ग्रन्थ में माला धारण लिखते हैं वहां स्कन्दपुराण का  
यह वचन है कि तुलसी के काठ की माला भगवान की प्रसादी जो लोग  
भक्ति से पहिनते हैं उनके एक पाप भी नहीं बचते । महा पापों को दूर करने

वाली सब कामों के देनेवाली तुलसी की माला वा शाली की माला की कधी भी नहीं त्यागना । विष्णुधर्म में । कल्पियुग में श्रवले को माला से जितना रींश्रां छूजाता है उतने हजार बरस उस मनुष्य को स्वर्गवास मिलता है । ऊपर जो मन्त्र लिखा है उस से जो विधिपूर्वक माला सदा धारण करते हैं वा श्री कृष्ण की प्रसादी माला जो लीग कार्तिक में धारण करते हैं उन को वैष्णव पद मिचता है । इति ।

इस रीति से तिलक माला धारण करके क्या करना चाहिए सो लिखते हैं ।

यथा मनक्त्मारसंहितायां ।

ततः सन्ध्या सुपासीत स्वसूक्तोक्तेन कर्मणा ।

ततः कार्यां जपोदेव्या यावत्सूर्योदयो भवेत् ॥ ८३ ॥

फिर अपने सूत्र के अनुसार सन्ध्या करना फिर जब तक सूर्योदय न होय तब तक गायत्री देवी का जप करना । इति ।

निर्णयसिन्धु बनाने वाले ने यह निर्णय किया है कि कार्तिक के महीने में विना अरुणोदय हो संध्या करने का दोष नहीं है । इति ।

सायाह्नतं सूत्र पुरीष शौचं स्नानांच गंडूषणसिद्धन्तंच ।

वस्त्रस्त्रसंच्छातनमेवदीपान् क्षमस्त्र गंगे सम सुप्रसीद ८४

श्री गंगा को प्रार्थना इस मंत्र से करना । अब सूर्योदय पीछे जो करना चाहिए वह लिखते हैं । तत्रैव ।

विष्वोःसहस्रनामाद्यं सन्ध्यान्ते च पठेन्नरः ।

देवालये समागत्य पुनः पूजनमारभेत् ॥ ८५ ॥

सन्ध्या करके विष्णुसहस्र नाम इत्यादिक ग्रन्थों का पाठ करके फिर भगवान की पूजा को आरम्भ करना । तहां फूल-से भगवान की पूजा करना इस का माहात्म्य लिखते हैं ।

यथा भार्गवार्चनदीपिकायां नृसिंहपुराणे ।

अगस्त्यकुसुमैर्द्वैवं योर्चयेच्च जनाह्वनं ।

दर्शनात्तस्य देवर्षे नरकं नाहति नरः ॥ ८६ ॥

विंहाय सर्वं पुण्याणि मुनिपुष्येण केशवं ।

कार्तिके यो ऽर्चयेत्तया वाजपेयफलं लभेत् ॥ ८७ ॥

स्कान्धे ।

मानतीमालया विष्णुः कृतवधा चैव पूजितः ।

समाः सहस्रं सुप्रीतो भवेत्स सधुसूदनः ॥ ८८ ॥

पृथ्वीचन्द्रोदये पाद्मे ।

कार्तिके नार्चितो यैस्तु कमलैः कमलैश्चणः ।

जगत्कोटिषु विप्रेन्द्रं न तेषां कमला गृहे ॥ ८९ ॥

कार्तिके केशवे पूजा येषां नाम्ना सुतैः कृता ।

ते निर्भर्त्स्य रवेः पुत्रं वसन्ति द्विदिवे सदा ॥ ९० ॥

तुलसीदललक्षणे कार्तिके योर्चयेत् हरिं ।

पञ्च पत्रे सुनिश्चिष्टं भौक्तिकं लभते फलं ॥ ९१ ॥

अगस्त के फूल से जो भगवान की पूजा करते हैं उन के दर्शन से नरक नहीं मिलता । सप फूलों को छोड़ के कार्तिक में जो अगस्त के फूल से भक्ति पूज्यं क पूजा करते हैं उन्हें वाजपेय का फल होता है । कार्तिक में जिन्हें कमल से श्री भगवान की पूजा नहीं किया उन के घर कोटि जगत् तक लक्ष्मी नहीं आती । जो कार्तिक में भगवान के नाम से पूजा करते हैं वे लोग भ्रम को घनादर देने स्वर्ग में रहते हैं । और जो लोग साख तुलसी दल भगवान को अर्पण करते हैं वे एक एक पत्रे में मोती समर्पण का फल पाते हैं वा एक एक पत्रे में सुक्ति का फल पाते हैं । इति ।

मन्त्रः ।

नमस्तुभसि कल्याणि गोविन्दचरणप्रिये ।

केशवार्थिं विचिन्वामि वरदा भव श्रीभने ॥ ९२ ॥

ऊपर लिखे हुए मन्त्र से तुलसी तोड़ कर श्री भगवान की पूजा करने का एकथनोय फल है । अब पूजा करने की विधि लिखते हैं वह पूजा दो प्रकार की है जिस में नियम नहीं और परममावात्मिका उस का नाम सेवा और जिस में नियम होय चाहे नित्य होय चाहे नैमित्तिक होय उस का



नाम पूजा । इस के सेद और प्रकार आदिपुराण और गर्गसंहिता में और भी सम्प्रदाय के ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक लिखे हैं । अब हम इस स्थान पर पूजा करने की विधि लिखते हैं । श्री भगवान की पूजा में चित्त एवाग्र रखना पन्द्रहसे मंदिर में जा करके पशु को जगाना फिर षोडशोपचार पूजा की साम-ग्री ले के पूजा आरम्भ करना तब पड़िसे आवाहन करना ।

मन्त्र ।

गोक्षोक्थामाधिपते रमापते गोविन्ददासोदरदीनवत्सल ॥

राधापते साधव सात्वतां पते सिंहासनेस्निग्धमसन्मुखोभव ६३

अथ आसनं ।

श्रीपद्मारागस्फुरदूर्ध्वपृष्ठं महाहैवैड्यैखचित्पदाङ्गं ।

वैकुण्ठबैकुण्ठपते गृहाण पीतं तद्धित्भ्राजकवस्त्रयुतं ॥ ६४ ॥

अथ पाद्यं ।

परिस्थितं निसर्जसैक्यपात्रे समागतं विष्णुमरोवराह्यि ।

योगेश देवेश जगन्निवास गृहाण पाद्यं प्रणमामि पादौ ॥ ६५ ॥

अथ अर्घ्यं ।

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते धरणीधर ।

नमस्ते कमलाकान्त अर्घ्यं नः प्रतिगृह्यतां ॥ ६६ ॥

अथ अक्षतं ।

कपर्वासितं तोयं मन्दाकिन्याःसमाहृतं ।

ओचय्यतां जगन्नाथ सया दत्तं हि भक्तितः ॥ ६७ ॥

अथ स्नानं ।

काश्मीरपाटीरविमिश्रितेन स्वमञ्जिकीश्रीरवताजलेन ।

स्नानं कृत्वा त्वयदुनाथ देव गोविन्दगोपालकतीर्थपाद ॥ ६८ ॥

अथ मधुपर्कं ।

मध्यान्हचण्डाकभवश्रमापहं सितांसपङ्कसजीहरं परं ।

गृहाण विष्णो मधुपर्कमासनं श्रीकृष्णपीताम्बरसात्वतां पते ॥ ६९ ॥

अथ वषट् ।

द्विभो सञ्चतो प्रस्फुरत् प्रोज्ज्वलतं महत् स्वर्णसूचांकितं दुर्लभं च ॥  
सूतो निश्चितं पद्मकिं जल्लवणं गृह्याण स्वर्देवपीतास्वाराख्यं ॥ १०० ॥

अथ भूपर्णं ।

एनकरत्नमयं मयनिर्मितं मदनरुक्मिन्दनं सदनं रुचां ॥  
उजसि सर्वसुदुर्णविभूषणं सक्कललोकविभूषणं गृह्यतां ॥ १०१ ॥

अथ यज्ञोपवीतं ।

सुवर्णममापीतवर्णं सुमंत्रैः वरं प्रोक्षितं वेदवन्निर्मितं च ।  
शुभं पंचकार्येषु नैमित्तिकेषु प्रभो यज्ञ यज्ञोपवीतं गृह्याण ॥ १०२ ॥

अथ गंधं ।

संख्येन्दुगोभं दहृमंगलं श्री काशीरपाटौरकंपकंपकं ।  
स्वसंडनं गंधचयं गृह्याण समस्तभूमंडलभारहारिण् ॥ १०३ ॥

अथाक्षतं ।

ब्रह्मावर्ते ब्रह्मणा पूर्वं मुक्तं ब्राह्मी स्तोत्रैः सिंचितं विष्णुना च ।  
रुद्रेण रौद्राक्षितो राक्षसेभ्यः साक्षाद्भूमावक्षतं त्वं गृह्याण ॥ १०४ ॥

पुष्पं ।

मंदार सन्तानक पारिजात कल्पद्रुमश्री हरिचंदनानां ।  
गृह्याण पुष्पाणि हरे तुलास्या मिश्राणि साक्षाद्भवमंजरीभिः ॥ १०५ ॥

अथ धूपं ।

क्षवंगपाटीरजचूर्णमिश्रं मनुष्य दियासुर सौख्यदं च ।  
सद्यः सुगन्धीकृतचर्व्यदेशं हारावती भूप गृह्याण धूपं ॥ १०६ ॥

अथ दीपं ।

तमोहारिणं ज्ञानमूर्त्तिं मनोह्रं क्षसद्वर्त्तिकपूरं युक्तं गवाज्यं ।  
जगन्नाथ देवेश ज्योतिस्वरूप स्फुरन्ज्योतिकं दिव्यदीपं गृह्याण १०७

अथ नैवेद्यं ।

सर्व्वं रसैर्वेदविधिव्यवस्थितं रसै रसान्यं च यशोमतीकृतं ।  
गृहाण नैवेद्यमिदं खरोमिचिषं गव्याकृतं सुन्दरनन्दनन्दन ॥ १०८ ॥

अथ जलं ।

गंगोत्तरी वेगबलात्समुद्भूतं सुवर्णपात्रेण हिमांशुमौतलं ।  
सुनिर्मलाभं ह्यमृतोपसं जलं गृहाण राधावरदीनवल्लज ॥ १०९ ॥

अथ आचमनं ।

कंकीलजातीफलपुष्पवासितं परं गृहाणाचमनं दयानिधि ।  
राधापते श्रीविरिजापते प्रभो श्रियःपते सर्व्वपते च भूपते ॥ ११० ॥

अथ ताञ्जूलं ।

जातीफलैलासुरपुष्पयुक्तं यावद्विपूगीफलपत्रवृन्दं ।  
सुक्ताफलाखादिरोचनार्थं गृहाण ताञ्जूलमिदं वृषेश ॥ १११ ॥

अथ दक्षिणा ।

नाकपालवसुपान्तसौलिभिः वन्दितांघ्नियुगल प्रभो हरे ।  
दक्षिणां परिगृहाण माधव यज्ञरूप प्रभु दक्षिणापते ॥ ११२ ॥

अथ पदक्षिणा ।

यानिकानिच पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।  
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदेपदे ॥ ११३ ॥

अथ नीराजनं ।

प्रस्युरत्परमदीप्तमंगलं गोघृताक्तनवपंचवर्त्तिकं ।  
चारत्तिकं परिगृहाण चार्त्तिकं हन्पुण्यकौर्तिविशदीकृता वने ११४

अथ प्रार्थना ।

हरे मत्समः पातकी नास्ति भूमौ  
तथा त्वत्समो नास्ति पापापहारौ ॥  
इति त्वां च सत्वा जगन्नाथ देव-

यद्येच्छा भवेत्त तथा सां कुम् त्वं ॥ ११५ ॥

अथ नमस्कारः ।

समोऽस्त्वनन्ताय सहस्रभूक्तये सहस्रपादाक्षिणरीक्तवाहवे ।

सहस्रनाम्निपुरुषायशाश्वतेसहस्रकोटीयुगधारिणेनमः ॥ ११६ ॥ इति

इम प्रकार से भगवान की पूजा करके तब तुलसी पूजन करे तुलसी पूजन की विधि लिखते हैं ।

यथा सनत्कुमारसंहितायां कार्तिकमाहात्म्ये ।

तुलस्यां सर्व्वतीर्थानि तुलस्यां सर्व्वदेवताः ।

कार्तिकीमासि तिष्ठन्ति नात्र कार्या विचारणा ११७

कार्तिक के महीने में श्री तुलसी जी में सब देवता और सब तीर्थ निवास करते हैं ।

तथा पद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये ।

तुलसीकाननं राजन् गृहे यस्यावतिष्ठते ।

तद्गृहं तीर्थरूपं तु न यान्ति यमकिंकराः ॥ ११८ ॥

रूपणात्पालनात्स्पर्शान्निष्णास्यापहरातथो ।

तुलसी दृढते पापं वाङ्मनःकायसम्भवं ॥ ११९ ॥

तुलसी का वन जिस घर में रहता है उस तीर्थ रूप घर की यम की दूत नहीं देखते । वृक्ष लगाने से; पालने से, स्पर्श करने से, तुलसी जी कायिक वाचिक मानसिक तीनों पापों को दूर करती हैं ।

तथा काशीखण्डे दूतान् प्रति यमवाक्यं ।

तुलस्यलंकृता ये ये तुलसीनामजापकाः ।

तुलसीवनपाला ये ते व्याघ्या दूरतो भटाः ॥ १२० ॥

यमराज दूतों से आज्ञा करते हैं किन्हीं दूत लोग हमारी बात सुनो, जो तुलसी की कंठी पहिनते हैं जो लोग तुलसी का नाम जपते हैं जो लोग तुलसी की वन की रक्षा करते हैं उनको तुम लोग दूर ही से छोड़ देना ।

तथा स्वन्दपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये ।

तुलसी गन्धमादाय यत्र गच्छति मारुतः ।

दिशा दश च ताः पूताः भूतग्रामं चतुर्विधं ॥ २२१ ॥

तुलसी जी की सुगन्धि लेकर जहाँ जहाँ वायु जाता है वहाँ की दिशा  
धीर वहाँ के चारों प्रकार के जीव-पवित्र हो जाते हैं। इति।

अथ तुलसी पूजा के मंत्र लिखते हैं।

अथ ध्यानं ।

ध्यायेच्च तुलसीं देवीं श्यामां कमललोचनां ।

प्रसन्नामलाकल्हार वराभय चतुर्भुजां ॥ १२२ ॥

किरीट-हार कीयूर कुण्डलादि विभूषितां ।

धवलांशुकसंयुक्तां पद्मामननिषेवितां ॥ १२३ ॥

अथावाहनं ।

देवि त्रैलोक्य जननि सर्वं लोकैकपावनि ।

आगच्छ भगवत्यच प्रसीद श्री हरिप्रिये ॥ १२४ ॥

अथासनं ।

सर्वलोकमये देवि सर्वदा विष्णुवल्लभे ।

देवि स्वर्गमयं दिव्यं गृहाणासनसव्ययं ॥ १२५ ॥

अथार्घ्यं ।

सर्वदेवदत्ताकारे सर्वदेव नमस्कृते ।

दत्तं पाद्यं गृहाणेदं तुलसि च्चं प्रसीद मे ॥ १२६ ॥

अथाचमनीयं ।

सर्वलोकस्य रक्षार्थं सदा कल्पाणकारिणि ।

गृहाण्य तुलसि प्रीत्या इदमाचमनीयकं ॥ १२७ ॥

अथ स्नानं ।

गंगादिभ्यो नदीभ्यश्च समानीतमिदं जलं ।

स्नानार्थं तुलसीदेवि प्रीत्या तत् प्रतिगृह्यतां ॥ १२८ ॥

अथ वस्त्रं ।

क्षीरोदमयनोद्भूते लक्ष्मी चंद्र सहीदरे ।

गृह्यतां परिधानार्थमिदं जीमास्वरं शुभे ॥ १२६ ॥

अथ गन्धं ।

श्रीगंधकुंकुमं दिव्यं कर्पूरं रागरुसंयुतं ।

कल्पितं ते महादेवि प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यतां ॥ १३० ॥

अथ पुष्पं ।

नीलोत्पल सुकल्हार मालत्यादीनि शोभने ।

पद्मादि नभ्रवत्श्रीते पुष्पाणि प्रतिगृह्यतां ॥ १३१ ॥

अथ धूपं ।

धूपं गृहाण देवेशि मनोहरि सुसंगलं ।

घाज्यमिश्रं तु तुलसि भक्तस्याभीष्टदायिनि ॥ १३२ ॥

अथ दिपं ।

घाज्ञानतिमिरांधिभ्यो ज्ञानदीपप्रदायिनि ।

दत्तः तुलसि प्रीत्यर्थं दीपोयं प्रतिगृह्यतां ॥ १३३ ॥

अथ नैवेद्यं ।

वसन्ते जगतांनाथे प्राणिनां प्रियदर्शने ।

यथाशक्ति मयादत्तं नैवेद्यं देवि गृह्यतां ॥ १३४ ॥

जलं ।

नमो भगवति श्रेष्ठे नारायण जगन्मये ।

तुलसि च्चरया देवि पानीयं प्रतिगृह्यतां ॥ १३५ ॥

अथ ताम्बूलं ।

संख्यतेऽऽस्तसम्भूते तुलस्यमृतरूपिणि ।

एताकर्पूरसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यतां ॥ १३६ ॥

अथ फलं ।

इदं फलं मया देवि स्थापितं पुरतस्तव ।

अनेन सफलं वाग्निर्भवेज्जन्मनि जन्यनि ॥ १३७ ॥

अथ प्रदक्षिणा ।

दक्षिणे दक्षिण करे च्चक्रानाम्प्रियंकरि ।

करोमि ते सदा भक्त्या विष्णुकान्ते प्रदक्षिणां ॥ १३८ ॥

अथ नमस्कार । पुष्पांजलिः ।

नमोनमो जगद्वाचैः जगदाह्वयै नमोनमः ।

नमोनमो जगद्भूत्यै नमस्ते परमेश्वरि ॥ १३९ ॥

नमस्तुक्तसि कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे ।

नमो मोक्षप्रदे देवि नमः संपत्प्रदायिनी ॥ १४० ॥

तुक्तसी पातु मां नित्यं सर्वपादभ्योपि सर्वदा ।

कीर्तिता वा स्मृता वापि या पावयति सानुषान् ॥ १४१ ॥

महाप्रसादजननि सर्वं पापप्रणाशिनि ।

आधिव्याधि हरे देवि तुक्तसि त्वां नमास्यहं ॥ १४२ ॥

या दृष्टा निखिलाघसंघशसनी स्मृष्टा वपुः पावनी ।

रोगाणामभिवन्दिता निरसनी सिद्धान्तकचासिनी ॥

प्रत्यासत्तिविधायिनी भगवतः कृष्णस्य संरीपिता ।

न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुक्तस्यै नमः ॥ १४३ ॥

अथ प्रार्थना ।

प्रसीद मयि देवेशि कृपया परया सदा ।

अभीष्टफलसिद्ध्यर्थं कुरु मे माधवप्रियं ॥ १४४ ॥ इति ॥

इति रीति से नित्य तुक्तसी पूजन करना और तुक्तसी के पत्र से विष्णु का पूजन करना ।

यथा गारुडे ।

गवामयुतदानेन यत्फलं लभते खग ।

तुक्तसीपत्रमेकेन तत् फलं कार्तिके स्मृतं ॥ १४५ ॥

अयुत गोदान करने का जो फल है वही कार्तिक में एक तुक्तसी पत्र

चढ़ाने से मित्रता है यह आप श्रीमुख से पात्रा करतें हैं गरुड़जी से । इति ।  
इयं भांति तुलसी पूजन कर के फिर भांवला की पूजा करना तथा कार्त्तिक में भांवला की मासा भी पहिरना ।

यथा स्नान्दे । कार्तिकमाहात्म्यम् । पुराणसारीद्वारे च ।  
सर्वदेवमयी धात्री वामुदेवमनःप्रिया ।  
आरोपणीया सेव्या च पूजनीया सदा बुधैः ॥ १४६ ॥  
धात्रीफलविस्मिताङ्गी धात्रीफलविभूषिताः ।  
धात्रीफलहस्ताहारो नरो नारायणो भवेत् ॥ १४७ ॥  
धात्रीद्वारा समाश्रित्य कुर्याच्छ्राद्धन्तुयो सुने ।  
मुक्तिं प्रयान्ति पितरः प्रसादात्तस्य वैश्वरेः ॥ १४८ ॥  
कार्तिकेमासि विप्रेन्द्र धात्रीहृत्कोपशोभिते ।

वने दामोदरस्त्रिणु च्छिञ्चान्नैस्तीषयेद्विभुं ॥ १४९ ॥ इति ॥

श्री वासुदेव के मन की ध्यारी सब देव मयी धात्री पंडित लोगों को संदा लगाना चाहिये सेवा करना चाहिये और पूजन चाहिये। भांवला जिसने देह में जगाया है वा उस की मासा पहिरते हैं वा जो लोग भांवला का फल खाते हैं वे मनुष्य नारायण होते हैं। भांवले की काया में जो श्राद्ध करता है भगवान को ज्ञपा से उस के पितर स्वर्ग में जाते हैं। कार्तिक के महीने में भांवले की बगीचे में भगवान दामोदर की चिन्ता से पूजा करेंगे। इत्यादि बहूत साहास लिखा है इस से नित्य भांवला का पूजन करना तथा भांवला के नीचे ब्राह्मण भोजन कराना इस भांति भांवला की पूजा कर के फिर श्री-महागवत इत्यप्रदिक भगवान की कथा श्रवण और यथाशक्ति दान कर के ब्राह्मण भोजन कराना है।

यथा सनत्क सममंहितायां कार्तिकमाहात्म्यम् ।  
नृत्यगानादिकाख्येषु प्रहरं दिवसं नयेत् ।  
ततः पुराणश्रवणं यामार्द्धं सन्ध्यां चरेत् ॥ १५० ॥  
सम्पूर्णं कार्तिकं यस्तु संपूज्यामलक्ष्मीशुभां ।



राधादासोद्ग्रहीत्वै भोजयेच्चैव दम्पतीन् ॥ १५१ ॥

पश्चात्स्वयं सुभुंजीत न श्रीस्तस्य चयं व्रजेत् ।

व्रत्त्वा साध्यान्हिकं कर्म भुंजीत द्विदलीज्जितं ॥१५२॥

ब्रह्मांशकसमुद्भूते पलाशे यस्तु भोजनं ।

कुर्व्यात् कार्तिकमासि सौ विष्णु लोकां प्रयास्यति ॥१५३॥

पहर दिन चढ़े तक भगवान के मंदिर में नाचना गाना फिर आधे पहर कथा सुनना फिर आधे रात के दोपती ब्राह्मण भोजन कराय के साध्यान्ह सन्ध्या कर के ऊपर जिन वस्तुओं का निषेध लिखा है उन्हें छोड़ के सड़ा प्रसादी भोजन करना। जो कार्तिक में नित्य ऐसा करते हैं उन्हें लक्ष्मी त्याग नहीं करती। ब्रह्मा के अंग से उत्पन्न भया है ऐसे पलाश के पत्ते में जो भोजन करते हैं वे लोग विष्णुलोक पाते हैं। इति ।

इस भांति दिन का कर्म सिख के भव सन्ध्या का कर्म सिखते हैं। रातिकर्म में तीन कर्म सुख्य है एक तो आकाश दीपदान, दूसरा भगवन्मन्दिर वा श्री गंगा जी वा तुलसी के निकट दीपदान, तीसरा नाम संकीर्तन। भव तीनों का फल और विधि सिखते हैं ।

यथा ब्रह्मांडि ।

विष्णुवेश्मनियोदद्यात्तुलायां नभदीपकं ।

अग्निष्टोमसहस्रस्य फलमाप्नोति मानवः ॥ १५४ ॥

तथा निर्णयान्धते निर्णयसिन्धौ च पुष्करपुराणे ।

तुलायान्तिसतैलेन सायङ्काले समागते ।

आकाशदीपं योदद्यान्मासमेकं हरिं प्रति ॥ १५५ ॥

सहतीं श्रियमाप्नोति रूपसौभाग्यसम्पदामिति ।

जो भगवन्मंदिर में आकाशदीप देते हैं उन्हें हजार अग्निष्टोम का फल होता है। कार्तिक के महीने भर जो लोग श्रीलक्ष्मी के प्रति सन्ध्या को आकाशदीप देते हैं वे लोग बड़ी लक्ष्मी और बहुत सम्पदा और रूप सौभाग्य पाते हैं ।

तथा हेमाद्रौ आदिपुराणे ।

द्विवाकरे ऽस्ताचलमौनिभूते गृहाद्दूरं पुरुषप्रमाणं ॥  
 यूपान्कृतिं यज्ञियज्ञजदाद्य मारोप्यभूमावथतस्य मूर्ध्नि ॥ १५६ ॥  
 यवांशुत्क्षिद्रयुतास्तु मध्ये द्विहस्तदीर्घा चथ पट्टिकास्तु ॥  
 ह्यत्वा चतस्रोष्टदक्षाः कृतास्तु याभिर्भवेदष्टदिशानुसारि ॥ १५७ ॥  
 तत् कर्णिकायान्तु महःप्रकाशो दीपाः प्रदेया दृजगास्तथाष्टौ ॥  
 निवेद्य धन्व्नाय हराय भृश्यै दामोदरायाप्यथ धर्म्मराज्ञे ॥  
 प्रजापतिभ्यस्त्वथसत्पितृभ्यः प्रेतैभ्य एवाथतमः स्थितैभ्यः ॥ १५८ ॥

एतद् सन्ध्या होय तब घर के पास मनुष्य के बराबर पवित्र लकड़ी गाड़ के उस के ऊपर दो हाथ का बांस लगांना उस पर चौसुखा वा अठसुखा दीया रख के आठ वत्तो वा आठ पत्तो पर आठ दीया बालना इन आठोंके निमित्त १ धर्म २ महादेव जी ३ पृथ्वी ४ श्रीराधादामोदर ५ धर्म्मराज ६ प्रजापतिगन ७ पितृगन ८ अंधिरे में रहने वाले प्रेत । इन आठों के निमित्त दीपदान करना और वैष्णवों के मन्दिर में ऊंचा बांस गाड़ के उस पर इस मंत्र से दीपदान करना ।

दामोदराय नमसि तुनार्था दीप्तया सह ।

प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोनन्ताय वैशसे ॥ १५९ ॥ इति ॥

कार्तिकमाहात्म्य में २० वा ८ या ५ हाथ का बांस लिखा है । इस प्रकार आकाश दीपदान करके फिर भगवन्मन्दिर में गङ्गागर्भ में गंगा जी के तट पर दीपदान करना ।

यथा सनत्कुमारसंहिताया ।

कार्तिकेमासि सम्प्राप्ते गगने स्वच्छतारके ।

रात्रौ लक्ष्मीः समायाति द्रष्टुंश्वनकौतुकं ॥ १६० ॥

यत्रयत्र च दीपान्सा पश्यत्यश्विसमुद्भवा ।

तत्रतत्र रतिं कुर्व्यान्नाम्यकारे कदाचन ॥ १६१ ॥

देवालये नदीतीरे राजमार्गे विशेषतः ।

निद्रास्थाने दीपदाता तस्य श्रीः सर्व्वतोमुखी ॥ १६२ ॥

की लक्ष्मणकसंकीर्णं विप्रले दुर्गमस्थले ।

कुर्ब्यादो दीपदानानि नरकं स न गच्छति ॥ १६३ ॥

कार्तिक महीने की रात की जब खच्छ तारे निकले रहते हैं तब लक्ष्मी जो घर का कौतुक देखने को आती हैं सो वह जहाँ जहाँ दिये बलते देखती हैं वहाँ प्रसन्न हो कर निवास करती हैं और जहाँ अन्धकार देखती हैं उस स्थान को त्याग करती हैं । देवता के मन्दिर में, नदी के तीर पर, राजमार्ग में विशेष कर के और निद्रा की जगह दीया-वाल्मनेवाले लोगों को लक्ष्मी जो सर्व्वतोमुख रहती हैं । कीच में काटे की जगह में ऊँचो, नीचो, सकारी दुर्गम जगह में जो लोग दीपदान करते हैं वे नरक में नहीं जाते । इति ।

इस मंत्र से दीपदान करना ।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं जपहीनं जनार्दन ।

व्रतं सम्पूर्णतां यातु कार्तिके दीपदानतः ॥ १६४ ॥ इति

और जो विद्यार्थी को पढ़ने के वास्ते तेल देते हैं उन्हें भी बड़ा पुण्य होता है यथा तत्रैव ।

श्री वेदाभ्यासिने दद्याद्दीपार्थं तैलसुत्तमं ।

कार्तिके मासि सप्रामे ससुक्तिफलभाग्भवेत् ॥ १६५ ॥

जो कार्तिक में पढ़नेवाले विद्यार्थी को दीये का तेल देने से वे सुक्तिफल पाते हैं ।

और कार्तिक सुदी सप्तमी को कामना होय तो कार्तिकीय के वास्ते दीपदान करना यह सब कामना का पूर्ण करनेवाला है ।

यथा प्रयोगरत्नाकरे । उड्डासरतंत्रे च ।

ऊर्जे मासि सितपक्षे सप्तम्याम्बानुवासरैः ।

श्रवणर्क्षे व्यतीपाते विष्णोश्चक्रावतारिणः ।

दीपदानं प्रकृतं व्यं स्वर्गसौख्यविद्वहये ॥ १६६ ॥

कार्तिक सुदी सप्तमी मंगलवार श्रवण नक्षत्र व्यतीपात के दिन विष्णुचक्र के अवतार को दीपदान करना इस से सब सौख्य बढ़ते हैं । इस प्रकार से

यद्यन करके पहर रात तक भगवान का गुण गान करना जहाँ भक्त लोग  
कीर्तन करते हैं वहाँ श्रीभगवान आप निवास करते हैं ।

यथा पादसि कार्त्तिकमाहोत्स्ये ।

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च ।

सङ्गता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥ १६७ ॥

नारद जी से आप आज्ञा करते हैं कि हे नारद हम न तो वैकुण्ठ में रहते  
हैं और न योगियों के हृदय में रहते हैं जहाँ हमारे भक्त गाते हैं हमें वहीं  
बैठते हैं । इति ।

यह जो ऊपर लिख आए हैं वे कार्त्तिक के नित्य कर्म हैं और भी कार्-  
त्तिक की एकादशी से लेकर की पुनवासी तक के पांच दिन का भीषपंचक  
कहते हैं इस में इस संत से भीषतर्पण करना ।

वैद्यान्नपद्गोत्राय जलं वीराय वर्य्यणे ।

सत्यव्रताय शुचये गार्ङ्गेयाय महात्मने ।

भीष्मायैतद्ददास्यर्घ्यं चावालव्रह्मचारिणे ॥ १६८ ॥

इस प्रकार पांच दिन भीषपंचक में तर्पण और स्नान करना । इति ।

कार्त्तिक में गर्गसंहिता सुक्रे का बड़ा साहाय्य है । यथा—

यः कार्त्तिकेनासिन्धुपश्चियायुतोशुभोतिशश्लक्ष्मुनिगर्गसंहिताम्  
स चक्रवर्ती भविता न संशयो नरेन्द्रहस्तीवृतपादपादुकः ॥ १६९

सनोजवैः सिन्धुतुरङ्गमैर्नवैर्द्विपैश्च विन्ध्याचलसखैः परैः ॥

वैतालिकोद्गीतयशा महीतले निर्धिवितो वारवधूजनैस्सह ॥ १७० ॥

हे जल्लोचयुक्त नृप जो कार्त्तिक में गर्गसुनि की संहिता विधिपूर्वक सुने  
तो यह ऐसा चक्रवर्ती होय कि राजा लोग उस की खड़ाज उठावें हवा के  
वेग ऐसे सिन्धी नए छोड़ों से और जंघे और विन्ध्याचलकी तराई के हाथियों  
से और पृथ्वी के वैतालिकों के गीत रूपी अपने यश से और वारांगनाओं से  
सदा सेवित रहें । इस प्रकार कार्त्तिक का नित्य कर्म कर के पूर्णिमा को यह  
व्रत समाप्त करें, यथाशक्ति दान दे, ब्राह्मणों का जोड़ा भोजन करावें । इति ।

लोकानाम्प्रापरूपप्रवलयतमतमोनाशनायाशु शक्तं ।

इन्तुक्ती छान्नितापम्पटुतरमनिशं यः परन्दुःखहेतुः ॥  
 दातुं शक्तं त्रिलोकैरसुखममसृष्टतद्धातिं कङ्कर्मवैधं ।  
 राकाज्योत्स्नास्वरूपस्वित्तसतु जगति श्रीहरिश्चन्द्रचन्द्रात् ।  
 दीहा—जैजै श्रीदत्तभ सदा, श्रीविद्वल द्विजराज ।  
 कृपा करत सब भय हरत, तारत पतित समाज ॥२॥  
 नमो नमो कविमुकुटमणि, पितुपदकमल पुनीत ।  
 जाकी कृपा अपारते, समुक्ति परी यह रीत ॥२॥  
 जानि परम उपकार पुनि, देखि शास्त्र को मन्य ।  
 जगहित श्रीहरिचंद्र किय, कारिक विधिको मन्य ॥३॥  
 ॥ इति ॥

कार्तिकनैमित्तिककृत्य ।

श्रीहरिश्चन्द्र लिखित ।

“ तत्कर्म हरितोषं यत्सा विद्या तन्मतिर्यया ”



## कार्तिक नैमित्तिक कृत्य ॥

दो०—जेहि लहि फिर ककु लहन की, आमन चित में होय ।  
जयति पवित्री जग करन, प्रेम वरन यह द्योय ॥ १ ॥  
कृष्य—तदपि पान करि परम अमृत मय प्रेम भखौ रस ।  
जड़ उनमत्त समान होइ विचरत गत कलमस ॥  
सकल कर्म को जाल सिधिल किय परम प्रीति सों ।  
रह्यौ न ककु कर्त्तव्य शेष कुल वेद रीति सों ॥  
पै जानि भागवत धर्म एहि मूकतसो पथ जेहि लहत ।  
कवि दीन जीव संसार के परमकृपा गहि ककु कहत ॥  
कार्तिक धर्म यहां क्यों विधान करते हैं-? इस हेतु भी कहा  
से कि सर्व धर्मों में भगवद्धर्म मुख्य है और यही श्री मुख से है ।

**“मन्मनाभवसद्भक्तो मद्याजीमान्द्रमस्फुर  
मावेवैष्यसिकौन्तेय” इत्यादि ॥**

विशेषतः कलियुग में भगवद्धर्म ही की नित्यता है यह  
भी निश्चय ।

यथा हेमाद्रौ श्री भागवंहावम् ।

**कलौसभाजयन्त्यार्याः गुणज्ञात्मारभागिनः  
यत्रसङ्कीर्त्तनेनैव सर्वस्वार्थोभिलभ्यते ॥**

अनेकनिबन्धेषु महा भारते ।

**कलौकलिमलध्वंसं सर्वं पापहरंहरम् ।  
येऽर्चयन्तिनरानित्यं तेषिवंद्यायथाहरिः ॥**



सदनपारिजाते योगि याज्ञवल्क्यः ।

विष्णुर्ब्रह्माचरुद्रश्च विष्णुर्होत्रो जनाह्नः ।  
तस्मात्पूज्यतमं नान्यमहं मन्ये जनाह्नात् ॥

और इसमें विशेषता यह है कि एक श्री भगवान् के पूजन में सब का पूजन आजाता है—यथा श्री मन्नागवते ।

यथा तरोर्मूलनिषेचनेन तृप्यन्ति ततस्काब्दभु  
जीपशाखाः । प्राणीपहाराच्च तथेन्द्रियाणां  
तथैव सर्वार्हणमच्युते ज्या ॥

और इस भगवद्दर्शन के सब अधिकारी हैं यह श्रीमुख गाया है ।

स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति पराङ्गतिम्

ऐसा ही परम भक्त श्री प्रह्लाद जीने भी कहा है ।

नालं ऋषित्वं देवत्वं द्विजत्वं वाऽसुरात्मजाः  
प्रीणनायमुकुन्दस्य न धनं न बहु ज्ञता । इत्यादि ।

सुखी-सर्व साधारण को और अनेक धर्मों को छोड़ कर केवल भगवद्दर्शन सुख हुआ तो भगवद्दर्शन में परम पुनीत कार्तिक व्रतादि यहां दिखाते हैं ।

कार्तिक सब धर्मों में पवित्र है और उसकी नित्य कृपा क्या है यह कार्तिक कर्म विधि नामक निबन्ध में लिख चुके हैं यहां वे धर्म लिखे जाते हैं जो नैमित्तिक हैं और

जैसे कार्तिक ज्ञान आश्विन शुद्धा ११ से चारख होता है  
इसी नैमित्तिक कृत्य भी उसी दिन से लिखते हैं ।

अथ आश्विनशुद्धा ११ - इसी एकादशी से कार्तिक के  
सब व्रत चारख करना । इस एकादशी का नाम पापाङ्कुशा  
है इस में भगवान को पद्मनाभ नाम से पूजा करें ।

अथ आश्विनशुद्ध १५ - यदि एकादशी से कार्तिक ज्ञान  
न चारख किया हो तो इस दिन से करना इस पूर्णिमा में  
दो कर्म हैं प्रथम रामोत्सव द्वितीय कोजागर व्रत ।

रामोत्सव जिस दिन सायंकाल में पूर्णचन्द्र हो उस  
दिन 'करना क्योंकि' कलाहर्निशशाङ्केतुनकुट्याच्छारदो-  
त्सवस्' इस वाक्य में हीन चन्द्र का निवेध है और भग-  
वान को श्वेत वस्त्र श्वेताभरण श्वेत नैवेद्य समर्पण करना  
और चांदनी में शृङ्गार सज्जित बैठा कर राम लीला के भजन  
गाना इस दिन श्री महागवत की राम पञ्चाध्यायी का पाठ  
बहुत पुण्य देने वाला है और किसी यज्ञकार ने यह भी  
लिखा है कि रात्र को चन्द्रमा की चांदनी में मूँड़े से डोरी  
पिरोना और कुछ अक्षर पढ़ना इससे नेत्र की जोति  
बढ़ती है ।

कोजागर व्रत जिस दिन आधीरात को पूर्णिमा हो उस  
दिन करना सांभ से लक्ष्मी और इन्द्र का स्थापन करके  
पूजा करना और नारियल का जल लक्ष्मी को भोग लगा कर  
पोना आधी रात के समय लक्ष्मी की यह कहतौ हुई निक-  
लती है कि जो जगता मिलेगा और जूषा खेनता हीगा सैं

उसे धन दूंगी । कमल पर बैठी हुई लक्ष्मी का ध्यान करना और ऊँ लक्ष्म्यै नमः इस मंत्र से सब पूजा कर के इस मंत्र से पुष्पांजली देना ॥

नमस्ते सर्वदेवानां वरदासिहरिप्रिये ।  
यागतिस्त्वत्प्रपन्नानां सामेभूयास्त्वदर्चनात् ॥

इन्द्र को भी चार दांत के श्वेत हाथी पर बैठे ध्यान कर के इन्द्रायनमः इस मन्त्र से पूजा कर के पुष्पांजली इस मन्त्र से देना ।

विचित्रैरावतस्थाय भास्वत्कुलिशपाणये ।

पीलीस्थालिंगितांगाय सहस्राक्षायतेनमः

इसी पुनवासी को बड़े पुत्र की आरती और तिक्तक करना और रात को जागरन करना ।

अथ कार्तिककृष्णा ४ - इस चतुर्थी को कर्क चतुर्थी का व्रत है । इसी चतुर्थी में रानियों सहित राजा दशरथ की पूजा करना ।

अथ कार्तिककृष्णा ८ - इस अष्टमी का नाम राधाष्टमी है यह अष्टमी अरुणोदय व्यापिनी लेना और अरुणोदय की समय न मिले तो सूर्योदय व्यापिनी मानना इस अष्टमी को श्रीराधा कुण्ड स्नान करना और श्रीराधिका का पूजन करना । इस दिन श्री राधा सहस्रनामपाठ का बड़ा पुन्य लिखा है । इस दिन पुत्रवती स्त्री को गी पूजन का दाम्पत्य और शिव पूजन का विधान भी कोड़े ग्रन्थकार लिखते हैं ।

अथ कार्तिक कृष्णा ११ - इस एकादशी का नाम रमा है  
इसमें व्रत और जागरण और श्री राधा दामोदर का पूजन  
करना और रात्र को दीपदान करना ।

अथ कार्तिक कृष्णा १२ - इस को वत्स द्वादशी कहते  
हैं - यह द्वादशी सायंकाल व्यापिनौ मानना और इस में नक्त  
व्रत करना बृहन्नचर्य्य से रहना और उड़द का भोजन करना  
पृथ्वीपर सीना-सांभ को समय गज को पूजा करना । वह  
गज सांघी और दूध देने वाली हो और उसका बच्चा भी  
उसी रंगे को हो । सब पूजा कर के तामें के अरघे में इस  
मन्त्र से अर्घ्य देना ॥

**क्षीरोदार्यावसम्भूते सुरासुरनमस्कृते ।  
सर्वदेवमयेष्वात गृहाणार्घ्यंनमोस्तुते ॥**

फिर इस मंत्र से गोघ्रास देना ।

**सर्वदेवमयेद्देवि सर्वदेवैरलंघते ।**

**मातर्माभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि ॥**

इसी दिन गज का घी, दूध, दही और मठा तथा तेल  
का और कढ़ाई का किया भोजन न करना इस द्वादशी से  
५ दिन तक सांभ पीछे देवता, ब्राह्मण, गज अपने से बड़े  
मनुष्य, मातादिक अपने से बड़ी स्त्री, इथी और घोड़े को  
आरती करना और सांभ को टौए बालना । उतर मुख नव  
वा विशेष दीए बाल कर शुभाशुभ विचारना । दीया बालने  
का मंत्र ।

सूर्यांशसम्भवादीपा अन्धकारविनाशकाः ।  
त्रिकालेसांदीपयंतु दिशंतुचक्षुभाशुभम् ॥

अथ कार्तिक कृष्णा १३—इस दिन सांभ को यम का दीया  
घर के बाहर देना ॥ मन्त्र ।

मृत्यु नापाशदंडाभ्यां कालेनश्यामयासह ।  
त्रयोदश्यांदीपदानात् सूर्यजःप्रीयतामम् ॥

इसी तैरस के दिन गो व्रत भी होता है ।

अथ कार्तिक कृष्णा १४—इस चतुर्दशी में जो मङ्गलवार  
पड़े तो श्री महादेव जी का व्रत और पूजा करना । यह  
चतुर्दशी स्नान वाले चन्द्रोदय व्यापिनी मानें और सब  
साधारण इस्में अवश्य स्नान करें क्योंकि जो इस में तेल लगा  
के सिर मल के नहीं नहाने उनको बड़ा दोष होता है ।  
स्नान की समय खेत की हल से निकाली मिट्टी, चिचिड़ा,  
भटकटैया और तुखी तीन वेर अपने ऊपर से फिरावे और  
स्नान करके तिलक करके तब नित्य का कार्तिक स्नान  
करे चिचिड़ा घुमाने का मन्त्र ॥

सीतालोष्टसमायुक्त संकटकदलान्वित ।

हरपापमपामार्गं भ्रात्र्यमार्गःपुनःपुनः ॥

नित्य स्नान करके यमतर्पण करे यह तर्पण जिस्का  
पिता जीता हो वह भी करे । मन्त्र ।

यमायनमः, धर्मराजायनमः, मृत्युविनमः,

अन्तकायनमः, वैवस्वतायनमः, काला-  
यनमः, सर्वभूतक्षयायनमः, औदुम्बराय-  
नमः, दध्नायनमः, नीलायनमः, परमेष्ठिने  
नमः, वृक्रोदरायनमः, चिचायनमः,  
चिचगुहायनमः,

इस मन्त्र से तीन तीन अञ्चलो जल तिल समेत दे इस  
चतुर्दशी से प्रति पदातक महाराज बलि का राज रहता है  
इससे इन तीनों दिन घर स्वच्छ रखें दीप वाले उज्वल बस  
पाहने और गौतादिक से चित्त प्रसन्न रखें । रात को चौस-  
था दीया नर्क के नाम का इस मन्त्र से निकालें ।

दत्तोदीपञ्चचतुर्दश्यां नरकप्रीतयेमुदा ।  
चतुर्वर्त्तिसमायुक्तं सर्वपापापनुत्तये ॥

पौछे हाथ में जलती लकड़ी वा पत्थौता लेकर पित्रों को  
मार्ग दिखावे । मन्त्र ।

अग्निदग्धाश्चयेजीवायेप्यदग्धाःकुलेमम  
उज्वलज्योतिषादग्धा स्तेयांतुपरमांगतिम्  
यमलीकम्परित्यज्य आगतायेमाहालये ।  
उज्वलज्योतिषावर्त्म प्रपश्यंतुव्रजंतुते ॥

इसी रात्रि को कोई काली पूजन भी करते हैं और हनु-  
मान जी का जन्मोत्सव भी इसी रात्रि को होता है और

इसी रात्रि में वीरों का पूजन कुमारी पूजन और तंत्रोक्त मन्त्रों की सिद्धि भी होती है पर यह अधिकारी परत्व है सतीगुनी भक्तों की तो परम भागवत हनुमान जी का ही पूजन ब्राह्म है । हनुमान जी को तुलसी दत्त पर श्री राम नाम लिख कर चढ़ाना और लड्डू भोग रख कर रामायण का पाठ वा और कुक राम चरित्र सुनाना । मन्त्र

**यत्रयत्वरघुनाथकीर्त्तिनं तत्रतत्र क्षतमस्त-  
काञ्जलिम् । वाष्पवारिपरिपूरितलोचनंभारु  
तिन्मसतराक्षसान्तकम् ॥**

इस चतुर्दशी को नक्षत्रत करना वा उड़ड़ की पत्ते शाक का फल विशेष है ॥

जो इस चतुर्दशी को मंगलवार पड़े तो चित्रावृत और शिव पूजन करना ॥

अथ कार्तिक कृष्णा ३०—यह दीपावली अमावस्या है इक्ष्मि दिन को व्रत करना । सांभ को भगवान की मन्दिर में दीपदान करना और दीए के वृक्ष बनाना और अनेक प्रकार के भोग समर्पण करके इटरी में बैठाना । सांभ को अपना घर सब स्वच्छ करके यथा शक्ति उसको शोभा करना सड़कों की राजा आज्ञा देकर स्वच्छ करावे और तीरणादिक सड़क के बाहर लगाना टूकान पर सब वस्तु रखना और घरमें सब

स्थानों पर दीया बाल की लक्ष्मी और वक्ति का पूजन करना लक्ष्मी को खोए का कङ्क भोग लगाना और इस मन्त्र से दीप दान करना ।

**त्वञ्ज्योतिःश्रीरविशुद्धे विद्युत्सौवर्णतारकाः  
सर्वेषाञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिर्दीपज्योतिर्नमीस्तुते**

रात को राजा मार्ग में, स्नान में, नदी के वा ताड़ाग के तटों पर, मन्दिरों में, शिखरों में, गलियों में, और दुर्गम स्थानों में राजा दिया बालने की आज्ञा दे सब लोग शृङ्गार करके सुगन्ध लगाके पान खाते बाहर निकलें और मिठों से सम्बन्धियों से मिलें वाराङ्गना और नटनर्तकादिक नृत्य गीत करें राजा ( यदि हिन्दू ही ) इस बात की डोंड़ी पिठवा दे कि आज महाराज बलि का राज्य है कोई दुखी न हो सब अपना मन साना करें जीव हिंसा, सुरा पान, अगस्यागमन, चोरी, और विप्रवासघात ये पांच पाप छोड़ कर छूई छूई वस्तु का भोजन, वाराङ्गना सेवन, दूत और सब जाति के सङ्ग बैठना यह सब राजा बलि के राज में पाप नहीं हैं ।

गोप लोग गज का शृङ्गार करें और सब लोग गज को भोजन दें । मल्ल लोग मल्ल युद्ध करें । घोड़े वाले घोड़ा नचावें रात को राजा नगर के बाहर निकलें और बालकों को एकत्र करके उनका खेल देखें और उनको खिलवना, मिठाई दे । सब लोग वाजि बजावें और आनन्द की बातें करें । रात को खियों के वा घ्राह्मणों वा ज्ञहियों के सङ्ग जूआ खेले इस्से



पूर्व पूर्व मुख्य है आधी रातको जब पुरुष सोने लगे तब स्त्रियां झूप और डोंडी पीटती हुई दरिद्रा को घर से बाहर निकाले। इस दिन भी अभ्यङ्ग की विधि है।

अथ कार्तिक शुद्ध १—इसमें श्री गोवर्धन पूजन, बलिपूजा, दीपोत्सव, गोक्रीड़ा, मार्गपालीवन्दन, वृष्टिकाकर्षण, नया वस्त्र पहिरना, उत्सव, जूआ खेलना, मङ्गल मालिका और स्त्रियों की आरती करना ये मुख्य कर्म्म हैं उसमें प्रथम श्री गोवर्धन पूजन है यह उत्सव अवश्य माननीय है क्योंकि इस के हेतु श्रीसुख वाक्य है ॥

एतन्ममसतन्नात क्रियतां यदिरोचते ।

अयंगीब्राह्मणादीनाम्नश्चदयितीसखः॥

इस में प्रेम मार्ग से वा और अन्यमार्ग में जैसी जिस्की रीति हो वह पूजन करे अब साधारण लोगों के हेतु यह रीति लिखी जाती है जहां साक्षात् श्री गोवर्धन पर्वत है वहां तो उन्हीं की और जहां गोवर्धन नहीं है वहां गज की गोबर का पर्वत बनाना उत्तर मुख रखना और एक कन्दरा बनाना वहां भगवान की मूर्ति रखकर घोड़ोशोपचार पूजन करना और अन्न कूट भोग लगाना जहां गिरिराज की शिला हो वहां तो गिरिराज की शिला कन्दरा में रखकर पूजन करना जहां शिला न हो वहां शालग्राम वा छोटी श्री ठाकुर जी की मूर्त रखके पूजा करनी और गज गोप की भी पूजा करनी पहिले भगवान् की पूजा करनी उसको । मन्त्र ।

बलिराज्ञीद्वारपाल भवानद्यभवप्रभो ।  
 निजवाक्यार्थनार्थाय सगोवर्द्धनगोपते ॥  
 गोपालमूर्त्तेविश्वेश शक्रोत्सवविभेदक ।  
 गोवर्द्धनकृतच्छत्र पूजास्मिहरगोपते ॥  
 देवेवर्षतियज्ञविप्लवरुषा वर्षाश्लपर्षानि  
 लैः । सीदत्पालपशुस्त्रियात्स शरणांद्दष्ट्वा  
 नुकम्पुत्सयन् ॥ उत्पाट्यैककरेणशैलम  
 वलो लीलोच्छिर्लीध्रंयथा ॥ विश्वदगोष्ट  
 मपान्महेन्द्रमदमित् प्रीयान्नद्वन्द्रीगवं ॥

इति भगवत् प्रार्थना मंत्र ।

गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक ।  
 विष्णुबाहुकृतच्छाय गवांकोटिप्रदीभव ॥  
 एषोऽवजानतेमर्त्यान् कामरूपीवनौकसः  
 हंत ह्यस्मै नमस्यामः शर्मणे आत्मनोगवां ॥  
 हंतायमद्रिरवला हरिदासवर्यो ।  
 यद्रामकृष्णचरणस्पर्शप्रमोदः ॥  
 मानंतनीतिसहगीगणयोस्तयोर्यत् ।  
 पानीयसूयवसुकन्दरकन्दमूलैः ॥

इति गिरिराज प्रार्थना मंत्र ।

यालक्ष्मीर्लीकपालानां धेनुरुपेणसंस्थिता  
 घृतं वहति यन्नार्थं मम पापं व्यपोहतु ॥  
 अग्रतस्सन्तु मे गावीं गावीं मे सन्तु पृष्ठतः ।  
 गावीं मे हृदये सन्तु गावांश्च मध्ये वसाम्यहम्

इति गो प्रार्थना मंत्र ।

अहोभाग्यमहोभाग्यं नन्दगोपन्नजीकसाम  
 यन्मिदं स्मरमानन्दं पूर्णं ब्रह्मसनातनं ॥  
 आसामहो चरणरेणुजुषामहस्यां ।  
 वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनां ॥  
 यादुस्यजं स्वजन आर्य्यपथं विहाय ।  
 भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विदुश्चान् ॥  
 यावैश्रियाचितमजादिभिराप्तकामैः ।  
 योगेश्वरैरपि दयात्स निरासगोष्ठ्यां ॥  
 ह्यथास्यताङ्गवत शरणारविन्दे ।  
 न्यस्तांस्तनेषु विजहुः परिरथ्यतापं ॥  
 वन्दे नन्दब्रजस्त्रीणां पादरेणूस्सभीक्षणशः ।  
 यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम् ॥

इति गोप गोपौ प्रार्थना मंत्र ।

धन्येयमङ्गधरणी तृणवीरुधस्वत् ।  
 पादस्यऽशीङ्कुमलता करजाभिसृष्टाः ॥  
 नद्योद्रयः स्वगमृगास्रदयावलीकैः ।  
 गांषीं तरेण भजयी रपियत्सृहाश्रीः ॥

इति व्रज प्रार्थना मंत्र ।

इन मन्त्रों से गोवर्द्धन पूजन कर के अन्न कूट भोग भगवान को समर्पण कर के नमस्कार करना इति ।

इस प्रकार गोवर्द्धन पूजा कर के महाराज बलि की पूजा करे घर के एक कोने में महाराज बलि की और रानौ विंध्याबलि की मूर्ति पाँच रंग से लिखे जीभ, ओठ, छेछेला तलवा और आँख के कोने लाल रङ्ग से बान्त काले रङ्ग से और सब अङ्ग पीले रङ्ग से कपड़े श्वेत रङ्ग से और आयु-धादिक नीले रङ्ग से लिखे दो मुजा बनावे और राजाओं के सब बिन्दु बना कर अक्षत और षोडशोपचार से पूजा करे ।

मन्त्र ।

बलिराजलक्ष्म्यं विरोचनसुतप्रभो ।  
 भविष्येन्द्रसुराराते पूजयं प्रतिगृह्यतां ॥

बलि राजा की पूजा कर के कुबेर और लक्ष्मी की पूजा करनी । पूजा के पौछे स्त्रियां आरती करें ।

तीसरे पहर कास और कुस की मार्ग पाली बना कर नगर के बाहर वृक्ष में बांधना और नीचे लिखे हुए मन्त्र से

उसको नमस्कार करके सब लोग वाहनादि समेत उसके नीचे से निकलें इससे वर्ष भर कुशल होती है । मन्त्र ।

**भार्गपालिनमस्तेस्तु सर्वलोकसुखप्रदे ।  
विधेयैःपुत्रदाराद्यैः पुनरेहिब्रतस्यमे ॥**

सांभ को कुम काश की सोटी रखी बनाना और उसको एक ओर से राज पुत्रादिक एक ओर से नीच लोग खींचे जो नीच लोग खींच लें जाय तो जानना कि राजा को जय होगी ।

रात को जूआ खेलना यद्यपि जूआ खेलने का विधान तीनो दिन है परन्तु दूम दिन मुख्य है, रात को जूआ खियों से खेलना और दीप दान करना ब्राह्मणो को और मिर्चोको को बस्त्र और पान देना इति ।

अथ कार्तिकशुद्धा २—इसका नाम यम द्वितीया है, इसमें प्रातः काल श्री यमुना स्नान जहां श्री यमुना जी न हो वहां श्री यमुना जलपान वा मार्जन करना काशी वासियों को यम तीर्थ स्नान और यमेश्वर का दर्शन करना इस दिन अपने घर नहीं खाना मुख्य करके छोटीबहिन के घर भोजन करना छोटी बहिन न होतो बड़ी के घर भोजन करना वह भी नहो बूआ के घर वा नाते की बहिन के घर खाना जो नाते की भी कोई बहिन न हो तो मानी हुई बहिन वा मित्र की बहिन के घर खाना और बहन की पूजा करना अपने घर कभी नहीं खाना बहिन खिलौती समय इस मन्त्र से भाई की प्रार्थना करे ।

भ्रातस्तवालुजाताहं भुंक्षभक्तामिदंशुभं ।  
प्रीतयेयस्मराजस्य यमुनायाविशेषतः ॥

इस दिन श्री जमुना जी ने यमराज को भोजन कराया है इससे यमराज ने वरदान दिया है कि आज के दिन जो जमुना स्नान करेगा और वहिन का आदर करके वहिन के घर खाशगा उसको यम दंड न हीगा तीसरे पहर यमराज, यमी, यमुना, विचगुप्त और यमदूतों का पूजन करना यमायनमः इस मन्त्र से षोडशोपचार पूजन कर के इन मन्त्रों से पुष्पांजली देना ।

यमायनमः, निहंत्वेनमः, पिटराजायनमः, धर्मराजायनमः, वैवस्वतायनमः, दंडधरायनमः, कलायनमः, भूताधिपायनमः, दत्तानुसारिणेनमः, कृत्तानुसारिणेनमः, ।

इन नाम मन्त्रों से पूजा करके अर्घ्य देना उसकामन्त्र ।

एह्येहिभार्तिडजपाशहस्त यमान्तका-  
लीकधरामरेश । भ्रातृद्वितीयाकृत-  
देवपूजां गृह्याण्यचार्य्यभगवन्ममस्ते ॥

अथ कार्तिकशुद्ध ४—इस दिन शिषादिक महानायों की पूजा करनी ।

अथ कार्तिक शुद्ध ५—इस दिन जया व्रत करना विष्णु की जया सहित पूजा करना श्रवितवर्ण हि भुज जया का ध्यान करके विष्णु और जया की प्रत्यङ्ग पूजा करके बांस की पाच

में संप्रधान दान करना और “ येन बद्धो बलीराजा ” इस मन्त्र से रक्षाबन्धन करना ।

अथ कार्तिकशुद्ध ६—जो मङ्गलवार होतो अग्नि का पूजन कर के ब्राह्मण भोजन करना ।

अथ कार्तिकशुद्ध ७—इस दिन कार्तिक वीर्य्य की पूजा कर के उन का दीप दान कराना ।

अथ कार्तिकशुद्ध ८—इस दिन गज का पूजन गोयास दान करना और इसी में शाक व्रत है नक्तव्रत करना शाक खाना और शाकही ब्राह्मण को देना ।

अथ कार्तिकशुद्ध ९—इस दिन श्री वृन्दावन की परिक्रमा करना । यह नवमी द्वापर की युगादि भी है इसमें कुष्मांड दान करना और जगद्धात्री का पूजन करना । तुलसी के विवाह का उत्सव इसी दिन से आरम्भ होता है जो तुलसी विवाह करे वह तीन दिन का व्रत करे । यद्यपि धात्री पूजन कार्तिक में नित्यही है तथापि जो और दिन न किया हो तो इस दिन करे ऊर्ध्वायैनमः इस मन्त्र से षोडशोपचार पूजा करे और आठ दीप आठ और बाण कर यह मन्त्र पढ़े ।

**इमेदीपामयादत्ता प्रदीप्ताघृतपूरिता ।  
धात्रिदेविनमस्तुभ्यमतद्गशान्तिम्प्रयच्छमे॥**

फिर भोगादिक समर्पण कर के इन मन्त्रों से पुष्पांजलि चढ़ावे ।

धात्रिदेविनमस्तुभ्यं सर्वपापक्षयंकरि ।  
 पुत्रान्देहिमहाप्राज्ञे यशोदेहिबलञ्चमे ॥  
 प्रज्ञामिधाञ्चसौभाग्यंविष्णुभक्तिञ्चशाश्वतीम्  
 निरीगंक्षुरमांनित्यं निष्पापंक्षुरसर्वदा ॥  
 सर्वज्ञञ्चुरमां देवि धनवतन्तथाक्षुर ।  
 संवत्सरहस्तंपापं दूरीक्षुरमसाक्षये ॥

फिर इन मन्त्र से मंत्र लपेट कर फेरी करे ।

दामोदरनिवासायै धात्र्यै देव्यै नमोनमः ।  
 सूत्रेणानेनवध्यामि सर्व देवनिवासिनीम् ॥

फिर इन मन्त्र से फूल चढ़ावै । धात्र्यै नमः, शान्त्यै  
 नमः, कान्त्यै०, मेधायै०, प्रकृत्यै०, विष्णुपत्न्यै०, महानक्षत्र्यै०,  
 रमायै, कामनायै, इन्द्रायै, लोकमात्रे, कल्याण्यै, कमनी-  
 यायै, सावित्र्यै, जगद्धात्र्यै, गायत्र्यै, सुधृत्यै, अव्यक्त्यायै,  
 विश्वरूपायै, सुरूपायै, अश्विभवायै नमः इन मन्त्रों से फूल  
 चढ़ाना धात्री के मूल में तर्पण करना ।

पितापितामहाश्चान्येऽपुत्रायैऽप्यगीत्रिणः  
 तेऽपि वन्तु मया दत्तं धात्रीमूलेऽक्षयम्पयः ॥

आवृद्धस्तस्मिन् पर्यन्त मित्यादि से फिर तर्पण करे । यह  
 तर्पण सब्यही से करे ।

धात्री के नौचे दामोदर भगवान की पूजा करे चित्राञ्ज



विचित्र वस्त्र समर्पण वाह्यार्थों का जोड़ा खिन्नावे भगवान की  
घोड़शोपचार पूजा कर के इम मन्त्र से अर्घ्य दे ।

**अर्घ्यंगृहाण भगवन् सर्व्व कामप्रदो भव ।**

**अक्षय्यासंततिर्भेस्तदाभीदरनमस्तुते इत्यादि**

अथ कार्तिकशुद्धा १०—इम दशमौको सार्व्वभौम व्रत  
होता है ।

अथ कार्तिकशुद्धा ११—इम एकादशी का नाम प्रबो-  
धिनी है । इम दिन भगवान सो कर उठते हैं इमसे यह  
परम मङ्गल दिन है इम दिन जिस समय मुहूर्त्त अच्छा हो  
उम समय भगवान को जगाना पहिले नीचे पृथ्वी में अनेक  
रङ्गों से मङ्गल मण्डप साथिया चक्र इत्यादिक बनाकर उस  
पर ६४ जख का चार खम्भा बनाकर खड़ा करना उसकी  
नीचे भगवान को बिठाना और फिर घंटा शङ्ख बजाते हुए  
इन मन्त्रों से जगाना ।

**ब्रह्मेन्द्रद्राग्निकुबेरसूर्य सोभादिभिर्व-  
न्दितवन्दनीय । बुद्ध्यस्वदेवेशजगन्निवास  
मन्त्रप्रभावनसुखनदेव ॥**

**द्वयंचहादशीदेव प्रबोधार्थतुनिर्मिता ।**

**त्वयैवसर्व्वलोकानां हितार्थेषुप्रशायिना ॥**

**उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोविन्द त्यजनिद्राम्जगत्पत**

**त्वयिसुप्तैजगत्सुप्त सुत्यतेतूत्यतंजगत् ॥**

उत्तिष्ठोत्तिष्ठगोविन्द उत्तिष्ठगरुडध्वज ।  
उत्तिष्ठपुण्डरीकाक्ष त्रैलोक्यमङ्गलङ्कुर ॥

तथाच जो निकुञ्ज के परम रसके अधिकारी हैं

वह इन मन्त्रों से जगावे ।

विगतारजनीनाथ प्रमदानांसुखप्रदा ।  
उदेल्ययंदिनमणिर्वियोगीजनवंचकः ॥  
प्राणनाथजगन्नाथ गोपीनाथरूपानिधे ।  
चिरसुप्तोसिजागृष्व सुरतश्चमकर्षितः ॥  
ललितावाद्यतेवीणां विशाषानृत्यतेंगणे ।  
गायन्तिगोपिकास्सर्वा स्तावकांनिर्मलंयशः  
वयस्याहारिसम्प्राप्ताः क्रीडार्थं तवमानद ॥  
हृद्यं गवीनहस्तासाल्वायशोदाऽभिवाङ्कति  
वियुक्ताश्चक्रवाकिन्यः पक्षिणोऽकुर्वन्तेरवम्  
वाति वायुस्सुखस्पर्शोदीपोयमन्दतांगतः  
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ प्राणेश उत्तिष्ठोत्तिष्ठ बल्लभ ।  
मुखन्दर्शय मेनाथ वियोगं शमयप्रिय ॥  
त्वयिसुप्ते जगन्नाथ जगत्सुप्तस्मवेदिदम् ।  
उत्थिते चेष्टते सर्वमुत्तिष्ठोत्तिष्ठ साधव

इन मन्त्रों से जंगों के पंचामृत स्नान कराना और च-  
न्दनादिक से उद्वर्तन करके शीत को नए वस्त्र समर्पण कर के  
पुष्पादिकों से पूजन करना । मन्त्र ।

गतामेघा वियञ्चैव निर्मलंनिर्मलादिशः ।  
शारदानिच पुष्पाणि गृहाण ममकेशव ॥

इस भांति पुष्प गन्ध अक्षत धूप दीप नैवेद्य तांबूल फ-  
लादिक अर्पण करके आर्ती करके इनमन्त्रों से स्तुतिकरना ।

योऽविद्यया ऽनुपहतोपिदशार्द्धवृत्त्या ।  
निद्रामुवाह जठरी क्षतलीक यालः ॥  
अन्तर्जलेहि कश्चिपुस्पर्शानुकूलाम् ।  
भीमो भिम्भालिनि जनस्यसुखंविद्वृणवन् ॥  
सोसावदम्न करुणो भगवान् विद्वद्भ ॥  
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन् ॥  
उत्थाय विश्वविजयायचनोविप्रादम् ।  
साध्व्यागिराऽपनयतात्पुरुषः पुराण ॥  
यन्नाभि पद्म भवनादज आविरासीत् ।  
लोकत्रयोपकरणी यद नुग्रहेण ॥  
तस्मै नमस्त उदरस्थ भवाय योग ।  
निद्राऽवसान विक्रसन्नलिनेक्षणाय ॥

प्रार्थना करके दगडवत् प्रदक्षिणा कर कार्तिक की सब व्रत भगवान् की सामने ससाम्न करै । इस दिन श्रीठाकुर जी को रथ पर बिठा कर नगर में घुमाने का महापुण्य है भगवान् को रथ पर बैठा कर मङ्गलपाठ वेदपाठ वाजा शङ्ख घण्टा बजाते हुए नगर में घुमावै और जहां जहां रथ जाय वहां वहां लोग पूजा करै ॥ मन्त्र ।

यद्रीष विभ्रम विवृत्तकटाक्षपात  
संभ्रान्त नक्र भकरो भयगीर्ण धीषः ।  
सिन्धु शिशिरस्यर्हणं परि गृह्य रूपी  
पादारविन्द सुप्र गस्य वभाष एतत् ॥  
नत्वावयं जङ्घियोरुवि दाम एतत्  
कूटस्य मादि पुरुषं जगतामधीशं ॥  
यत्स त्वत् स्मरगणा रजसः प्रजेशा  
अन्ये च भूत पतय स्वभवान् गुणेशः ॥  
कामम्प्राप्तिं जहि विश्रवसोवमेहं  
चैलोक्य रावण मवाप्नुहि वीर पत्नीम् ॥  
वधीहि सेतु मिहिते यशसो वितत्यै  
गायन्ति दिग्विजयिनी यमुपेत्य भूपाः ॥  
स्वस्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदताम्

ध्यायन्तु भूतानि शिव स्मिथोपिवा ।

मनश्च भद्र म्भजता दधीक्षजे

आवेश्य तान्नी मति रप्य हैतुकी ॥

युक्त प्रशैव्यादि वाहैर्मरकत सुरण त्किङ्कि

णी जालमाला । रत्नोघै मूर्त्तिकाना

मविरलमणिभि स्सम्भृतै श्रैवहारैः ॥

हेमैः कुम्भैः पताका शिवतर रुचिभि

र्भूषितः केतुमुख्यैः । कृत्रैर्ब्रह्मेश वन्द्यो

दुरित हरहरः पातु जैत्रो रथोव ॥

वक्त्रं नीलीत्पल रुचि लसत् कुण्डला-

भ्यां सुमृष्टम् । चन्द्राकारं रचित तिलकं

चन्दने नाक्षतैश्च ॥

गत्यां लीला जनसुख करीं प्रेक्षणे नामृ

तौघम् । पद्मा वासंसृततसुरसा धारयन्

पातु विष्णुः ॥ मोदन्तां सुजनास्व निन्दित-

धियस्त्यक्ता खिलोपद्रवाः । स्वस्था सुस्थिर

बुद्धयः प्रतिहता मित्रारमन्तां सुखम् ॥

रदैत्यागिरि गच्छराणि गहना न्याशु ब्रजध्वं  
भयात् । दैत्यारिर्भगवान यन्त्र हरियानं  
समा रोहति ॥

पलायध्वम्पलायध्वं ररे दनुज दानवाः ।  
संरक्षणाय लीकानां यथारूढी नृकेशरी ॥

इन मन्त्रों को पढ़ते और भगवान का चरित्र गाते हुए रथ को घुमावें । रथ की खींचने का, रथ की संग चलने का, रथ पर बैठे भगवान के दर्शन करने का, तथाच पूजा करने का अनन्त महात्मा है विस्तार भय से यहां नहीं लिखा इसी दिन तुलसी जी का विवाह भी है तुलसी विवाह की विधि विशेष और ग्रन्थों में लिखी है देख जो संक्षेप से यहां लिखते हैं तुलसी अपने हाथ से घर वा बगौचे में लगाना जब तीन महीने का वृक्ष हो तब उसका पूजन आरम्भ करना और फिर शुभ मुहूर्त्त देख के विवाह करना मंडप कलशस्थापन वेदी इत्यादि सब विवाह की भांति बनाकर नवग्रह मख माहका पूजन नांदी श्राद्ध करके दान करना जो लग्न कोई अच्छी मिले तो उस लग्न में नहीं तो गोधुली लग्न में विवाह करना अन्तर पकर के “वासश्रुतः” इस मंत्र से वस्त्र पहिराना “यदावधे” इस मंत्र से कङ्कण बांधना और मङ्गलाष्टक पाठ कर के अंतर पट हटा कर “मयामम्बुद्धिं ता यथाशक्त्यलंकृता मिमांतुलसीं देवीं दामो-दराय वराय तुभ्य महं सम्प्रददे” यह सङ्कल्प करके जब

भगवान के सामने छोड़ना और तुलसी की भगवान से कृपा देना उस समय यह मंत्र पढ़वाना “ कीदात्कस्माच्चदात ” इत्यादि फिर होम करना “ पंचत्वनो अग्ने इत्यादि ” मंत्र से नव आहुति देकर फिर होम इन मंत्रों से करना पहिले द्वादशाक्षर से फिर वासुदेवाय नमः स्वाहा नारायणाय, माधवाय, गोविन्दाय, विष्णवे, मधुसूदनाय, त्रिविक्रमाय, वामनाय, श्रीधराय, ऋषोक्षाय, पद्मनाभाय, दामोदराय, उपेन्द्राय, वासुदेवाय, अनिरुद्धाय, अच्युताय, अनन्ताय, गदिने, चक्रिणे, विष्वक्सेनाय, वैकुण्ठाय, जनार्दनाय, मुकुन्दाय, अधोक्षजाय, इन मन्त्रों से होम करके दक्षिणा भूयमी दक्षिणा आचार्य दक्षिणा शय्यादानादिक करके इस मंत्र से प्रार्थना करना ।

**त्वन्देविमेग्रतो भूयातुलसीदेवि पार्श्वतः ।  
देवित्वं पृष्ठतोभूयास्त्वहानात्सीक्षमाश्रुयाम्॥**

विवाह की समय स्त्रियां गीत गावें । इति तुलसी विवाह ॥ इस एकादशी को व्रत करके रात को जागरन करना इस रात को जागरन का दीपदान का बड़ा पुण्य है जो इस एकादशी को सोमवार और उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र हो तो बड़ी फल दात्री हो । इसी दिन से भीष्म पंचक का व्रत करना । १०८ द्वादशाक्षर मन्त्र जप करके भगवान की पंचासूत खान कराके श्रीं विष्णवे नमः इस मन्त्र से १०८ आहुति देकर व्रत करना पृथ्वी पर सीना भीष्म तर्पण करना पहिले दिन तुलसी से चरण पूजन करके गोवर प्रार्थन

करना दूसरे दिन विस्वपत्र से जांघ की पूजा करके गोमूत्र प्राशन करना तीसरे दिन भङ्गरैया से नाभि पूजन करके दूध प्राशन करना चौथे दिन कनेल से कन्धा पूजन करके दही प्राशन करना पांचवें दिन की विधी पूर्णमासी की विधि में देखो इसी दिन मत्स्य भगवान को घी के घड़े पर रख के स्वर्ण की मूर्ति बनाकर पूजा करना भी किसी का मत है पूजा करके इस मन्त्र से घड़ा दान कर देना ।

## जगदीनिर्जगद्रूपी जगदादिरनादिमान् जगदादी जगदीजी प्रीयतांमं जनाईनः

अथ कार्तिक शुद्धा १२—यह मन्वतरादि है इसमें दीप दान प्रातः समय नीराजनादिक करना ।

अथ कार्तिक शुद्धा १४—इसका नाम वैकुण्ठ चतुर्दशी है यह परम पुन्य दिन है इसमें स्नान दानादिक करना । इसी चतुर्दशी में ब्रह्मकुर्चक व्रत और पाषाण होते हैं इसमें विश्वेश्वर का दर्शन और पूजन होता है । इस में रात को जागरण करना और कार्तिक का उद्यापन करना ।

अथ कार्तिक शुद्धा १५—यह बड़ौ पवित्र तिथि है इस में जो विशाषा की सूर्य्य और कृत्तिका के चन्द्रमा हों तो पञ्चक नामक बड़ा पवित्र योग हो इसमें पुष्कर स्नान वा श्री यमुना स्नान वा श्री गङ्गा स्नान करके गोदान करना इसमें जो भरणी कृत्तिका वा रोहिणी नक्षत्र हों तो बड़ा फल है । इसी पूर्णमा में मत्स्य जङ्गती मत्स्य भगवान का



पूजन करके दानादिक करना । इसी में सांभ को त्रिपुरो-  
त्खव करना सांभ को इस मन्त्र से दीपदान करना ।

कीटाः पतङ्गाः मश्रु काञ्च वृक्षाः  
जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः ।  
दृष्ट्वा प्रदीपं नव जन्म भागिनी  
भवन्तु नित्यं श्लेषचाश्च विप्रा ॥

इस पूर्णिमा को कार्तिकीय का दर्शन करना । यह  
मन्वादि भौ है इसमें नक्तव्रत वा उपवास करना । सांभ की  
कृतिका का पूजन करना मन्त्र शिवायैनमः सस्मृत्यैनमः प्रीत्यै-  
नमः सन्तत्यैनमः अनुसूयायैनमः क्षमायैनमः कार्तिकीयाय-  
नमः खड्गिनैनमः वरुणायनमः हुतासनायनमः इन मन्त्रों से  
कृति का और कार्तिकीय का पूजन करना, गुरुवार के चौर  
सागर-दर्शन करना चौवास अंगुल का चौर समुद्र बनाकर  
गज का दूध भर कर सोने की मजली और मोती की आंख  
बना कर दान करना । जो एकादशी को व्रत न समाप्त  
किया हो तो कार्तिक व्रत इस मन्त्र से समाप्त करना ।

इदं व्रतं मयादेव कृतं प्रीत्यै तव प्रभो ।  
न्यूनं सस्मृत्यै तां यातु त्वत्प्रसादाज्जनाईन ।

इसी पूर्णिमा में नील वृषभ दान करना और इसी में  
सन्तान व्रत राशि व्रत और मनोरथे पूर्णिमा व्रत होता है ।  
इसी पूर्णिमा में चतुर्मास के व्रत समाप्त करना । उस वन के

दान लिखते हैं नक्त व्रत में दो बख दान करना । एकान्तर उपवाम में गज । भूशयन में शय्या । एक बर खाने से गज देना । जो चन्न छोड़ा हो तो जो चन्न छोड़ा हो वह सोने का बना कर देना कच्छ किया हो तो दो गज देना । आकाहार किया हो वा दूध छोड़ा हो वा दूध पीता हो वा और कोई गोरस छोड़ा हो तो गज देना । बृहन्नचर्य लिया हो तो सोना देना । पान छोड़ा हो तो दो बख देना । मीन लिया हो तो घी का घड़ा, दो बख और चंटा देना । जो नित्य रङ्ग से मन्दिर में स्वस्तिकादिक बनाते हैं तो गज और मोने का कमल देना । दीपदान में दीये और दो बख देना । गज दास देते हैं तो गज और बैल देना पृथ्वी पर भोजन करता हो कांसि की थाली और गज देना । सौ फेरी देते हैं तो बख । अभ्यंग छोड़ा हो तेल का घड़ा । केश न बनवाया हो तो मधु, चीनी, सोना । गुड़ छोड़ा हो तो ताम्र का पात्र और गुड़ और सोना देना । ऐसे हो जिस वस्तु को छोड़ा हो वह स्वर्ण समित देना । जो लाख तुलसी चढ़ाया हो तो उद्यापन करना । सांभ की इस मन्त्र से दीपदान करना ।

**नमःपितृभ्यःप्रतेभ्यो नमी धर्माय विष्णवे ।**

**नमी याम्हाय रुद्राय कान्ताय पतये नमः ॥**

इस मन्त्र से दीप दान करना । यह पूर्णिमा परम फल दात्री है इसमें जो कुछ सुकत हो सो करना भीष्म पञ्चक का

व्रत इत्नी दिन समाप्त करके काल पुरुष का दान करना होम करना यह तिथी श्री राधिका जी को बहुत प्यारी है इस से वैष्णवीं को इस तिथि में श्री राधा सहस्र नाम पाठ श्री राधिका सन्त जप और राधिका पूजन करना । इसी पूर्णिमा को गोलोक में श्री ठाकुर जी ने श्री राधिका जी का पूजन किया था और उस समय श्री महादेव जी ने ऐसा गान किया कि श्री राधिका जी सहित भगवान् द्रव हो गए इससे इन्ही पीरुंगमासी को गङ्गा जी का जन्म है अतएव इस दिन गङ्गा स्नान का बड़ा फल है और तुलशी का भी जन्म दिन यही है यह देवी सुराण में लिखा है इससे तिथि में तुलशी पूजन और भगवान् को तुलशी समर्पण की मुख्यता है । विशेष कहां तक कहें यह कार्तिक ऐसा पवित्र महीना है इसमें भी यह पूर्णिमा ऐसी पवित्र तिथि है कि इस में स्नान दान जप व्रत जापरण दीपदान इत्यादि सब कर्म अजय होते हैं ॥

### दीक्षा ।

प्राण नाथ पद रज सुमिरि, धारि हृदय आनन्द ।  
परम प्रेम निधि रसिक बर, बिरची श्रीहरिचन्द ॥  
प्राण पियारे प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्राण ।  
तिन के पद अरपन कियो, यह कारतिकविधान ॥

॥ इति श्री ॥

सार्गशीर्ष महिमा ।

—  
“मासानास्सार्गशीर्षेह”

श्रीमद्भागवतम् ॥



श्रीगोपीगाविदात्मनः ।

## मार्गशीर्षमाहिमा ।

श्लोकपाचीन ।

नूतनजलधररूचये गोपवधटीटुकूलचौराय ।  
तस्मै कृष्णाय नमः संसारमहौरुहस्य वीजाय ॥ १ ॥

श्लोकनवीन ।

ब्रजजनमुखकारी । गोपिकावस्त्रहारी ॥  
सकलभुवनभारी । निल्यलोलोवतारी ॥  
ब्रजभुविपरिचारी । गोपनारौविहारी ॥  
दनुजतनुविदारी । पातुनञ्जलधारी ॥ १ ॥

शोरठा—प्रातश्चमनकाले, तिनगोपिन्दकोचीरलै ।

तरुकरुच्यचन्द्रिजात, चोरिचोरिनितप्रातही ॥

दोहा—रासरमिकाफनदेनचित, तिनकीकरतविहार ।

ऐसप्रभुकेपदकमल, तिनवतवारस्वार ॥

शोरठा—गुनिवन्दौसुखरास, भुक्तिमुक्तिप्रदसहजहीं ।

अगहितअगहनमास, कृष्णरूपगोपिनसुखद ॥

विदित हो कि इस दास ने परोपकारार्थ जो कार्तिक कर्म विधि लिखी थी उसे हमारे एक मित्र ने बहुत प्रसन्नता पूर्वक अंगीकार किया इस हेतु ऐसी इच्छा हुई कि इसी भाँति मार्गशीर्ष की भी विधि लिखी जाय तो बहुत लोकोपकार होगा क्योंकि इस परम पवित्र मास का माहात्म्य बहुत कम लोग जानते हैं और यह अगहन महीना श्री भगवान का स्वरूप है जैसा आपने श्री मत् भगवत्गीता और श्री मत् भागवत में आज्ञा किया है और ब्रज की कुमारिका गण ने श्री भगवान को प्राप्ति के अर्थ इसी अगहन का ज्ञान किया था जिसे उन्हे श्री कृष्ण मिले । इस अगहन का माहात्म्य

स्कन्द पुराण में लिखा है जिस में से नित्य विधि चाध्याय क्रम से लिखते हैं ।  
ब्रह्मा श्रीभगवान से पूछते हैं कि आपने श्रीमहोता वा श्री भगवतं में आज्ञा  
किया है कि अगहन हमारा स्वरूप है इस हेतु हम उस का साहाय्य अच्छी  
भांति सुना चाहते हैं ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

अन्यैर्धर्मादिभिः कृत्वा गोपितं मार्गशीर्षकं ।

सत्प्राप्तेः कारणात् सत्त्वा देवैः स्वर्गनिवासिभिः ॥ २ ॥

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि सब धर्मों कर के मार्ग शीर्ष को स्वर्ग  
निवासी देवताओं ने हमारे प्राप्ति का कारण जान के छिपाय दिया ॥ २ ॥

येकेचित्पुण्यकर्मार्थो ममभक्तिपरायणाः ।

तेषामवश्यं कर्तव्यं मार्गशीर्षमघापहं ॥ ३ ॥

परन्तु जो कोई पुण्य कर्मों हमारे भक्त होयें उन को हमारे स्वरूप अगहन  
मास का व्रत अवश्य करना चाहिए ॥ ३ ॥

उपसृत्वाय योमर्त्यः ज्ञानं विधिवदाचरेत् ।

तुष्टोहं तस्य यच्छामि आत्मानमपि पुत्रक ॥ ४ ॥

हे पुत्र अगहन में जो चार सड़ो गत रङ्गे उठ के नहाते हैं उन को हम  
अपनी आत्मा भी दे देते हैं ॥ ४ ॥ इत्यादि प्रथमाध्याये ।

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं ।

प्रथमाध्याय ।

अब ज्ञान की विधि लिखते हैं । बड़े सवेरे उठ के शुच को नमस्कार  
करके हमारा ध्यान करे और सहस्र नाम इत्यादि पढ़के गांव के बाहर मत्त  
त्याग करके श्रीच के श्रद्ध हीके आचवन करके दत्तपुत्र करके ज्ञान करे  
तुलसी जी के जड़ की मिट्टी और उन का पत्ता लेकर के मूल मंत्र पढ़ के वा  
गायत्री पढ़ के शरीर में कृपाय के ज्ञान करे ज्ञान को समय इन मंत्रों से  
श्रीगंगा जी का आवाहन करे । मंत्र

विष्णुपादप्रसृतासिवैष्णवीविष्णुदेवता ।

द्वाह्रिपादात्मसंस्तान्नांमांजन्मभरणांतिकात् ॥ ५ ॥

तिस्रःकीच्योर्धकोटिस्रतोर्थांनात्रायुर्व्रवीत् ।  
 दिविसुव्यन्तरिच्छे चतानितेसन्तुजान्हवि ॥ ६ ॥  
 नन्दिनोत्खेवतेनाम देवेषुनक्निनीतिच ।  
 दक्षापृथ्व्योचविहगाविप्रद्वनाथाशिवासती ॥ ७ ॥  
 विद्याधरीसुप्रसन्नातथान्त्वोक्त्रमादिनी ।  
 जेनावतीजान्हवीचशान्ताशान्तिप्रदात्रिजी ॥ ८ ॥  
 एतानिपुण्यनामोनिस्नानकालिप्रकीर्तयेत् ।  
 भवेत्सन्निहितातचगंगात्रिपथगामिनी ॥ ९ ॥

इन मंत्रों को पढ़ के फिर श्री गंगा जी की स्तिका इस मंत्र से शिर में लगाया ।

मंत्र

अष्टक्रान्तेरथक्रान्ते विष्णुक्रान्तेबसुस्थरे ।  
 सृत्तिकेहरमेपापं यन्मयाटुष्कृतंहतं ॥ १० ॥  
 उद्धृतासिवराहेण कृष्णेन शतबाह्वना ।  
 नमस्ते सर्व्वं देवानाम्प्रभवारणिसुव्रते ॥ ११ ॥

इस मंत्र से स्तिका शिर में लगाय के स्नान करे स्नान करके लक्ष में बख्त न निचोड़े फिर आचमन करके कपड़ा पहन के फिर आचमन करे ॥

फिर संख्या तर्पण आरंभ करे तिस में पढ़के उर्ध्वपुंड्र धारण करके फिर संख्यादिक कर्म करे । इत्यादि द्वितीयाध्याये ।

श्रीभगवान् आन्ना करते हैं कि तुमसे की स्तिका वा गोपी चंदन वा प्रसादी कुंकुम चन्दनादि से तिलक लगाने का बंधा पुण्य है और गोपी चंदन से शंख चक्रादिक चिन्ह हृदय बाहुमूल शलादिक अंगों में धारण करना ।

श्री भगवान् कहते हैं कि तुमसे की काठकी मासा जो प्राण्य करते हैं वे चाहे भले ही चाहे बुरे हमारे ही होते हैं तुमसे की काठकी वा चां-बले की मासा जो लोग पहिनते हैं वे हमारे स्वरूप हैं इस भाँति तिलक धारण कर के फिर संख्या कर के शुक्र की मंडल के आष्टांग दक्षत कर के



हमारी मानसी पूजा कर के फिर विधि पूर्वक षोडशोपचार पूजा करे ।  
इत्यादि चतुर्थाध्याये ।

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में पंचान्त से स्नान कराते हैं वे लोग कोटिन गोदान का फल पाते हैं जो लोग शंख से हमें स्नान कराते हैं वे जीवन्मुक्त हैं जिन के घर शंख की पूजा होती है वे धन्य हैं ।  
इत्यादि पंचमाध्याये ।

आप कहते हैं कि जो लोग हमारे सामने घंटा बजाते हैं उन की पूजा का करोड़ गुना फल होता है क्योंकि घंटा पर गण्ड जी रहते हैं और गण्ड जी के पक्ष से सामवेद निकलता है इससे जो पूजा की समय घंटा बजाता है उस को बहुत फल होता है जो लोग हमारी पूजा में नृत्य गान इत्यादिक करते हैं वे लोग अपने पित्रों के सहित वैकुंठ पाते हैं जो लोग हमें तुलसी के काठ का चंदन चढ़ाते हैं वे हमारे प्रिय होते हैं ।

तुलसी दमनकं रुद्धं दत्त्वा यस्त्रैवते पुनः ।

सार्गशोधिं सदा भक्त्यासलभेद्वाञ्छितं फलं ॥ १ ॥

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमें अगहन में कमल का फूल चढ़ाते हैं वे लोग हमारे बल्लभ होते हैं हम को बिना सुगंध के फूल और कीड़े का चाटा फूल नहीं चढ़ाना सब फूलों में जाती फूल का विशेष माहात्म्य है इस हेतु आप आज्ञा करते हैं । यथा ।

सर्वासाम्पुष्यजातीनांजातिपुष्यमिहोत्तमं ।

जातिपुष्यसहस्राणांयच्छेन्मालासुशोभनां ॥

सह्यथोविधिवद्दत्त्वात्तस्यपुण्यफलंशृणु ।

कल्पकोटिसहस्राणिकल्पकोटिशतानिच ॥

मत्पुरेवसतेश्रीमान्ममसुख्यपराक्रमः ॥ १ ॥

सर्वेषांपत्रपुष्याणांतुलसीममवल्लभा ।

अन्येषामपिदेवानांनिषिद्धात्कदाचन ॥ २ ॥

सब फूलों में जाती फूल की विशेष महिमा है हजार जाती फूल माला जो हम को समर्पण करता है वह हजार करोड़ कल्प और सौ करोड़

कल्प हमारे लोक में हमारे मुख्य पराक्रम ही कर वाम करता है और सब फूलों से तुलसी हम को बहुत प्यारी है और दूसरे देवताओं की पूजा में भी तुलसी निषिद्ध नहीं है। इत्यादि सप्तमे।

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं कि तुलसी हम को अत्यन्त मिय है।  
यथा।

श्रीमत्तुलस्यार्चयतेसकृद्विमं पत्रैः सुगन्धैर्बिम्बैरखंडितैः ।  
यत्तस्य एषां पंचदशसंख्यं तदा निरीक्षयित्वा परिमार्जयेद्यमः ॥  
तुलसीनयेषां मस्य पूजनार्थं सस्यादितैकादशपुण्यवासरे ।  
धिर्यौवनं ज्ञौ वितमर्थं संततिं तेषां सुखं नैव च दृश्यते परैः ॥

श्री कोई श्री तुलसी से हमारी पूजा करता है और उसके विमल और बिना टूटे दल हम को समर्पण करता है उसके हृदय का पाप जमरा-ज दूर कर देते हैं। जिन लोगों ने एकादशी के दिन हमारी तुलसी से पूजा नहीं किया उनके जीवन और काम और उनके मन्तान धिक्कार योग्य हैं और सुंदर देखने के योग्य नहीं हैं। इति

अगहन के महीने दीपदान का बहुत फल है। यथा।

यः करोति सहोमासे कर्पूरेण च दीपकां ।  
अश्वमेधसवाप्नोति कुलं चैव समुद्धरेत् ॥  
घृतेन चाथतैलेन दीपं योज्वालयेद्भरः ।  
सहोमासे मस्य तु तस्य पुण्यफलं शृणु ॥  
विहाय मकलं पापं सहस्रादित्यमग्निभः ।  
ज्योतिष्मता विमानेन मस्य लोको महीयते ॥

श्री कोई अगहन में कपूर का दीया बांधता है उसकी अश्वमेध का फल मिलता है और अपने कुल का उद्धार करता है। घी से अथवा तेल से जो लोग अगहन में हमारे सामने दीया बांधते हैं वे लोग सब पापों से छूट के हजार सूर्य के समान ज्योति पावते हैं और बड़े ज्योतिमान विमान पर बैठ के हमारे लोक जाते हैं। इत्यादि अष्टमे।

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं कि अगहन में जो लोग हमारी प्रदक्षिणा

करते हैं और जो हमें अष्टांग दंडवत करते हैं वे लोग स्वर्ग में निवास करते हैं ।  
यथा ।

प्रदक्षिणादंडपातंयः करीतिसदामस ।

सहोमासिविशेषेण ह्याकल्पस्वसतेदिवि ॥

पद्भ्यांकराभ्यांजानुभ्यांउरसाभिरसातथा ।

मनसावचसादृष्ट्याप्रणामोऽष्टङ्गउच्यते ॥

जो लोग हम को दंडवत और प्रदक्षिणा करते हैं वे लोग कल्प भर स्वर्ग में निवास करते हैं । पैर से १ । हाथ से २ । ऊंचा से ३ । क्रांती से ४ । सिर से ५ । मन से ६ । वचन से ७ । और दृष्टि से ८ । नमस्कार करने को अष्टांगदंडवत कहते हैं अर्थात् आठों अंग शुकों और आठों अंग से नमस्कार करे उसको साष्टांग दंडवत कहते हैं । इत्यादिनवमे ।

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं कि एकादशी का व्रत और जागरण जो लोग करते हैं वे हम को अत्यन्त प्रिय हैं और जागरण में जो लोग दीपदान इत्यादि करते हैं वे हमारे परम प्यारे हो जाते हैं । यथा ।

यःपुनःकुरुतेनृत्यं दीपंगानंचपूजनं ।

नतत्क्रतुशतैःपुण्यं वृत्तैर्दानशतैरपि ॥

जो भक्त लोग हमारे सामने नाचते हैं दीप दान करते हैं हमारा कीर्तन करते हैं पूजा करते हैं उन को पुण्य को बराबर न भी यज्ञ का पुण्य है और न भी व्रत और दान का पुण्य है । इत्यादिद्वादशे ।

अब कौन देवता की पूजा करना चाहिए सो आप आज्ञा करते हैं कि अगहन में कीर्ति और केशव की पूजा करना चाहिए और सपत्नीक ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए । यथा ।

सहोमासिचवैदेवो कीर्तियुक्तो हि केशवः ।

तस्यपूजाप्रकर्तव्या यथापूर्वप्रभाषिता ॥

ब्राह्मणकेशवंकुर्यात्तत्पत्नी कीर्तिर्भाजकां ।

दंपतीविधिवत्पूज्यौ वस्त्राभरणधेनुभिः ॥

दस्यल्योः पूजनेवत्सपूजितो हंसदारका ।

तस्माद्ब्रह्मसम्पूज्यौ दस्यतौ समस्तुष्टये ॥

अगहन के महीने में कीर्ति देवी और केशव देवता की पूजा पीछे-  
शीपचार से करना ब्राह्मण की केशव मानना और ब्राह्मणों की कीर्ति समुक्त  
के बख्त गहना गज से दोनों की पूजा करना । दस्यती ब्राह्मण के पूजा से ह-  
मारो और लक्ष्मी दोनों की पूजा हो जाती है इस हेतु हमारे तुष्ट हीने के  
अर्थ दस्यती की पूजा अवश्य करना । इतरादि चतुर्दशे ।

श्री भगवान् आज्ञा करते हैं कि अगहन में हमारे प्रिय कदम्ब वृक्ष की  
पूजा अवश्य करना । यथा ।

सार्गशुक्ते प्रतिपदिकदम्बं पूजयेत्तु यः ।

आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं पुमान्प्राप्नोत्यसंशयः ॥

सार्गशीर्षे सिताष्टस्यां भोजनं च कदम्बके ।

सिक्थे सिक्थे च गोदानं पुमान्प्राप्नोत्यसंशयः ॥

एकादश्यां त्रितङ्गु व्यात्तु ह्यदश्यामरुणोदये ।

कदम्बम् पूजयेत्तथा साक्षाच्छ्रीकृष्णदर्शनं ॥

अखंडं दीपकङ्क व्याञ्जीपद्यत्ते हरिप्रिये ।

सर्वान् कामनवाप्नोति वशीकरणमुत्तमं ॥

सार्गशीर्षे त्रयोदश्यां धीनौ पश्य यसाऽर्चयेत् ।

विन्दुना विन्दुना चैव अश्वमेधफलं लभेत् ॥

सार्गशीर्षे चतुर्दश्यान्दधिना नीपमर्चयेत् ।

इह सन्तानवृद्धिश्च परचपरमं पदं ॥

सार्गशीर्ष्याम्पौर्णमास्याङ्गुञ्जाहारेण नीपकं ।

वेष्टयेद्वनभालाभिः कृष्णास्तस्ववशी भवेत् ॥

इदं रहस्यं गोपनीयं पुत्रसर्वात्मनामम ॥ इति ॥

अगहन सुदी प्रतिपदा को जो कदम्ब को पूजा करते हैं वे आयुष्य आरोग्य ऐश्वर्य पाते हैं अगहन सुदी अष्टमी को जो कदम्ब को नीचे भोजन करते कराते हैं वे एक एक ग्राम में गोदान का फल पाते हैं। एकादशी का व्रत कर के द्वादशी को सबिरे जो कदम्ब को पूजा करता है उसको साक्षात् श्रीकृष्ण का दर्शन होता है। जो कदम्ब को शम्भु ख अखंड दीपदान करता है उसको सब कामों का फल होता है यह हमारा बशीकरण है। अगहन की तेरस को जो कदम्ब को दूध चढ़ाते हैं उनको एक एक वृंद में अश्वमेध का फल होता है। मार्गशीर्ष की चौदस को जो कदम्ब को दही चढ़ाते हैं उनको इस लोक में संतान और उस लोक में परम पद मिलता है अगहन सुदी पुर्नवासी को जो लोग कदम्ब को गुंजा की शाला और वनशाला सम-पण करते हैं साक्षात् श्री कृष्ण उनके बश में हो जाते हैं।

अब इस से बड़ के और क्या फल होगा कि थोड़े साधन में और साक्षात् श्री कृष्ण बश हो जायं। ऐसा कौन होगा जो इस छोटे साधन को बड़े फल की इच्छा से न करे। यह केवल श्री भगवान की कृपा है कि हम जीवों के हेतु उसने ऐसे छोटे छोटे साधन बनाये हैं। देखो कदम्ब को एक दिन गुंजा की माला चढ़ाने से आप बश में हो जाते हैं यह केवल उन की दीन दयालता है। अहो ऐसा कौन सूरख होगा जो इस बात को जान के भी श्री कृष्ण की बश करने की इच्छा न करेगा।

श्री भगवान आज्ञा करते हैं कि हे पुत्र इस रहस्य को आत्मा से अधिक गुप्त रखना। इत्यादि षोडशे।

यह स्कन्द पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य का सारांश यहां पर लिखा गया है जिससे सज्जनों को सन्तोष होगा।

अब अगहन में किस दान की विशेष महिमा है सो लिखते हैं।

यथा।

तिलपात्रं तु यो दद्यान्मार्गशीर्षसक्वाचनं।

कुलानां नरकस्थानां तिलसंख्यासमुद्धरेत् ॥

मार्गशीर्ष के महीने में सोना समेत जो तिल पात्र दान करते हैं वे लोग जितने तिलदान करते हैं उतने कुलों का उद्धार करते हैं।

पुनःयथा ।

स्वशक्त्याघृतपार्वतुसहिरण्यंप्रद।पवेत् ।

अमकोकस्वपन्थानंखण्डेपिनसपश्यति ॥

जो लोग अपनी शक्ति के अनुसार चीना समेत धी का पात्र दान करते हैं वे लोग अपने में भी नरक का रस्ता नहीं देखें। इत्यादि।

भगवन् के मन्दिने में कपड़ा और जूता दान करने का बड़ा पुण्य है और भगवन् मन्दिने में तुलसी के सामने ब्राह्मण को खीर चिखाने का महा फल है।  
यथा ।

तुलसीसन्निधौविप्रान्भोजयेद्यस्तुपायसैः ।

एकेतुभोजितेमार्गेकोटिर्भ्रतिभोजिता ॥

भगवन् के मन्दिने में तुलसी के सन्निधान को लोग एक ब्राह्मण को खीर चिखाते हैं वे लोग कोटि ब्राह्मण भोजन का फल पाते हैं।

और भी भगवन् में पूजा की सामग्री और शान्तिदास दान करने की आज्ञा है।  
यथा ।

कुंकुमंश्लगच्छं चैवचंदनंशुशुभ्रंलं तथा ।

पूजाद्रव्यंतथाशान्तिमार्गशीर्षेप्रयच्छति ॥

विप्रायवेद्विदुषेवैष्णवायविश्रिषतः ।

संगच्छन्मामकेलोकसंयुतःकुलकीटिभिः ॥

शान्तिदामशिलांरथ्यामार्गशीर्षेद्विजातये ।

द्दातिहेमसहित्वाद्रिव्यमस्त्रैश्चवेष्टिता ॥

रत्नपूर्णांस्वसुमतींशयैलवनक्षाननां ।

दत्त्वायत्फलमाप्नोसितेनतत्फलमाप्नुयात् ॥

शान्तिदामंतथापक्वशंखचंटांतथैवच ।

द्दातितस्यपुण्यस्वसंख्याकसुं नशक्यते ॥

रोली अगर चंदन शुशुभ्र और भी पूजा की सामग्री जो लोग वैद्यमन्दिने ब्राह्मणों को और विप्रों को देते हैं वे लोग भी भगवन् में देते हैं। वे लोग अपने

करीड़ कुल के सजित हमारे लोक में जाते हैं । जो लोग अगहन म  
शान्तिग्राम की रम्य गिना सोना और वस्त्र समेत ब्राह्मण को देता है वह  
रत्न पूर्ण पृथ्वी पड़गड़ वन समेत दान करने का फल पाता है और शान्तिग्राम  
गोमती चक्र शंख घंटा जो लोग देते हैं उन के पुण्य की संख्या नहीं कर सकती ।  
इत्यादि ।

अगहन में स्त्रियों की सोहाग पेढारी दान करना चाहिए । यथा ।

शान्तिमार्गशिरितुस्त्रीकुंकुममौक्तिकानिच ।

सिन्दूरकज्जलंचापिहैसान्याभरणानिच ॥

सुगन्धीन्यपिवस्तूनिताश्वूलंरंजितास्वरं ।

प्रयच्छतिद्विजातिश्वीतस्यपुण्यफलंशृणु ॥

पतिव्रतापुत्रिणीचमुभगान्जन्मजन्मनि ।

स्वप्नेपिभर्तृदुःखंसानपश्यतिकदाचन ॥

अगहन में सोली सोती सेंदुर काजल सोना गहना चूड़ी सुगंध पान  
रंगी साड़ी और भी ऐना कंधी टिकुली इत्यादिक सोहाग की वस्तु जो स्त्री  
दान करती है वह पतिव्रता होती है उन के पुत्र जाते हैं जन्म जन्म में भाग्य-  
पान होती है और वह सपने में भी पति का दुःख नहीं देखतीं । इत्यादि ।

अब मार्ग शीर्ष में और अन्य देवताओं के जो व्रत हैं वह लिखते हैं ।

अगहन वदी तीज को स्त्रियों को सौभाग्य सुन्दरी का व्रत सौभाग्य का  
देने वाला है इस की विशेष विधि व्रतार्क पादि ग्रन्थों में लिखी है । इत्यादि ।

मार्गशीर्ष कृष्ण ११ को उत्पन्ना एकादशी का व्रत है मत्स्य पुराण में इस-  
की कथा है अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा है और श्रीकृष्ण ने आज्ञा किया है कि  
इस एकादशी को एकादशी का जन्म है और यह बड़ी पुनीत एकादशी है ।

इत्यादि मातृस्ये उत्पन्नाव्रतं ।

इसी अगहन वदी ११ को वैतरणी व्रत होता है इस में गो पूजन और  
गोदान करना चाहिए यह कथा भविष्योत्तर पुराण की हेमाद्रि ग्रन्थ में लिखी  
है राजा युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से पूछा है उन्हीं ने इस का विधान और  
फल बतलाया है ।

एकादशीतिथिःकृष्णामार्गशीर्षगतान्द्रप ।

तामासाद्यनरःसस्यगृह्णीयान्नियमंशुचिः ॥  
 एकादशीतिथिः कृष्णानाम्नावैतरणीशुभा ।  
 साव्रतेनसदाकार्या नक्तावाचोपवासिनौ ॥  
 मध्याह्नेतुनरःस्नात्वा नित्यनिर्वर्तितक्रियाः ।  
 रात्रौसुगभिमानीय कृष्णामर्चेद्ययाविधि ॥

इत्यादिभविष्योत्तरेवैतरणीव्रतं ।

इसी एकादशी को कृष्ण एकादशी का व्रत होता है यह व्रत बाराह पुराण में पृथ्वी ने श्री बाराह जी से पूछा है सो आप ने आज्ञा किया है कि इस कृष्ण एकादशी को व्रत करना और तिलपात्र दान करना । यथा ।

समस्तपातकहरं सुगर्गदं पर्व्वकामदं ।

नसभंकृष्णाद्वादश्या क्तिञ्चिदस्तिपरंभुवि ॥

मार्गशीर्षेकृष्णपक्षे दशश्यामेकभुक्नरः ।

एकादश्यामुपवसेत् कृष्णस्वार्चासमाचरेत् ॥

स्नात्वाचकृष्णस्तु तिलैःप्रभाते दद्याच्चसम्यक् तिलयुक्तपात्रं ॥

नमोस्तुकृष्णाय पितृश्रमातुः इत्वात्वर्घं प्रापयतोस्वगत्वे ॥

इत्यादिबाराहपुराणेकृष्णाव्रतं ।

अगहन वदी अमावस्या को स्त्रियों को गौरी तपोव्रत सौभाग्य बढ़ने की हेतु करना चाहिए यह अंगिरा ने कहा है कि इस व्रत के करने से स्त्री को रूप सौभाग्य मिलता है । यथा ।

आदौमार्गेशिरेमासिच्छामावास्त्रादिनेशुभे ।

गृह्णीयान्नियमं तत्त्वदन्तधावनपुर्व्वकं ॥

इस दिन सौभाग्य वस्तु दान करना और सुवासिनी भोजन कराना चाहिए । इत्यादि अंगिरोक्त गौरी तपोव्रतं ।

इसी अगहन की अमावस को स्त्रियों को सौभाग्य बढ़ि के हेतु महःव्रत लिखा है यह हेमाद्रि ग्रन्थ में कालिका पुराण की कथा लिखी है । यथा ।

ततोमार्गेशिरेमासि प्रतिपद्यपरैरहनि ।



उपवेशितस्त्रिगुणसृष्ट्यामहादेवस्त्रिगुणः ।  
एवस्वतमहच्चैव ब्रह्मन्निष्कमर्षणं ।  
धनंसायुप्रदन्नित्यं रूपसौभाग्यदं परं ॥

इत्यादि कान्तिका पुराणे ।

मार्गशीर्ष सुदी ५ को नाग की पूजा करना यह बात हेमाद्रि ग्रन्थ में स्कान्द पुराण में लिखी है। यथा ।

शुक्लामार्याभिरै याचश्रावणोयाचपंचमी ।

स्नानैर्दानैर्बहुफलानागतोक्ताप्रदायिनी ॥

इत्यादि स्कान्दे नाग पंचमी ।

अगहन सुदी ६ स्कान्द षष्ठी वा चम्पाषष्ठी है इसमें सूर्य और स्कान्द की पूजा करना । इस मंत्र से कार्तिकीय की पूजा करना ॥

सेनाविदारवास्कान्दे महासेनमहाबल ।

रुद्रीर्मांगजप्रलुबन्तु गङ्गागर्भनमोस्तुमे ॥

इत्यादि दिवीदासीये चम्पा षष्ठी ।

अगहन सुदी ७ को सूर्य तीर्थ में नहाना और सूर्य की पूजा करना और श्री यमुना जी में वा पंच गंगा में स्नानकरना यह स्कान्द पुराण के मार्गशीर्ष महातम्य में लिखा है ॥ यथा ।

मार्गशीर्षेर्तुयाशुक्ला सप्तमीभानुसंयुता ।

कार्तव्यासाप्रयत्नेनसूर्य्यपब्बंशताधिका ॥

तस्यांदत्तंहुतंजप्तं तपस्तप्तं हृतंचयत् ।

अक्षयंतद्विजानीयाद्यमुनायानसंशयं ॥

इत्यादि स्कान्दे सूर्य सप्तमी ।

अगहन सुदी ११ भोक्षा एकादशी हेमाद्रि ग्रन्थ में भविष्योत्तर का बाह्य लिखा है इसमें जागरण और दीपदान का फल विशेष है ।

इत्यादि सोचांत्रतं ।

अगहन सुदी १२ को मत्स्य पूजा करना इस दिन मत्स्य भगवान का उत्सव है यह बात स्कान्द पुराण के एकादशी माहात्म्य में लिखी है। यथा ।

ततःप्रभातसमयेकार्यमत्स्योत्सर्वकुशैः

इत्यादि ।

भगवद्गण मुदी १४ को पिशाच मोचन तीर्थ पर आच करना यह विश्वकी सेतु में लिखा है इन्हें आच से पित्रों का मोच होता है ।

इत्यादि निर्णय सिन्धो पिशाचमोचने आच ।

भगवद्गण मुदी १५ को दत्तात्रेय का जन्म है यह बात स्कन्दपुराण के स-  
ञ्जाद्रि माहात्म्य में लिखी है इन्हें दत्तात्रेय की पूजा और उनका दर्शन करना । यथा ।

मार्गशीर्षे तथा मासि दशमे ह्यनुनिमंत्ते ।

मार्गशीर्षे पौर्णमास्यां सृग्शीर्षयुते बुधे ॥

जनया मासदेदीप्यमानं पुत्रं सतीशुभं ।

तच्चिप्युमागतं दृष्ट्वा भर्त्रिर्नामाकरोत्सर्वं ॥

दत्तवान्स्वस्वपुत्रस्य दत्तात्रेयमितीश्वरम् ।

इत्यादि स्कान्दे दत्तात्रेय जन्मोत्सवः ।

इसी भगवद्गण मुदी १५ को जो कुछ दान पुन्य ज्ञान बन पड़े करना चित है इस पूर्णिमा के समान कोई पर्व नहीं है यह बात स्कन्द पुराण के मार्गशीर्ष माहात्म्य में लिखी है । यथा ।

ज्ञानं दानं तथा पूजां पूर्णाया न्न करोति यः ।

षष्ठिवर्षं सहस्राणि रौरवे प्ररिपच्यते ॥ १ ॥

गोदानं भूमिदानं च वस्त्राद्वादि च यद्ववेत् ।

मार्गशीर्षे पौर्णमास्यां दाने स्यादक्षयं फलं ॥

भगवद्गण की पुनर्वांशो को जो ज्ञानदानादिक नहीं करते वह साठ हजार बरस रौरव में बास करते हैं ।

भगवद्गण मुदी १५ को जो कुछ दान करता है वह अक्षय होता है ।

भगवद्गण में श्री महागवत मुत्रे का बड़ा माहात्म्य है । यथा मार्गशीर्ष-  
माहात्म्ये ।

श्रीमहागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्भितं ।

शृणुयाच्छ्रद्धयायुक्तोममसन्तोषकारणं ॥  
 यावद्दिनानिहेतुदशास्त्रंभागवतंकाशी ।  
 तावत्कुर्वन्तिपितरःस्वर्गैत्वमृतभोजनं ॥  
 यत्रयत्रचतुर्वक्ष्यामीमहागवतंभवेत् ।  
 गच्छामितद्वत्तत्राहं गौर्यथासुतवत्सला ॥

इत्यादि श्रीमहागवत माहात्म्यं ।

मार्गशीर्ष में गोपी गोविन्द तीर्थ की यात्रा और गोविन्द नाम स्मरण  
 यही करना चाहिए ।

वथा वायु पुराणे लक्ष्मी संहितायां काशी माहात्म्ये ।

गोपिगोविन्द तीर्थं तु गोपीगोविन्दसंज्ञकं ।

तत्रमार्गशिरैसासिमहिमावहुगीश्रते ।

इति मार्गशीर्ष महिमा ।

~~~~~

मार्गशीर्षसंहिता ।

चतुर्वर्ग, मोक्षादिक पाने का बहुत सहज उपाय ।

इन लोग साध वैसाख कार्तिकादि नहाने की प्रति पवित्र जानकर ज्ञानदानादिक करते हैं परन्तु इस लोग नहीं जानते कि एक महीना इन सभी से सहायुनीत और थोड़े साधन में बहुत फल का देनेवाला बचगया है और उस में इस लोग कुछ ज्ञानदानादिक नहीं करते और जिस के प्रसिद्धि की वांछी इस बड़े धानंद से यह इष्टिहार देते हैं ।

यह गोप्यसाध जिस का साहाय्य सब शास्त्रों में बड़े आदर से कहा है वह मार्गशीर्ष चर्मात् संगहन का महीना है जिस का गुण गान करने से महात्मा लोग तप्त नहीं होते और यह महीना सब महीनों का राणा और भगवान का स्वरूप है ।

सासानाम्मार्गशीर्षाहं । श्री कुमारिका गनों ने इसी के ज्ञान से श्री कृष्ण को पाया था और स्कन्दपुराण में इस की बड़ी स्तुति लिखी है । यथा । स्कान्दे ब्रह्माप्रति भगवद्वाक्यम् ।

सर्व्वयज्ञेषुयत्पुण्यं सर्व्व तीर्थेषुयत्फलं ।

सहस्राप्नोतितत्सर्व्वं मार्गशीर्षे कृते सुत ॥ १ ॥

यज्ञाध्ययनदानाद्यै स्वर्व्वतीर्थावगाहनेः ।

सन्दासिनचयोगिन नाहृस्वश्रयोभवासिच ॥ २ ॥

यह श्रीभगवान ने श्रीमत्भागवत और श्री भगवत् गीता में श्रीसुख से आज्ञा किया है कि सब महीने में संगहन हमारा स्वरूप है । और स्कन्दपुराण में भी ब्रह्मा से श्रीभगवान फिर आज्ञा करते हैं ।

यथा । ज्ञानेन दानेनच पूजनेन होमे विधाने तपसादितस्य ।

श्रयो यथा मार्गशिरैस्वभासि तथा न चान्येषुहि गर्भं सुक्त ॥ ३ ॥

सावाच्छतगुणं पुण्यं वैशाखे भासि लभ्यते ।

तस्मात् सहस्रगुणितं तुलासंस्थे दिवाकरे ॥ ४ ॥

तस्माच्च कोटिगुणितं वृश्चिकस्थे दिवाकरे ।

मार्गशीर्षेऽधिकतस्मात्सर्वदा सम वल्लभ ॥ ५ ॥

आप कहते हैं कि हे गर्भमुक्त ब्रह्मा हम ज्ञान, दान, पूजन, होम, विधान इत्यादिक से वश नहीं होते हम मार्गशीर्ष ज्ञान से वश होते हैं। माघ में वैशाख का सौ गुना पुण्य है और वैशाख से इत्तार गुना पुण्य कार्तिक में है और कार्तिक से करोड़ गुन पुण्य वृश्चिक की सूर्य में, और अगहन में प्रस से भी अधिक पुण्य है। इस हेतु आप लोगों को इस अगहन के म-
ने में जो कुछ वन सकै ज्ञान दान तुलसी कंदख पूजन करना चाहिए।

स्वान्पुराणे मार्गशीर्षमाहात्म्ये ।

मार्गशीर्षे न कुर्वन्ति ये नरा पापमोहिताः ।

पापरूपानि ते क्षया कृत्वास्ते विशेषतः ॥ ६ ॥

धन्यास्ते ह्यतिनो क्षिया ये यजन्ति जनाह्वनम् ।

कृत्वा सनसा वाचा भक्तितश्च भजन्ति ये ॥ ७ ॥

मार्गशीर्षे महापुण्या मथुराः काशिका तथा ।

मथुराज्ञातुकामस्तु गच्छतस्तु पदेपदे ॥ ८ ॥

निराशानि ब्रजंत्येव पातकानि न संशयः ।

गोदानं स्वर्णदानं च वस्त्राणादि च यज्ञवेत् ॥ ९ ॥

पौर्णमास्यां सप्तमासि दाने ख्यादक्षयम् फलम् ।

सा पौर्णमासी लभ्येत शंभो यदि शक्यतः ॥ १० ॥

ज्ञानादेव फलं तत्र यज्ञकोटिसमं भवेत् ।

पूजयेत् संस्मरेद्यस्तु कदम्बं सर्वकामदम् ॥ ११ ॥

सर्वान्कामानवाप्नोति इहासुच न संशयः ।

कदम्बं मूलसंभूतां वृद्धं देहे बिभर्षि यः ॥ १२ ॥

सर्वतीर्थार्थिकं पुण्यं लभते मानवी भुवि ।

जो पाप मोहित लोग मार्गशीर्ष ज्ञान नहीं करते उन्हें इस क-
लियुग में विशेष करके पापरूप जानना। वे ब्रह्मती लोग धन्य हैं जो तन-

मन, धन, बानी और धर्म से श्री भगवान की सेवा करते हैं। भगवान की मन्दिरे में सपुरा और काशी में नडाफन होता है। श्री लोग मथुरा खान-क-रने जाते हैं उन के पाप भाग जाते हैं। भगवान की पुनवासी की सब दान शक्य-होते हैं। और भाग्य से यर पुनवासी में जो-श्री-गंगा खान धनजाय तो सैकड़ों करोड़ पुनवासी का फल मिले। श्री लोग भगवान में कदम्ब की पूजा करते हैं उन के सब काम सिद्ध होते हैं। श्री लोग कदम्ब के जड़ की मट्टी का तिलक करते हैं उन को सब तीर्थ स्नान का फल मिलता है।

सब दिन स्नान न वने तो पीछे के पांच दिन हरिपंचक में भवभूत स्नान करे। यथा पाद्मे स्नान्दे च ।

हरिपंचकविख्यातं-सर्वलोकेशु सिद्धिदम् ।

नारीणां च नरादीनां सर्वदुःखनिवर्हणम् ॥

इस प्रकार — के मन्दिरे में आप लोगोसे जो कुछ वने खान दानादिक की लिए ।

साधुज्ञानविधिः ।

भरित नेत्र नव नीर नित , वरधन सुरस अशोर ।

जयति चंपूरव धन कोक , जग्धि नाचत मग मीर ॥ १ ॥

साधु ज्ञान पूरा सुदी एकादशी वा पूनम से प्रारम्भ कर के साधु सुदी वा दशमी वा पूनम को समाप्त करना । साधु में मूनी नहीं खानी । नहाने की विधि के अनुसार ज्ञान करना ।

साधु ज्ञान के मंत्र ।

दुःख दारिद्र्यनाशाय श्रीविष्णोस्तीर्षणाय च ।

प्रातःस्नानं करोत्यथ साधे पापविनाशनम् ॥ २ ॥

मकारस्थे रवौ साधे श्रीविन्दाच्युतं साधव ।

ज्ञानेनानिनं मे देवः यथोक्तफलदो भव ॥ ३ ॥

सूर्य को पर्व देने का मंत्र ।

सवित्रे प्रसन्निते च परन्वाम-जले मम ।

त्वत्तेजसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्रधा ॥

साघ ज्ञान का समय ठीक सूर्य उदय होने के पीछे, परन्तु किसी का मत है कि भरुणोदय में नहाना । जो सारा साघ न नहाया जा सके तो तीन दिन नहाना । अकार संक्रान्त, रथसप्तमी और सांघो पुनंस ये तीन दिन । साघ वदी तैरस चौदस सांघस । वा साघ सुदी दसमी एकादशी द्वादशी वा संक्रान्त के पीछे तीन दिन । पर सुख्य तीन दिन तैरस से मावस तक ही हैं । साघ नहा कर उसी समय घाग नहीं तापना । तिल में मोठा मिला कर दान करना और उसी का होम करना । तिल नहाना, तिल का घटना लगाना, तिल का होम करना, तिल से तर्पण करना, तिल देना और तिल खाना । अमना, तैल, लकड़ी, कपन, एक रत्ती सोना और कपड़े तथा जूतों के जोड़े ब्राह्मणों को देना । जब साघ ज्ञान समाप्त हो उस दिन ही तिल सीठे का होम कर इस मंत्र से सूर्य की प्रार्थना करनी ।

द्विक्वार जगन्नाथ प्रभाकर नमोस्तुते ।

परिपूर्णां कुरुष्वेह साघ ज्ञान सुषःपते ॥

साघ में सकार संक्रान्त में ज्ञान कर के वस्त्र और तिल से दान करना । साघ की अमावास्या को सौन ज्ञान करना । इस दिन जो सोमवार वा मंगल हो तो पुन्य विशेष है । अमावास्या यदि रविवार को हो और उस दिन श्व-ण वा अश्विनी वा धनिष्ठा वा आर्द्रा वा अश्लेषा वा श्रृगशिरा नक्षत्र हो तो भी बड़ा फल है । साघ वदी ४ को गणेश पूजन । साघ वदी १४ को यम तर्पण करना । साघ सुदी ४ को दुर्गिराज का व्रत और पूजन करना । साघ सुदी ५ श्री पंचमी है इस दिन कुंद के फूल से लक्ष्मी की पूजा करनी और नए खंजर तथा नई वीर से कामदेव की पूजा करनी । साघ सुदी ७ रथ सप्तमी है इस में भरुणोदय में ज्ञान का बड़ा पुन्य है । जंख से जंख हिला कर धतूरे के सात पत्ते सिर पर रख कर इन मंत्रों से नहाना ।

यद्यज्जन्मकृतं पापं मया जन्मसुसप्तसु ।

तन्मे रोगं च शोकां च साक्षरी हन्तु सप्तमी ॥ १ ॥

एतज्जन्मकृतं पापम् यच्च जन्मांतरार्जितम् ।

अनीवाक्षायजं यच्च ज्ञाताज्ञातियेपुनः ॥ २ ॥

इतिसप्तविधंपापम् ज्ञानान्मि सप्तसप्तिकी ।

सप्तव्याधिसमायुक्तम् हरसाकरिसप्तमि ॥ ३ ॥

ज्ञान के समय कुमम मिनी वत्तो का दिया सिर पर जंचा कर के मन्त्र में जल में सूर्य को दे ।

नमस्ते सद्रूपाय रसानाम्प्रतये नमः ।

वरुणाय नमस्तेस्तु हरिवास नमीस्तुते ॥ ४ ॥

चन्दन से षष्ट दल लिख कर बीच में प्रणव सहित शिव पार्वती लिख कर क्रम से इन नामों से कामल के पत्तों पर सूरज की पूजा करे । रवयेनमः भानदेनमः विषखतेनमः भास्करायनमः सवित्रे नमः अर्क्षायनमः सद्यसकिर-
णायनमः । सोने के सूर्य तिल पात्र में रश्मि कर द्राह्मण को दे और इस मन्त्र से सूर्य को अर्घ्य दे ।

सप्तसप्तिवहप्रौत सप्तलोकप्रदीपन ।

सप्तमी सहितो देव शृङ्गाण्यर्घ्यदिवाकर ॥ ५ ॥

जननीसुखलोकानां सप्तमीसप्तसप्तिकी ।

सप्तव्याहृतिक्तीदेवि नमस्ते सूर्य्यं संडले ॥ ६ ॥

सोने का कनफूल या सोने का दीया और सोने का न हो सके तो तिल के आटे का बना कर तामे के पात्र में तिल गुड़ घी समेत लाल कपड़े में ऋषि कर इस मन्त्र से दान करे ।

चादित्यस्य प्रसादेन प्रातःज्ञानफलिनच ।

दुष्टदौर्भाग्यदुःखघ्नं मयादत्तं तुतालकम् ॥ ७ ॥

यही सप्तमी मन्त्रादि भी है । इस सप्तमी को रथ दान का बड़ा फल है । साध सुदी ८ अष्टमी को तिल ले कर भीष तर्पण करना । मन्त्र

भौषः शान्तनवो बीरस्त्वल्पादी जितेन्द्रियः ।

आभिरङ्गिरवाप्रोतु पुत्रपीत्रोचिताक्रियाम् ॥ ८ ॥

वैधाप्रपट्गोत्राय सांक्षत्यप्रवराय च ।

अपुत्रायद्दाम्येत ज्जलम्भोष्णायवर्म्मणे ॥ ९ ॥

वसूनामवताराय शन्तनीरोत्सजाय च ।

अथ द्वादशसिंहीश्राय आवाप्तनक्षत्राचारिणे ॥ १० ॥

यहं तर्पणं जिष्णा पिता जीता हो वह भी अपसव्य से करे । सांघं सुदी
द्वादशी का नाम भोमहादशी है । माघ की पूनम को ज्ञान का बड़ा पुण्य है ।
जो तेष को शनै खर और गुरु चन्द्रमा सिंह को और सूर्य्य अवयव नक्षत्र में ही
तो सहाभाषी हीतो है । इति ।

प्राप्त पियारी प्रेम निधि , प्रेमिन जीवन प्राण ।
तिनके पद अरपन कियो , साघ नक्षत्र विधान ॥

द्वादश्यां पुराण निषेधः ।

पाञ्चसप्तमहाज्ञानम्बु कुमारनारदसन्वाह ।

नित्यायाञ्च कथायान्तु पुराणानां स्मृनीश्वर ।

द्वादशीस्वर्जयेत् प्राञ्जसूतसूतकर्मभवात् ॥ १ ॥

श्रीमद्भागवतस्यापि सप्ताहे नैत्यकिपिच ।

न निषेधोस्ति देवर्षे प्राङ्गुरेवम्पुराविदः ॥ २ ॥

श्रीभागवतसप्ताहे सहायज्ञः स्यूतोवुधैः ।

आषाढ शुक्लद्वादश्या म्यारण्याहनिप्रार्वति ॥ ३ ॥

पूर्वाह्णं यामवेत्तायास्त्रावित्वात्कृष्णप्रायया ।

दुग्धोदर्भकारो रामआहरणोमहर्षसिति ॥

पौराणिकैर्ज्ञेयम्

पुरुषोत्तममासविधान ।

—०*०—

बृहन्नारदीय पुराण से सङ्ग्रहीत हुआ

श्रीषल्लभीयहरिश्चन्द्र

कर्तृक अनुवादित ।

“तत्कर्म हरितोषं यत् सा विद्या तन्मतिर्वया”

—०—

पुरुषोत्तम सास विधान ।

सृगमटसुद्धितचाडकपीकम् । सृगमटसोचननीचनकीलम् ॥
 सृगमटसेकसुन्दररूपम् । नौमिहरिं वृन्दावनभूपम् ॥१॥

दीर्घा ।

श्री पुरुषोत्तम राधिका , चरण शरण रहू श्याय ।
 फटि जैहैं भवभोग मय , रोग कुभोग वनाय ॥ १ ॥
 जिन पुरुषोत्तम नाम सुभ , सहस कहे रचि गाय ।
 श्री पुरुषोत्तम वदन बपु , बल्लभ होहु सहाय ॥ २ ॥
 पुरुषोत्तम पद जुग सुमिरि , धरि हिय परम अनन्द ।
 पुरुषोत्तम को विधि निखी , पुरुषाधम हरिचन्द ॥ ३ ॥

एक समय अनेक देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि शिष्य प्रशिय्य समेत लोकोपकार
 गोकुल स्वयम्तोर्षे रूप तीर्थपाद चरणारविन्द मधुव्रत तीर्थ यात्रा के निश्च
 नैनिदचेव में एकत्र हुए और वहां महा भागवत सूत पीराणिक भी धार्य ।
 सूतजी ने ऋषियों ने इस अक्षर संभार के पार जाने का उपाय और श्रीकृष्ण
 को लीला का प्रण्व किया । सूतजी बोले मैं अनेक तीर्थों में भ्रमण करता
 हुआ श्री गङ्गाजी के किनारे भगवान श्री शुकदेवजी के सुखारविन्द से श्रीम-
 द्भागवत रूपी मयुर सुधारस का पान करके आया हूं जो आज्ञा हो वह कथा
 धार्य लोगों को सुनाऊं । ऋषियों ने कहा सहज उपाय से भगवत् प्राप्ति का
 जो साधन हो वह कहिए । सूतजी बोले एक दिन भगवान नारदजी चारों
 ओर घूमते हुए वाद्रकाग्रस में भगवान नारायण के पास गए और यही प्रण्व
 किया कि भगवन् कलियुग के जीवों को स्वल्प साधन में भगवान की प्राप्ति
 का उपाय कहिए यह सुनकर भगवान नारायण ने पुरुषोत्तम सास का स-
 द्वात्म्य कहा । पाण्डवों को वन में शरन्त ज्ञेयित देखकर उनके दुःख से छूटने
 के हेतु भगवान श्री कृष्णचन्द्र ने पुरुषोत्तम महात्म्य सुनाया । सब भावों के
 एक एक देवता नियत हैं इच्छे जब पहले महासास पड़ा तब उसका कोई देव-
 ता नहीं था और इस कारण लोग उसकी निन्दा करते थे । महासास इस बात
 से क्रुन्त दुःखी होकर भगवान के पास गया और भगवान वैवठनाथ उस-

को लौकिक गौलीक में गए। पूर्ण परब्रह्म सच्चिदानन्द धन भगवान श्री कृष्ण-चन्द्र मत्स्यमास का दुक्क सुनकर बोले मैं पुरुषोत्तम तेरा स्वामी हूँ अतएव तेरा नाम आज से पुरुषोत्तम मास होगा और सब मासों से तेरा फल विशेष होगा जो साधन लोग कार्तिकादि पुण्यमासों में अनेक वर्ष में भी करके फल न पावेंगे वह पुरुषोत्तम मास में थोड़े साधन में फल पावेंगे।

भगवान श्री कृष्ण धर्मराज भी से कहते हैं कि पूर्व जन्म में जब द्रोपदी मेधावी ऋषि की कन्या थी तब दुर्वास ऋषि ने इससे पुरुषोत्तम मास का व्रत करने को कहा था परन्तु स्त्री बुद्धि से इसने पुरुषोत्तम मास का अनादर किया और शिवजी का व्रत करके पापों के पात्रों में पात्रों का पात पाया परन्तु पुरुषोत्तम के अनादर से बारह वर्ष की विपत्ति भोगनी पड़ी सो तीन महीने पीछे पुरुषोत्तम मास आने वाला है सो इस में तुम लोग अवश्य व्रत करना।

भगवान श्री कृष्णचन्द्र की आज्ञानुसार पाण्डवों ने पुरुषोत्तम मास का व्रत किया और विपत्ति से छूट कर भगवान की कृपा से उत्तरीत्तर अनेक शुभ फल पाया।

नारद जी से भगवान नारायण बोले पूर्वकाल में सत्युग में है इय देश का राजा द्रुपधन्वा राजा था। पुष्करावर्त नगर उसको राजधानी थी और विदर्भ नगर के राजा की कन्या गुणसुन्दरी उसकी रानी थी। चारमती कन्या और चित्रवाक् चित्रवाहुं मणिसान् और चित्रकुण्डल यह चार पुत्र थे। इस राजा का पुत्र प्रताप ऐश्वर्य सब महान अखण्डित था। एक दिन राजा को अकस्मात् चिन्ता हुई कि किस पुत्र से इसको ऐसा अखण्ड ऐश्वर्य मिला इसी चिन्ता में राजा शिकार खेलता हुआ एक ऋग के पीछे गहन वन में घुम गया और एक वृक्ष के नीचे थक कर विश्राम करने लगा तो वहाँ एक सुम्ने को यह पढ़ते हुए सुना :—

“पाय जंगत में सकल सुख , करत न तत्व विचार।

अमत्त विषय भूल्यो फिरत , किम्बि लहिहै भव पार ॥ ३ ॥

सुम्ने को मनुष्य की बोली बोलते और परम तत्व के पूर्णतः वाक्य की पढ़ते सुनकर राजा को अत्यन्त आश्चर्य और मोह हुआ यहाँ तक कि घर आकर सब काम काज छोड़कर रात दिन उषी सुम्ने का वाक्य सोचने लगा। एक दिन भगवान वाल्मीकि इस राजा के घर पर आए और राजा ने बड़ी

नस्त्रता से सुगो के वाक्य का आशय पूका । वाल्मीकिजी ध्यान करके बोले पूर्व जन्म में आप तास्त्रपर्णी के निकट सुदेव नामक ब्राह्मण थे अपनी स्त्री गौतमी सहित पुत्र के हेतु आपने भगवान की बड़ी तपस्या किया । यद्यपि सुदेव के सात अन्य भैं भी पुत्र नहीं लिखा था तथापि भगवान के वाक्य से गरुड़ जी ने सुदेव को पुत्र का वरदान दिया । सुदेव ने शुकदेव नामक सर्व गुण सम्पन्न पुत्र पाया परन्तु देवल ऋषि के कहे हुए फल के अनुसार बारह वर्ष को अवस्था में बड़े वावली में डूब कर मर गया । सुदेव पुत्र शोक से अत्यन्त व्याकुल होकर रोने लगा और यहाँ तक कि संयोग से उस समय आया हुआ पुरुषोत्तम माम उसने बिना अन्न जल के भिता दिया । इस व्रत से भगवान पसन्द होकर प्रगट हुए और कहा कि तुमने उठ करके पुत्र का वरदान लिया था इससे धनुश्या ब्राह्मण की भांति अन्न में दुख पाया अब हमारे प्रसाद से तुम्हारा पुत्र जी जायगा और तुम बारह हजार वर्ष पुत्र सहित इस शरीर में रहकर अन्त में सुधन्वा नामक राजा होगे और चार पुत्र एक कन्या और राज्य का अखण्ड ऐश्वर्य पाओगे । सी उसी पुण्य से आपने यह राज्य और यह ऐश्वर्य पाया है ॥

बड़े सुगो आप का पूर्व जन्म का शुकदेव नामक पुत्र था जो आप को राज काज में मग्न देखकर आप के हित के हेतु सुगो के रूप में आप को चितावनी का शुभ वाक्य सुना गया ॥

वाल्मीकि जी से अपने पूर्व जन्म का चरित्र और पुरुषोत्तम का विचित्र महात्म्य सुन कर सुधन्वा ने उन से पुरुषोत्तम मास की विधि पूकी । ऋषि बोले पुरुषोत्तम मास में ब्राह्मसुहृत् में उठकर शौच करके और दन्त धावन करके तीर्थ में स्नान करे फिर गोपचन्दन का ऊर्ध्वपुंज और शैव हो तो त्रिपुंज तिलक लगाकर मुजा पर शङ्ख चक्र का चिह्न लगा कर सन्या करे फिर पवित्र स्थान में चावल का अष्ट दल बना कर उस पर सोने चांदी तामे पोतल वा मिट्टी का कलश रखे कलश में इन सन्धों से जल भरे :—

कलशस्य सुखे विष्णुः कंठे रुद्रः संमास्थितः
मूले तत्रस्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृतोः
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्वरा
ऋग्वेदीऽथ यजुर्वेदस्सामवेदो ह्यथर्वणः

अङ्गैस्तु सहिताः सर्वे कनकशं हि समाश्रिताः ॥

गङ्गा गोदावरी चैव कावेरी च सरस्वती ।

आयान्तु मम शान्तिर्थम् दुरित जय कारकाः ॥

इस मन्त्र में कनकश की प्रतिष्ठा करके कनकश का पूजन करके एक तंदुल पुर्यापात्र कनकश के ऊपर रखें उसपर पोला कपड़ा बिछा कर श्रीराधिका सहित भगवान को सोने की मूर्ति स्थापन करके पुरुषोत्तम बीज और नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्राण प्रतिष्ठा करें ॥

ॐ तद्विशीः परमस्पृहं सदा पश्यन्ति मृतयः

दिवीव चक्षुराततं स्वाहा

ॐ अस्यै प्राणाः पतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु

अस्यै देवत्व संख्यायै स्वाहा—

जो वेद मन्त्र का अधिकार न हो तो श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनम स्वाहा—इस मन्त्र से प्राण प्रतिष्ठा करके नीचे लिखी हुई विधि से पूजा करें

आगच्छ देवदेवेश श्रीकृष्णा पुरुषोत्तम ।

राधया सहितश्चात्र गृहाण पूजनं मम ॥ १ ॥

श्री राधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः आवाहनं समर्प
यासि इत्यावाहनं ।

भाना रत्न समायुक्तं कातस्त्रर विभूषितं ।

आसनं देवदेवेश गृहाण पुरुषोत्तम ॥ २ ॥

श्रीराधा० आसनं०

गङ्गादि सर्व तीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतं ।

तोय सेतत्सुखस्पर्शं पादार्थं प्रतिगृह्यतां ॥ ३ ॥

इति पादं

नन्द गोप गृहे जातो गोपिकानन्द हितवे ।

गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरि ॥ ४ ॥

इत्यर्घ्यं

गङ्गाजलं समानीतं सुवर्णं कनकस्थितं ।

आचम्यतां हृषीकेश पुराण पुरुषोत्तम ॥ ५ ॥

इत्याचमनं ।

कार्यं मे सिद्धिभायातु पूजिते त्वयिधातरि ।

पञ्चासृते र्स्या नौते राधिका सहितो हरे ॥ ६ ॥

इति ज्ञानं ।

पयो दधि घृतं गव्यं साक्षिकं शर्करा तथा ।

गृहाण्येमानि द्रव्याणि राधिकानन्ददायक ॥ ७ ॥

इति पञ्चासृतज्ञानं ।

योगेश्वराय देवाय गोवर्द्धन धराय च ।

यज्ञानांपतये नाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ८ ॥

गङ्गाजलं समम् शीतं नन्दि तीर्थं समुद्भवं ।

ज्ञानं दत्तं मया कृष्ण गृह्यतां नन्दनन्दन ॥ ९ ॥

इति पुनः ज्ञानं ।

पितांबरं युगं देव सर्वं कामार्थं सिद्धये ।

मया निविदितं भक्त्या गृहाण सुरसत्तम ॥ १० ॥

इति वस्त्रं आचमनञ्च ।

दामोदरं नमस्तेस्तु चोद्दिमां भवसागरात् ।

ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण पुरुषोत्तम ॥ ११ ॥

उपशीतं आचमनं ।

श्रीखण्ड चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरं ।

विलेपनं सुरश्रेष्ठ प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यतां ॥ १२ ॥

चन्दनं ।

सञ्जतास्तु सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।

मया निवेदिता भक्त्या गृहाण पुरुषोत्तम ॥ १३ ॥

इत्यचतान् ।

माल्यादीनि मुगम्बीनि शाल्यादीनि वैप्रभो ।

मया हृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यतां ॥ १४ ॥

इति पुष्पाणि । ततोऽङ्गपूजा ।

नन्दात्मजो यशोदाया स्तनयः केशिसूदनः ।

भूभारोत्तारक श्वेदङ्घ्रनन्तो विष्णुरूप धृक् ॥ १५ ॥

प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च श्रीकांठः सकलास्त्र दृक् ।

वाचस्पतिः केशवश्च सर्वात्मैतिचनामतः ॥ १६ ॥

पादौ गुल्फौ तथा जानु जघने च कटी तथा ।

सेट्टं नाभिं च हृदयं कांठं बाहू मुखं तथा ॥ १७ ॥

नेत्रे शिरश्च सर्वाङ्गं विप्रवरूपिण्य मर्चयेत् ।

पुष्पाख्यादायक्रमशं श्चतुर्थ्यैर्जगत्पतिं ॥ १८ ॥

प्रत्यंग पूजां कृत्वा तु पुनश्च केशवादिभिः ।

चतुर्विंशति संवैश्वर्यं चतुर्व्यं तैश्च नामभिः ॥ १९ ॥

पुष्पमादाय प्रत्यङ्गं पूजयेत्पुरुषोत्तमं ॥ २० ॥

वनस्पति रक्षो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।

आग्नेयः सर्वं देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यतां ॥ २१ ॥

इति धूपं ।

त्वं ज्योतिः सर्वं देवानां तेजसां तेज उत्तमं ।

आत्मज्योतिः परं धाम दीपोऽयं प्रतिगृह्यतां ॥ २२ ॥

इति दीपं ।

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु ।

ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परांगतिं ॥ २३ ॥

इति नैवेद्यं ।

मध्ये पानीयं उत्तरापोशनं ।

यङ्गोजलं समानीतं सुवर्णकलशस्थितं ।

आचम्यतां हृषीकेश त्रैलोक्य व्याधि नाशन ॥ २४ ॥

इत्याचननं ।

द्वन्द्वफलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।

तेन मे सफलावाप्तं भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥ २५ ॥

इति श्री फलं ।

गन्ध कर्पूर मंयुक्तं कस्तूर्याद् मुवामितं ।

करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर ॥ २६ ॥

इति करोद्वर्तन

पुगौफल समायुक्तं सक्षरं मगोहरं ।

भक्त्या दत्तं मया देव तांबूलं प्रतिगृह्यतां ॥ २७ ॥

तांबूलं ।

द्विरग्न्य गर्भं गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।

अनन्त पुण्यफलद संतःशान्तिं प्रयच्छमे ॥ २८ ॥

इति दक्षिणां ।

भारदेदीवर श्यामं त्रिभङ्ग खण्डिताकृतिं ।

नीराजयामि देवेशं राधया सहितं हरिं ॥ २९ ॥

इति नीराजनम् ।

रत्नरत्नं जगन्नाथ रत्न त्रैलोक्य नायक ।

भक्तानुग्रहकर्ता त्वं गृहाणास्वात् प्रदक्षिणां ॥ ३० ॥

इति प्रदक्षिणां ।

यज्ञेश्वराय देवाय तथा यज्ञोद्भवाय च ।

यज्ञानांपतयेनाथ गोविन्दाय नमोनमः ॥ ३१ ॥

इति मन्त्रपुष्पम् ।

विश्वेश्वराय विश्वाय तथा विश्वोद्भवाय च ।

विश्वस्यपतये तुभ्यं गोविन्दाय नमोनमः ॥ ३२ ॥

इति नमस्कारान् ।

मन्त्रहीनेति मन्त्रेण क्षमाप्य पुरुषोत्तमम् ।

स्वाहातैर्नाम मन्त्रैश्च तिल हीमो द्विर्दिने ॥ ३३ ॥

इति ।

पूजन करके हविष्यान्न भोजन करे मांस मद्य और मादक वस्तु हिदल
 त्रपक्क बड़ी उर्द मसूर इत्यादि वस्तु न खाय । भाव दुष्टक्रिया दुष्ट और शब्ददुष्ट
 तु का वर्जन करे पराये का द्रोह अन्न स्त्री और धन से दूर रहे बिना तीर्थ
 देश न जाय निंदा न करे जंभीरी नीबू बासी अन्न त्राहण का वेचा हुआ
 । भूमि से उत्पन्न लवण ताम्रपात्र में रक्का हुआ गव्य चमड़े के बर्तन का
 त्र ये सब मांस के तुल्य है । रजस्वला स्त्रेच्छ पतित ब्राह्म्य और देवत्राहण
 ही से पुरुषोत्तम में संबध न रखे इन का और कौवे वा सूतकवाली का कू-
 हुआ अन्न और दो बैर पकाया हुआ तथा जका हुआ अन्न न खाय ।
 त्र लहमन मोथा कृत्राक गाजर मूली सिंगरी इत्यादि भी न खाय । प्रति-
 । से पूर्णिमा तक बृषमाश्रदिक का वर्जन करे और जो वस्तु छोड़े वह वस्तु
 म्रण को दान दे केवल दूध पी करे वा घी पी करे वा फलहार कर के वा
 ाचित खाकर उपवास एक नक्त वा नक्त व्रत जो वन पड़े और बिना कष्ट
 है वह करे । श्राद्धग्राम का पूजन करे श्रीमद्भागवत सुने और शायंकाल
 दीप दान करे ।

राजा द्रुधन्वा ने वाल्मीकि ऋषि से दीपदान का महात्स पूछा इस पर
 गेकि जो ने कहा प्राचीन काल में सौभाग्य नगर में एक चित्रभानु नाम
 था और चन्द्रकला नामक उस की रानी थी यह राजा धन धान्य सब
 से सुखी था एक दिन इस के यहां अग्रहत ऋषि आये और गला ने

अग्ने पूर्वं जन्म का वृत्तान्त पूछा सुनि ने कहा तुम बड़े दुष्ट मणिश्रीव नाम
शूद्र थे और यह रागो तुम्हारी पतिव्रता स्त्री थी कुकर्म में सब धन खीकर
शिकार खेलकर अपनी जीविका करते थे एक दिन और वन में मार्ग भूल
हुए उपदेव नामक एक ब्राह्मण को तुम लोगों ने बड़ी सेवा किया और उन से
अपना दुःख निवेदन किया इस से प्रसन्न होकर ऋषि ने पुरुषोत्तम मास में
दोपदान करने का उपदेश किया और मणिश्रीव ने वन में इंगुदो को तेल से
दोपदान किया जिस से भगवान ने प्रसन्न होकर तुम को वरदान
दिया और इस जन्म में तुम को भव सुख मिले ।

दोपदान का महात्म सुनकर द्रुपद्वन्वा ने पुरुषोत्तम के उद्यापन की विधि
पूछा वाल्मीकी जी ने उत्तर दिया कि क्षणपक्ष को चतुर्दशो वा नौमी वा
अष्टमी को उद्यापन करना तोम सपत्नीक ब्राह्मणों को न्योता देना और पक्ष
धान्य का सर्वतोभद्र बनाकर चारों दिशा में चार कलशों पर वासुदेव संकर्षण
प्रद्युम्न और अर्जुन का स्थापन करना बीच में नित्यपूजित श्रीराधिका
सहित श्रीपुरुषोत्तम का स्थापन करना एक वैष्णव ब्राह्मण को प्राचार्य और
चार ब्राह्मणों को जप की वरणी दे कर चारों दिशा में दोपदान कर के चतु-
र्ध्वज का जप करना और भगवान को पूजा करना पञ्चरत्न और फल से भ-
गवान को भक्ति पूर्वक अर्घ्य देना । अर्घ्य मन्त्रः—

देवदेव नमस्तुभ्य म्पूराण पुरुषोत्तम ।

गृहाणार्घ्यं स्मश्रा दत्तं राधया सहितो हरे ॥

वन्दे नवधनश्यामं द्विभुजं मुरलीधरं ।

पोताम्बरधरं देवं सरार्धं पुरुषोत्तमं ॥

फिर तिल से श्रीराधिका सहित पुरुषोत्तमायनमः स्नाहा इस मन्त्र से होम
करना और तर्पण मार्जन के पीछे भगवान का नीराजन करना ।

मन्त्रः—नीराजयामि देवेश मिन्दीवर दक्षच्छविम् ।

राधिकारमथं प्रेम्णा कोटि कन्दर्प्य सुन्दरम् ॥

फिर क्षणभर भगवान का ध्यान करनाः—

अन्तर्ज्योतिरनन्त रत्न रचिते सिंहासने संस्थितम्

वंशीनादं विमोहितं ब्रजबधूं वृन्दावने सुन्दरम् ॥

ध्यायेद्ग्राधिक्रयं सकौस्तुभमंणिप्रद्योतितोरस्थानम् ।

राजद्रव्यकिरीटं कुण्डलधरं प्रत्ययं पीताम्बरम् ॥

फिर पुष्याञ्जलि देना और प्रणाम करना मन्त्रः—

नौमि नव्यवनश्यामं पीतवामस मच्युतम् ॥

श्रीवत्सभासितोरस्कं राधिकामहितं हरिम् ॥

फिर ब्रह्मा की पूर्णपात्र दान करके गोदान करेना और हृतपात्र तिलपात्र उमामहेश्वर मोहागापटारी वस्त्र पद इत्यादि दान करेना और जो श्रीम-
झागवत करे तो बड़ा ही पुण्य है पुर्वोत्तम साम में श्री भागवत दान की
समता अन्यदान नहीं कर सकते ।

और तीस कामेकी थान्की में तीस तीस पूजा रखकर ब्राह्मणी को दान
देना और भी अन्न दानादि ही वन पड़े वड़ देना । असावस्था को रात को
जागरण करके सबेरे पूजा पीठ और सीने की मूर्ति दान देना । मन्त्रः—

श्रीकृष्णं अगदाधारं जगदानन्ददायकं ।

ऐहिकामुष्णिकान्कामान् निखिलान् पूरयाशु मे ॥ १ ॥

मन्त्रहीनम् क्रिया हीनम् विधिहीनम् जनोद्देन ।

व्रतम् सम्पूर्णतां यातुं त्वत्प्रसादाह्वयानिधि ॥ २ ॥

फिर जो वस्तु का त्याग किया ही उसका यथाक्रम दान कराना यथा—

नक्तव्रत में भोजन अयाचित में स्वर्णदान धात्रीस्नान में दधि फल न खाया
होय तो फल तेक छोड़ा होय तो घी घी छोड़ा होय तो दूध अन्न छोड़ा होय
तो अन्न भूमि शयन स्त्रिया होय तो सज पचभोजन किया होय तो घी चीनी
मीन स्त्रिया होय तो घण्टा तिल और सोना और न बनवाया ही तो दर्पण
जूता छोड़ा होय तो जूता नमक छोड़ा होय तो घी गुड़ तेक और नमक
दोपदान का नेम स्त्रिया होय तो तांबे का दिया और सोने की बत्ती और
एकान्तर उपवासकिया होय तो वस्त्रवहित भ्रात कुम्भ दान करे । पुर्वोत्तम
सास में एक अन्न भोजन करने का बड़ा पुण्य है ।

वाल्मीकिजी से पूर्वजन्म का उत्तान्त और पुर्वोत्तम महात्म्य सुन करके
राजा खो सचित वन में जाकर तपस्या करके अन्त में गोकौक्ष में गया ।

नारायण नारदजी से कहते हैं कि कन्दर्प नामक ब्राह्मण बड़ा पापी था जन्म भर में केवल एक वैश्य को पुरुषोत्तम की पूजा करने दर्शन किया था और कोई पुण्य नहीं किया था इसी पाप से एक जन्म में प्रेत और दूसरे में बड़ बन्दर हुआ परन्तु पुरुषोत्तम की पूजा के पुण्य से इन्द्रनिर्मित, लृगतोय पर लम का निवाम हुआ और किमो समय पुरुषोत्तम मास में एकवैर लम ने दुःस्मित होकर तीन दिन तक कुछ न खाया न पिया और उसी तीर्थ पर प्राण त्याग किया और पुरुषोत्तम के प्रभाव से चन्त में गोकोक गया।

नारद जी के प्रश्न पर श्री नारायण टिन चर्या कहते हैं।

प्रातःकाल की क्रिया समाप्त कर के पञ्चभूत देव पिह बनि टेकर अतिथि की भोजन करा कर दो वस्त्र से षकेले एक पात्र में पूर्वापर आचमन संयुक्त भोजन करना। भोजन के पीछे पान खाकर भगवान् के ध्यान पूर्वक भक्ति श्राद्ध का विचार करना। तोमरे पहर धर्माधिक्यवहार करना। सांभ की तीर्थ पर देहशुद्धि पूर्वक सन्या कर के दीपदान करके भगवान् का स्मरण कर के शयन करना।

इस के पीछे नारायण ने पतिव्रता के धर्म और पुरुषोत्तम की विशेष महिमा कहा। और विधान किया कि। मन्त्रः—

गोवर्द्धनधरम् वन्दे गोपालम् गोपहृषिणम् ।

गोकुलोत्सवमौशानम् गोविन्दम् गोपिकाप्रियम् ॥ १ ॥

इस मन्त्र का पुरुषोत्तम मास में बार बार जप करना।

दोहा।

श्री पुरुषोत्तम पद सुमिरि, धारि हृदय आनन्द ।

यह पुरुषोत्तम विधि लिखी, कविवर श्रीहरिचन्द ॥ १ ॥

प्राण पियारे प्रेम निधि, प्रेमिन जीवन प्राण ।

तिन के पद अरपन कियो, यह मलमांस विधान ॥२॥

इति श्री ब्रह्मरदारदीय पुराण से संस्कृतीत पुरुषोत्तम माहात्म्य समाप्त हुआ।

अथ श्री पुरुषोत्तम पञ्चक ।

सखी पुरुषोत्तम मेरे ध्यारे । प्रान नाथ मेरे मन धन जीवन जमुदा नन्द
दुन्दारे ॥ जानत प्रीति रीति सब भाँतिन नैह निवाहन हारे । हरीचन्द इन
के पद नख पै जगत जान सब वारे ॥ १ ॥

सखी पुरुषोत्तम मेरे नाथ । खोर सुकुट मिर कटि पीतांबर सुन्दर सुरक्षी
हाथ ॥ गन्त बनमान गोप गाँपोगन गऊ बच्छ लिये साथ । हरीचन्द पिय क-
रुना भागर निज जन करन सनाथ ॥ २ ॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे खामो । पतित उधारन करुना कारन तारन खग-
पति गामी । पंजज नोचन भव दव मोचन जन रीचन अमिरामी । हरीचन्द
सन्तन के सरवस बखसहु चरन गुन्नामी ॥ ३ ॥

पुरुषोत्तम प्रभु मेरे सरवस । सब गुन निधि करुना करुनांथ जानत स-
कन प्रेम रस ॥ प्रीति रीति पहिचान मानत याते रहत भगत बस । हरी-
चन्द मेरे प्रान जीवन धन सोह्यौ मर्नाह तनिक हंस ॥ ४ ॥

पुरुषोत्तम बिन मोहि नहिं कोई । मात पिता परिवार बन्धु धन मम हरि
राधा दोई ॥ इन बितु जगत और जो कीनी आयसु नाहक छोई । हरीचन्द
इन चरन सरन रहू मन बितु साधन छोई ॥ ५ ॥

कार्तिक-श्रान ।



जिसे श्रीयुत भारतभूषण भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने
राधामाधवपदभक्तों केलिये विरचा ।



अथ कार्तिक स्नान ।

नील हीर दुति अति मधुरी ।	सब व्रज जन चित चोर ।	
जय जय विरहा तपसमन ।	राधा नन्दकिशोर ॥ १ ॥	
लुगल जगद केकी लुगल ।	दोज चन्द चकोर ।	
हमय रसिक रसरास जय ।	राधा नन्दकिशोर ॥ २ ॥	
जग तरंग दुधि प्रान पुनि ।	दीप प्रकाश समान ।	
लुगल अभिनव द्रीय वपु ।	जय राधा भगवान ॥ ३ ॥	
नखिल नयन अञ्जत वयन ।	बेनुवाव्यरत धीर ।	
राधासुखसधुपानरत ।	जय जय जय बसधीर ॥ ४ ॥	
बिनु हरि राधा पद भजन ।	नाहि न धीर उपाय ।	
दयौ मन तू भटकत हृथा ।	जगत शास फति धाय ॥ ५ ॥	
मधि कौ वेद पुरान बहु ।	यहै लज्जा इक सार ।	
राधा साधक चरन भङ्गु ।	तजु जप जोग हजार ॥ ६ ॥	
भ्रमि मत तू वेदान्त वन ।	हृथा चरे मन सोर ।	
चलु कनिन्दशा कुंज तट ।	लखु घन श्याम किशोर ॥ ७ ॥	
शास्त्र एक गीता परम ।	मन्त्र एक हरि नाम ।	
कर्म एक हरि पद भजन ।	देव एक घनश्याम ॥ ८ ॥	
विधि निषेध जग के जिते ।	तिन कौ यह सिर भीर ।	
भजनो इक नन्दलाल पद ।	तजनो साधन भीर ॥ ९ ॥	
साधक गन सौं तुम सदा ।	छिपत फिरत ब्रजराय ।	
अति पंधियारी सम हृदय ।	तहां छिपत किन आय ॥ १० ॥	
वेद कहत जग विरचि हरि ।	व्यापि रहत ता माहिं ।	
मम श्रिय जग बाहर कहां ।	जो इत व्यापत नाहिं ॥ ११ ॥	
तुमहिं रिभावन हित सज्यो ।	लखु चीरासी रूप ।	
रीति देहु गति खीभि कौ ।	परजहु भीहि ब्रजभूप ॥ १२ ॥	
कोज जप संशम करी ।	करी कोइ तप ध्यान ।	

मेरे साधन एक हरि • सपनेहु रुचत न ध्यान ॥ ११ ॥
 नकीं स्वर्ग की ब्रह्मपद • की चौरासी नाहिं ।
 जहाँ रहै निज कर्मबध • छुटे ज्ञानरति नाहिं ॥ १४ ॥
 ज्ञान नाम सुख सो वादी • सुनौ ज्ञान जस कान ।
 मन में ज्ञान सदा बसी • नयन कहीं हरिध्यान ॥ १५ ॥
 चोरि चोर दधि दूध मन • दुरत चहत ब्रजराय ।
 मेरे द्विय अंधियार में • ती न छिपत कौ पाय ॥ १६ ॥
 घुनत दूध दधि चीर मन • हरत फिरत ब्रज राय ।
 तौ अघ मेरे किन हरत • यह मोहि देखे बताय ॥ १७ ॥
 ज्ञान नाम मनि दीप जो • द्विय घर में न प्रकाश ।
 दीप बहुत वारे काहा • द्विय तम भयो न नाश ॥ १८ ॥
 जय जय श्रुति पद बन्दिनी • कीर्त्ति नन्दिनी बाल ।
 हरि मन परमा नन्दिनी • कन्दिनि भव भय जाल ॥ १९ ॥

सौरठा ।

जय जय परमानन्द • ज्ञाना कन्द गोविन्द हरि ।
 जय जय जसदानन्द • नन्दानन्द दुन्द हर ॥ २० ॥

कवित्त ।

पूजि को काकिहि सवु इती कोऊ कच्छमी । पूजि महा धन पायो ।
 छिद्र सरस्वति पंडित होइ गनेसहि पूजि की विघ्न नसायो ॥
 खीं हरिचंद जू ध्याइ शिवै कोऊ चार पदारथ हाथ ही सायो ।
 मेरे तो राधिका नायक ही गति कोऊ दोऊ रहै की नसि जायो ॥ १ ॥
 सन्या जू थापु रहै घर नीकी नरान् तुम्है है प्रथाम इमारी ।
 देवता पिच छमौ भिखि मोहि अराधना होइ सकी न तुम्हारी ॥
 धेद पुरान सिधारी तहां हरिचंद जहां तुम्हरी पतियारी ।
 मेरे तो साधन एक ही है जग नंदबाबु ब्रह्मभानदुखारी ॥ २ ॥

भजन ।

जय ब्रह्मानन्दनि राधा । शिव ब्रह्मादि जासु पदपंकज हरि बस चेतु
 राधा ॥ अक्षयामयी प्रसन्न • सुन्दमुख प्रसन्न हरति भवबाधा । हरिचंद ते
 मैं जग जीवत जिन नहिं इन्हिं अराधा ॥ १ ॥

जय जय हरि नन्दनंद पूर्णब्रह्म दुख निवन्द परमानन्द जगत वन्द शेषक सुख-
दाई । परम जस पवित्र गाथ दीनबन्धु दीननाथ सवन दरस ध्यान सुखद गोव-
देन राई ॥ गोप गोपिकादि पास सतत असुर वंस कास सकास कला गुन
निदान कीरति जग छाई । हरीचंद माननाथ कीर्तिसुता लिए साथ पावन
गुन अत्रक्ति विमल श्रुति मन नित गाई ॥ २ ॥

सेरी भति होउ छोई महारानी । जासु भीह की हिननि विधीकत निमु-
दिन सारंग पानी ॥ खेनान में कबहुं जो भाचर उड़त बात बस जाको । रिधि
सुनि वंदित हू हरि मानत परम धन्य करि ताको ॥ परम पुत्र जो जोग
जय जप कौं हू लख्यौ न जाई । सो जा पद रज बस निधि बासर तुरत धि
प्रगटत पाई ॥ ग्रामबधूटी जा कटाच्छ बक उमा रसाहि खजावै । हरीचंद
ते महा मूढ़ जे इनहिं न अशुद्धि न ध्यावै ॥ ३ ॥

जय जय श्री वृंदावन देवी । अखिल विखनायक पुत्रपौतम जा पद पंकज-
सेवी ॥ जो निज हृष्टि कोर सो जग के जीवधि गितधि जिषावै । परमानंद
घनहु पै जो निज भानंद कन बरवावै ॥ जगत अंधार भूत परमात्म जिय
अंधार सो ताकी । हरीचंद क्षामिनि अभिरामिनि तुक न जगत में जाकी ॥ ४ ॥

विपुत्र वृंदा विपिन चक्रवर्ती चतुर रसिक चूड़ा रतन जयति राधारमन ।
गोप गोपी सुखद भक्त नयनानंदा बिरहि जन कौटि सन्ताप सन्तति समन ॥
जयति गिरिराज हृत बास अंगुरि नखन जयति छत वेतु रव मत्त गज गति
गमन । पस वकी बक सकट पूतनादिक कास जयति हरिचंद हित कारन
काखिय दमन ॥ ५ ॥

जय जय गोवर्द्धनधर देव । जय जय देव राज मद मर्दन करत सकल सुंद
सेव ॥ जय जय श्रुति जस गावत निधि दिन पावत तज न भेव । जय जय
हरीचन्द्र रक्षण कृत दीन उधारन टेव ॥ ६ ॥

बाजी नैनगही में लागी । रसिकराज हृत उत श्रीराधा परम प्रेम रस
पागी ॥ दोऊं हारे दोऊ जीते भापुत्र के अनुरागी । हरीचंद निज जन सुख-
दायक रहै केलि निधि जागी ॥ ७ ॥

हम में कौन बड़ो री प्यारी । ठाड़ी होल बराबर नापे बिहंसि कछो
गिरधारी ॥ सुनत उठी हृषभासुनंदिनी खरी भई असुहाई । पद अंगुरी बस
उचकि पिया सो बद्धवग सद्धत स'चाई ॥ सुंदर सुख भागुहि डिग भावत काखि
बुख्यो पिय प्यारि । हरीचंद कलि हंसि भुव निरखत पिया कछो हस हारे ॥ ८ ॥

राग बिहाग दीपावली ।

धरत मिथि दीपदान ब्रजवासा । जसुना सौं कर जोरि मनावत मिलैं
पिया नन्दसासा ॥ ज्ञान दान जप जोग ध्यान तप संजम नियम बिसासा ।
इन को पक्ष में हरीचंद गवा सगै कृष्ण गुण वासा ॥ ८ ॥

धरी तू हठ नहिं छाड़त प्यारी । दीपदान में भगन छै रछी भूक्ति गढ़
गिरिधारी । तेरे बिनु सत दिनहीं दीपक बिरह अगिनि संचारी । हरीचंद
पीतम गर लगि कै कार ल्यौहार दिवारी ॥ १० ॥

हमारे ब्रज के है मणि दीप । पुष्यराग श्रीराधा भरकत गोविंद गोप
महोप । सदा प्रकाश करत ब्रज मंडल उदावन अवनीप । हरीचंद सुमिरत
वियोगतम कहुं नहिं रहत समीप ॥ ११ ॥

राग बिहाग चौतासा ।

धरी ही बरजि रछी बग्यौ नहिं मानत सबै कोरि कृष्ण प्रेम दीप जोरि ।
भरि अखंड है सनेह एक लौ लगाइ वा सौं मन वाती राखु ता में नित्य बोरि ॥
बिरह प्रगट करि जाति सौं मिखाइ जोति करि पतंग नेम धरम लाज ओट
छारि कोरि । हरीचंद कहुँ मानि देखि है तू पीति पन्य भाजे गो वियोगतम
सुख मोरि ॥ १२ ॥

राग बिहाग दीपावली ।

शालु गिरिराज के उच्चतर शिखर पर परम शोभित भई दिव्य दीपावली ।
मनहुं नगराज निज नाम नग सत्य श्रिय विविध मणि जटित तन धारि हारा-
वली ॥ औषधी गन मनहुं परम प्रज्वलित भई किषी ब्रजवासहित बछी तारा-
वली । दास हरिचंद मन सुदित छवि देखि कै करत जै जै बरषि देव कुसुमा-
वली ॥ १३ ॥

शालु तरनि तनया निकट परम परमा प्रगट ब्रजवधुन मिलि रछी दीप
माला । जोतिजासु जगमग जगत दृष्टि थिर नहिं लागत कूट छवि को परत
अति बिसाला ॥ खड़ी नवल वनिता बनी चार दिशि छविबनी हंसहिं गावहिं
विविध ख्याला । निरखि सखी हरीचंद अति चकित सौं छै कहत जयति राधे
अथति नंदलाला ॥ १४ ॥

आजु व्रज कवि की छूट परे । इत नन्दमान जाड़िको इत उत दीपक
ज्योति बरे ॥ इत मङ्गरो नमित नमितादिक सुवङ्गन चंद्रर ठरे । इत जन्-
तार ताम वागो उत भुषण भूतक यरे ॥ इत नवश्लोक प्रीम मङ्गना उत दुग्-
नित विंश परे ॥ इत वादकन नपेटो भ्रातृर भूत वीर भूतरे ॥ इत सारी
कोरन सीं सुकुता मानिक हीरुकरे । असुना जन् प्रतिविंश सुहायो जन् कवि
मिति नहरै ॥ इरीचन्द मुख चन्द मिनो सन रवि सवि गरुड करै ॥ १५ ॥

आजु संकेतन दीपक वारे । निघाट जानि वीरसैनघटियां अपने हाथ
सनादे ॥ किये प्रकाशित मङ्गवर गिरि धन कुंजपुंज प्रजमारे । इरीचन्द अपनो
प्यारी की बाट निहारत प्यारे ॥ १६ ॥

अरो तू इठि बनि प्यारी दीपमच्छन ते कवीं प्रीमा हरि जेत । तेरे मुख
प्रकाम दीपकगण मन्द दिखारै देत ॥ मंद परे आभा सब सेटो किनमि भि
भोने सेत ॥ इरीचन्द तू दूरि वैठि के वार त्वीहार महेत ॥ १७ ॥

ईसन ।

कविन सीं साचेहि चूकपरी । दीप मिश्रा को उपमा जिन तुनि प्यारी
हेत धरो ॥ बह द्रावत यह अंग जुडावनि बह चंचल थिर येह । बह निज
प्रेमिन परम दुखद यह सदा सुखद पिय देह ॥ व्रज नै धूम खच्छ अति ही
यह रैनि दिना इकराम । बह परिक्रिन्ध और बस यह निज बस सर्वत्र प्रकास ॥
बह सनेह आधीन और के यह संदेह भरपूर । इरीचन्द दीपक प्यारी की
नहिं कोउ बिधि समतूर ॥ १८ ॥

जसुन जन् वढ़ी दीप कवि भारी । प्रतिबिम्बित प्रतिविंश नहरि प्रति तहें
राजत पिय प्यारी ॥ तैनी ही नभ तर तारावनि तरन पायु सुन होई । तैस-
हि उठत गगन गुब्बारे छुटत दारु गति जोई ॥ अपनि नीर आकास प्रकाशित
दीपहि दीप नखाई । मनु व्रज मच्छन ज्योति कृपता अपनी प्रगट दिखारै ॥
सुख प्रकास रंजित सब ही धन सोभा नहिं कहिं जाई । इरीचन्द राधे मन
सोहन रहे त्वीहार मगाई ॥ १९ ॥

सुव विद्यु पिय को घर भंघियारी ॥ जदप्रि चहुँदिशि प्रगटि आसमद
बिरचानना संचारी ॥ कृष्णन सखात ताहि अति व्याकुल हग भरु कावत भारी ।
प्रिये प्रिये कहि प्रति कानन में दुँडि रहत घूर सारी ॥ तू इत वैठी बदन
बनाये उत बह बिकान बिकारी ॥ इरीचन्द ठठि चहुरो प्यारी काई मरे पिय
प्यारो ॥ २० ॥

दीपन लकटी करी सहाय को । चली गई पिय पाप प्रगट मग काहु न
परी लखाय ॥ अंधियारी में तो भय भारी सुख ससि नाहिं दुराय ॥ एत प्रकाश
में सिधि अक्षविकी एक भई परमाय ॥ जगमगी बसन कनक सणि भूपण एक
भये सब आय । हरीचन्द सिधि के वियोग में दीनी तुरत नसाय ॥ २१ ॥

दिपति दिव्य दीपावली आहु दिपति दिव्य दीपावली । मनु तम नाश
कारन को प्रगटी कश्यप सुत बंशावली ॥ मनु ब्रज मखन कण्व चन्द्रमा तहं
तारन की मखली । जातन की मनु राहु सेन की पति सुवन किननावली ॥
विगत भई सब रैनि काशिमा सोभा जागति है भली । हरीचन्द मनु रतन
रासि की उज्ज्वल ज्योति जुगावली ॥ २२ ॥

नेकु चक्र पिय पै वेगहि प्यारी । देखु करी तेरे हित कीसी सीजन आहु
तयारी ॥ पड़े पांवड़े मग मखमल के दन गुनाव रचिकारी । छिरक्यो नीर
गुनाव अतर म्दगमद चन्दन घनघारी ॥ परदे परे भाकरै भ्रमकै तने बितान
सुतारी । फरश गलीचन को पति राजत कोमल बहु रंग डारो ॥ धरे साज
ढिग अतर पान मधु फूलमान जल भारी । लगी मिठाई रासि दुहुं दिधि
दीपक धरे कतारी ॥ बिछी पसंग पथ फेनु मीनु सम पोष पखी रचिकारी ।
पास साज पासन के सीहत काहुं सतरंज संवारी ॥ ठीर ठीर आरधी कागाई
दूनी द्युतिकरि डारो । प्रति खूटिन डारावनि माना फूल बसन लै धारो ॥
प्रति आले सुगंध सों पूरे पाग मिठाई डारो ॥ जहं तहं अटव किये सब मखि-
यां ठाढ़ी साज संवारी । सुरजन चंवर समाज अड़ानी पीक दान लै वारी ॥
चौकि चौकि पिय उठत बिना तुव अगम संक बनवारी । हरीचन्द प्रीतम गर-
खणि के कर लोहार दिवारी ॥ २३ ॥

रख्यो यह तेरेहि हित लोहार । दीप दिवारी युक्ति निकारी तव हित
नन्दकुमार ॥ तुव मखन की सुरति कारन हित हठरी रचिर बनाई । तुव
सुख चन्द्र प्रकाश लखन हित दीपावली सुहाई ॥ चाट लगाई तुव आवन
हित और काहु न सन्देह । हरीचन्द बिहरै किन भुज भरि प्रीतम सों करि
नह ॥ २४ ॥

कार्तिक में सांझ के गाइवे को पद ।

सांचि दीप सिखा सी प्यारी । धूमकेश तन जगमगाति द्युति दीपति
भई दिवारी ॥ स्वयं प्रकाश अकुण्ड सुहाई बिनु असार कवि काई । सदा एक
रस नित्य अधिक यह वासों चाक लखाई ॥ भरत सुगंधन ब्रज कुंजन मग
प्रीतम तन कारधारी । प्रीतम तन को बिरह मिटावत हरीचन्द्र दुख नारी ॥ २५ ॥

श्री गीतगोविन्दानन्द

अर्थात्

श्री गीतगोविन्द के अष्टपदियों का हिन्दीभाषा में शानन्द ।



श्री हरिश्चन्द्र प्रणीत ।



गीतगोविन्दानन्द ।

अर्थात्

श्रीगीतगोविन्द की अष्टपदियों का भाषागीतों में आनन्द ।

दोहा ।

भरित नेह नव नीर नित, वरसत सुरस अधोर ।
जयति अलौकिक घन कोऊ, लखि नाचत मन मोर ॥ १ ॥
रसिक राज बुध बर विदित, प्रेमी प्रिय पद सेव ।
रात्रा गुन गायक सदा, मधुवच जय जयदेव ॥ २ ॥
कहं कविवर जयदेव वच, कहं मम मति अति हीन ।
पै दोउ हरि गुन गामिनी, एहि हित यह स्म कौन ॥ ३ ॥
रसिक राज जयदेव की, कविता को अनुवाद ।
कियो सवन पै नहि लखौ, तिन में तौन सवाद ॥ ४ ॥
मेटन सो निज भिय खटक, उर धरि पिय नंदनन्द ।
तिनहीं के पद बल रच्यौ, यह प्रबन्ध हरिचन्द ॥ ५ ॥
त्रिमि वनिता के चित्र में, नहि कच्छु हास विलास ।
पै जोहे सो प्रिय सो लहत, वाहू में सुखरास ॥ ६ ॥
तैसाहि गीत गुविन्द आति, सरस निरस मम गीत ।
पै जिन कहं प्रिय तौन ते, करिहैं यासों प्रीत ॥ ७ ॥

अथ मूल मंगलाचरण ।

श्लोक

मेघैर्भेदुरमंबरवनभुवःश्यामास्तमालद्रुमैर्नक्तं-
भीरुरयंत्वमेवतदिमंराधेगृहंप्रापय ॥ इत्थंनंदन्ति-

देशतश्चालितयोः प्रत्यध्वकुंजद्रुमंराधामाधवयोर्जयंति
यमुनाकूलेरहःक्रेलयः ॥ १ ॥

सवैया—मेघन सीं नभ छाडू रहे बन भूमि तमाचन सीं भई
कारी । सांझ भई छरिहै घर याहि दया करिकै पहुं चावहु
प्यारी ॥ यों सुनि नंद निदेम चली दोउ कुंजन में हरि भानु
दुगारी । सोई कलिन्दो की कूग इक्षन्त की कौनि हरे
भवभीति हगारी ॥ १ ॥

बाग्देवताचरितचित्रितचित्तसद्भापद्मावतीच-
रणचारणचक्रवर्ती । श्रीवासुदेवरतिकेलिकथास-
मेतमेतं करोति जयदेवकविः प्रबंधम् ॥ २ ॥

दोहा—बाणी चारु चरित्र सीं, विचित्र जा द्विय भीति ।
पदमावति पद दास जो, जानत कविता रीति ॥ १ ॥
सोई कवि जयदेव यह, गीतगुविन्द रसाक्ष ।
रच्यो कृष्ण कान्त कौनि मय, नव प्रबन्ध रस जान ॥ २ ॥

यदिहरिस्मरणेसरसंमनोयदिविलासकलासु-
कुतूहलं ॥ अधुरकोमलकांतपदावलींशृणुतदाजय-
देवसरस्वतीं ॥ ३ ॥

दोहा—जौ हरि सुमिरन होइ मन, जौ सिंगार सीं हित ।
तौ बानी जयदेश की, सुन सब सुगुन निकेत ॥ ३ ॥

वेदानुद्धरतेजगन्निवहतेभूगोलमुद्भिभ्रतेदैत्यंदा-
यरतेवलिच्छलयतेक्षत्रक्षयंकुर्वते ॥ पौलस्त्यंजयते-

हलंकलयतेकारुण्यमातन्वतेस्लेछान्मूर्च्छयतेदशाकृ-
ति कृतेकृष्णायतुभ्यंनमः ॥४॥

वेद उधारन मंदरधारन भूमि उधारन द्वे वनवारी ।
द्वैत विनामौ वलि की कनि कथ कारक छचिन की चसुरारौ ॥
रावन मारन ल्यौ हलधारन वेदनिवारन स्लेच्छ विदारौ ।
यौ दस रूप विधायक कृष्णचि कोटिन्ह कोटि प्रनाम हमारौ ॥
राम गोरठ ।

* जय जय (१) हरि राधा रस केलि । तरनि तनूजा तट
दुकलतमैं बाहु बाहु परमेनि ॥ भ्रु० * एक समै हरि नन्दराय
संग रहे बाट मै जात । तितही श्रीराधा सुख साधां खाइ
कढीं हरखात ॥ (२) हरि माया करि मेघ बुलाए छांए घेरि (३)
पकास । सांभ समय भुव णहि तमान तस भई श्याम (४)
सुखरास ॥ देखि नन्द (५) भय करि श्यामा सीं
बोले वैन रसांल । यह (६) हरपत लखि कौ अधियारी
वारो मेरो (७) लाल ॥ पागे हीं लै (८) जाइ सकत
नहिं भई (९) भयानक सांभ । राधे करि कौ दया याहि
तुम पहुँचाओ घर सांभ ॥ इति सुनि नन्द (१०) निदेस
चले दोउ विहरत जसुना तीर । हरीचन्द सो निरखि जुगल
(११) कवि हरी हगन की (१२) पीर ॥ १ ॥

* अष्टवैवर्त्तपुराण के श्रीकृष्णजन्मखण्ड की यह कथा है ।

† इस मंगलचरण में बारहो रस हैं उस में यथा क्रम—

१ शृङ्गार २ अद्भुत ३ वीर ४ रौद्र ५ भयानक ६ हास्य ७ वात्सल्य
८ करुणा ९ नीभत्स १० दास्य ११ माधुर्य १२ शान्त ।

मान्दवाराशेषरूपकतात्वेगीयते ।

प्रलयपयोधिजलेधृतवानसिवेदं । विहितवह्नि-
 त्त्रचरित्रमखेदं ॥ केशवधृतमीनशरीरजयजगदीश-
 हरे ॥ १ ॥ क्षितिरतिविपुलतरेतवतिष्ठतिपृष्ठे ।
 धरणिधरणकिणचक्रग्रिष्ठे ॥ केशवधृतकच्छपरू-
 पजयजगदीशहरे ॥ २ ॥ वसतीदशनशिखरे-
 धरणीतवलम्ना । शशिनिकलंककलेवनिमग्ना ॥
 केशवधृतसूकररूपजयजगदीशहरे ॥ ३ ॥ तव-
 करकमलवरेनखमद्भुतशृंगं । दलितहिरण्यकशि-
 पुतनुभृंगं ॥ केशवधृतनरहरिरूपजयजगदी-
 शहरे ॥ ४ ॥ छलयसिविक्रमणेबलिमद्भुतवामन ।
 पदनखनीरजनितजनपावन ॥ केशवधृतवामन-
 रूपजयजगदीशहरे ॥ ५ ॥ क्षत्रियरुधिरमयेजग-
 दपगतपापं ॥ स्नपयसिपयसिशमितभवतापं ॥
 केशवधृतभृगुपतिरूपजयजगदीशहरे ॥ ६ ॥
 वितरसिदिक्षुरणादिक्पतिकमनीयं । दशमुखमौलि-
 बालिरमणीयं ॥ केशवधृतरघुपतिरूपजयजगदीश-
 हरे ॥ ७ ॥ वहसिबपुषिविशदेवसनंजलदाभं ।
 हलहतिभीतिमिलितयमुनाभं ॥ केशवधृतहल-
 धररूपजयजगदीशहरे ॥ ८ ॥ निंदसियज्ञवि-
 धेरहहंश्रुतिजातं ॥ सदयहृदयदर्शितपशुघातं ॥

केशवधृतबुद्धशरीरजयजगदीशहरे ॥ ९ ॥ म्लेच्छ-
निवहनिधनेछलयसिकरवालं । धूमकेतुमिवकिम-
पिकरालं ॥ केशवधृतकल्किशरीरजयजगदीश-
हरे ॥ १० ॥ श्रीजयदेवकवेरिदमुदितमुदारं ॥ शृणु-
सुखदंशुभदंभवसारं ॥ केशवधृतदशविधरूपजय-
जगदीशहरे ॥ ११ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेप्रथमःप्रबंधः ॥ १ ॥

राग साकव ।

प्रलय भयानक जन्निधि जन् धंसि प्रभु तुम वेद उधारे ।
कार पतवार पुच्छ निम्न विहारे मीन मरीरहि धारे ॥ जय
जगदीश हरे ॥ १ ॥ कठिन पीठ मन्दर मन्थन किन किति
भर तिल सम राजै । गिरि घूमनि सुहरानि नौद बस कमठ-
रूप अति छाजै ॥ जय जगदीश हरे ॥ २ ॥ कनक नयन
वम रुधिर छोटी मिति कनक वरन कबि छायो । रद भागें धर
मनि कलंक मनु रूप बराह सुहायो ॥ जय जगदीश हरे ॥ ३ ॥
कार नख कीतकि पत्र अय अति कनककमिपु तन
फांख्यो । खंभ फारि निज जन रच्छन हित हरि नरहरि
वपु धाख्यो ॥ जय जगदीश हरे ॥ ४ ॥ अदभुत वामन बनि
बलि कलि कै तीन पैड़ जग नाख्यौ । दरमन मज्जन पान
समन अघ निज नख जन् धिर थाख्यौ ॥ जय जगदीश
हरे ॥ ५ ॥ अभिसानी कची गन बधि तिन रुधिर
सौंवि धर सारी । इकाइस बार निकल करी भुव हरि शृगु-
पति वपु धारी ॥ जय जगदीश हरे ॥ ६ ॥ दस दिसि दस

सिर मौलि दियो बनि सन सुर गन भय हारे । सिय लक्ष्मण
 मह मोहित सुन्दर राम रूप हरि धारे ॥ जय जगदीश
 हरे ॥७॥ सुन्दर गौर सरीर नील पट ससि में घन लपटायो ।
 करसन कर हल सों जमुना जल हलधर रूप सुहायो ॥ जय
 जगदीश हरे ॥ ८ ॥ अति ककुना करि दीन प्रसून पै
 निन्दे मखर वेदा । कान्तिजुग धरम कहे हरि ह्वै कै बुद्ध
 रूप हर खेदा ॥ जय जगदीश हरे ॥ ९ ॥ झं च्छ बधन
 हित कठिन धार तरवार धारि कर भारी । नामे अवन
 सत्ययुग थाप्यो कर्नाक रूप हरि धारी ॥ जय जगदीश
 हरे ॥ १० ॥ नन्दनन्दन जग बन्दन दम बपु धरि लौका
 बिस्तारी । गाई कवि जयदेव सोई हरीचन्द भक्त भय हारी ॥
 जय जगदीश हरे ॥ ११ ॥

गुर्जोरानिष्पत्तिमंठताज्ञेगीयते ।

श्रितकमलाकुचमंडलधृतकुंडलए । कलितल-
 लितवनमाल ॥ जयजयदेवहरे ॥ १ ॥ दिनमणि-
 मंडलमंडनभवखंडनए । मुनिजनमानसहंस ॥
 जयजयदेवहरे ॥ २ ॥ कालीयविषधरगंजनजन-
 रंजनए । यदुकुलनलिनदिनेश ॥ जयजयदेव-
 हरे ॥ ३ ॥ मधमुरनरकविनाशनगरुडासनए ।
 सुरकुलकेलिनिदान । जयजयदेवहरे ॥ ४ ॥ अमल-
 कमलदललोचनभवभोचनए । त्रिभुवनभुवननि-
 धान ॥ जयजयदेवहरे ॥ ५ ॥ जनकसुताकृतभूषण

जितदूषणए । समरशमितदशकंठं ॥ जयजयदेव-
हरे ॥ ६ ॥ अभिनवजलधरसुंदरधृतमंदरए । श्री-
मुखचंद्रचकोर ॥ जयजयदेवहरे ॥ ७ ॥ तवच-
रणेप्रणतावयमितिभावयए । कुरुकुशलंप्रणतेषु ॥
जयजयदेवहरे ॥ ८ ॥ श्रीजयदेवकवेरिदंकुरुतेमुदए ।
मंगलमुज्वलगीत ॥ जयजयदेवहरे ॥ ९ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदद्वितीयप्रबंध ।

किंभोटि या स्वमाच ।

कमला उर धरि वाहु विहारी । कुण्डल कानक गण्ड
जुग धारी ॥ कान्ति कान्ति वनमान्न सवारी । जय जय जय
हरि देव सुरारी ॥ १ ॥ जय जय दिनमनि तेज प्रकासन ।
जय जय जय जय भव भय नासन ॥ मुनि मन मानस जलज
विक्षासन । जय जय हरि केसव गरुडासन ॥ २ ॥ जय
कान्ति विषधर वक्त गंजन । जय जय ब्रजजुवती मन-
रंजन ॥ नदकुलकमलपूर हृग खंजन । जय जय हरि
केसव भव भंजन ॥ ३ ॥ जय जय सुर मधु नरक विदारन ।
पन्नगपति गामी जग तारन ॥ जय जय सुर कुल सुख
विस्तारन । जय हरि देव भक्त भय हारन ॥ ४ ॥ जय जय
कमल कमल दल लोचन । जय जय भव पति भव दव
भोचन ॥ द्विभुवन गति ब्रजतिय मन रोचन । जय जय
हरि सिर वर गोरोचन ॥ ५ ॥ जय जय जनकसुतन कृत
भूषण । समर विजित चिश्चिरा खर दूषण ॥ जय दशकंठ
वनज वनपूषण ॥ जय हृग कटा कमल कवि भूषण ॥ ६ ॥

जय जय अभिनव जनधर सुन्दर । जय धृत पृष्ठ कठिन
गिरि मन्दर ॥ जय विहरन गोवर्धन कण्ठर । श्रीसुख मसि
रत गोप पुरंदर ॥ ७ ॥ इम मध तुव पद् पंकज दामा ।
पूरहु निज भक्तन की आसा ॥ तिनको तुम दुख नित नित
नासा । जिनकहं तुम चरनन विखामा ॥ ८ ॥ श्रीजयदेव
रवित मन भाई । मङ्गल उज्ज्वल गीति सुहाई ॥ इगैचन्द
गावत मन चाई । ताकी हरि नित करत सहाई ॥ ९ ॥

धर्मतराशेषरूपकताल्लेगीयते ।

लालितलवंगलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे ।
मधुकरनिकरकरंबितकोकिलाकूजितकुंजकुटीरे ॥१॥
विहरतिहरिरिहसरंसवसंते । नृत्यतियुवतिजनेन-
समंसखिविरहिजनस्यदुरंते ॥ ध्रु० ॥ उन्मदमद-
नमनोरथपथिकवधूजनजनितविलापे ॥ अलिकुल-
संकुलकुसुमसमूहनिराकुलबकुलकलापे ॥ २ ॥ मृग-
मदसौरभरभसवशंवदनवदलमालतमाले । युवजं-
नहृदयविदारणमनसिजनखरुचिकिंशुकजाले ॥३॥
मदनमहीपतिकनकदंडरुचिकेशरकुसुमविकाशे ।
मिलितशिलीमुखपाटलिपटलकृतस्मरतूणविलासे ॥४॥
विगलितलजितजगदवलोकनतरुणकरुणकृतहासे ।
विरहिनिकुंतनकुंतमुखाकृतिकेतकिदंतुरिताशे ॥५॥
माधविकापरिमलललितेनवमालतिजातिसुगन्धौ ।
मुनिमनसामपिमोहनकारिणितरुणाकारणबंधौ ॥६॥

स्फुरदतिमुक्कलतापरिरंभणमुकुलितपुलकितचूते ।
 वृंदावनविपिनपरिसरपरिगतयमुनाजलपूते ॥ ७ ॥
 श्रीजयदेवभणितमिदमुदयतिहरिचरणस्मृतिसारं ।
 सरस्वसंतसमयवनवर्णनमनुगतमदनविकारं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविन्दनृत्यायप्रबंधः ।

वचस्त ।

हरि विहरत लखि रसमय वसन्त । जो विरही जन कहं
 अति दुरन्त ॥ हृन्दावन कुञ्जनि सुख समन्त । नाचत गावत
 कागिनी कन्त ॥ १ ॥ छै ललित लवङ्ग लता सुवाम । डोलत
 कोमल मलयज वतास ॥ अन्तिपिक्क कन्तरव लहि आस पास ।
 रछौ मूँजि कुंज गहवर अवास ॥ २ ॥ उनमादित छै तपि
 मदन ताप । मिनि पथिक्कवधु ठानाहं विजाप ॥ अन्ति कुन्त
 कं कुसुम मसुह दाप । वन सोभित मौनसिरी कानाप ॥ ३ ॥
 मृगानद् मौरभ के आन बान । सोभित बहु नव चक दन
 तमान ॥ कुव हृदय विदारन नख करान । फूले पलास बन
 लाल लाल ॥ ४ ॥ वन प्रफुलित केसर कुसुम आन । मनु वानक
 करी निप मदन रान ॥ अन्ति मइ गुलाब लाली सुदान ।
 विष बुझे मैन के मनहुं बान ॥ ५ ॥ नव नीवू फूलन करि
 विकास । जग निहज निरखि मनु करत हास ॥ तिमि
 विरही हिय छेदन हतास । बरछी से केतकी पच पास ॥ ६ ॥
 लपटत नव माधविका सुवाम । फूलो मल्ली मिति करि
 उजास ॥ मोहो मुनिजन करि काम आस । लखि तरुन
 सहायक रिनु प्रकास ॥ ७ ॥ सुसपित खातिका नव संग

प्राय । पुत्रकित वीरानि आम आय ॥ ऋद्धि सीतल। कमुना
 कहर वाय । पावन वृन्दावन रङ्गी सुहाय ॥ ८ ॥ जयदेव
 रचित यह सरस गीत । रितुपाति विहरन हरि। जस पुनीत ॥
 गावत जे करि हरिचन्द प्रीत । ते कहत प्रेम तजि काम
 भीत ॥ ९ ॥ हरि विहरत नखि रसमंय बसन्त ॥

रामकरिगगीशरूपकताज्ञेगोयते ।

चंदनचर्चितनीलकलेवरपीतवसनवनमाली ।
 केलिचलन्मणिकुंडलमंडितगंडयुगस्मितशाली ॥१॥
 हरिरिहमुग्धवधूनिकरेविलासिनिविलसतिकेलिपरे ॥
 ॥ ध्रुवपदं ॥ पीनपयोधरभारभरेणहरिपरिरभ्यस-
 रागं । गोपवधूरनुगायतिकाचिद्दुदंचितपंचमरा-
 गं ॥२॥ कापिविलासविलोलविलोचनखेलनजनि-
 तमनोजं ॥ ध्यायतिमूग्धवधूरधिकंमधुसूदनवदनस-
 रोजं ॥ ३ ॥ कापिकपोलतलेमिलितालपितुंकिम-
 पिश्रुतिमूले । चारुचुचुंनितंबवतीदयितंपुलकैर-
 नुकूले ॥ ४ ॥ केलिकलाकुतुकेनचकाचिदमुंयमु-
 नाजलकूले ॥ संजुलवंजुलकुंजगतंविचकर्षकरेण-
 दुकूले ॥ ५ ॥ करतलतालतरलवलययावलिकलित-
 कलस्वनवंशे ॥ रासरसेसहनृत्यपराहरिणायुवति-
 प्रशशंसे ॥६॥ श्लिष्यतिकामपिचुंबतिकामपिरम्य-
 तिकामपिरामां । पश्यतिसस्मितचारुतरामपराभ-

नुगच्छतिवाभां ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवकवेरिदमद्भुत-
केशवकेलिरहस्यं । वृंदावनविपिनेललितं वितनोतु-
शुभानियशस्यं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेचतुर्थःप्रबंधः ।

मालकीय ।

सखि हरि गोपबधु संग लीने । विक्तमत विविध
विक्ताम जाम भिखि केलि काला रस शीने ॥१॥ ध्रुव ॥ स्वाम
सरौर खौर चन्दन कौ पीत वसन वनमाला । रसनि हंसनि
भक्तकत मनि कुण्डल लोक्त कपोल रसाला ॥२॥ पीन उरोज
भार झुक्ति हरि कौ प्रेम सहित गर लार्ई । गोपबधु कोउ
पंचम रागहि कंचे सुर रहि गार्ई ॥ ३ ॥ चपल कटाच्छग
जुवती जन उर क्त.म बढ़ावन हारे । सुगंधबधु कोउ धार्ई
रहौ मन में मन मोहन प्यारे ॥ ४ ॥ कोउ हरि के कपोल
टिग अपने नवल कपोलहि लार्ई । बात करन मिस चूमति
प्रिय सुख तन पुलकानि लार्ई ॥ ५ ॥ जमुनातोर निकुञ्ज
पुञ्ज में मदनाङ्गल कोउ नारी । खेंचत गहि हरि को पीता-
म्बर हंसत खरे वनवारी ॥ ६ ॥ ताल देत कंकन धुनि भिखि
कल बंभी वज्रत सुहार्ई । ता अनुसार सरस कोउ नाचति
कखि हरि करत बड़ार्ई ॥ ७ ॥ विहरत कोउ संग कोउ मुख
चूमत काहू कौ गर रहे लंगार्ई । काहू को सुन्दर मुख देखत
चलत कोउ संग लार्ई ॥ ८ ॥ जो जयदेव कथित यह अद्-
भुत हरि वन विहरनि गावै । वल्लभं बल्ल-हरिचन्द सदा सो
सहज फल नव पावै ॥ ९ ॥ सखि हरि गोप संग लीने ॥

गुर्जरीरामिषरूपकताकिगीयते ।

संचरदधरसुधामधुरध्वनिमुखरितमोहनवंश ।
 चलितद्वगंचलचंचलमौलिकपोलबिलोलवंश ॥ १ ॥
 रासेहरिमिहविहितविलासंस्मरतिमनोममकृतपरि-
 हासं ॥ ध्रुवपदं ॥ चंद्रकचारुमयुरशिखंडकमंडल-
 वलयितकेशं । प्रचुरपुरंदरधनुरनुरंजितमेदुरमुदि-
 रसुवेशं ॥ २ ॥ गोपकदंबनितंबवतीमुखचुंबनलंबि-
 तलोभं । बंधुजीवमधुराधरपल्लवमुल्लसितस्मितशो-
 भं ॥ ३ ॥ विपुलपुलकभुजपल्लवचलयितवल्लवयुवति-
 सहस्रं ॥ करचरणोरसिमणिगणभूषणकिरणद्विभि-
 न्नतमिस्त्रं ॥ ४ ॥ जलदपटलचलदिंदुविनिंदकचं-
 दनतिलकललाटं । पीनपयोधरपरिसरमईननिहं-
 यहृदयकपाटं ॥ ५ ॥ मणिमयमकरमनोहरकुंडल-
 मंडितगंडमुदारं । पीतवसनमनुगतमुनिमनुजसु-
 रासुरवरपरिवारं ॥ ६ ॥ विशदकदंबतलेमिलितं-
 कलिकलुषभयंशमयंतं । मामपिकिमपितरंगदनंग-
 दशामनसारमयंतं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमति
 सुंदरमोहनमधुरिपुरूषं । हरिचरणस्मरणंप्रतिसं-
 प्रतिपुण्यवतामनुरूपं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविदेपंचमःप्रबंधः ॥९॥

विद्याग ।

त्रिय तें सो कवि टरत न टारी । रास विद्यास रमत

लखि मो तन इसे जीन गिरिधारी ॥ १ ॥ भ्रु० ॥ अधर
 मधुर मधु पान क्वी बंभी धुनि देत क्वार्क । शीव डुलनि
 चञ्चल कटाच्छ मिनि कुण्डल डिकनि सुधाई ॥ २ ॥ घुंघु-
 रारी अलकान पै प्यारी मोर चन्द्रिका राजै । नवन सजल
 घन पै मनु सुन्दर इन्द्रधनुष छवि छाजै ॥ ३ ॥ गोपवधू
 सुख चूमत अधर अमृत रम काल लुगाए । बन्धु जीव निन्दक
 थोठन पै मन्द हंसनि मन भाए ॥ ४ ॥ भरत सुजन में गोप
 बधुठिन प्रेम पुनक तन पूरे । कर पद गल मन गन आभु-
 षन सेटत हिय तम करे ॥ ५ ॥ स्वाम सुभग निर कोसर
 रेखा घन नव ससि छवि पावै । जवतो जय कठिन कुच
 मोजत जेहि जिय दया न आवै ॥ ६ ॥ गंडन पर मन मगिहत
 कुण्डल भक्तकत सब मन मोहै । सुर नर सु गन बन्दिंत
 कटि तट कपटि पीत पट मोहै ॥ ७ ॥ विमद कदम्ब तरे ठाढ़े
 जान भव भय सेटन वारे । काम भरी चितवन कवि अस उर
 काम बढ़ावन हारे ॥ ८ ॥ श्रीजगदेव कथित यह हरि को रूप
 ध्यान मन भायो । वसै सदा रत्नकन के हिय हरिचन्द
 अनूप सुहायो ॥ ९ ॥ जिय ते सो छवि टरत न टारी ॥

मातापरायणप्रकृतान्मोक्षोत्पत्तिः ।

निभृतनिकुंजगृहंगतयानिशिरहसिनिनीयव-
 संतं । चकितविलोकितसकलदिशारतिरभसभरे-
 णहसंतं ॥ १ ॥ सखिहेकेशिमथनमुदारं ॥ रमय-
 भयासहसदनमनोरथभावितयासविकारं ॥ ध्रुवपदं ॥
 प्रथमसमागमलज्जितयापटुचाटुशतैरनुकूलं । मृदु-

मधुरस्मितभाषितयाशिथिलीकृतजघनदुकूलं ॥२॥
 किंशलयशयननिवेशितयाचिरमुरसिममैवशयानं ।
 कृतपरिरंभणचुंबनयापरिरभ्यकृताधरपानं ॥ ३ ॥
 अलसनिमीलितविलोचनयापुलकावलिललितकपो-
 लं । श्रमजनसिक्तकलेवरयावरमदनमदादतिलो-
 लं ॥ ४ ॥ कोकिलकलवरकूजितयाजितमनसिज-
 तंत्रविचारं । श्लथकुसुमाकुलकुंतलयानखलिखित-
 घनस्तनभारं ॥ ५ ॥ चरणरणितमणिनूपुरयाप-
 रिपूरितसुरतवितानं । मुखरविशंखलमेखलयासक-
 चग्रहचुंबनदानं ॥ ६ ॥ रतिसुखसभयरसालसया-
 दरमुकुलितनयनसरोजं । निःसहनिपतिततनुल-
 तयामधुसूदनमुदितमनोजं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभ-
 णितमिदमतिशयमधुरिपुनिधुवनशीलं ॥ सुख-
 मुत्कंठितराधिकयाकथितं वितनोतुसलीलं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेषष्ठःप्रबंधः ।

अरी सखि मोहि मिनाउ सुरारी । नेटौ काम कसक
 तन की गर लाइ रमन गिरिधारी ॥ १ ॥ ध्रु० ॥ इक दिन
 गइवर कुञ्ज गई हीं तहां छिपे रहे ध्यारे । चितवत चवित
 चहुं दिशि मोहि सखि हंसे सुरति सुख धारे ॥ २ ॥ प्रथम
 समागम लाजि रही बहु बातन तबं बिलमाई । बोलतहीं हंसि
 कै कहु मो तिन नीबी सिथिल कराई ॥ ३ ॥ बीसरा सेन
 मुवाइ मोहि उर पर भर दै रहे सोई । हारि अजिहृत

कुम्भतट्टी पियो अघर कपटि तन दोई ॥४॥ आलस वम ह्य
 मूंदतही तिन तन पुलाकाकाका छाई । खेद सिथिल तन होत
 मोहि भए काम विषम ब्रजराई । ५ ॥ वोक्ततही सम प्रान-
 नाथ बहु कोक कला विपतागी । कुन्तल कुमुम ग्दसित लखि
 मस कुच जुग गख रेख पसारी ॥ ६ ॥ नूपुर बोक्ततही पिय
 प्यारि मुरत वितानहि तान्यौ । रगत गिरत किंकिनि सिर
 गहि सुख चूमत अति सुख मान्यौ ॥ ७ ॥ रति सुख ससुद
 मगन मोहि लखि ह्य मूंदि रहे मद् प्राप्ति । विथकित सेज
 परी लखि पियहु काम कानोहन छाके । ८ ॥ गोपबधू सखिसौं
 इमि भाखत प्र्याम काम रस पुरी । गार्ह मो जयदेव सुकांवि
 हरिचन्द भक्ति रति मुरी ॥९॥ अरी मखि मोहि भिलाउ मुरारी ॥

गुर्जरोरागेणप्रतिमंठतान्निगीयने ।

सामियं चलिताविलोक्यवृत्तं धूनिचयेन । साप-
 राधतयामयापिनवारितातिभयेन ॥ १ ॥ हरिहरि-
 हतादरतयागतासाकुपितेव ॥ ध्रुवपदं ॥ किंकरि-
 ष्यति किं वदिष्यति साचिरं विरहेण । किं जनेन धने-
 न किं मम जीवितेन गृहेण ॥ २ ॥ चितयामितदान-
 नं कुटिलं भ्रूरोषभरेण । शोणपद्ममिवोपरिभ्रमताकु-
 लं भ्रमरेण ॥ ३ ॥ तामहं हृदिसंगतागमनिशंभ्रशं-
 रमयामि । किं वने नु सरामितामिह किं लथादिलपा-
 मि ॥ ४ ॥ तन्विखिलमसूययाहृदयंतवाकलयामि ।
 तन्नवेदिकुतो गतासिनतेन तेन नु यामि ॥ ५ ॥

दृश्यसेपुरतोगतागतमेवमेविदधासि । किंपुरेवस-
संभ्रमंपरिरंभणंनददासि ॥ ६ ॥ क्षम्यतामपरं-
कदापितवेदशंनकरोलि । देहिसुंदरिदर्शनंमममम-
थेनदुनोमि ॥ ७ ॥ वर्णितंजयदेवकेनहरेरिदंप्रण-
तेन । किंदुविल्वसमुद्रसंभवरोदिणीरमणेन ॥८॥

इतिश्रीगांतगांविदेससप्तमःप्रबन्धः ।

हाहा गई कुपितहो प्यारी । निज अपमान मानि मन
भारी ॥ ६० ॥ भौंहि घिखी लखि बधुन संभारी । रिम
कारि यह उद्राम विचारो ॥ निज अपराध जानि भय भारी ।
हौंह ताहिनि सक्यो निवारो ॥ १ ॥ किमि ह्वै है करिहै काहा
वारी । का काहिहै मम विरह दुखारी ॥ धन जन शीवन घर
परिवारो । ता बिनु हया जगत निधि भारी ॥ २ ॥ सो मुख चन्द
ज्योति लजियारी । कोप कुटिल भौंहै कनरारी ॥ मनहुं कंसल
पर भंवर कतारी ॥ ३ ॥ बिसरति हिय तें नाहिं बिसारी । बन
बन फिरीं ताहि अनुसारो । बिलपौं हया पुकारि पुकारो ॥
अब हौं हिय सों ताहिं निकारो । रमिहौं तामों गल भुज
हारो ॥ ४ ॥ मम अपराध न हिये विचारो । अतिहि दुखित तोहि
जात निहारो ॥ पै नहिं जानौं कितै सिंभारो । तामों सकत
मनाइ न हारो ॥ ५ ॥ हग सो क्किन्हूँ होत न न्यारी । आवत
जात लखात सटारी ॥ पै यह अचरज अतिहि हारो । धाइ
लगत गर क्यौं न पियारी ॥ ६ ॥ अब कों करु अपराध करारो ।
कारिहौं फेर न चूक तिहारो ॥ सुन्दरि दरसन दै बलिहारो ।
दहत मदन तो बिनु तन जारो ॥ ८ ॥ किंदु बिलव वारिधि तम

हारी । गाई कवि जयदेव मंवारौ ॥ विरहातुर हरि कइनि
काथा रौ । जोः हरिचन्द भक्त सुखकारी ॥६॥

कर्णाटककरागीणपकतालीतालेगीयते ।

निंदतिचंदनमिदुकिरणमनुविंदतिखेदमधीरं ।

व्यांलनिलयमिलनेनगरलमिवकलयतिमलयस-

मीरं ॥ १ ॥ साविरहेतवदीना ॥ माधवमनसिज ।

विशिखभयादिवभावनयात्वयिलीना ॥ ध्रुवपदं ॥

अविरलनिपतितमदनशरादिवभवदव्रनायविशालं ।

स्वच्छदयमर्मणिवर्मकरोतिसजलनीलनीदलजालं ॥२॥

कुसुमविशिखशराल्पमनल्पविलासकलाकमनीयं ।

व्रतमिवतवपरिरंभसुखायकरोतिकुसुमशयनीयं ॥३॥

वहतिवगलितविलोचनजलधरमाननकमलमुदारं ।

विधुमिवविकटविधुंतुददंतदलनगलितामृतधारं ॥४॥

विलिखतिरहसिकुरंगभदेनभवंतमसमशरभूतं ।

प्रणमतिमकरमधोविनिधायकरेचशरंनवचूतं ॥५॥

प्रतिपदमिदमपिनिगदतिमाधवतवचरणेपतिताहं ।

त्वयिविमुखेमयिसपदिसुधानिधिरपितनुतेतनुदाहं ६

ध्यानलयेनपुरःपरिकल्प्यभवंतमतीवदुरापं ।

त्रिपलतिहसतिविधादतिरोदितिचंचतिभुंचतितापं ७

श्रीजयदेवभणितमिदमधिकंयदिमनसानटनीयं ।

हरिविरहाकुलबल्लवयुवतिसखीवचनपठनीयं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेष्टमःप्रबंधः ।

प्यारे तुम बिनु व्याकुल प्यारी । काम बान भय ध्यान
 धरत तुव लीजै ताहि उवारी ॥ १ ॥ चन्दन चन्द न भावत
 पावत अति दुख धीर न धारै । अहिगन गरल बगारि सरल
 तन मलयानिल तेहि जारै ॥ २ ॥ अबिरल बरसत मदन बान
 लखि उर महं तुमहिं दुगई । सजल कमल दल कवच बनाइ
 छिपावत हियहि छराई ॥ ३ ॥ कुसुम सेज कलक सी लागत
 सुख साजन दुख पावै । ब्रत मम सुख तजि तुव रति मनवत
 कोउ बिधि ममथ वितवै ॥ ४ ॥ अबिरल भीर टरक नैन नि
 तें रहत कपोलन छाई । मनहुं राहु बिदलित ससि तें जुग
 अमृतधार बहि आई ॥ ५ ॥ मृगमद लै तुव चित्र बनावति
 व्याकुल बैठि अकेली । काम जानि तेहि निवति मकरमर
 पुनि प्रनवत अलबेनी ॥ ६ ॥ पुनि पुनि कहति अहो पिय
 प्यारे पांय परति अपनाओ । तुम बिनु दहत सुधानिधि प्रीतम
 गरलनि मरत जिआओ ॥ ७ ॥ बिलपति हंमति बिखाद करति
 रोअति कवहुं अकुलाई । कवहुं ध्यान महं तुमहिं निरखि
 गर लागति ताप मिटाई ॥ ८ ॥ ऐमाहिं जो हरि बिरछ जलधि
 महं मगन होइ रम चाहे । सखी बचन जयदेव कथित हरि-
 चन्द गीत अवगाहै ॥ ९ ॥

देशाचर्यागणप्रकताकीतालेगीयते ।

स्तनविनिहितमपिहारमुदारं । सामनुतेकृश-
 तनुरतिभारं ॥ १ ॥ राधिकाविरहेतवकेशव ॥ ध्रुवपदं ॥
 सरसमसृणमपिमलयजपंकं ॥ पश्यतिविषमिववपु-
 षिसशंकं ॥ २ ॥ श्वसितपवनमनुपमपरिणाहं ।

मदनदहनमिववहृतिसदाहं ॥ ३ ॥ दिशिदिशिकि-
रतिसजलकणजालं ॥ नयननलिनमिवविगलित-
नालं ॥ ४ ॥ नयनविषयमपिकिशलयतल्पं ॥
कलयतिविहितहुताशविकल्पं ॥ ५ ॥ त्यजतिन-
पाणितलेनकपोलं ॥ वालशशिनमिवसायमलोलं ॥ ६ ॥
हरिरितिहरिरितिजपतिसकामं ॥ विरहविहितमरणे-
वनिकामं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवेभणितमितिगीतं ॥
सुखयतुकेशवपदमुपनीतं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदिनवमःप्रबंधः ।

तुव वियोग अति व्याकुल राधा । मिति हरि हरहु मदन
मद वाधा ॥ ३ ॥ क्लिप्त तन प्राणहु भर सम जाने । हार
पहार भरिस उर मानै ॥ १ ॥ कोमल चन्दन विष सम जागै ।
सुख सामा नखि संकित भागै ॥ २ ॥ क्षित खांस रुद्र व्याकुल
भारी । दहति तनहि मदनागि पजारी ॥ ३ ॥ चौकिवौकि चित-
वत चहु ओरी । खवत नीर नखिनी मनुतोरी ॥ ४ ॥ तुव विनु
समन परस तन जारौ । सूनी सिद्ध न सकत निहारी ॥ ५ ॥ निज
कर भौ न कपोल छठवै । नव ससि सांभ गहै मनु भावै ॥ ६ ॥
पुनि पुनि हरि तुव नाम छुधारै । विरह मरत कोछ बिधि
जिय धारै ॥ ७ ॥ कवि जयदेव कथित यह बानी । इगेचन्द
हरि जन सुखदानी ॥ ८ ॥

वराहीरागीषरूपकताज्ञेगीयते ।

वहृतिमलयसमीरेमदनमुपनिधाय ॥ स्फुटति-

कुसुमनिकरेविरहितदयदलनाय ॥१॥ तवविरहेवन-
मालीसाखिसीदति ॥ ध्रुवपदं ॥ दहतिशिशिरमयूखेमर-
णमनुकरोति ॥ पततिमदनविशिखेविलपतिविकल-
तरोति ॥ २ ॥ ध्वनतिमधुपसमूहेश्रवणमपिदधाति ॥
मनसिवलितविरहेनिशिरुजमुपयाति ॥३॥ वसति-
विपिनवितानेत्यजतिललितेधाम ॥ लुठतिधरणि-
शयनेबहुविलपतितवनास ॥ ४ ॥ भणतिकविजय-
देवेविरहिविलसितेन ॥ मनसिरभसविभवेहरिरु-
दयतसकृतेन ॥ ५ ॥

इतिश्रीगीतगोविन्दसप्तमःप्रबंधः ।

राग भिंमौटी

विरह विधा तें व्याकुल चाणी । तुव बिलुं बहुत विकल
वनमाली ॥ ध्रु० ॥ मलय समीर भकोरन आवत । तन पर-
संत अति काम जगावत ॥ फूले विविध कुसुम तरु डारन ।
विरहीजन हिय नखन विदारन ॥ १ ॥ चन्द चांदनी सौं
तन आरत । तुव बिकुरे प्रिय प्राण न धारत ॥ मदनवान
बिधि व्याकुल भारी । तनपि तनपि विलपत वनवारी ॥ २ ॥
मधुर भंवर धुनि सहि नहिं जाई । मूदे रहत अवन हरि
राई ॥ जब निमि बहुत मदन रुज भारी । मोहत बिकल
अधीन सुरारी ॥ ३ ॥ छोडि देह सुख गेह बिसारी । गिरी
वन बास करत गिरिधारी ॥ सुरकिधरनि जोटत बिलखाई ।
चौकि रहत राघि रट जाई ॥ ४ ॥ हरि को विरह बिलास

सुहायो । श्रीजयदेव सुकवि बह्व गायो ॥ इगीचन्द जीहि यष्ट
रम भावत । वैहि इरि अनुभव प्रगट क्ष्वावत ॥ ५ ॥ १० ॥

केदारगरीचंपकताभीतालेगीयते ।

रतिसुखसारेगतभिसारेमदनमनोहरवेषं ॥
नकुरुनितंबिनिगवनविलंबनमनुसरतंतदयेशं ॥१॥
धीरसमीपेयमुनातीरेवसतिवनेवनमाली । गोपी-
पीनपयोधरमर्द्दनचलितचपलकरशाली ॥ ध्रुवपदं ॥
नामसमेतंकृतसंकेतंवादयतेमृदुवेणुं ॥ बहुमनुतेतनु-
तेतनुसंगतपवनचालितमापरेणुं ॥ २ ॥ पततिपतत्रे-
विचलतिपत्रेशंकितभवदुपयानं ॥ रचयतिशयनं-
सचकितनयनंपश्यतितवपंथानं ॥ ३ ॥ मुखरम-
धीरंत्यजमंजीरंरिपुमिवकेलिसुलोलं ॥ चलसखि-
कुंजंसतिमिरपुंजंशीलयनीलनिचोलं ॥ ४ ॥ उर-
सिमुरारेरुपहितहारेघनइवतरलवलाके ॥ तडिदिव-
पीतेरतिविपरीतेराजसिसुकृतविपाके ॥ ५ ॥ विग-
लितबसनंपरित्तरसनंघटयजघनमापिधानं ॥ कि-
शल्यशयनेपंकजनयनेनिधिमिवहर्षनिधानं ॥ ६ ॥
हरिरभिमानीरजनिरिदानीमियमपियातिविरामं ॥
कुरुममवचनंसत्वररचनंपूरयमधुरिपुकायं ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवेकृतहरिसेवेभणतिपरमरमणीयं ॥ प्रमु-
दितत्तदयंहरिमतिसदयंनमतसुकृतकमनीयं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेमहाकाव्येएकादशःप्रबंधः ।

बिनाम मंत करु पिय मीं मिलु प्यारी । बैठे कुञ्ज अकीजे
 तुव हित मदनमथन गिरिधारी ॥ ध्रु० ॥ धीर संभौर घाट
 जमुना तट बन राजत बनमाक्षी । कठिन पीन कुच परमन
 चंचल कर जुग सीमा माक्षी ॥ १ ॥ लै तुव नाम बदत संकी-
 तहि मधुरी वेलु बजाई । तुव दिम ते जु रेनु उड़ि आवत
 रहत ताहि हिये जाई ॥ २ ॥ उड़त पखेरुन गिरत पतौधन
 तुव आगवन बिचारी । सिज संवारत इत उत चितवरा चकित
 पंथ बनवारी ॥ ३ ॥ चंचल सुद्धर नृपुरहि तजि मुख अञ्जन
 ओट दुगाई । तिमिर पुञ्ज चल कुञ्ज मखी मिलि हियरो लै न
 सिराई ॥ ४ ॥ रतिविपरीत पिया उर ऊपर सुक्तमान टिंग
 सोही । घन पैं चपल बलाका सह चपला सी रहु मन मोही ॥ ५ ॥
 किङ्किनि तजि कै बसन उतारि निरन्तर अन्तर ल्यागी । चढ़
 पिय कोमल किसलय सिज पिया के उर रहु जांगी ॥ ६ ॥
 हरि बहुनायक मानी रेनहु जात चलो सब बीतो । बेगहि
 चलु कर पीच मनोरथ पानि प्रीति कौ रीतो ॥ ७ ॥ श्री
 जयदेव कथित दूती बत्र हरि राधा गुन गाई । लही प्रेम
 प्रान सव हरिचन्द जुगल कृत्रि जीच बसाई ॥ ८ ॥

गुणकरोरामिणरूपकताज्ञेगीयते ।

पश्यतिदिशिदिशिरहसिभवंतं ॥ त्वदधरमधुरम-
 धूनिपिबंतं ॥ १ ॥ नाथहरेजयनाथहरेसीदतिरा-
 धावासगृहे ॥ ध्रु० त्वदभिसरणरभसेनवलंती ॥
 पततिपदानिकियंतिचलंती ॥ २ ॥ विहितविशद-
 बिसकिसलयवलय ॥ जीवतिपरमिहतवरतिक-

लया ॥ ३ ॥ मुहुरवलोकितमंडनलीला ॥ मधुरि-
पुरहृमितिभावनशीला ॥ ४ ॥ त्वरितमुपैतिनकथ-
मभिसारं ॥ हरिरितिवदतिसखीमनुवारं ॥ ५ ॥
शिलष्यतिचुंबतिजलधरकल्पं ॥ हरिरुपगतइति-
तिमिरमनल्पं ॥ ६ ॥ भवतिविलंबिनिविगलित-
लज्जा ॥ विलपतिरोदितिवासकसज्जा ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवकवेरिदमुदितं ॥ रसिकजनंतनुतामति-
मुदितं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदद्वादशःप्रबंधः ।

तुम यिलु दुखित राधिका प्यारी । तुव मय भङ्ग तन
सुरति विसारी ॥ १ ॥ अथर मधुर मधु पिवत कन्हाई । तुमहिं
सवे दिमि परत दिवाई ॥ २ ॥ मिलन चक्षत उठि तुम कहं
थाई । गिरि गिरि परत विरह दुवगाई ॥ ३ ॥ किसलय वल्लय
विरवि कर धारी । तुव रति ध्यान जिअति सुकुमारो ॥ ४ ॥
कवहुं रचति रमराम संवारो । जानति हम हौं मदन
सुरारो ॥ ५ ॥ वदति मखिन सों पुनि पुनि आली । अजहुं न
क्यों आप वनमाली ॥ ६ ॥ लखि घन मम अंधियार भुलाई ।
तुव धोखि चूमति गरलाई ॥ ७ ॥ तुवं विजस्व अति हौ अकु-
लाई । व्याकुल रोअति सेज सनाई ॥ ८ ॥ औ जयदेव रचित
जो गावै । हरीचन्द हरि पद रति पावै ॥ ९ ॥ १३

गौडमालवरागीशप्रतिमंडताशैभोयते ।

कथितसमयेपिहरिरहहनययौवनं ॥ ममविफल-

मेतदनु रूपमपि यौवनं ॥ १ ॥ यामिहेकमिहशरणं
सखीजनवचनवंचिता ॥ ध्रु० ॥ यदनुगमनायनिशि
गहनमपिशीलितं ॥ तेनममत्तदयमिदमसमशर-
कीलितं ॥ २ ॥ मममरणमेववरमतिवितिथकेतना ॥
किमितिविषहामिविरहानलमचेतना ॥ ३ ॥ माम-
हहविधुरयतिमधुरमधुयामिनी ॥ कापिहरिमनुभ-
वतिकृतसुकृतकामिनी ॥ ४ ॥ अहहकलयामिव-
लयादिमणिभूषणं ॥ हरिविरहदहनवहनेनबहुदू-
षणं ॥ ५ ॥ कुसुमसुकुमारतनुमतनुशरलीलया ।
स्वगपिच्छदिहंतिमामतिविषमशीलया ॥ ६ ॥ अह-
मिहनिवसामिनगणितवनवेतसा ॥ स्मरतिमधु-
सूदनोमामपिनचेतसा ॥ ७ ॥ हरिचरणशरणजय-
देवकविभारती ॥ वसतुत्तदियुवतिरिवकोमलकला-
वती ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविन्देत्त्रयोदशःप्रबंधः ।

हा हरि अजहूं वन नहिं आए । बैठे बाट बिलोकत बौता
औधहु कित बिलमाए ॥ ध्रु० ॥ मखियन झूठ बोनि बहरायो
हा । अब कौन उपाई । प्राननाथ बिलु बिफान सबै मम नख
जौवन सुन्दराई ॥ १ ॥ जाके मिलन हेत कारी निस बल
वन डोळत धाई । मदन वान बेदना देत मोहि सोई निठुर
काहाई ॥ २ ॥ घरहू कुव्यौ हरिहु नहिं आए तौ अब सरनहिं

नीको । कश काम विरहागि दाहि तन रखिवी जीवन
 फीको ॥ ३ ॥ इत मधु मधुर जामिनी मो विष वेदन देत
 पजारी । उत कोउ बड़भागिनि कामिन संग हूँ हँ रमत
 सुरारी ॥ ४ ॥ कर कछन कङ्कन बाजूबन्द विरहानन तपि
 जारें । विप्र से विषय साज सब लागत उलटे दुखहि प्रचा-
 रें ॥ ५ ॥ कुसुम सरिम मम कीमन तन पै फूल माल हू
 भारी । तीकन काम वान सी बेधति बिनु प्यारे गिरि-
 धारी ॥ ६ ॥ हम जाके हित बेत कुञ्ज में बैठी ल्यागि हवेली ।
 मो हरि भूलेंहु सुमिरत नहिं मोहि छाड़ी डाय अकीली ॥ ७ ॥
 इमि बिक्रपति ह्यभानुलकी हरि बिरह विधा अकुलाई ।
 श्रीजयदेव सुकवि मधुरी हरिचन्द कथा मोइ गार्डे ॥ ८ ॥ १४

वमंतरागीणपकतालोतालेगीयते ।

स्मरसमरोचितविरचितवेशा ॥ गलितकुसुम-
 दलविलुलितकेशा ॥ १ ॥ कापिचपलामधुरिपुणा ॥
 विलसतियुवतिरधिकगुणा ॥ ध्रुवपदं ॥ हरिपरि-
 रंभणवलितविकारा ॥ कुचकलशोपरितरलित-
 हारा ॥ २ ॥ विचलदलकललिताननचंद्रा ॥ तद-
 धरपानरंभसकृततंद्रा ॥ ३ ॥ चंचलकुंडललित-
 कपोला ॥ मुखरितरशनजघनगतिलोला ॥ ४ ॥
 दयितविलोकितलजितहसिता ॥ बहुविधकूजित-
 रतिरसरसिता ॥ ५ ॥ विपुलपुलकपृथुवेपथुभंगा ॥
 श्वसितिनिमीलितविकसदनंगा ॥ ६ ॥ श्रमजल-

कणभरसुभगशरीरा ॥ परिपतितोरसिरतिरण-
धीरा ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमतिललितं ॥
कलिकलुषंशमयतुहरिरमितं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविन्देचतुर्दशःप्रबंधः ।

हरि मंग विहरति ह्यै कौज । बद्धभागिनि जुवती गुन
वारी दै गल मँ भुज दोज ॥ १ ॥ मदनममर हित उचित भेन
खै वांचुकि कुच कामि बांधि । काच विगलित कुसुमन सों
मानहुं बीर सुमन सर साधे ॥ २ ॥ हरि गल ज्ञागत
खेदादिकागनमदन विकारहु जागे । कुचकलसन पर मुक्ताहार
बहु हिलत सुरतरस पागे ॥ ३ ॥ सुख ससि निकटललित
अनकावलि उमरि घुमरि रदिकारु । पिय अधरासव पान
ककौ तिमि भूमत तिय अलसाई ॥ ४ ॥ परसत उभक्ति
कापोसन बद्धन कुण्डल जुगल सुहाए । किङ्किनि कालरव
करति हिलत जव जुगल जङ्ग मन भाए ॥ ५ ॥ पिय तिय
दिसि निरखत चितवति कछु हंसि करि नैन लजीले । वि-
विध भाव रम भरी दिखावति कहि रति रसिक रसीले ॥ ६ ॥
रोम पांति उल्लहति तन वेपथु होत गरो भरि आए । मूँदि
मूँदि दृग खोजति लैले स्वाम सुरति सुख पाए ॥ ७ ॥
भानकत मुक्ताञ्जलि सी तन पर स्वम सीकर अति नीके ।
रतिरन अभिरत थाकि परी गल लजि कै हिय पर पीके ॥ ८ ॥
श्रीजयदेव सुकवि भाषित यह हरि विहार रस गावै । काम
विमुक्त ह्यै सो हरिचन्द प्रेम फल अनुपम पावै ॥ ९ ॥

गुर्जरीरागिष्पकाताकीताज्ञेगीयते ।

समुदितभदनेरमणीवदनेचुंबनवलिताधरे ॥
 मृगमदतिलकंलिखतिसपुलकंमृगयिवरजनिकरे ॥१॥
 रमतेयमुनापुलिनवने ॥ विजयिभुरारिरधुना ॥
 ध्रुवपदं । घनचयरुचिरेरचयतिचिकुरेतरलितत-
 रुणानने ॥ कुरुबककुसुमंचपलासुषमंरतिपतिमृग
 कानने ॥ २ ॥ घटयतिसूघनेकुचयुगगनेमृगम
 दरुचिरूषिते ॥ मणिसरममलंतारकपटलंनखप-
 दशशिभूषिते ॥ ३ ॥ जितबिसशकलेमृदुभुजयु-
 गलेकरलनलिनीदले ॥ मरकतवलयंमधुकरनिच-
 यंवितरतिहिमशीतले ॥ ४ ॥ रतिगृहजघनेविपु-
 लापघनेमनसिजकनकासने ॥ मणिमयरशानंतोर-
 णहसनंविकिरतिकृतवासने ॥ ५ ॥ चरणकिसल-
 येकमलानिलयेनखमणिगणपूजिते ॥ बहिरपवरणं-
 यावकभरणंजनयतिहृदियोजिते ॥ ६ ॥ रमयति-
 सुदृशंकामपिसदृशंखलहलधरसोदरे ॥ किमफल-
 मवसंचिरमिहविरसंवदसखिविटपोदरे ॥ ७ ॥
 इहरसभणनेकृतहरिगुणनेमधुरिपुपदसेवके ॥
 कलियुगचरितंनवसतुदुरितंकविन्द्रपजयदेवके ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेपंचदशःप्रबंधः ।

साधव नवरमनौ संग लीने । बंसीवट जसुनातट बिहरत
रतिरन जय रम भीने ॥ ध्रु० ॥ मदन पुलक तन चूमन
पिय मुख फारकत अधर काव्याहीं । अगमद तिलक देत ता
सुख मैं मनुससि मैं अगच्छाहीं ॥ १ ॥ जुव जन मन हर
रतिपति अग बन सघन सुघन सम कारे । चिकुर निकर
कर लिए संवास्त गूथ कुसुम बहु प्यारे ॥ २ ॥ नभमण्डल
सम कुच जुग मैं घन अगमद लपटि सुहावै । नखछत
सभि लखि नखत माल सौ सुक्तमाल पहिरावै ॥ ३ ॥ नवल-
नलिन भुज कोमल करतल सुकमलदल से राजै । मरकत
कङ्कन तह पहिरावत मधुप माल सम धाजै ॥ ४ ॥ सघन
जघन मनु मदन हेम सिंहासन सुकृषि सोहायो । सुरङ्गवसन
पर तोरन सम पिय किङ्किनि जान बंधायो ॥ ५ ॥ कमला-
लय नख मनि मन भृङ्खित पट पल्लव हिय लाई । निज मन
हित मनु सेइ बनावत जावक रेख सुहाई ॥ ६ ॥ इमि
बल्लभौर निठुर बन बिहरत संग लै दूखी नारी । ता हित
तरुतर बैठि बिकीकत वाट हथा हम हारी ॥ ७ ॥ यो हरि
रस मय होय कहति सखियन सौ व्याकुल प्यारी । सो कवि-
वर जयदेव कछौ हरिचन्द कलुष कलि हारी ॥ ८ ॥

देशांकरागिण्यरूपकताज्ञेयते ।

अनिलतरलकुवलयनयनेन ॥ तपतिनसाकि-
सलयशयनेन ॥ सखियारमितावनमालिना ॥
ध्रु० ॥ १ ॥ विकसितसरसिजललितमुखेन ॥ स्फुट-
तिनसामनसिजविशिखेन ॥ २ ॥ अमृतमधुरतर-

मृदुवचनेन ॥ ज्वलतिनसामलयजपवनेन ॥ ३ ॥
 स्थलजलरुहरुचिकरचरणेन ॥ लुठतिनसाहिमकर-
 किरणेन ॥ ४ ॥ सज्जलजलदसमुदयरुचिरेण ॥
 दलतिनसात्तदिचिरविरहेण ॥ ५ ॥ कनकनिकष-
 रुचिशुचिवसनेन ॥ श्वसतिनसापरिजनहसनेन ॥ ६ ॥
 सकलभुवनजनवरतरुणेन ॥ बहतिनसारुजमति-
 करुणेन ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितरमणेन ॥
 प्रविशतुहरिरपित्ठदयमनेन ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदोद्देशःप्रबंधः ।

कामलकोचन पिया जाहि गरलाइ है । सो न सजनी
 कबहुं विरह दुख पाइ है ॥ देखि किसलय सैज सो न दुख
 मानि है । प्राण प्रीतमहि निज निकट करि जानि है ॥ १ ॥
 अमल कोसल कामल वदन द्विय धारि है । तेहि न सर कुटिल
 कामहुं कबहुं मारि है ॥ २ ॥ अमृत मधु मधुर पिय वच सुवन
 पारि है । ताहि अति मनिन मलयानिल न जाहि है ॥ ३ ॥
 यलकमल सम चरन करन द्विय चाहि है । ताहि चन्दहुं न
 निज किरिन सर दाहि है ॥ ४ ॥ श्यामसुन्दर सजल जलद
 तन जागि है । तासु द्विय कबहुं नहिं विरह दुख पागि है ॥ ५ ॥
 कनक सम पीतपट लपट मुख सानि है । सो न गुरुजन
 हसन संक जिय साजि है ॥ ६ ॥ तरुन मनि कण्ठ सीं सुरत
 सुख ठानि है । सो न सपनेहुं कबौ विरह दुख जानि है ॥ ७ ॥
 सुकवि जयदेव कृत गीत जो गाइ है । सो न हरिचन्द भव
 दुखन बबराइ है ॥ ८ ॥ १७ ॥

शैरवरागीण्यतिताक्तेगीयते ।

रजनजनिनितगुरुजागररागकषायितमलसनिमे-
 षं ॥ वहतिनयनमनुरागमिवस्फुटभ्रुदितरसाभिनि-
 वेशं ॥ १ ॥ हरिहरियाहिसाधवयाहिकेशवमावद-
 कैतववादं ॥ तामनुसरसरसीरुहलोचनयातवहर-
 तिविषादं ॥ ध्रु० ॥ कञ्जलमीलनविलोचनचुंबन-
 विरचितनीलिमरुपं ॥ दशनवसनमरुणांतवकृष्ण-
 तनोतितनोरनुरूपं ॥ २ ॥ वपुरनुवहतिवस्मर-
 संगरखरनखरक्षतरखं ॥ मरकतशकलकलितकल-
 धौतलिपेरिवरतिजयलेखं ॥ ३ ॥ चरणकमलग-
 लदलक्तकसिक्तमिदंतवत्तदयमुदारं ॥ दर्शयतवि-
 वहिर्मदनङ्गमनवकिशल्यपरिवारं ॥ ४ ॥ दशन-
 पदंभवदधरगतंममजनयतिचेतसिखेदं ॥ कथयति
 कथमधुनापिमयासहतववपुरेतदभेदं ॥ ५ ॥ बहि-
 रिवमलिनतरंतवकृष्णमनोपिभाविष्यातिनूनं ॥ क-
 थमथवंचयसेजनमनुगतमसमशरज्वरदूनं ॥ ६ ॥
 भ्रमतिभवानबलाकवलायवनेषुकिमत्रविचित्रं ॥ प्र-
 थयतिपूजनिर्कैवधूवधनिर्दयबालचरित्रं ॥ ७ ॥
 श्रीजयदेवभणितरतिवंचितखंडितयुवतिविलापं ॥
 शृणुतसुधाभधुरंविबुधाविबुधालयतोपिदुरापं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेसप्तदशःप्रबंधः ।

भैरव ।

हम सौं झूठ न वीनहु माधव जाहु जू केशव जाओ ।
 जो जिय बखी रेन निवसै जहं ताही कौं गर जाओ ॥ १ ॥
 अनिशारे हय आत्मस भीने पलकें घुरि घुरि जाहीं । जागि
 तिया रस पागि न प्रगटत निज अनुराग लजाहीं ॥ २ ॥ बार
 बार चूमन सौं रस भरि तिय जुग हय कजरारे । काल रहै
 तुव अधर काल पै भए अह मस कारे ॥ २ ॥ रतिरन
 अभिरत ख्याम मुभग तन नखकत नखत सुहायो ॥ मदन
 नौन पट कनक लेखनो मनु जयपच लिखायो ॥ ३ ॥ पिय
 तुव छिद्य तिय पद को जानक लखहु न कौनो सोहै । मनु
 जियकाम कता उलझी है पल्लव पसरि रझौ है ॥ ४ ॥ तुम
 अगि निठुर तदपि हम तुग सौं तनिकहु बिलगन प्यारे ।
 तुव अधरन रद कद पै ताकी पिय उर पीर हमारे ॥ ५ ॥
 तन जिमि कारो तिमि सनह तुव कुटिल कपट सौं कारो ।
 अपनो जानि औरह हम कहं बदि मदनागल कारो ॥ ६ ॥
 वन वन बधुन बधन हित डोगत निरदय बने सिकारी ।
 यामें अचरज नहिं तुम प्रथमहि नारि पूतना मारी ॥ ७ ॥
 मुनि तियवचन सरोम पिया इठि लौनी कंठ लगाई । श्री
 कयदेव मुक्ताव हरिचन्दु बिलास कथा सोइ गाई ॥ ८ ॥ १८ ॥

गुञ्जरोरामिण्यतित्तल्लेगोयते ।

हरिरभिसरतिग्रहतिनधुपवने ॥ किमपरमधिकसुखं-
 सखिभुवने ॥ १ ॥ माधवेसाकुरुमानिनिमानमये ॥ ध्रु ० ॥
 तालफलादपिगुरुमतिसरसं ॥ किंविफलीकुरुषेकु-

चकलशं ॥ २ ॥ कतिनकथितमिदमनुपदमचिरं ॥
 आपरिहरहरिमतिशयरुचिरं ॥ ३ ॥ किमितिबि-
 षीदशिरोदिषिविकला ॥ विहसतिश्रुवतिसभातव-
 सकला ॥ ४ ॥ मृदुनलिनीदलशीतलशयने ॥ हरि-
 मवलोकयसफलयनयने ॥ ५ ॥ जनयसिमनासि-
 किमितिगुरुखेदं । शृणुममवचनमनीहितभेदं ॥ ६ ॥
 हरिमुपयातुवदतुबहुमधुरं ॥ किमतिकैरोषिददय-
 मतिविधुरं ॥ ७ ॥ श्रीजयदेवभणितमतिललितं ॥
 सुखयतुरसिकजनंहरिचरितं ॥ ८ ॥

मानौ माधव प्रिय सौ मानिनि मान न कदा मम मान
 काही । बहत पवन लखि हरि उठि आए तू कीहि मुख घर बैठि
 रही ॥ १ ॥ कुच जुग कलस ताज फल से गुरु मरम तिनहि
 कित विफल करै । बार बार सखि तोहि ममभावति किन
 सुन्दर हरि सौ विहरै ॥ २ ॥ बिलपति बिलकल तोहि लखि
 सखि गन हंमहिं न तू तज जाज धरै । बैठे सजल नखिन
 दल सेजन हरि लखि किन हग पीर हरै ॥ ३ ॥ किन जिय
 खेद करति मुनु मम वच हरि सौ भिनि मृदु बोनि अरी ।
 मुनि जयदेव सखी हरिचन्द कथन निज उर दुख दूर
 दरी ॥ ४ ॥ १६ ॥

देशवराडोगीण आहवताज्ञेगीयते ।

वदसियदिकींचिदपिदंतरुचिकौमुदी । हर-
 तिदरतिभिरमतिधोरं ॥ स्फुरदधरसीधवेतववदन-

ईद्रमा ॥ रोचयतिलोचनचकोरं ॥ १ ॥ प्रियेचा
 रुशीले ॥ सुंचमयिमादमनिदानं ॥ सपदिमदना-
 नलोहृहतिमममानसं ॥ देहिमुखकमलमधुपानं ॥
 ५० ॥ सत्यजेवास्त्यदिस्मृतिमयिकोपिनी ॥
 देहिदरनखरशरघातं ॥ घटयभुजबंधनंजनय-
 रदखंडनं ॥ येनवाभवतिपुखजातं ॥ २ ॥
 त्वमसिममभूषणंत्वमसिममजीवनं ॥ त्वमसिमम
 भवजलयिरत्नं ॥ भवतुभवतीहमयिसतत-
 ननुशोदिनी ॥ तत्रममत्तदयमतिरत्नं ॥ ३ ॥
 नीलनीलिनाममपितन्वितवलोचनं ॥ धारयति-
 कोकनदरूपं ॥ कुसुमशरवाणभावेनयदिरं-
 जयसि ॥ कृष्णमिदमेतदनुरूपं ॥ ४ ॥ स्फुरतुकुच-
 कुंभयोरुपरिमणिमंजरीरंजयतुतवत्तदपदेशं ॥ रस-
 तुरसनापितवधनजघनमंडलेघोषयतुमन्मथनिदे-
 शं ॥ ५ ॥ स्थलकमलगंजनंममत्तदयरंजनंजनित-
 रतिरंगपरभागं ॥ भणमसृणवाणिकरवाणिचरण-
 द्वयंस्मरसलसदलक्तकरागं ॥ ६ ॥ स्मरगरलखंडनं-
 ममशिरसिमंडनं ॥ देहिपदपल्लवमुदारं ॥ ज्वलाति-
 मयिदारुणोददनकदनानलो ॥ हरतुतदुपहितवि-
 कारं ॥ ७ ॥ इतिचट्टुलचाटुपटुचारुमुरवैरिणो ॥

राधिकामधिवचनजातं ॥ जयति*जयदेवकविभा-
रतीभूषितं ॥ भानिनीजनजनितशातं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदेऊनविंशतितमःप्रबंधः ।

मान तजि मानु मनु प्रानप्यारी । दृढत मोहि मदन
तुव विरह जर काल मीं अधर मधुपान दै लै उचारी ॥ १ ॥
मधुर ककु बोलि मुख खोनि जामों निरखि दमन दुति
विरह तम दूर नाजं । अधर मधु मधुर सुन्दर मुधा मिंधु
सुख समिहि लखि दृग चकोरहि जुड़ाजं ॥ १ ॥ सांचहौ
घोड़ कूठी जुपै कोप करि तोन क्योँ नयन सर मोहि सारै ।
बांधि भुज पास मीं अधर दन्तन रुदसि क्योँ न अपराध
बदलो निवारै ॥ २ ॥ तुही मम प्रान धन भव जानधि रंतन
तू तोहि खगि जगत हीं जीव धारै । तनिका जी तू कृपा
कोर मो दिसि लखै तौ जगहि तोहि पर वारि डारै ॥ ३ ॥
नौक नलिनी सुदल सरिस तुव नयन जुग कोप सीं कोकनद
रूप धारै । तौन किन जानि मोहि कृष्ण इति काम सर
अरुन करु तरुन अनुराग भारै ॥ ४ ॥ क्योँ न मोभित वारति
कुक्ष कुच हाग सीं हीय जामों दुगुन होइ राजै । सघन निज
जघन पै बांधि किङ्किनि कलित मदन नौवति सरिस मुरत
बाजै ॥ ५ ॥ थल कामच मान हर मम हृदय प्रान कर सरस
रति रंग तुव चरन प्यारै । कहे तो लाइ हिय मैं मझावर
भरौ हरौ जिय ताप आनन्द धारै ॥ ६ ॥ सदन सन्ताप को
मदन मोहि कदन हित दृढत अति अगिनितन मैं बढाई ।

* पाठान्तर—जयति पथावती रमण जयदेवकवि भारती अणितमतिशातम् ॥

चरन पल्लव जगत्त गरत्त हर सीस मम धारि किन तँडि
तुरत दै बुझाई ॥ ७ ॥ भाखि इमि चतुर हरि पगत्त परि तिवडि
रिक्तयो खियो मङ्क तजि चङ्क नाई । मोई पदमावर्षी प्रांन
जयदेव कवि काही हरिचन्द लीला वगाई ॥ ८ ॥ २० ॥

धर्मतरागेणरूपकताज्ञेगीयते ।

विरचितचाटुवचनरचनंचरणरचितप्रणिपातं ॥
संप्रतिमंजुलवंजुलसीमनिकेलिशयनमनुयातं ॥
मुग्धेनधुमथनमनुगतमनुसरराधिके ॥ ध्रु० ॥
धनजधनस्तनभारभरेदरमंथरचरणविहारं ॥ मुख-
रितमणिमंजरिमुपैहिविधेहिमरालविकारं ॥ २ ॥
शृंगुरमणीयतरंतरुणीजनमोहनमधुरिपुरावं ।
कुसुमशरासनशासनबंधिनिपिकनिकरेभजभावं ॥ ३ ॥
अनिलतरलकिसलयनिकरेणकरेणलतानिकुरंबं ॥
प्रेरणमिवकरभोरुकरोतिगतिंप्रतिमुंचविलंबं ॥ ४ ॥
स्फुरितमनंगतरंगवशादिवसूचितहरिपरिरंभं ॥
पृच्छमनोहरहारविमलजलधारममुंकुचकुंभं ॥ ५ ॥
अधिगतमखिलसखीभिरिदंतववपुरपिरतिरणसज्जं ।
चंडिरसितरशनारवडिडिममभिसरसरसमलज्जं ॥ ६ ॥
स्मरशरसुभगनखेनसखीमवलंब्यकरणसलीलं ॥
चलवलयकणितैरवबोधयहरिमपिनिजगतिशीलां ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवभणितमधरीकृतहारमुदासितवामं ॥ हरि

विनिहितमनसामधितिष्ठतुकंठतटीमभिरामं ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविन्देविंशतितमःप्रबंधः ।

उठि चलु मोहन टिग प्यारी । मंजुल वंजुल कुञ्ज
 बिकोक्त तुव मग गिरिधारी ॥ गनावत तो कइं जे हारे ।
 कियो बिनय बहु तुअ पद पै निज सीस रहे धारे ॥ मुरत
 करि उनकी तू नारी । मंजुल वंजुल कुंज बिकोक्त तुव
 मग गिरिधारी ॥ १ ॥ पहिरि पग मनि नूपुर सीरे पीन
 पयोधर सघन कघन भर चलु धीरे धीरे ॥ चान्त सौं हंसहि
 लजशार्ङ्ग । चलु सनु तरुनी जन मोहन मनमोहन बच
 धार्ङ्ग ॥ सफल करु अवनहिं सैं वारी । मंजुल ० ॥ २ ॥ कुञ्ज
 सैं मनु कोहन बोलैं । काम नृपति के बन्दीजन से मदन
 विरद बोलैं । चान्त मनयानिल मदमाती । नव पल्लव हिलि
 तोहि बुलावत निकट विरिक्त पांती ॥ बिलंब न करु गजर्गात-
 वारी । मंजुल वंजुल ० ॥ ३ ॥ देखु फरकत जीवन दोख ।
 मदनरङ्ग सौं उमड़ि अगिहन चहत पियहि सोज ॥ गवन
 हित सगुन मनहुं कीने । हीर हार ललधार भरे जुग घट
 मनमुख लीने । चक मति समयहि बलिहारी । मंजुल
 वंजुल ० ॥ ४ ॥ सखिन तोहि रतिरन हित साज्यो । ती किन
 अथसौं मदन भेरि तुव किञ्चिन रव बाज्यो ॥ द्रवत तजि
 लाज न क्यौं कूटी । चलति न क्यौं सखि करु गहि बैठी
 मानिनि ह्यै कूटी । बिनत तुव व्याकुल बनवारी । मंजुल
 वंजुल ० ॥ ५ ॥ कञ्चौ लै मानिनि मम मानी । सूचत रति
 अगिसार बजावत चलु कङ्कन रानी ॥ भिजन लखि तोहि

इम सुख पावै । जुगल रूप जयदेव सुकवि कखि हिय मह
पधरावै । होइ हरिचन्दहु बनिहारी । मंजुल वंजुल कुंज बिनो-
क्त तुव मग गिरिधारी ॥ १६ ॥ २१ ॥

बराडोरानीचन्द्राडवता।ज्ञेगोयन ।

मंजुतरकुंजतलकेलिसदने ॥ प्रविशराधे ॥
माधवसमीपमिहविलस ॥ शतिरभसहसितवदने ॥१॥
नवभवदशोकदलशयनसारे ॥ प्र० ॥ कुचकलश-
तरलहारे ॥ २ ॥ कुसुमचयरचितशुचिवासगेहे ॥
प्र० ॥ कुसुमसुकुमारदेहे ॥ ३ ॥ मृदुचलमलयप-
वनसुरभिशीते ॥ प्र० ॥ रसवलितललितगीते ॥४॥
विततवहुवह्लिनवपल्लवघने ॥ प्र० ॥ चिरमीलित-
पीनजघने ॥ ५ ॥ मधुमुदितमधुपकुलकलितरावे ॥
॥ प्र० ॥ मदनरभसरसभावे ॥ ६ ॥ मधुतरलपि-
कनिकरनिनदमुखरे ॥ प्र० ॥ दशनरुचिरुचिर-
शिखरे ॥ ७ ॥ विहितपद्मावतीसुखसमाजे ॥ कुरु-
मुरारेमंगलशतानिभणतिजयदेवकविराजराजे ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविंदेएकविंशतिमःप्रबंधः ।

माधव टिग चक्र राधाप्यारी । बिनस प्रिया गल मैं
सुत्र धारी ॥ प्र० ॥ मंजु कुंज मधि सेज विहार्इ । विहर
तहां हंसि हंसि सुखपाई ॥ माधव टिग ॥ १ ॥ कुच कलसन
पर तरलित माना । विहर असोक सेज पर वाना ॥ माधव
टिग ॥ २ ॥ त्रिविध कुसुम लै कुंजन बांधे । बिनस कुसुम

कौमल्य तत्र राधे ॥ माधव टिग० ॥ बद्धत सीत मलयानिल
 आर्द्र । विहर सुरत रत हरि गुन शार्द्र ॥ माधव टिग० ॥ ४ ॥
 सधन जघन कश्च मफन म्हाए । लखु पङ्कव वङ्गिन लपटाए ॥
 माधव टिग० ॥ ५ ॥ गून्तत मधुप मदन मद्माती । विहर
 कृष्ण संग रति रस राती ॥ माधव टिग० ॥ ६ ॥ मुनु गावत
 पिक काम बधाई । चलु लै निज पिय की हिय लाई ॥ माधव
 टिग० ॥ ७ ॥ कवि जयदेव केलि रस गावै । हरीचन्द्र सुनि
 जनम सिरावै ॥ ८ ॥ २२ ॥

वराडीरागेणरूपकतान्त्रेयते ।

राधावदनविलोकनविकसितविविधविकारबिभंगं ।
 जलनिधिमिवविधुमंडलदर्शनतश्चित्तुंगतरंगं ॥ १ ॥
 हरिमेकरसंचिरभभिलषिताविलासं ॥ साददर्शगु-
 रुहर्षवशंवदवदनमनंगनिवासं ॥ धृ० ॥ हारमम-
 लतरतारसुरसिद्धतंपरिलंबितदूरं ॥ स्फुटतरफे-
 नकदंबकरंबितमिवयमुनाजलपूरं ॥ २ ॥ श्यामल
 मृदुलकलेवरमंडनभाधिगतगौरदुकूलं ॥ नीलनलि-
 नमिवपीतपरागपटलभरवल्यितमूलं ॥ ३ ॥ तर-
 लदृगंचलचलनमनोहरवदनजनितरतिरागं । स्फु-
 टकमलोदरखेलितखंजनयुगमिवशरदितडागं ॥ ४ ॥
 वदनकमलपरिशीलनमीलितमिहिरसमकुंडलशोभं ।
 स्मितरुचिरुचिरसमुल्लासिताधरपल्लवकृतरतिलोभं ॥ ५ ॥
 शशिकिरणच्छुरितोदरजलधरसुंदरकुसुमसुकेशं ।

निर्मितोदितविधुर्नडलनिर्भलमलयजतिलकनिवेशं॥६
 विपुलपुलकभरदंतुरितरतिकेलिकलामिरधीरं ।
 नणिगणकिरणससूहसमुज्वलभूषणसुभगशरीरं॥७॥
 श्रीजयदेवभणितदिभयेद्विगुणीकृतभूषणभारं ।
 ऋगभतट्टदिविनिधायहरिंभवजलसुकृतोदयसारं॥८

इतिश्रीगीतगोविंदद्वाविंशतितमःप्रबंधः ।

रत्ना कीर्तिकुंज महं जाई । बैठे वाट बिकोक्त निरखि
 रम उगये हरिराई ॥ १० ॥ राधा भमिसुख निरखि हरखि-
 तन रम मसुद्र नहराने । रमन मनोरथ करत मदनवम
 विविध भाव प्रगटाने ॥ १॥ स्वाम सुभग द्विय पर इमि मोहत
 सुन्दर मोतिन माना । जमुनाजल मनु सेत कमल के
 मोहित फेन रमाना ॥ २॥ नृगमद मोचक मेचक तन पै पीत
 वदन नपटायो । मानहु नीलकमल पै पसखी पीतपराग
 सुत्रायो ॥ ३ ॥ रममय तन में सुन्दरवदन बिकोचन जुग
 मतदारे । सरद सरोवर कमलनि खेकत जुग खंजन अनि-
 चारे ॥ ४ ॥ कामल वदन में दुहुं दिमि कुण्डल रवि से सुभग
 भाखाही । हिलत अधर मुसुकात मनहुं पिथ सुख चूमन
 लनचाही ॥ ५ ॥ वारन कुसुम गुथे मनु घन महं कहुं कहुं
 चांदनि राजै । नव ससि अरुन किरिन सम मिर पै कुंकुम
 तिलक विराजै ॥ ६ ॥ मनिगन भूवन भुलित मव अङ्ग सुन्दर
 सुभग सरौरा । पुनक्ति तन रति आतुर बैठे मोहन पिथ बल-
 बीरा ॥ ७ ॥ श्रीजयदेव कथित हरिं को बधु जा जिय में छिन
 आवै । मो हरिचन्द धन्य जग में निज जीवन को फल
 भावै ॥ ८ ॥ २३ ॥

विभवावरागिष्पकतालोतान्निगोयते ।

किसलयशयनतलेकुरुकामिनिचरणनलिनविनिवेशं ।
 तवपदपल्लववैरिपराभावमिदमनुभवतुसुवेशं ॥
 क्षणमधुनानारायणमनुगतमनुसरभोराधिके ॥ध्रु०॥१॥
 करकमलेनकरोमिचरणमहमागमितासिविदूरं ।
 क्षणमुपकुरुशयनोपरिभामिवनूपुरमनुगतिशूरं ॥२॥
 वदनसुधानिधिगलितममृतमिवरचयवचनमनुकू-
 लं ॥ विरहमिवापनयामिपयोधररोधकमूरसिदुकू-
 लं ॥ ३ ॥ प्रियपरिरंभणरभसवलितमिवपुलकित-
 मन्यदुरापं ॥ सदुरसिकुचकलशंविनिवेशयशोषय-
 मनसिजतापं ॥ ४ ॥ अधरसूधारसमुपनयभामि-
 निजीवयमृतमिवदासं ॥ त्वयिविनिहितमनसंवि-
 रहानलदग्धवपुषमविलासं ॥ ५ ॥ शशिमुखिमुख-
 रयमणिरसनागुणमनुगुणकंठनिदानं ॥ समश्रुति-
 युगुलेपिकरवविकलेशमयचिरादवसादं ॥ ६ ॥ मा-
 मतिविफलरुषाविफलीकृतमवलोकितुमधुनेदं ॥ मी-
 लतिलज्जितमिवनयनंतवविरमविसृजरतिखेदं ॥७॥
 श्रीजयदेवकवैरिदमनुपदनिगदितमधुरिपुमोदं ॥
 जनयतुरसिकजनेषुमनोरमरतिरसभावविनोदं ॥८॥

इतिश्रीगीतगोविन्देयत्रयोविंशतिमःप्रबंधः ।

राक्षसीती आत्त पुआओ । प्रानपिया हरि की कहनी
 हरि मिल पिय सीं सुख पाओ ॥ १० ॥ नव किसलय सीं
 सेज संवारी कोमल पद तइ धारी । हस पल्लव अभिमानहि
 असन चरन दरसाइ पियारी ॥ १ ॥ अतिश्रम भयो प्रान-
 प्यारी तोहि चरन पल्लोटीं तेरे । नृपुर धरौं उतारि सेज पर
 बैठु आइ टिग लेरे ॥ २ ॥ वीक्षि मधुर ककु किन निज पिय
 को व्याकुल हियो जुडावे । कहू तो उर सीं अंदल ह्याणा
 उतारि अधिक्क सुख पावे ॥३॥ पिय गर लगन हेत फरकींहे
 जुगल कलस कुच प्यारी । पिय पुककित हिय साइ हरत किन
 मदनताप सुकुमारी ॥ ४ ॥ निज विरहानल तपत देखि
 मोहि क्यों न दया उर लावे । अधर मधुर रस सुधा खाइ है
 किन मोहि मरत जियावे ॥ ५ ॥ तुव विन कोकिन नाद
 मुनत रहे खवन सदा दुख पाई । है तिन कहं सुख भाखि
 मधुर ककु किङ्किन कलित बजाई ॥ ६ ॥ नाहक मान ठान
 दुख दीनो अब मो दिस लखु प्यारी । नीचे नैनन लाज
 भरौ करु है रति सुख बलिहारी ॥ ७ ॥ श्री जयदेव सुकवि
 हरि भाखित सरस गीत जो गावे । ता जिय मैं हरिचन्द
 प्रेम वल काम विकार न आवै ॥ ८ ॥ २४ ॥

रामकरीरामेण्यतिसालेगीयते ।

कुरुयदुनंदनचंदनशिशिरतरेणकरेणपयोधरे ॥
 मृगमदपत्रकमद्रदनुभवमंगलकलशसहोदरे ॥
 निजगादसायदुनंदने ॥ क्रीडितित्दयानंदने ॥
 ध्रु० ॥ १ ॥ अलिकूलगंजनसंजनकरतिनायक

सायकमोचने ॥ त्वदधरचुंबनलंबितकज्जलमुज्वल-
 यप्रियलोचने ॥ २ ॥ नयनकुरंगतरंगविलासनि-
 रोधकरेश्रुतिमंडले ॥ मनसिजपाशविलासधरेशुभ-
 वेशनिवेशयकुंडले ॥ ३ ॥ अमरचयंरचयंतमुपरि-
 रुचिरंसुचिरंममसन्मुखे ॥ जितकमलेविमलेपरिकर्म-
 रनर्मजनकमलकंमुखे ॥ ४ ॥ मृगमदरसवलितंललितं
 वृत्तिलकर्मलिकरजनीकरे ॥ विहितकलंककलंक-
 ज्ञाननविश्रामितश्रमसीकरे ॥ ५ ॥ ममरुचिरे-
 चेकरेकुरुमानदमनसिजध्वजचामरे ॥ रतिगलि-
 त्रेतेकुसुमानिशिखंडिशिखंडकडामरे ॥ ६ ॥
 नेजघनेममज्ञांबरदारणवारणकंदरे ॥ मणि-
 रसनावसनाभरणानिशुभाशयवासयसुंदरे ॥ ७ ॥
 श्रीजयदेववचसिशुभदेहदयंसदयंकुरुमंडने ॥ हरि-
 चरणरुमरणामृतनिर्मितकलिकलुषज्वरखंडने ॥ ८ ॥

इतिश्रीगीतगोविंदचतुर्विंशतिःप्रबंधः ।

यह मुनि राधा-पिय सौं बोली । मान छाड़ि निज प्रा-
 नाथ सौं गांठ छदय की खीखी ॥ ४ ॥ मङ्गल कलस सरिस
 मम जुग कुच नृग मद चिच बनाधी । चन्दन से सीतल वार
 द्विय धरि जिय की ताप सिटाधी ॥ ५ ॥ कामवान चलि
 कून लद गंजन नैषनि खंजन प्यार । तुव चूमन सौं प्रीति
 रझो तैहि देहु संवारी दुदारे ॥ २ ॥ इग कुरङ्ग गति मेड

सरिस मम खवनन पिय गिरिधारी । काम प्राप्त से कुण्डल
 प्यारे निज कार देहु संवारी ॥ ३ ॥ मेरे सुख पर पीतम
 सुन्दर निज कार विरचि संवारी । ग्धन कामल पर अन्ति कुत्त
 सरिस अलक्ष निरुवारि वगारी ॥ ४ ॥ अम सीकरहि पीकि
 मम सिर धिय निज कार रुचिर बनाओ । पूरन ससि पै मृग
 छाया सौं मृग मद् तिक्तक लगाओ ॥ ५ ॥ मदन चौर धुन
 से मम सुन्दर कस प्राप्त निरुवारी । कीकि पच्छ से वारन
 गूथहु सुन्दर कुसुम संवारी ॥ ६ ॥ सरस सघन मम जघन
 पर कल किङ्किनि कान्ति सजाओ । सुन्दर वसन बभ्रुन रचि
 रचि मम अङ्गनि पहिराओ ॥ ७ ॥ इमि राधा वच सुनत
 दृष्ट्य गरलगि विष्टरे सुखपायो । सो जयदेव सुकंवि हरिचन्द
 विहार कुतूहल गायो ॥ ८ ॥ २५ ॥

दीक्षा ।

अष्टपदी चौबीस इमि, गाई कवि जयदेव ।
 भाषा करि हरिचन्द सोइ, कही प्रेम रस भेव ॥ १ ॥
 गुत मन्त मम पद सबै, प्रगटे भाषा माहैं ।
 यह अपराध महा कियो, यामैं संसय नाहि ॥ २ ॥
 छमिहैं निज जतजानि सो, जुगल दास तकसीर ।
 हरिहैं अपनो समुक्ति जिय, कठिन मोह भव पीर ॥ ३ ॥

इति श्रीहरिचन्द्र विरचित गीतगोविन्दानन्द समाप्त ।

